शास्त्रार्थ संग्रह - प्रथम भाग :-

निर्णय के तट पर
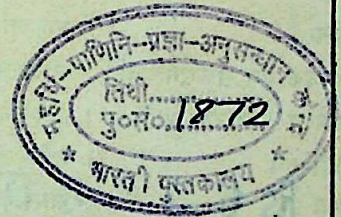
शास्त्रार्थ कर्त्ता :-

- श्री पं० ठाकुर अमर सिंह जी शास्त्रार्थ केशरी
- (वर्तमान) अमर स्वामी जी परिव्राजक

प्रकाशक एवं संग्रह कर्त्ता :-

• लाजपत राय आर्य •
अमर स्वामी प्रकाशन विभाग
दयानन्द नगर - गाजियाबाद (उ०प्र०)
(भारत)
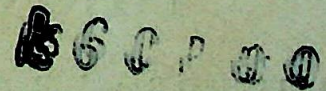
Rs 6 0 P 0 0

चेतावनी

पृष्ठ गिनकर मूल्य आँकने वाले सज्जन कृपया इस पुस्तक को न छुएं।

शास्त्रार्थ कर्ता : श्री ठाकुर अमर सिंह जी शास्त्रार्थ केशरी (वर्तमान महात्मा अमर स्वामी जी महाराज)

प्रकाशक : लाजपत राय आर्य, अमर स्वामी प्रकाशन विभाग, ३/३६६ दयानन्द नगर, गाजियाबाद—(उत्तर-प्रदेश)

मुद्रक : जन शक्ति मुद्रण यन्त्रालय, के-१७, नवीन शाहदरा—देहली-३२

संपादक एवं संकलनकर्त्ता : लाजपत राय आर्य

चित्र व आवरण आदि : कमनीय कान्त बनर्जी, गाजियाबाद, (उत्तर-प्रदेश)

बाईण्डिग : नईम बुक बाइण्डिग हाउस, गाजियाबाद (उत्तर-प्रदेश)

मूल्य Rs 60 P 0.00 : चालीस रुपये मात्र (विदेशों में चार पौंड) 4 £

संस्करण : प्रथम १२०० प्रतियां अप्रैल सन् १९७९ ई० ।

पुस्तक प्राप्ति के स्थान :

१. लाजपत राय आर्य, अमर स्वामी प्रकाशन विभाग, ३/३६६, दयानन्द नगर गाजियाबाद उत्तर प्रदेश (भारत)
२. पाणिनी कन्या महा विद्यालय, पो० तुलसी पुर बज़रडीहा वाराणसी-५
३. गोविन्द राम हासानन्द—नई सड़क, दिल्ली-६
४. राजपाल एण्ड संस, कश्मीरी गेट, दिल्ली
५. चौखम्बा विश्व भारती, चौक वाराणसी
६. सार्वदेशिक आर्य प्रतिनिधि सभा, दयानन्द भवन, रामलीला मैदान, नई दिल्ली-१
७. मुंशीराम मनोहर लाल—नई सड़क, दिल्ली-६
८. मोतीलाल बनारसी दास—बैंग्लो रोड, जवाहर नगर, दिल्ली
९. मधुर प्रकाशन, बाजार सीताराम, दिल्ली ६
१०. आर्य प्रादेशिक सभा, मन्दिर मार्ग नई दिल्ली,

NIRNAY KE TAT PAR

PUBLISHED By :—L. R. ARYA

AMAR SWAMI PRAKASHAN VIBHAG

3/366, Dayanand Nagar, GHAZIABAD, U. P.

(INDIA)

।। ओ३म् ।।
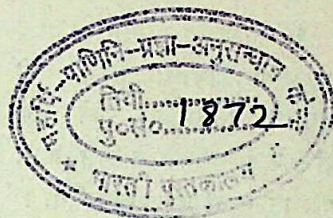
भारत के शुभ नभ मंडल में,
हुए अनेकों पथगामी ।
एक उन्हीं में उज्ज्वल तारा,
श्री श्रद्धेय 'अमर स्वामी' ।।

नोट—कृपया कोई भी सज्जन इस पुस्तक को मुफ्त लेने की कोशिश न करें !
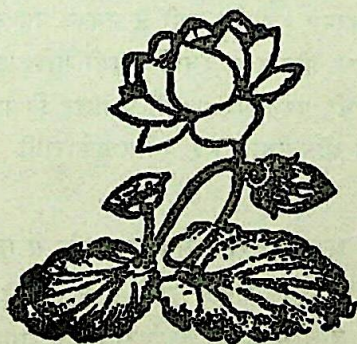
प्रस्तुत पुस्तक के प्रकाशन में देरी होने के कुछ कारण

१. शास्त्रार्थों की सामग्री तो इकट्ठी थी, परन्तु उसका ताल-मेल (तारतम्य) ठीक करने में बड़ी कठिनाई उपस्थित हुई। आदरणीय धर्माचार्य गुरुवर श्री अमर स्वामी जी महाराज की फाइलों में सभी शास्त्रार्थ "शास्त्रार्थ समयों" के लिखे हुए तो रक्खे थे, पर उनके कागज इतने पुराने और जीर्ण-शीर्ण अवस्था में थे, कि उनकी प्रतिलिपि बनाना आसान नहीं था। कभी गुरु जी न मिले, कभी मैं न मिलूं, कागजों के टुकड़े भी मिलाने व जोड़ने पड़ते थे। उसके लिए गुरुजी का उपस्थित रहना अत्यावश्यक था।

२. ग्रन्थों के प्रमाणों को ग्रन्थों के साथ मिला-मिलाकर देखना भी आवश्यक था। प्रमाणों का पाठ अशुद्ध न हो जाये और पते ठीक-ठीक रहें। इसके लिए गुरुजी का पुस्तक भण्डार ही काम आया। परन्तु मिलान करने के लिए गुरु जी का होना आवश्यक था, जब गुरुजी बाहर प्रचारार्थ हों तो काम बन्द करन पड़े।

३. यह प्रकाशन गाजियाबाद में और प्रैस (छपाई का साधन) दिल्ली-शाहदरा में है, नित्य ही प्रूफ लेने-देने के लिए जाना-आना पड़े, सारा दिन इसी में समाप्त हो जावे, कभी-कभी तो सारी रात्रि ही प्रूफ आदि देखने में निकल जाती थी।

४. धन का अभाव भारी रुकावट बना रहा। स्वामी जी महाराज, त्यागी, तपस्वी सर्वथा धनहीन संन्यासी हैं। मैं ही धनवान कहां से होता ? मेरा तो पालन-पोषण ही स्वामी जी ने किया है।

५. गाजियाबाद से शाहदरा पहुंचना तो आसान, परन्तु वापिस लौटना बड़ा मुश्किल होता है। उधर से सवारी खाली नहीं मिलती कई बार रात्रि को बारह-बारह बजे बाद कड़ाके की सर्दी में आना पड़ा और भूखे ही सो जाना पड़ा। जिसके कारण कई बार बीमार भी हो गया।

६. एक सबसे मुख्य कारण यह रहा कि, अमर स्वामी प्रकाशन विभाग सन् १९६९ ई० में स्थापित हुआ था, उसी समय से एक बड़े शक्तिशाली व्यक्ति ने प्रतिज्ञा कर ली हुई है कि इसको धराशायी करना है, इसको मिटाना या हटाना अवश्य है। जब यह ग्रन्थ छपना आरम्भ हुआ तो तभी से उनका यह धर्मयुद्ध और भी अधिक तीव्र हो गया। क्या करें पुस्तक छपायें या उनसे लड़ें अपने सिर और प्राण बचायें। बड़ी मुश्किल आयी। उन श्रीमान का कहना है कि अंग्रेजों को भारत से निकालने में मुद्दत लगी थी, पर अमर स्वामी प्रकाशन विभाग को हटाने में देर चाहे लग जाए पर हटा के ही छोडूंगा, वह जोरदार गिरोह बन्द और गुरुजी ९५ वर्षीय बूढ़े रोगी और दुर्बल "प्रकाशक असहाय बालक" ईश्वर के सिवाय अपना कोई नहीं !

हम गरीबों को तो पल भर कभी आराम नहीं। सुबह गर खैर से गुजरी उम्मीदे शाम नहीं ॥

अनेकानेक कठिनाइयों के होते हुए भी पुस्तक आपके हाथों में है। मैंने भी शपथ खायी हुई है कि कितनी भी बाधाएँ आवें, कितने भी अनार्य लोग अड़चनें डालें मैं अपना कार्य रात-दिन लगाकर करता ही जाऊंगा।

मुझे आशा ही नहीं बल्कि पूर्ण विश्वास है कि परमेश्वर मेरी ऐसे शुभ कार्यों में अवश्य मदद करेंगे।

मैं अपने इस महान संकल्प "ज्ञान यज्ञ" के करने में सफ़ल हुआ इसके लिए परमेश्वर का बार-बार धन्यवाद !

विदुषामनुचर :

"लाजपतराय आर्य"

तब और अब

श्री.पं॰ ठाकुर अमर सिंह जी शास्त्रार्थ केशरी | (वर्तमान) अमर स्वामी जी परिव्राजक

निगाहें कामिलों पर पड़ ही जाती हैं जमाने की।
कहीं छिपता है "अकबर" फूल पत्तों में निहां होकर ।।

परिचय—माननीय श्री अमर स्वामी जी से आर्य जगत में कौन ऐसा व्यक्ति है, जो परिचित न हो स्वामी जी महाराज की विद्वत्ता एवं शास्त्रार्थ करने की कला की धाक अपनों तथा परायों सभी पर है। आपने अपना समस्त जीवन समाज के प्रचार में ही होम दिया। अब इस वृद्धावस्था में भी मौखिक, लिखित सभी प्रकार से समाज के प्रचार कार्य में जुंटे हुए हैं। अनेकों खोज पूर्ण ग्रंथ लिख-लिख कर जबर्दस्त साहित्य के द्वारा समाज की सेवा कर रहे हैं जिससे समाज आपका हमेशा ऋणी रहेगा। ऐसी विभूतियां अब देखने को कम ही मिलती हैं।

"बिहारीलाल शास्त्री" काव्यतीर्थ
बरेली
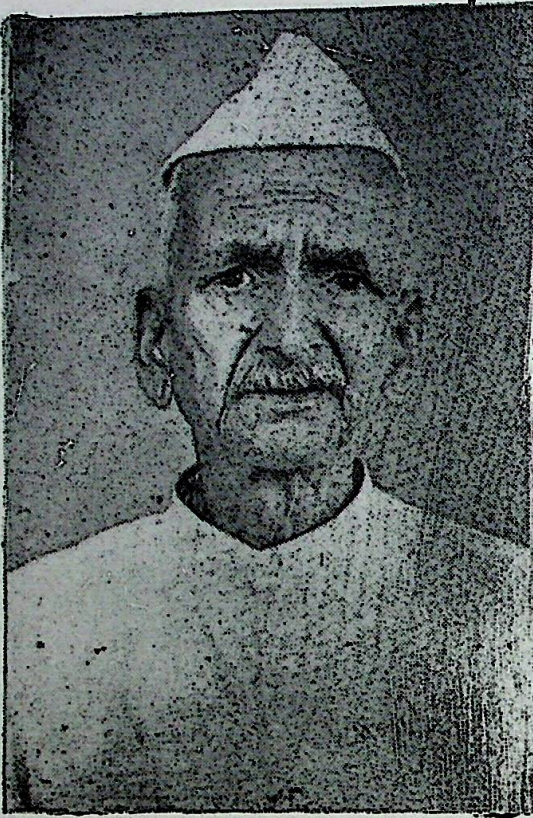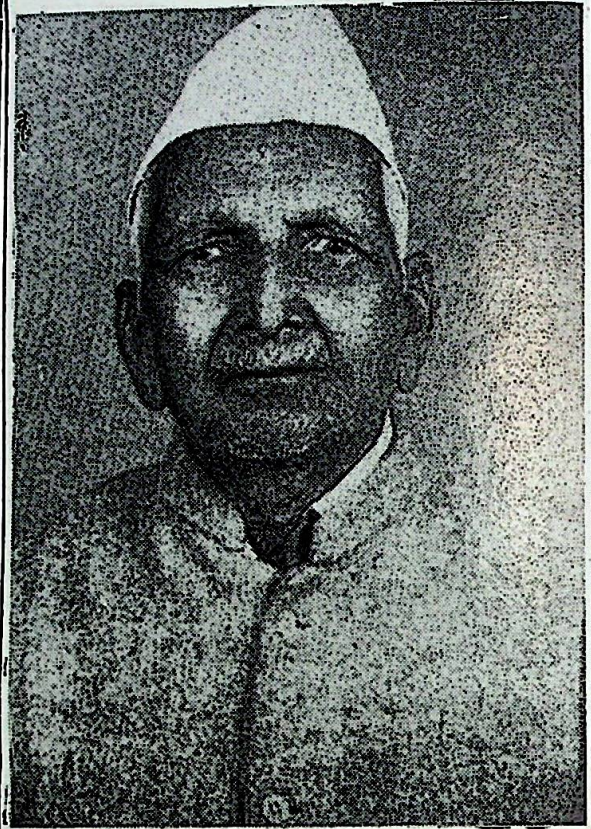
स्व० श्री लाला प्यारे लाल जी — एवं श्री डा० गोविन्द सहाय जी गुप्त

परिचय—जिला सहारनपुर उ० प्र० में वहां से बारह मील दूर दिल्ली जाने वाली मुख्य सड़क पर रामपुर (मनिहारान) नामक कस्बे से पहले सड़क से बाँए ओर ड़ेढ़ मील की दूरी पर "घाठेडा नामक गांव स्थित है। वहीं पर एक प्रसिद्ध एवं सम्पन्न अग्रवाल परिवार है जिसमें स्व० श्री लाला महताब रायजी एवं स्व० श्री लाला गोकुल चन्द जी रहीस हुए। जिनके चार पुत्र हुए उन्हीं में से एक पुत्र (श्री कृष्णचन्द्र जी) जो दिल्ली के गवर्नर रहे थे। श्री लाला महताब राय जी साधु स्वभाव के विद्वान् एवं धार्मिक व्यक्ति थे, जिनके यहां विद्वान् एव साधु-महात्माओं का हमेशा आना जाना रहता था। इन्हीं के दो पुत्र स्व० श्री लाला प्यारे लाल जी एवं श्री डा० गोविन्द सहाय जी गुप्त हुए जो बिल्कुल पिता के पथानुगामी सिद्ध हुए लाला प्यारेलाल जी के तीन पुत्र, एक श्री धनप्रकाश जी गुप्त दूसरे श्री रविकान्त जी शास्त्री एम० ए० तीसरे श्री लाजपतराय जी आर्य हैं, एवं वैद्य गोविन्द सहाय जी गुप्त के एक मात्र पुत्र श्री योगेन्द्र सहायजी गुप्त दिल्ली सफदर जंग अस्पताल में हैं सभी भाई समाज के प्रचार कार्यों मे अभी भी अपने पूर्वजों की भाँति संलग्न हैं। परमेश्वर इस परिवार में सदा सुख व शान्ति बनाये रक्खें तथा यह धार्मिक भावना सदा बनी रहे।

वैदिक धर्म का
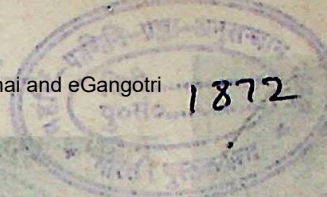
"अमर स्वामी परिव्राजक"

श्री प्रो० रामदेव जी
डी. ए. वी. कालेज 'लाहौर'

श्री पं० बुद्धदेव जी
"मीरपुरी"

श्री पं० नन्दकिशोर देव शर्मा
महोपदेशक

श्री पं० आर्य मुनि जी
लाहौर

श्री पं० कालीचरण जी शर्मा
मुनाजिर "आगरा"

आर्य समाज के दिवंगत प्रसिद्ध शास्त्रार्थ महारथी—
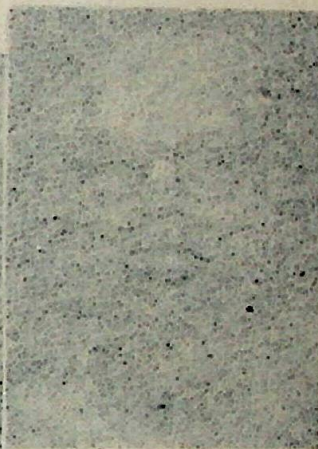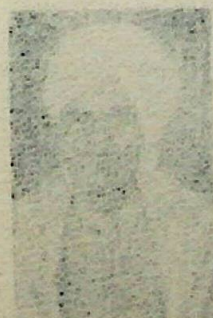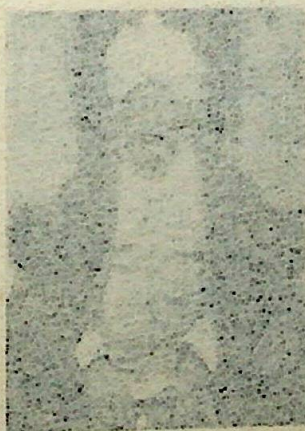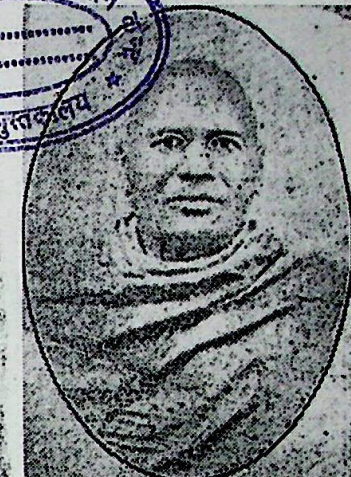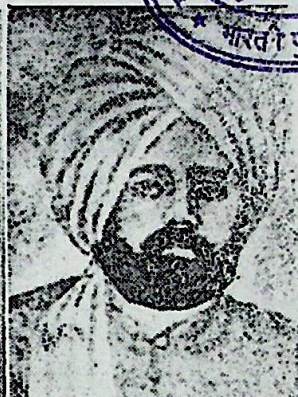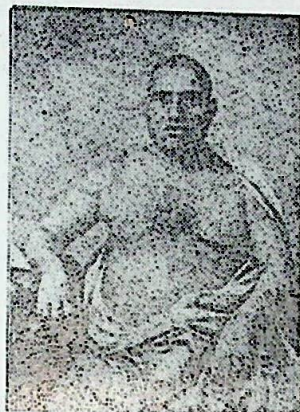
श्री स्वामी दर्शनानन्द जी महाराज

श्री पं० गणपति जी शर्मा

धर्मवीर श्री पं० लेखराम जी "आर्य मुसाफिर"

श्री ब्रह्मचारी नित्यानन्द जी
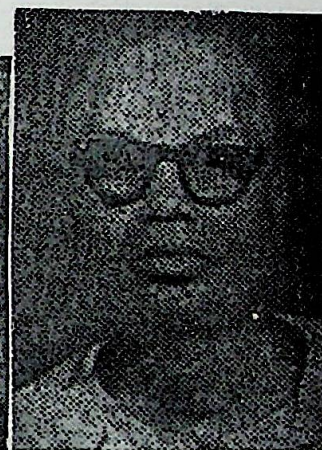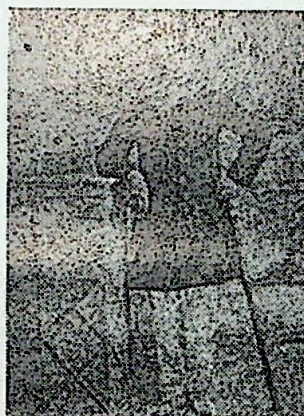
श्री पं० भोजदत्त जी आर्य मुसाफिर, "आगरा"

श्री पं० धर्मभिक्षु जी "लखनऊ"

श्री प्रो० राजाराम जी डी. ए. वी. कालेज "लाहौर"

श्री पं० बुद्धदेव जी "मीरपुरी"

श्री पं० नन्दकिशोर देव शर्मा महोपदेशक

श्री ठा० सरदार सिंह जी अरनियां (बुलन्दशहर)

श्री पं० आर्य मुनि जी "लाहौर"

श्री पं० कालीचरण जी शर्मा मुनाजिर "आगरा"

आर्य समाज के दिवंगत शास्त्रार्थ महारथी

श्री पं० वंशीधर जी पाठक "बरेली"
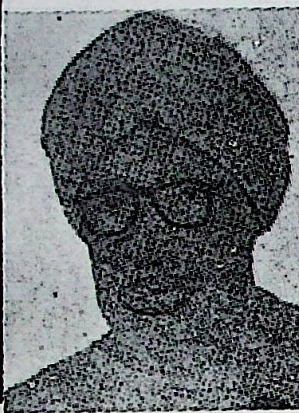
श्री पं लोकनाथ जी "तर्क वाचस्पति"
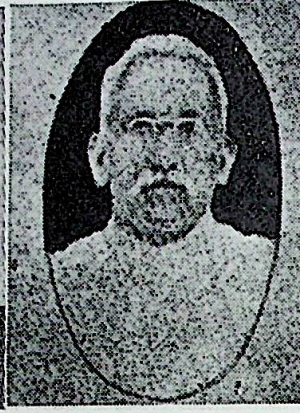
श्री पं० तुलसीरामजी स्वामी "मेरठ"
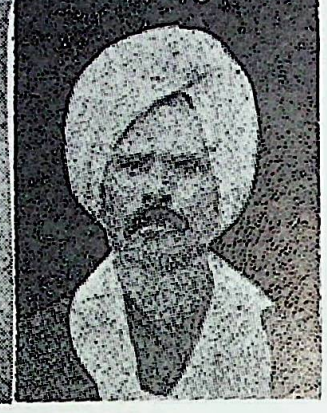
श्री पं० सन्तराम जी शर्मा वैद्यरत्न "मोगा"
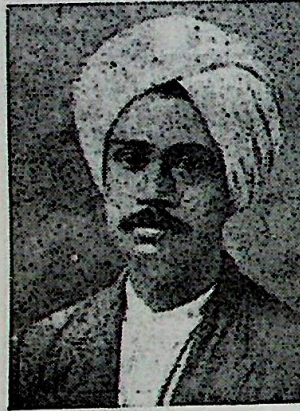
श्री पं भगवद्दत्त जी रिसर्च स्कालर, "लाहौर"

श्री पं० पूर्णानन्द जी "लाहौर"
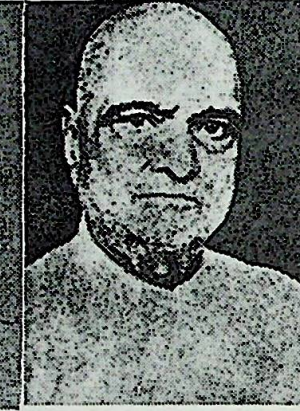
स्वामी समर्पणानन्दजी महाराज (पूर्व श्री पं० बुद्धदेवजी विद्यालंकार)
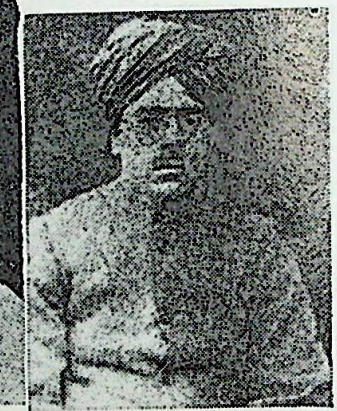
श्री पं० रामगोपालजी शास्त्री "लाहौर"

आर्य समाज के दिवंगत शास्त्रार्थ महारथी जिनके चित्र प्राप्त नहीं हो सके

१. श्री स्वामी अनुभवानन्द जी "शान्त"
२. " डा० लक्ष्मीदत्त जी "आर्य मुसाफिर" (आगरा)
३. " पं० देवेन्द्रनाथ जी शास्त्री "सांख्य तीर्थ" सिकन्द्राबाद (उ० प्र०)
४. " पं० शिवशर्मा जी, सम्भल (मुरादाबाद), "शिवस्वामी सरस्वती"
५. " पं० चिरञ्जीलाल जी प्रेम (पंजाब)
६. " पं० मनसाराम जी वैदिक तोप (हरियाणा)
७. " पं० धर्मवीर जी "आर्य मुसाफिर" (मुसाफिर मिशन-आगरा)

आर्य समाज के वर्तमान प्रसिद्ध शास्त्रार्थ महारथी

आर्य समाज के दिवंगत प्रसिद्ध शास्त्रार्थ महारथी

श्री पं० मुरारीलालजी शर्मा
"सिकन्द्राबाद" (उ० प्र०)

श्री पं० अयोध्याप्रसादजी
"कलकत्ता"
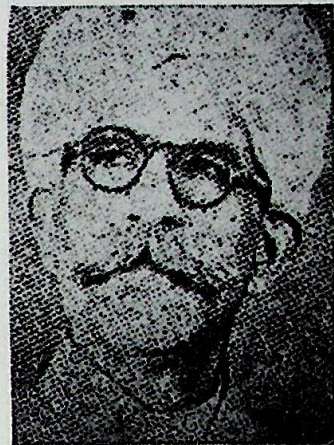
श्री पं० रामचन्द्र जी
"देहलवी"

आर्य समाज के वर्तमान प्रसिद्ध शास्त्रार्थ महारथी—

परिचय—अपने समय के अद्वितीय प्रभावशाली वक्ता, अद्भुत प्रतिभा के धनी श्री कुंवर सुखलाल जी को कौन नहीं जानता, आपका जन्म "अरनियां" (बुलन्दशहर) उत्तर प्रदेश में क्षत्रिय वंश में हुआ, आपने देश धर्म, और समाज के कल्याणार्थ सत्याग्रहों में जेल यात्राओं के साथ-साथ अनेकों शास्त्रार्थ भी किये । सारा जीवनसमाज के प्रचार में ही लगाया है ।

आज आप रुग्ण शैय्या पर हैं—आपकी सेवाएं अमर हैं, समाज का सभी प्रकार का भरपूर सहयोग आपके साथ है—

→
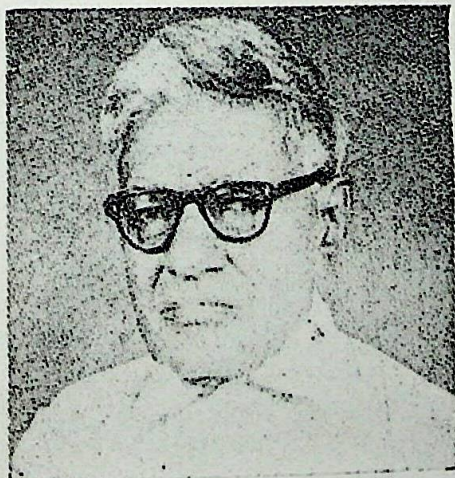
पं० श्री बिहारीलालजी शास्त्री "काव्यतीर्थ"
(बरेली)

दिल में वही तड़प हैं,
मन में वही उमंग ।
वाणी में वही ओज,
बूढ़े हुए हैं अंग ॥

—सम्पादक

→

श्री कुंवर सुखलाल जी
"आर्य मुसाफिर"

आर्य समाज के वर्तमान प्रसिद्ध शास्त्रार्थ महारथी
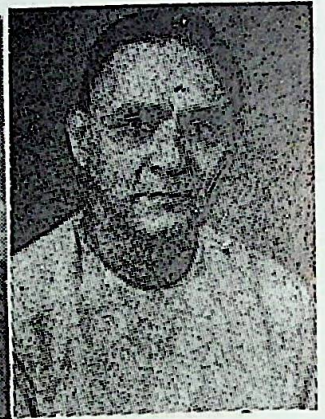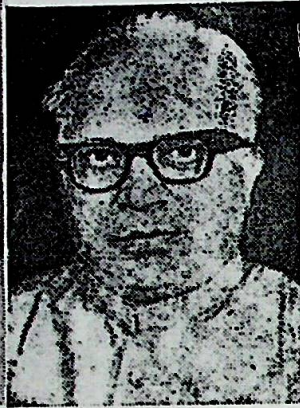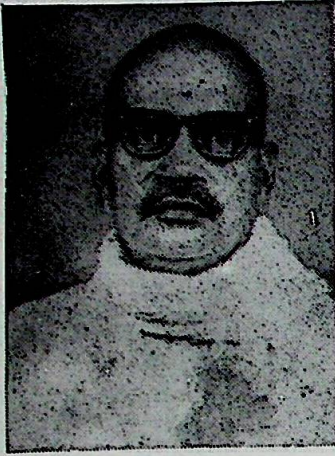
श्री पं० सत्यमित्र जी शास्त्री "वड़हल गंज" (गोरखपुर)

आचार्य श्री वैद्यनाथजी शास्त्री "वड़ौदा"

श्री पं० रामदयालुजी शास्त्री "अलीगढ़"

श्री पं० ओमप्रकाशजी शास्त्री "विद्याभास्कर" खतौली (मुजफ्फर नगर)
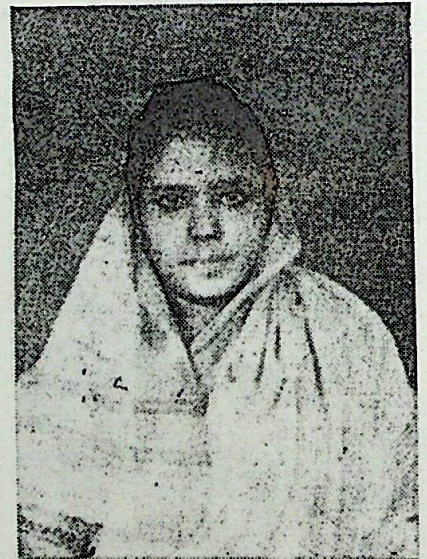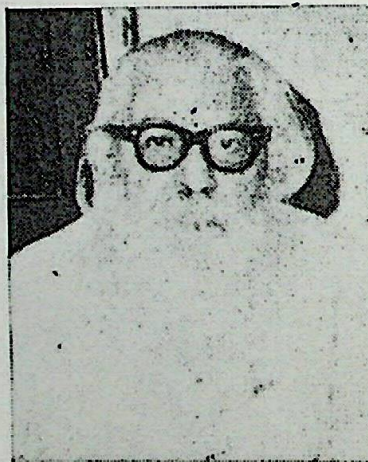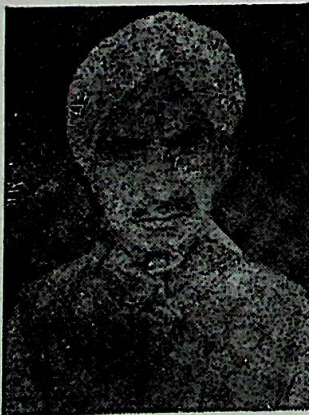
श्री आचार्य पं देवप्रकाश जी, अरबी फाज़िल" "अमृतसर"

श्री पं० विद्यानन्द जी "मन्तकी" (वाराणसी)

कु० प्रज्ञा देवीजी 'व्याकरणाचार्य" एम० ए० (पी-एच० डी०) पाणिनि कन्या महाविद्यालय, (वाराणसी)

नोट--श्री पं० शान्ति प्रकाश जी, गुड़गाँव, हरियाणा (जिनका चित्र प्राप्त नहीं हो सका)

[illegible] प्रिय लाजपत राय जी एक बच्चे, [illegible] युवक हैं, इनकी कार्य करने की [illegible] है, इन्हीं के प्रयास से इस महान ग्रन्थ [illegible] हो सका है। यह बच्चा एक वैदिक [illegible] में उत्पन्न हुआ, एवं [illegible] महर्षि के सिद्धान्तों के [illegible] है। इस बच्चे के [illegible] अच्छी तरह जानता हूं, इनके दादा [illegible] एवं कट्टर आर्य समाजी [illegible] का इनके यहां आना जाना [illegible]। परमेश्वर इस बच्चे को दीर्घायु प्रदान [illegible] यह सदा अपने कार्यों में सफलता [illegible] यही शुभकामना एवं आशी-[illegible] है।

वैदिक धर्म का—
बिहारीलाल शास्त्री "काव्यतीर्थ"
(बरेली)

श्री लक्ष्मी नारायण जी शास्त्री "साहित्याचार्य"
गोद कलां, भिवानी (हरियाणा)

पुस्तक प्रकाशन में सहायक

परिचय—आपका जन्म आषाढ़ कृष्ण दशमी सम्वत् [illegible] विक्रमी को हुआ। आपने भिवानी संस्कृत विद्यालय से शिक्षा प्राप्त कर राजकीय शिक्षा विभाग में अध्यापन कार्य किया। आपके माता-पिता, सात्विक, श्रद्धालु, आस्तिक विचार वाले थे, माता-पिता के गुणानुसार ही मातृ-पितृ भक्त एवं आस्तिक विचारवान महर्षि दयानन्द के सिद्धान्तों में अटूट श्रद्धा रखते हैं। आगे आपके पुत्र श्री वेदप्रकाश जी हरित भी इसी परम्परा को बड़ी कुशलता से निभा रहे हैं। परमेश्वर उनको दीर्घायु प्रदान करे।

आर्य समाज के वर्तमान प्रसिद्ध शास्त्रार्थ महारथी

श्री आचार्य ... अरबी फाजिल" "अमृतसर"

प्रस्तुत पुस्तक के प्रकाशक एवं संग्रहकर्ता

परिचय—प्रिय लाजपत राय जी एक अच्छे, योग्य एवं होनहार, युवक हैं, इनकी कार्य करने की लगन अद्भुत है, इनके ही प्रयास से इस महान ग्रन्थ का प्रकाशन हो सका है। यह बच्चा एक प्रसिद्ध सम्पन्न अग्रवाल वंश में उत्पन्न हुआ, एवं अपने पूर्वजों की भांति रात-दिन महर्षि के सिद्धान्तों के प्रचार एवं प्रसार में संलग्न हैं। इस बच्चे के परिवार को मैं अच्छी तरह जानता हूं, इसके बाबा आदि सभी ऋषि भक्त एवं कट्टर आर्य समाजी थे। बड़े-बड़े विद्वानों का इनके यहां आना जाना रहता था। परमेश्वर इस बच्चे को दीर्घायु प्रदान करें। तथा यह हमेशा अपने कार्यों में सफलता प्रदान करें। मेरी तो यही शुभकामना एवं आर्शीवाद है।

वैदिक धर्म का—
बिहारीलाल शास्त्री "काव्यतीर्थ"
(बरेली)
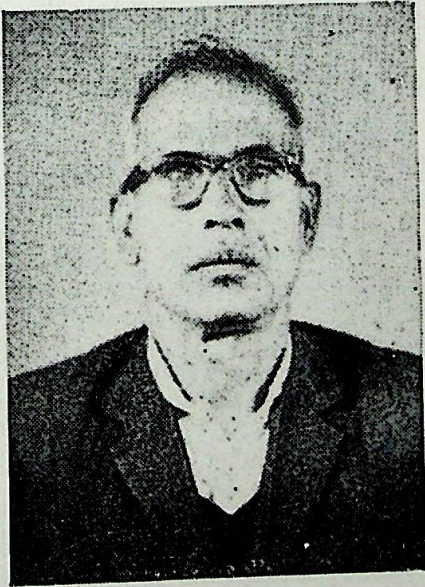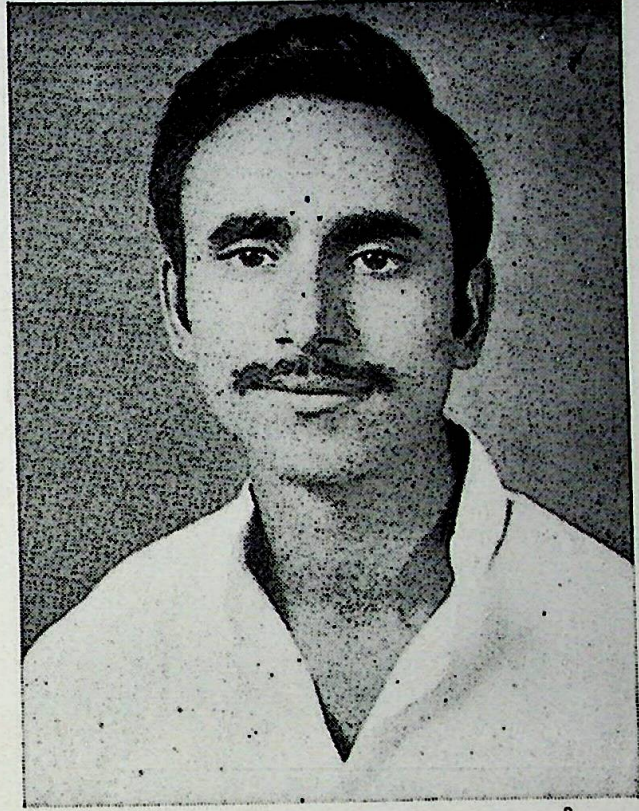
श्री लक्ष्मी नारायण जी शास्त्री "साहित्याचार्य"
बोंद कलां, भिवानी (हरियाणा)

पुस्तक प्रकाशन में सहायक

परिचय—आपका जन्म आषा ढ़ कृष्ण दशमी सम्वत् १६८२ विक्रमी को हुआ। आपने भिवानी संस्कृत विद्यालय से शिक्षा प्राप्त कर राजकीय शिक्षा विभाग में अध्यापन कार्य किया। आपके माता-पिता, सात्विक, श्रद्धालु, आस्तिक विचार वाले थे, माता-पिता के गुणानुसार ही मातृ-पितृ भक्त एवं आस्तिक विचारवान महर्षि दयानन्द के सिद्धान्तों में अटूट श्रद्धा रखते हैं। आगे आपके पुत्र श्री वेदप्रकाश जी हरित भी इसी परम्परा को बड़ी कुशलता से निभा रहे हैं। परमेश्वर उनको दीर्घायु प्रदान करे!

पौराणिक पक्ष के दिवंगत प्रसिद्ध शास्त्रार्थ महारथी
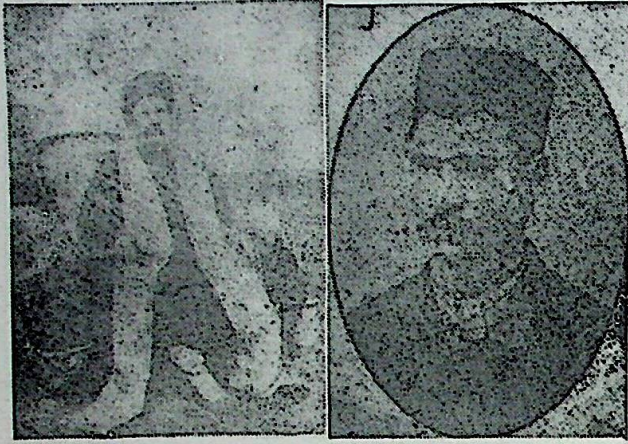
श्री पं० ज्वाला प्रसादजी मिश्र "मुरादाबादी"

श्री पं० अखिलानन्दजी शर्मा "कविरत्न" अनूपशहर (बुलन्दशहर) उ० प्र०

सनातन धर्म के दिवंगत शास्त्रार्थ महारथी जिनके चित्र प्राप्त नहीं हो सके

१. श्री पं० तारानाथ जी तर्क वाचस्पति
२. „ „ श्रीकृष्णजी शास्त्री
३. „ „ यदुकुल भूषण जी शास्त्री
४. „ „ लक्ष्मी चन्द जी शास्त्री
५. „ „ बूलचन्द जी शर्मा
६. „ „ गुरुदत्त जी शर्मा
७. „ „ गणेशदत्त जी शास्त्री
८. „ „ कालूराम जी शास्त्री
९. „ „ जगत प्रसाद जी
१०. „ „ भीमसेन जी प्रतिवादि भयंकर

पौराणिक पक्ष के वर्तमान प्रसिद्ध शास्त्रार्थ महारथी (पिता-पुत्र)

श्री पं० माधवाचार्य जी शास्त्री, दिल्ली
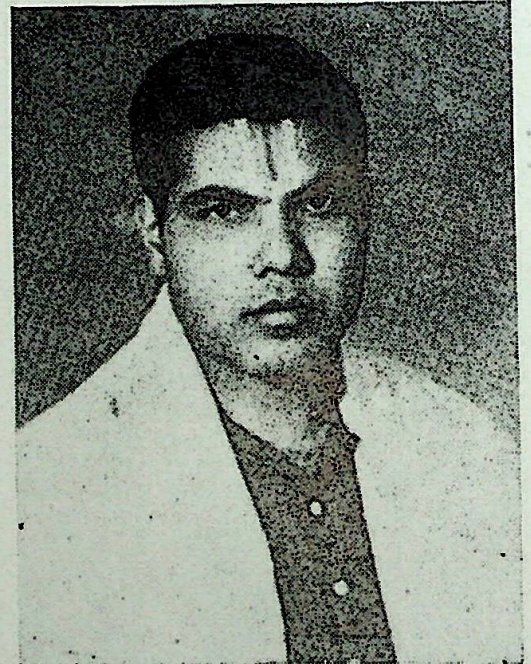
श्री पं० प्रेमाचार्य जी शास्त्री, एम० ए०, दिल्ली
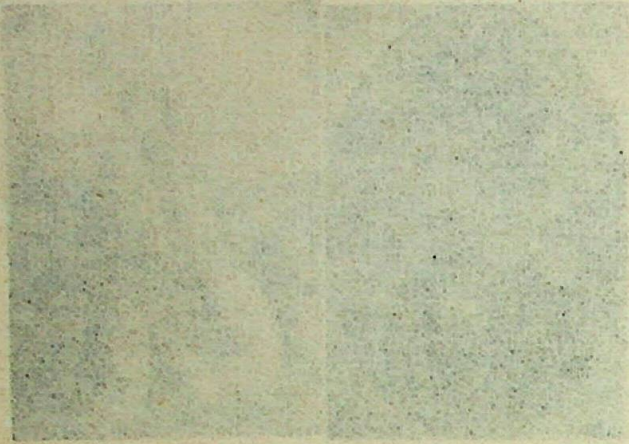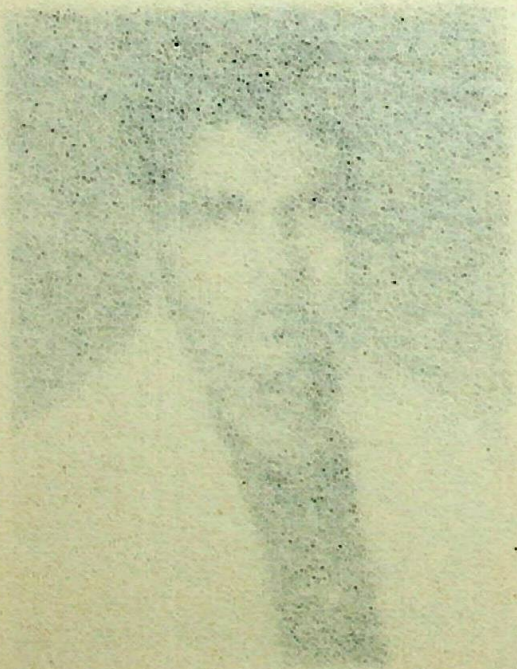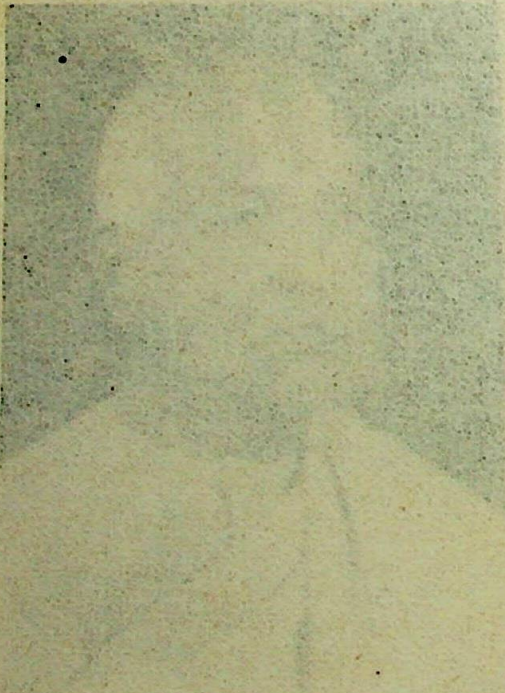
॥ ओ३म् ॥

1

पोल खुलते ही पुराणों का महातम घट गया,
बुद्ध की बुधि बंध गयी, मद जैन मत का घट गया।
दम घुटा तौरेत का, छल, बल, ज़बूरी कट गया,
जो जला इञ्जील का, दिल बाईबिल का फट गया॥
सामने क़ुरआन के ले, वेद चारों अड़ गये,
मार मन्त्रों की पड़ी, पर आयतों के झड़ गये।
डूब कर बहरे दलायल में, गपोड़े सड़ गये,
कुल हदीसों के हवाले भी, भंवर में पड़ गये॥

महाकवि श्री पं० नाथूराम जी शंकर शर्मा "शंकर"

नोट—पुस्तक में शास्त्रार्थ करते हुए चित्र सभी कल्पना के आधार पर दिये गये हैं।

पुस्तक की विषयानुक्रमणिका

प्रस्तुत पुस्तक पर प्राप्त सम्मतियां

श्री पं० जगदेव सिंह जी सिद्धान्ती

पहाडी धीरज, सदर बाजार, दिल्ली

मुझे यह जानकर अत्यन्त प्रसन्नता हुई कि आप पूज्य अमर स्वामी परिव्राजक जी के समस्त शास्त्रार्थों को अमर स्वामी प्रकाशन विभाग द्वारा प्रकाशित कर रहे हैं। आप इस अत्यन्त आवश्यक बहुमूल्य पुस्तक को प्रकाशित कर रहे हैं। मेरी सम्मति में यह शास्त्रार्थों का संग्रह आर्य जगत में अपना उच्च कोटि का स्थान प्राप्त करेगा। इस पवित्र कार्य के लिए आप यश प्राप्त करेंगे, परमेश्वर आपको इस प्रयोजन के लिए सामर्थ्य देवें।

जगदेव सिंह सिद्धान्ती "शास्त्री"

प्रो० श्री राजेन्द्रसिंह जी जिज्ञासु

दयानन्द कॉलिज—अबोहर,
(पंजाब)

आर्य समाज के पहली व दूसरी पीढ़ी के सब प्रमुख नेता सिद्धान्ती के जानने वाले, विद्वान व शास्त्री थे। यथा—महात्मा मुन्शीराम, पं० लेखराम, पं० कृपाराम, पं० गुरुदत्त, मास्टर आत्माराम, स्वामी स्वतन्त्रानन्द, महात्मा नारायण स्वामी आदि, महात्मा मुन्शीराम आर्य शास्त्रार्थी थे, जिनका जन्म ब्राह्मण कुल में नहीं हुआ था। परन्तु अपने तपोबल से ब्राह्मण बने, तब यह एक विचित्र सी घटना थी। कि क्षत्रिय कुलोत्पन्न विद्वान् शास्त्रार्थ करता है। इसी परम्परा में श्रीमान अमर स्वामी जी ने अपनी ज्ञान प्रसूता वाणी व लेखनी से जीवन में अवैदिक मतों के विद्वानों से अनेक शास्त्रार्थ करके एक इतिहास बनाया है। उनके गहन अध्ययन प्रतिभा व सूझ की अपनों, बेगानों सभी पर छाप पड़ी, सिंह समान चुनौती स्वीकार करके किरानी, कुरानी, जैनी, पुराणी, मिर्जाई लोगों से लोहा लेने वाले इस महाविद्वान के शास्त्रार्थों का यह संग्रह सबके लिए पठनीय है।

"राजेन्द्र जिज्ञासु"

श्री पं० प्रकाशवीर जी शास्त्री (संसद सदस्य)

केनिंग लेन—नई दिल्ली

श्रीमान लाजपत राय जी !

आप आर्य समाज के उद्भट विद्वान और शास्त्रार्थ महारथी श्री ठाकुर अमर सिंह जी वर्तमान (महात्मा अमर स्वामी जी) के शास्त्रार्थों का संकलन प्रकाशित कर रहे हैं। यह जानकर प्रसन्नता हुई, यह संकलन अगली पीढ़ियों के लिए भी उपयोगी सिद्ध होगा। इस महत्त्वपूर्ण योजना को हाथों में लेने के लिए मेरी हार्दिक बधाई स्वीकार करें।

"प्रकाशवीर शास्त्री" (संसद सदस्य)
३-४-१९७६

श्री ओम प्रकाश जी त्यागी (संसद सदस्य)

नई दिल्ली

मुझे यह जानकर प्रसन्नता हुई कि महात्मा अमर स्वामी जी द्वारा किये गये शास्त्रार्थों का संकलन एक ग्रन्थ के रूप में प्रकाशित होने वाला है। यह आयोजन वरेण्य है।

प्रभु से इसकी सफलता की कामना करता हूं।

ओमप्रकाश त्यागी 'पुरुषार्थी'
(संसद सदस्य)

श्री डा० गोविन्द सहाय जी गुप्त
९६८, लक्ष्मी बाई नगर
नई दिल्ली—२४

आप यह एक बड़ा ही पुण्य एवं यश का कार्य कर रहे हैं, जो समाज के एक उद्‌भट विद्वान के विचारों को संकलित करके एक ग्रन्थ के रूप में संसार के सामने ला रहे हो, इस ग्रन्थ से संसार में अज्ञान का नाश होगा, हर आदमी को सत्यासत्य की परख करने हेतु एक उच्च कोटि की कसौटी मिल जायेगी, तथा यह ग्रन्थ संसार में एक पारसमणि का कार्य करेगा यह जिस भी अज्ञान रूपी गड्ढे में पड़े हुए लोहारूप सज्जन को छुऐगा वही ज्ञान रूपी स्वर्ण के समान हो जावेगा।

एवं भविष्य में यह ग्रन्थ एक उत्तोलक का कार्य करेगा, जिसके द्वारा भारी से भारी अज्ञान रूपी भार को भी उठाकर जीवन से दूर किया जा सकेगा।

ऐसा मेरा दृढ़ विश्वास है, इस पुस्तक के प्रकाशन पर मैं प्रकाशक को हार्दिक बधाई देता हूँ, परमेश्वर आपको सफलता प्रदान करें।

डा० गोविन्द सहाय गुप्त

श्री स्वामी ओमानन्द जी सरस्वती
आचार्य, गुरुकुल झज्जर
जि० रोहतक (हरियाणा)

मुझे यह जानकर अत्यन्त प्रसन्नता हुई कि, पूज्य अमर स्वामी जी महाराज के शास्त्रार्थों का यह संकलन प्रकाशित हो रहा है, पूज्य स्वामी जी के प्रति मेरी क्या सम्पूर्ण आर्य जगत् की अपार श्रद्धा है।

स्वामी जी महाराज जैसा शास्त्रार्थ में निपुण, विद्वान, तार्किक संन्यासी आर्य जगत में अन्य कोई नहीं है, स्वामी जी महाराज की शास्त्रार्थ शैली कमाल की है, इसके प्रकाशन पर में श्री लाजपत राय आर्य जी को बधाई देता हूँ। जिन्होंने ऐसा पुण्य कार्य हाथ में लिया।

ओमा नन्द सरस्वती

महात्मा आनन्द स्वामी जी महाराज

महात्मा अमर स्वामी जी से मेरा चिरकाल से घनिष्ठ सम्बन्ध चला आ रहा है, आर्य प्रादेशिक सभा पंजाव, सिन्ध, बलोचिस्तान, लाहौर के चोटी के विद्वानों में से ठाकुर अमर सिंह जी एक थे।

जो कि अब "अमर स्वामी परिव्राजक" बन गये हैं, उनकी विद्या, उनकी स्मरणशक्ति और शास्त्रार्थ शैली के गुण वो लोग भी गाते हैं, जो कि उनके सामने शास्त्रार्थ के लिए भी खड़े होते थे। महात्मा अमर स्वामी जी ने संन्यास लेकर भ्रमण नहीं छोड़ा निरन्तर प्रचार कार्य में लगे हुए हैं, मेरे हृदय में उनके लिए अगाध प्यार है, बेटे, लाजपतराय को भी में उनके परिवार सहित जानता हूं, उनको इस कार्य को संभालने के लिए आर्शीवाद देता हूँ।

आनन्द स्वामी सरस्वती

श्री प्रेम चन्द्र जी शर्मा

पूर्व प्रधानमन्त्री आर्य प्रतिनिधि सभा उत्तर प्रदेश लखनऊ तथा
पूर्व स्वास्थ्य मन्त्री उत्तर प्रदेश सरकार लखनऊ।

यह जानकर हार्दिक प्रसन्नता हुई कि, श्री लाजपत राय जी अमर स्वामी प्रकाशन विभाग की ओर से पूज्य महात्मा अमर स्वामी जी महाराज के जीवन के समस्त शास्त्रार्थों का संकलन "निर्णय के तट पर" नाम से प्रकाशित कर रहे हैं।

मैं स्वामी जी महाराज के जीवन से पूर्ण परिचित हूं, तथा उनके अनेकों शास्त्रार्थ भी पढ़ें हैं। आर्य जगत में ऐसी प्रतिभा के धनी एवं वैदिक साहित्य के मर्मज्ञ शास्त्रार्थ महारथी कम ही हैं, मैं भगवान से उनकी दीर्घायु होने की प्रार्थना करता हूं।

प्रेम चन्द शर्मा

पूज्य श्री डा० स्वामी सत्यप्रकाश जी सरस्वती

विज्ञान के महान पण्डित

मुझे यह जानकर अतीव प्रसन्नता हुई कि आर्य समाज के वयोवृद्ध, तपस्वी संन्यासी पूज्यपाद श्री अमर स्वामी जी के शास्त्रार्थों का संकलित विवरण प्रकाशित होने जा रहा है, श्री अमर स्वामी जी के इन शास्त्रार्थों का आर्य समाज के इतिहास में गौरवपूर्ण स्थान है, पं० लेखराम जी स्वामी दर्शनानन्द जी और रामचन्द्र जी देहलवी की परम्परा में अपनी अलग विशेषता रखते हुए अमर स्वामी जी महाराज के ये शास्त्रार्थ है। श्री अमर स्वामी जी के पास जो प्राचीन उद्धरणों और प्रमाणों की सामग्री है, वह अन्यत्र कम ही मिलेगी, वे चलते फिरते इस विषय के विश्वकोश हैं, मुझे उनका स्नेह प्राप्त है, यह मेरे लिए बड़े काम की वस्तु है। मैं सदा उनके आर्शीवाद का आकांक्षी हूं।

सस्नेह—
स्वामी सत्यप्रकाश सरस्वती

श्री डा० भवानी लाल जी भारती एम. ए.

मन्त्री आर्य प्रतिनिधि सभा राजस्थान अजमेर व
सम्पादक "परोपकारी" मासिक अजमेर

"निर्णय के तट पर" आर्य जगत के सुप्रसिद्ध, शास्त्रार्थ महारथी विद्वान महात्मा अमर स्वामी सरस्वती के शास्त्रार्थों का अद्वितीय संग्रह आर्य समाज के स्वाध्याय शील पुरुषों के लिए अतीव रुचिकर होगा, अमर स्वामी जी ने अपने सुदीर्घ कालीन, उपदेशक जीवन में पौराणिकों तथा अन्य मतावलम्बियों से सैकड़ों शास्त्रार्थ किये हैं। उन्होंने वैदिक धर्म के आधार भूत सिद्धान्तों की पुष्टी में "आर्य सिद्धान्त सागर" जैसा अद्वितीय ग्रन्थ भी लिखा था, स्व सिद्धान्त पोषण में अमर स्वामी जी एक सिद्ध हस्त तार्किक एवं शास्त्रार्थ कर्त्ता विद्वान हैं। आशा है आर्य जनता इस ग्रन्थ को अपना कर लाभ उठायेगी।

डा० भवानी लाल भारतीय

श्री पं० प्रकाश चन्द्रजी "कविरत्न"
पहाड़गंज, अजमेर
(राजस्थान)

प्रिय लाजपत राय जी !

अतीव हर्ष है कि आर्य जगत के सुप्रसिद्ध, महोपदेशक, शास्त्रार्थ महारथी परिव्राजक श्रद्धेय अमर स्वामी जी महाराज के जिन प्रभावोत्पादक, मनोरंजक शास्त्रार्थों के संग्रहीत ग्रन्थ की आर्य जनता बड़ी उत्सुकता से प्रतीक्षा कर रही थी, वह आपने अपने अथक परिश्रम से प्रकाशित करा दिया, एतदर्थ आप धन्यवाद के भाजन हैं।

जब मैं स्वस्थ था, तब मुझे अनेकों आर्य समाजों के उत्सवों में स्वामी जी महाराज के साथ रहने का सौभाग्य प्राप्त होता था, उनकी आर्य समाज की सेवा की अमिट लग्न, वैदिक सिद्धान्त तथा अन्य मत मतान्तरों के गहन अध्ययन, अनुशीलन एवम् चतुर्मुखी परम प्रभावमयी प्रखर प्रतिभा के क्या कहने।

□ □ □

महोपदेशक कहूँ उन्हें या शास्त्रार्थ निष्णात कहूँ मैं,
कवि, लेखक, गायक या वैदिक विद्वद्वर विख्यात कहूँ मैं।
या स्नेही अलिदल हित उनको मधुदानी जल जात कहूँ मैं,
पूज्य अमर स्वामी परिव्राजक कहूँ या कि गुरु तात कहूँ मैं ॥१॥
वेद संस्कृति की रक्षा हित वे अति कष्ट उठाते देखे,
ब्रिटिश, निजाम क्रूर शासन की जेलों में वे जाते देखे।
शास्त्रार्थ जब कभी हुए तब स्मरणीय जय पाते देखे,
विपक्षियों के हृदयों पर पर्याप्त प्रभाव जमाते देखे ॥२॥
उनके अनुपम शास्त्रार्थों का संग्रह शुचि "निर्णय के तट पर,"
किया प्रकाशित अथक परिश्रम से है, ग्रन्थ सत्य, शिव, सुन्दर।
पहुंचे यह सब आर्य समाजों, आर्य बन्धुओं के शुभ घर-घर,
आग्रह है यह लाभ उठावें सब आबाल वृद्ध नारी नर ॥३॥

प्रकाश चन्द "कविरत्न"

श्री रविकान्त जी शास्त्री, एम. ए.
राजकीय इन्टर कालेज,
शाहजहाँपुर—उ० प्र०

विविधविद्या विलासोल्लसितान्ता, गीवार्णवाणी बन्दनविधान विदग्धा, स हृदयदयानुरञ्जन क्षमा, वैदिक धर्म प्रचार-विचार सरणी समारोहण चतुराः विद्वासः गुरुवर पूज्यामर स्वामि महात्मनः महान्तोऽयम् प्रयासः।

यत् तैः पाण्डित्यप्रवरैं सकला शास्त्र प्रमाणै अज्ञान सरोवरे निमज्जितानां नराणां हृदय पटलेर्निर्णय तटे विज्ञानदीपं प्रकाशितम्।

अयं महात्मप्रवर गुरुवर पूज्यामरस्वामि परिव्राजकरूपेण सहर्षं सप्रत्ययं नक्षत्रमध्ये शिशिरांशुरिव विद्वनमण्डले भासमानानाम ज्ञान रूपविषवृक्षारोहणावलोकिताशान्तानां, शास्त्र विद्याजल प्रक्षालित-मानसोत्तरीयाणां जनानां प्रकाशाभावं दूरी करोति ।

महात्मप्रवर श्री अमरस्वामि विश्व विदुषांमध्येमणिरिव स्वकीयं वैशिष्टयं बिभर्ति भारत वर्षेऽस्मिन् न कोऽपि एवं विद्योऽस्ति मन्दभाग्यः पुमान् यो पूज्यामर गुरुवरं नैव वेत्ति । असंख्याता हि अन्तेवासिनः एतेषां सकाशात् शास्त्रमधीत्य सुविज्ञायन्तः एतेषां पाण्डित्यं प्रकटयन्तः सर्वत्र कीर्ति प्रसारयन्ति, यत्रापि भवान् गमत् यस्यामपि सभायाम्भवान्भाषत् तत्संस्थानं सा सभा तजत्याश्च जना प्रतिष्ठापितभवत्प्रभावा अजायन्तः । भवन्ति ये पुण्यकर्माणों वस्तुतस्तेषां रसनामधिवसतीदृशी सरस्वती । शास्त्रार्थं न सुसाध्यं कार्यम् । शास्त्रार्थः कः ? शास्त्राणां य सम्यगर्थः स शास्त्रार्थः । द्वयोः पक्षयोः यस्य पक्षे निर्णयो भवति, सैव मानव जीवनस्य नौकाया पथ प्रदर्शकः भवति । न केवलं शास्त्राणि वाङ्मयस्य वेद-शास्त्र-पुराण-स्मृति-आयुर्वेद-काव्यालङ्कारादि विषयिणी विद्वता च काङ्क्ष्यते । नीति शास्त्रार्थं शास्त्रादि सम्बन्धिनी अभिज्ञता च वाञ्छयते । अथ च लोकानुभवः काम्यते, जनता भवतः शास्त्रार्थमाकर्ण्य कथा सुधां च निपीय सर्वथैव स्वां कृतार्थां मन्यते । भजनोपदेश कथावाचन माधुर्यन्तु जनान् मोहति एव । श्री अमर स्वामी प्रकाशन विभागस्य प्रधान प्रबन्धककस्यापि महत् परिश्रमः, य एतादृशं ग्रन्थं प्रकाश्यमानवा जीवनोन्नति प्रकाशनोन्नतिञ्च वर्द्धयति । अतः निर्णय तट नाम्नाग्रन्थेन सर्वे जना सदसत्मार्गंविचार्य, अज्ञान पथं च विहाय ज्ञानमार्गे व्रजन्तः अवश्यमेव स्वात्यामंसफली करिषयन्ति इति में निश्चयः ।

"रविकान्त शास्त्री"
एम० ए०, बी० एड०

महापण्डित श्री पं० युधिष्ठिर जी मीमांसक
रामलाल कपूर ट्रस्ट, बहालगढ़
सोनीपत (हरियाणा)

श्री माननीय अमर स्वामी जी महाराज के शास्त्रार्थों का संकलन "निर्णय के तट पर" नाम से छाप रहे हैं, यह कार्य आर्य समाज के इतिहास में अमर रहेगा ।

श्री माननीय अमर स्वामी जी महाराज (भूतपूर्व श्री पं० अमर सिंहजी) महोपदेशक एवं शास्त्रार्थ महारथी है । आपका स्वाध्याय अत्यन्त गम्भीर है, विशेषकर पुराणों के सम्बन्ध में आपके शास्त्रार्थों के संकलन माध्यम से शास्त्रार्थ सम्बन्धी अनेक स्थितियां व प्रमाण संग्रहीत हो जावेंगे, जो आर्य समाज के भावी विद्वानों शास्त्रार्थियों के मार्गदर्शक बनेंगे ।

युधिष्ठिर मीमांसक

श्री आचार्य पं० महेन्द्र प्रताप सिंह जी शास्त्री (एम० ए०)
कन्या गुरुकुल, हाथरस
(उ० प्र०)

यह जानकर प्रसन्नता हुई कि आदरणीय श्री अमर स्वामी जी के शास्त्रार्थोंका संग्रह "निर्णय के तट पर" नाम से प्रकाशित किया जा रहा है, श्री स्वामी जी का अध्ययन अत्यन्त विस्तृत व गहन है । उनकी युक्तियां, विरोधी पक्ष को भी स्वीकार्य होती है, वे विरोधी पक्ष का खण्डन बड़ी प्रबलता

से करते हैं। उनके ये सब गुण उनके शास्त्रार्थों में स्पष्टतया झलकते हैं। कहने की आवश्यकता नहीं कि उनकी इन विशेषताओं के कारण उनके शास्त्रार्थों का संग्रह सब दृष्टियों से उपादेय होगा, वह रुचिकर होने के साथ-साथ ज्ञानवर्धक भी होगा, मैं इस स्तुत्य प्रयास की सफलता की कामना करता हूं।

महेन्द्र प्रताप शास्त्री

श्री पं० शान्ति प्रकाश जी शास्त्रार्थ महारथी

सुभाष नगर—गुडगांवा कैन्ट
(हरियाणा)

माननीय श्री अमर स्वामीजी महाराज आर्य समाज के शास्त्रार्थी विद्वान्, अद्‌भुत वक्ता, सिद्धांतनिष्ठ अन्वेषक (रिसर्च स्कलोर) तथा महर्षि दयानन्द जी के अनन्य भक्त मनीषी, कवि, धर्मोपदेष्टा है। इनका समस्त जीवन वैदिक धर्म प्रचार में व्यतीत हुआ है। हो रहा है, होगा। मेरा इनके साथ शास्त्रार्थों, उत्सवों एवं कथाओं में यदा-कदा मेल होता रहता है।

परमेश्वर की कृपा से वह चिरंजीव रहकर वैदिक नाद गुंजाते रहें।

शान्ति प्रकाश

श्री पं० आचार्य रामानन्द जी शास्त्री

बिहार, आर्य प्रतिनिधि सभा,
पटना।

मान्यवर, श्री लाजपत राय जी शास्त्री !

मुझको यह जानकर परम प्रसन्नता हुई है, कि आप अमर स्वामी जी के जीवन सम्बन्धी शास्त्रार्थों का संकलन प्रकाशित करने जा रहे हैं, यह पुस्तक वैदिक धर्म के लिए अजेय दुर्ग (फोर्ट) सिद्ध होगी। तथा महर्षि स्वामी दयानन्द जी की कल्याणमयी वाणी के प्रचारकों के लिए वर्म (कवच) बनेगी। आर्य उपदेशक उसे साथ लेकर अकुतोभय होकर विचरेंगे।

मैं शीघ्र उसका प्रकाशन तथा घर-घर में उसका प्रसारण चाहता हूं।

रामानन्द शास्त्री

श्री पं० जयप्रकाशजी शास्त्री, एम० ए०

आर्य समाज, सिकन्द्राबाद
(बुलन्दशहर)—उ० प्र०

सरस्वती तुल्य आर्य समाज के कर्मठ, कार्यशील, विनयशील सुविख्यात, पूज्यपाद, गुरुवर श्री अमर स्वामी जी महाराज द्वारा प्रणीत "निर्णय के तट पर" शास्त्रार्थ संग्रह अति उच्च कोटि का संग्रह है, जिसके स्वाध्याय से प्रत्येक मनुष्य का भविष्य उज्ज्वल होगा, श्री लाजपत राय आर्य जी को भी मैं धन्यवाद देता हूं, जिन्होंने ऐसा अत्यावश्यक कार्य हाथों में लिया।

जयप्रकाश शास्त्री

श्री स्वामी जगदीश्वरानन्द जी सरस्वती एम० ए०
(भूत पूर्व ब्र० जगदीशचन्द्र जी विद्यार्थी)

पूज्य अमर स्वामी जी शास्त्रार्थ संग्राम के योद्धा हैं। उन्होंने जब-जब भी शास्त्रार्थ किये विपक्षी को चारों खाने चित्त गिराया है। मुझे यह जानकर प्रसन्नता हुई कि, आप उनके शास्त्रार्थों का संग्रह प्रकाशित कर रहे हैं, इस प्रकाशन पर लेखक और प्रकाशक दोनों को हार्दिक बधाई।

यह ग्रन्थ रत्न प्रत्येक स्वाध्यायशील व्यक्ति के लिए उपादेय है। ऐसा इस ग्रन्थ की पांडुलिपि के अवलोकन से निस्संकोच कह सकता हूं।

शुभ कामनाओं सहित—
जगदीश्वरानन्द सरस्वती

शास्त्रार्थ महारथी पं० ओमप्रकाश जी शास्त्री
विद्याभास्कर खतौली
(मुजफ्फर नगर) उ० प्र०

आदरणीय अमर स्वामी जी महाराज द्वारा अपने जीवन में किये गये शास्त्रार्थों का संग्रह "निर्णय के तट पर" नाम से आप प्रकाशित कर रहे हैं। ये जानकर अत्यन्त प्रसन्नता हुई, स्वामी जी महाराज आर्य जगत के उन उद्‌भट्ट विद्वानों में से हैं, जिन्होंने वैदिक सिद्धान्तों के मंडनात्मक, गहन अध्ययन तथा वेद विरोधी मतमतान्तरों के खण्डन की दृष्टि से असंख्य ग्रंथों का गहराई से अध्ययन किया है। उनकी शास्त्रार्थ शैली, वाकपटुता, गम्भीर ओजस्वी वाणी साथ ही प्रमाणों की भरमार देखकर जहां आश्चर्य होता है, वहां गौरव की अनुभूति भी होती हैं।

उनके इस ग्रन्थ से आर्य जगत के विद्वानों को विशेषकर शास्त्रार्थ कर्त्ताओं को अत्यधिक लाभ होगा ऐसा मेरा विश्वास है।

उनका मुझ पर स्नेह है, ये मेरे लिए कम गौरव की बात नहीं !

ओमप्रकाश शास्त्री

आचार्य उमाकान्त जी उपाध्याय
आचार्य, आर्य प्रतिनिधि सभा
१९, विधान सरणी, कलकत्ता-६,

आर्य समाज के इतिहास में शास्त्रार्थ का एक यशस्वी युग रहा है। किन्तु अब वह समाप्त सा ही है। परम श्रद्धेय अमर स्वामी जी महाराज शास्त्रार्थ युग के दिग्गज शास्त्रार्थ महारथी हैं, आपकी शास्त्रार्थ शैली आपका उत्तर प्रत्युत्तर-प्रकार आपकी प्रत्युत्पन्नमति, सब निराली हैं, आपके शास्त्रार्थों के दांव-पेंच, एवं शास्त्रार्थों की नोक-झोंक में आपकी ऊर्जस्विता निखर पड़ती है। आपके तीखे-पैने किन्तु हृदय ग्राही तर्क श्रोताओं पर अद्‌भुत प्रभावकारी होते हैं।

आदरणीय स्वामी जी के शास्त्रार्थों का संग्रह प्रत्येक आर्य समाज के भक्तों के लिए सैद्धान्तिक रूप से अति रोचक एवं प्रमाणों से भरपूर प्रमाण महासागर की तरह ही होगा, हमारे जैसे पंडित सेवकों के लिए तो यह अनिवार्यतः पठनीय एवं संग्रहणीय ग्रन्थ होगा, ऐसा ग्रन्थ रत्न प्रत्येक पंडित उपदेशक के पास तथा प्रत्येक आर्य समाज के पुस्तकालय में अवश्य होना चाहिये।

स्वामी जी ने वृद्धावस्था में भी यह अविस्मरणीय सेवा की है। आपकी इस अविचल प्रचार निष्ठा पर हम श्रद्धावत है। माननीय श्री लाजपतराय शास्त्री जी के अथक प्रयास से यह एक महान अभाव की पूर्ति हो गई।

बड़ी उत्कण्ठा से इस ग्रन्थ रत्न की प्रतीक्षा हो रही थी।

उमाकान्त उपाध्याय

राय बहादुर चौ० प्रताप सिंह जी

माडल टाऊन, करनाल
(हरियाणा)

श्री अमर स्वामी जी को सारा आर्य जगत जानता है। बतौर शास्त्रार्थ महारथी और बतौर लेखक के उनकी पुस्तकें अमूल्य हैं। स्वामी जी तो (Encyclopaedia) हैं।

उनका सारा साहित्य छपना चाहिये, ताकि नवयुवकों व आने वाले विद्वानों को सामग्री मिल सके।

प्रताप सिंह चौधरी

श्री ओमप्रकाश जी वर्मा "संगीताचार्य"

यमुनानगर अम्बाला
हरियाणा

मान्यवर पूज्य अमर स्वामी जी महाराज को कौन नहीं जानता अर्थात "ठाकुर अमर सिंह" यह तो वो हस्ती है जिसने अपने जीवन में सहस्रों शास्त्रार्थ अनेकों मतावलम्बियों से किये हैं स्वामी जी अपने आप में एक चलती फिरती लायब्रेरी हैं, विकट आर्य समाज के शत्रु तो स्वामी जी के नाम से ही भाग जाते हैं। पुराने शास्त्रार्थ मैंने स्वामी जी के देखे, जैसे डेरावसी के पास "पतरेड़ी" करनाल में "फरल" आदि शास्त्रार्थों में बड़ी जीत हुई, यह सब स्वामी जी के प्रमाण, युक्ति, दलील, मन्तक का प्रभाव है।

प्रकाशक महोदय धन्यवाद एवं साधुवाद के पात्र हैं, जिन्होंने अथक परिश्रम करके यह ग्रन्थ छपवाकर, एक अच्छा कार्य किया।

ओमप्रकाश वर्मा

पं० दीनानाथ जी शास्त्री

अध्यक्ष 'सनातन धर्मालोक महाविद्यालय'
(सनातन धर्मियों में एक महान पंडित)
बी० १९ लाजपत नगर नई दिल्ली २४,

स्वामी श्री अमर स्वामी जी ने आर्य समाज की अच्छी सेवा की है। अब आपके शास्त्रार्थों का संग्रह छप रहा है। यह जानकर बहुत प्रसन्नता हुई। आपने कई नये शिष्यों को इस विषय में दीक्षित किया है।

भगवान आपको चिरायु करे।

दीनानाथ शास्त्री सारस्वत

स्वामी इन्द्रवेश जी महाराज
महर्षि दयानन्द साधु आश्रम, गुरुकुल सिंहपुरा,
सुन्दरपुर, जि० रोहतक
(हरियाणा)

मान्यवर श्री लाजपतराय शास्त्री जी !

आप अमर स्वामी जी महाराज के द्वारा किये गये शास्त्रार्थों का संग्रह "निर्णय के तट पर" नाम से प्रकाशित कर रहे हैं।

पूज्य अमर स्वामी जी शास्त्रार्थ युग के महान योद्धा एवं विजेता रहे हैं। वैदिक धर्म के लिए की गयी उनकी सेवाओं के लिए समस्त आर्य जगत श्रद्धान्वित है। आपके इस प्रकाशन से युवा पीढ़ी को आर्य समाज के भूतकालिक संघर्ष का परिचय मिल सकेगा। तथा आर्य सिद्धांतों में आस्था पैदा हो सकेगी।

इस सम्भावना के साथ मैं आपके इस पवित्र प्रयास का अभिनन्दन करता हूं।

इन्द्रवेश

माननीय श्री चन्द्रभान जी गुप्त
(कोषाध्यक्ष जनता पार्टी)
(लखनऊ) उ० प्र०

प्रिय शास्त्री जी !

आपके प्रयास द्वारा माननीय महात्मा अमर स्वामी जी का शास्त्रार्थ संग्रह "निर्णय के तट पर" नाम से प्रकाशित हो रहा है। मुझे बड़ी प्रसन्नता हुई। आशा है इससे जन मानस को मार्गदर्शन मिलेगा।

शुभ कामनाओं सहित।

आपका
चन्द्रभान गुप्त

परम् विदुषी बहन प्रज्ञा देवी
व्याकरणाचार्या, पी० एच० डी०,
वाराणसी—५

पूज्यपाद अमर स्वामी जी सरस्वती की गहरी विद्वत्ता एवं वाक्पाटव की धाक उनके अनुयायियों पर ही नहीं उनके विरोधी विभिन्न मतावलम्बियों पर भी है यह उनके गहरे पाण्डित्य की खरी कसौटी है। इस वार्धक्यावस्था में भी वैदिक-धर्म की सेवार्थ आपकी लेखनी तथा वाणी इतने उत्साह एवं निर्बाध गति से चलती हैं कि किसी नवयुवक को भी लज्जित होना पड़ेगा।

इस समय आपका एक उत्तम ग्रन्थ "निर्णय के तट पर" छपकर लगभग तैयार है जिसमें पुष्कल प्रमाणों के सङ्गत के साथ-साथ विधर्मियों को परास्त करने के लिये शास्त्रार्थ व्यूह रचना कला का भी निदर्शन पाठकों को मिलेगा, जो स्वाध्याय-प्रिय लोगों के लिये परम उपयोगी सिद्ध होगा अतः मेरा सभी आर्य बन्धुओं से आग्रह है कि वे इस उत्तम ग्रन्थ को अवश्य अपने-अपने घरों में रखकर उससे लाभान्वित हों।

प्रज्ञा देवी

श्री माधवा चार्य जी महाराज
शास्त्रार्थ महारथी, पौराणिक पण्डित
धर्म धाम, १०३ ए कमला नगर दिल्ली

श्रीमानार्यसमाजलब्धसुयशाव्याख्यातृष्वग्रणीः
सिद्धान्ताहवशतकलासुनिपुणः सामाजिकः प्राड्विवाकः।
बद्दोमल्लीपुरीयवाददिवसाद् अद्यापि वादाङ्गने—
शास्त्रार्थेऽभिनन्दितोऽस्त्वमरस्वामी चिरञ्जीवतु ॥१॥
परलोके यदीच्छास्ति पायसापूपभक्षणे।
तदाऽऽश्रयणात् प्राङ्मृत्योः सेव्यो धर्मः सनातनः ॥२॥

धर्मधाम— इत्यभिलषति—
१०३ए. कमलापुर— माधवाचार्यः
दिल्लीस्थः

"उपरोक्त पत्र का हिन्दी अनुवाद"

"अमर स्वामी जी दीर्घायु हों"!

श्री मान (अमर स्वामी जी) आर्य समाज में बहुत सुयश प्राप्त व्याख्यान दाताओं में अग्रणी, सिद्धान्तों के शास्त्रार्थ युद्ध की शत कलाओं में निपुण आर्य समाज के प्राड विवाक (वकील) हैं। बददो मल्ली नगर के शास्त्रार्थ के दिन से अब तक शास्त्रार्थों में अभिनन्दन प्राप्त करने वाले अमर स्वामी लम्बी आयु तक जीवित रहें।

परलोक में यदि खीर पूड़ी खाने की इच्छा हो तो मृत्यु से पहले सनातन धर्मी हो जाइये!

ऐसी अभिलाषा करने वाला—
माधवा चार्य

शास्त्रार्थ महारथी श्री पं० रामदयालु जी शास्त्री,
तर्क शिरोमणि महोपदेशक, ३ कृष्णा टोला,
अलीगढ़—उ० प्र०

आदरणीय अमर स्वामी जी महाराज आर्य समाज के उन उज्जवल रत्नों में से एक हैं। जिन्होंने अपनी प्रतिभा के द्वारा आर्य समाज के गौरव की रक्षा की है, आप श्री ठाकुर अमर सिंह जी आर्य प्रादेशिक प्रतिनिधि सभा के उन मूर्धन्य विद्वानों में से गिने जाते थे, जिनके कार्य व योग्यता एवं भाषणों की धूम थी। मैं उन दिनों आर्य प्रतिनिधिसभा पंजाब, गुरुदत्त भवन लाहौर में उपदेशक था पंजाब की कुछ आर्य समाजें दोनों सभाओं के योग्य उपदेशकों को उत्सवों पर बुलाती थीं। प्रायः हम दोनों वहां मिलते थे। हमारे अति स्नेह का कारण अलीगढ़ बुलन्दशहर का सम्बन्ध भी था। उन दिनों शास्त्रार्थों की धूम थी पौराणिकों से शास्त्रार्थ करने के लिए पं० बुद्धदेव जी विद्यालंकार श्री बुद्धदेव

जी मीरपुरी, पं० लोकनाथ जी, पं० मनसाराम जी, ठाकुर अमर सिंह जी, की युक्ति, धीरा प्रवाह प्रमाणों की झड़ी, सूझ-बूझ और वाणी की कड़क के आगे विपक्षियों के होश उड़ जाते थे।

श्री अमर स्वामी बन कर आपके गौरव में और भी चार चाँद लग गये हैं। यह संकलन आने वाले उपदेशकों के लिये अनोखा रत्न होगा।

राम दयालु शास्त्री

श्री पं० गंगाधर जी शास्त्री (व्याकरणाचार्य)
महोपदेशक आर्य प्रतिनिधि सभा पटना,
(बिहार)

मुझे बड़ी प्रसन्नता है कि पूज्य महात्मा अमर स्वामी जी के शास्त्रार्थों के संग्रह का पुस्तकाकार निकाल रहे हैं। पूज्य स्वामी जी ने अपने जीवन में हिन्दु मुसलमान तथा ईसाइयों से दक्षता पूर्ण शास्त्रार्थ कर वैदिक धर्म की मर्यादा की रक्षा की है। वह वैदिक धर्मावलम्बियों के लिए प्रस्तुत है। आशा है इस पुस्तक द्वारा आर्य बन्धुओं को महान लाभ होगा।

पूज्योयतिवरोधीमान सर्व शास्त्र विशारदः।
विजेता सर्व शास्त्रार्थे वाग्मी नम्रो यशोधरः ॥१॥
आबालाज्जीवनं येन दत्तं धर्मस्य रक्षणे।
बने ग्रामे नगर्यावा प्रचारं चरितंमुदा ॥२॥
आर्यधर्मस्य रक्षार्थं दुखं सोढुं महामुनिः।
अद्यापि ह्यमर स्वामी तिष्ठति स दिवा निशम् ॥३॥
लेखेन वचसा नित्यं पाखण्डस्य च खण्डनम्।
सत्यस्य दर्शनं स्वामी कारयन परिराजते ॥४॥
शशि दिवाकरौ यावत् स्थास्यति गगने विभौ।
कीर्तिस्तु स्वामिनस्तावत् स्थास्यति धरणीतले ॥५॥
निर्णय के तट परम् (नाम) पुस्तकं सर्व बोधकम्।
सत्यासत्य विचाराय मानवानां भविष्यति ॥६॥
इतिमहेश्वरं याचे सर्व लोकस्य पालकम्।
आयुश्च स्वामिनो भूमौ बर्धयेत्स जगत्पतिः ॥७॥

गंगाधर शास्त्री

श्री आचार्य ओंकार मिश्र "प्रणव" जी शास्त्री, एम० ए०
उपाचार्य-डी० ए० वी० कालिज
फीरोजाबाद—उ० प्र०।

आप पूज्य स्वामी अमर भारती जी के शास्त्रार्थों का संग्रह प्रकाशित कर रहे हैं। अत्यन्त हर्ष हुआ, वस्तुतः पूज्य स्वामी जी महाराज अपनी अप्रतिम, वाग्मिता, विद्वता, एवं तर्क शालीनता से शास्त्रार्थ रणांगन के विख्यात् विजेता रहे हैं। उनकी पावन प्रतिभा ने वैदिक सिद्धान्तों का जय केतु धरातल पर सदैव लहराया है। महर्षि दयानन्द के प्रति उनकी असीम श्रद्धा हैं। निश्चित ही उनके शास्त्रार्थों का संग्रह—"निर्णय के तट पर" आर्य जनिधि की अनुपम निधि सिद्ध होगा।

मेरी मंगल कामनाएं सदैव आपके साथ हैं।

ओंकारमिश्र "प्रणव" शास्त्री एम० ए०

श्रद्धेय स्वर्गीय श्री स्वामी अभेदानन्द जी सरस्वती

प्रधान—आर्य प्रतिनिधि सभा बिहार
(पटना)

मैं राजधनवार (बिहार) के दोनों शास्त्रार्थों में उपस्थित था, श्री पं० अमरसिंह जी की शास्त्रार्थ शैली मुझको बहुत अच्छी लगी, उनकी योग्यता एवं उनके पास प्रमाणों की प्रचुरता और उनका प्रबल तर्क प्रशंसा के ही योग्य हैं। उनके धैर्य और उनकी शान्ति की भी मैं प्रशंसा करता हूं।

सनातन धर्मी कहलाने वाले दोनों पण्डितों ने उत्तेजना उत्पन्न करने वाले पर्याप्त शब्दों का प्रयोग किया, पं० अखिलानन्द जी तो सभ्यता की सीमाओं का भी उल्लंघन ही करते रहे, पर पं० अमर सिंह जी आर्य पथिक ने सभ्यता, शिष्टाचार और शान्ति के साथ ही अपनी प्रबल युक्तियों और अपने प्रचुर पुष्ट प्रमाणों से ही पौराणिक मत को पराजय और आर्य समाज को प्रबल विजय प्राप्त कराई। मैं पण्डित जी को बधाई और अनेक साधुवाद देता हूं।

अभेदानन्द सरस्वती

नोट—उपरोक्त सम्मति पुरानी छपी पुस्तक दो शास्त्रार्थ से ली गयी है।

श्री के० नरेन्द्र जी (सम्पादक)

दैनिक वीर अर्जुन, प्रताप भवन
बहादुर शाह जफ़र मार्ग, नई दिल्ली—१

मुझे यह जान कर प्रसन्नता हुई कि आप अमर स्वामी जी महाराज के शास्त्रार्थों का एक ग्रन्थ प्रकाशित कर रहे हैं। मैं इस प्रयास में आप की सफलता का इच्छुक हूं।

स्वामी जी की निःस्वार्थ भावना और वैदिक सिद्धान्तों के प्रति उनकी निष्ठा एक ऐसी बात है, जिस पर उनकी जितनी प्रशंसा की जाये कम हैं। गलत न होगा अगर यह कहा जाये कि, उन्होंने तन, मन, और धन से आर्य समाज के कार्यों को सफल बनाना अपने जीवन का लक्ष्य बना रक्खा है। ऐसे त्यागी, तपस्वी सन्त हमें कहीं-कहीं ही देखने को मिलते है।

के० नरेन्द्र

श्री लाला राम गोपाल जी शालवाले

(भू० पू० ससंद सदस्य)
प्रधान, सार्वदेशिक आर्य प्रतिनिधि सभा
रामलीला मैदान, दयानन्द भवन
नई दिल्ली—१

मुझे यह जान कर प्रसन्नता हुई कि, अमर स्वामी जी महाराज के शास्त्रार्थों का संग्रह "निर्णय के तट पर" नाम से प्रकाशित करने का आयोजन हो रहा है। स्वामी जी महाराज को वैदिक एवं अवैदिक सभी ग्रन्थों का गहन अध्ययन है। उन्हीं से चुन-चुन कर जो संग्रह उन्होंने तैयार किये हैं, वे निर्णय के तट पर नामक पुस्तकाकार में छप कर आर्य समाज के प्रचारकों व उपदेशकों के लिए बड़ी लाभदायक सिद्ध होगी। ऐसी आशा करता हूँ,

मैं इस संग्रह के प्रकाशन की सफलता की कामना करता हूँ।

राम गोपाल (शाल वाले)

श्री ब० दा० जत्ती
उपराष्ट्रपति—भारत
नई दिल्ली

मुझे यह जान कर प्रसन्नता है कि आप अमर स्वामी प्रकाशन विभाग की ओर से महात्मा अमर स्वामी जी के शास्त्रार्थों का एक संकलन "निर्णय के तट पर" नामक प्रकाशित करने जा रहे हैं, में इस संकलन की सफलता के लिए अपनी हार्दिक शुभ कामनाएं भेजता हूं।

आपका
(ब० दा० जत्ती)

श्री बिन्दा प्रसाद
बिहार राज्य आर्य प्रतिनिधि-सभा
मुनीश्वरानन्द भवन-पटना-४

हमें यह जान कर हार्दिक आनन्द हुआ कि आप महात्मा अमर स्वामी जी के शास्त्रार्थों का संकलन "निर्णय के तट पर" प्रकाशित कर रहे है। वस्तुत : उनके शास्त्रार्थ प्रेरणा प्रद रहे है, और आशा है कि यह पुस्तक भी लोगो को सन्मार्ग पर प्रेरित करेगी, हमारी सभा पुस्तक की सफलता की कामना करती है।

भवदीय
बिन्दा प्रसाद
कृते (विद्या भूषण प्रसाद) सभा मन्त्री
पटना (बिहार)

श्री पं० शिवराज सिंह जी शास्त्री, अरबी फ़ज़िल
(जि० बुलन्दशहर वाले)
बम्बई

संसार में सर्व प्रथम मानव सृष्टी भारत में हुई, यह अब निर्विवाद सत्य संसार के सभी देशी विदेशी विद्वानों ने एक मत से स्वीकार किया है धर्म व धर्म शास्त्र की कल्पना व रचना भी भारत में हुई, लाखों वर्ष मनुष्य मात्र एक ही धर्म के अनुयायी रहे। कालान्तर में व्यक्तिगत हितों को लेकर धर्म सम्प्रदायों के रूप में विभाजित हो गया, और आज यह अवस्था है कि, जहां ईंट उखाड़ो नीचे कोई न कोई धर्म सम्प्रदाय उससे लिपटा हुआ मिलेगा, परिणाम स्वरूप वास्तविक धर्म को छोड़ मनुष्य अरबों की संख्या में मनमाने धार्मिक सम्प्रदायों में विभक्त है।

मानव मात्र को एकता का मार्ग दिखाते हुए ऋषि दयानन्द ने वैदिक धर्म की पुन: स्थापना की, अधिक मिथ्या मत मतान्तरों पर प्रहार भी किये। आर्य समाज का गत १०० से वर्ष अधिक का इतिहास अनेक शास्त्रार्थों व शास्त्रार्थ महारथियों के महा कौशल का इतिहास है। धर्मवीर पं० लेखराम जी आर्य मुसाफिर को तो इस महा भारत में अपने प्राणों की आहूति भी देनी पड़ी।

आर्य मुसाफिर जी की इस महान परम्परा के श्रेष्ठतम उत्तराधिकारी महामुनि महात्मा अमर स्वामी जी का सारा ही जीवन शास्त्रार्थों में बीता है। वे आर्य समाज के अजेय महारथी रहे है, उनके अकाट्य तर्क प्रत्युत्पन्न मतित्व व प्रगाढ़ पांडित्य ने आर्य समाज की ध्वजा पताका सर्वत्र लहराई है। राजनीति के क्षणिक प्रवाहों में आर्य समाज के विपथ गामी होने से पुन: नये नये सम्प्रदायों तथा नये नये भगवानों की नवीन तम रचनाएं हो रही हैं। इधर स्वामी जी जीवन के अन्तिम

चरण में प्रवेश कर चुके है। काश ! कि जो संग्रह श्री लाजपत राय जी प्रकाशित कर रहे है। उसे शिरोमणि सार्व देशिक सभा प्रकाशित करती ! फिर भी लग्नशील, महान परिश्रमी श्री लाजपतराय जी के इस स्तुत्य प्रयास को जितना भी सराहा जाये कम है। महर्षि साहित्य को निकाल दे तो आर्य समाज में रक्खा ही क्या है, मन्दिरों से मूल्यवान मस्जिदें गिरजाघर एवं अन्य मन्दिर हैं, काश ! कि आर्य समाज इस स्थाई सत्य को समझने की क्षमता वाला होता। पर क्या किया जाये। "तेरी महफिल भी गई, चाहने वाले भी गये" परम श्रद्धेय स्वामी जी तो प्रशंसा-सराहना के व्यक्तिगत भावों से परे एक महानात्मा के रूप में है। प्रभु उन्हें हमारे बीच बनाये रक्खे, जिससे उनकी प्रतिभा का अधिक से अधिक लाभ मानव मात्र को प्राप्त हो सके।

शिवराज सिंह

श्री शिव कुमार जी शास्त्री

भूत पूर्व संसदसदस्य (लोकसभा) (अद्वितीय शास्त्रार्थ-केशरी)
सी-२ (३५-३) मलकागंज-दिल्ली

पूज्य अमर स्वामी जी महाराज आर्य समाज के शास्त्रार्थ समर के उन अद्वितीय सेनानियों में से हैं जिनकी अदमुत प्रतिभा का सिक्का प्रतिपक्षी विद्वानों ने भी सदा स्वीकार किया है। यद्यपि वे पादरी, मौलवी और सनातनधर्मी विद्वानों से सभी से शास्त्रार्थ करते रहे हैं किन्तु विशेष रुप से पौराणिक विद्वानों के साथ शास्त्रार्थ में तो सरस्वती उनकी जिव्हा पर आ विराजती है। शास्त्रकारों ने उस वाणी को सभा के योग्य बताया है जिसका प्रभाव अपने पराये विद्वान और मूर्ख पर जादू का सा होता चला जाये।

तास्तुवाचः सभायोग्या याश्चित्ताकर्षणक्षमाः।
स्वेषां परेषां विदुषां द्विषामविदुषामपि ॥

यह उक्ति पूज्य स्वामी जी के शास्त्रार्थ में उन पर अक्षरशः घटती रही। सनातनधर्मी शास्त्रार्थी विद्वान श्री पं० माध्वाचार्य जी ने जो पूज्य स्वामी जी के प्रति उद्गार प्रकट किये हैं वे सूचित करते हैं कि उनके हृदय में श्री स्वामी जी की योग्यता का क्या स्थान है ?

मुझे यह जानकर प्रसन्नता हुई है कि पूज्य स्वामी जी के शास्त्रार्थों का संग्रह प्रकाशित होने जा रहा है। निश्चित रूप से यह सामग्री स्वाध्यायशील व्यक्तियों के लिए बड़े काम की होगी और शास्त्रार्थ के अखाड़े में उतरने वालों के लिए एक शिक्षक का काम करेगी। मेरा विश्वास है कि प्रत्येक आर्य समाज इस उपयोगी महत्वपूर्ण संग्रह को अपने पुस्तकालयों की श्रीवृद्धि के लिए क्रय करके रखेगी।

(शिव कुमार शास्त्री)
काव्य-व्याकरण तीर्थ

श्री० डा० पुरुषोत्तम दत्त जी गिरिधर

अद्वितीय नेत्र चिकित्सक, नेत्रचिकित्सालय भिवानी
(हरियाणा)

पूज्य श्री अमर स्वामी जी महाराज की अमर पुस्तक "निर्णय के तट पर" स्मरण होते ही मस्तिष्क में आर्य समाज का वह समय चित्रवतउभर आया, जब में लाहौर में १९२१ से १९२५ तक पढ़ता था, वह दिन आर्य समाज के जोश और जीवन के थे, नित्य ही चारों ओर शास्त्रार्थों की धूम रहती थी, कभी सनातन धर्मी भाइयों से तो कभी ईसाइयों से और मुसलमानों से तो नित्य ही मुबाहिसे होते रहते थे। उन दिनों की स्मृति मन में ताजा हो गयी।

उन्हीं दिनों ही तो राजपाल जी शहीद हो गये थे, उन दिनों जबानी ही नहीं प्रत्युत लिखित मुबाहिसे मुसलमानों एवं अन्य मतावलम्बियों के साथ होते थे, दैनिक पत्र दोनों ओर से निकलते थे, जिनमें तर्क, दलीलें-उत्तर-प्रत्युत्तर दिये जाते थे। बल्कि मुझे स्मरण आ रहा है, कई बार तो दिन में दो-दो बार दोनों ओर से जोशीले नौ-जवान पंत्राक छाप-छापकर जनता में बांटते। और जनता भी चाहे और शौक से उनके छपने की प्रतिक्षा में रहती थी। बड़ी रोचक और अकाट्य दलीलें और तर्क दोनों ओर से दैनिक छपती थी, जनता बड़ी उत्सुकता और उत्साह से उनको पढ़ती थी, और धार्मिक जोश से बावली हो उठती थी।

हमारे आर्य समाज नौ जवान "गुरुघंटाल" और "शैतान" नामक दैनिक पत्र निकालते थे। उधर मुसलमानों की ओर से भी बदले में ऐसे ही पत्र निकाले जाते थे, आशय कहने का यह हैं कि उन दिनों हर व्यक्ति बच्चा बूढ़ा नवयुवक शास्त्रार्थी समझा जाता था। हर आदमी स्वाध्याय करता था।

इसी का परिणाम था कि उन दिनों आर्य समाज का इतना प्रचार बढ़ सका था, परन्तु वर्तमान युग में शास्त्रार्थ बन्द होने से वह समय एक केवल यादगार सा बन कर रह गया है। आज स्वार्थी लोग सिद्धांतों पर पर्दा डाल कर अपना कार्य सिद्ध कर रहे हैं, उससे समाज की यह दशा बन गयी है, अगर हम उस युग को देखना चाहते हैं तो सिद्धांतों को सामने लाना होगा, जब तक सत्य असत्य पर विचार विमर्श नहीं होगा तब तक सत्य का पता संसार को नहीं लग सकता, उसकी कसौटी केवल शास्त्रार्थ ही है, अग्रेंजी में कहावत है कि—"OFFENCE IN THE BEST DEFENCE" (अपनी सत्यता की रक्षा के लिए दूसरों की असत्यता पर प्रहार करो) और यह तभी सम्भव हैं जब शास्त्रार्थ हो।

श्री पूज्य अमर स्वामी जी की इस पुस्तक से कुछ उन दिनों के शास्त्रार्थों का दिल में स्वाद ताजा हो जाता है, और हृदय गर्व से भर जाता है, छाती फूल उठती है, और जी कहता है कि, काश वह दिन फिर भी आ सके।

वह भी क्या समय था, जब हर आर्य समाज के स्कूल, कन्या पाठशालाओं एवं कालिजों में धर्म शिक्षा तथा सिद्धांतों का ज्ञान कराया जाता था, परन्तु आज तो वह सब स्वप्नवत् सा लगता है, आज जिस रफ्तार से आर्य समाज के कर्णधार चल रहे है, उससे तो पता चलता है, कि डी० ए० वी० के नाम पर केवल डी० वी० अर्थात राष्ट्र, "वैदिक" शब्द ही आर्य संस्थाओं के नाम से हटा दिया जायेगा, और अब भी यह केवल नाम मात्र के डी० ए० वी० है। प्रैक्टीकल में केवल शून्य है, "कृण्वन्तो विश्वमार्यम्" आर्य समाज का यह स्वप्न केवल स्वप्नवत् ही रह जायेगा, जब तक कि वह शास्त्रार्थों वाला युग, उत्साह जनक समय फिर नहीं आ जाता, श्री पूज्य अमर स्वामी जी की यह पुस्तक पिछले शास्त्रार्थों की स्मृति ताजा करती है, हृदय में जोश भरती है, जो वातावरण अनुकूल न होने के कारण अन्दर ही घुट कर रह जाता है, पर फिर भी इस पुस्तक की आवश्यकता है, और इसको केवल सजावट की दृष्टि से रखने की नहीं बल्कि उसे पढ़ने की आवश्यकता है, जिससे यदि गुड़ खाने को नहीं मिलेगा तो गुड़ का नाम लेने से ही मन में गुड़ का सा स्वाद तो आ ही जावेगा।

श्री स्वामी जी की इस पुस्तक को प्रत्येक युवक एवं वृद्ध नर एवं नारियों को पढ़ना चाहिये, ताकि समय पड़ने पर हम विरोधियों को मुंह तोड़ जवाब दे सकें।

वह समय दूर नहीं है, जब यह पुस्तक संसार में सर्वोच्च स्थान प्राप्त करेगी। ऐसा मेरा दृढ़ विश्वास है। श्री लाजपतराय जी विशेष धन्यवाद के पात्र है, जिन्होंने इस महान ज्ञानयज्ञ की शुरुआत की!

पुरुषोत्तम दत्त गिरिधर

श्री पं० सत्यप्रियजी शास्त्री आचार्य एम. ए.
दयानन्द ब्राह्म महा विद्यालय, हिसार

आज के तथा कथित वैज्ञानिक कहते हैं, कि सृष्टि के आदिकाल में सूर्य तीव्र गति से घूमता था, कालान्तर में उसके कुछ टुकड़े उससे पृथक हुए, जो कि चन्द्र पृथ्वी एवं नक्षत्रों के रूप में विद्यमान हैं। तत्वज्ञों की दृष्टि से उनके इस कथन को आलंकारिक मानने में कोई अतिशयोक्ति नहीं है, इसे हम यों कह सकते हैं, कि उन्नीसवीं सदी के उत्तरार्द्ध में इस भारत भूमि पर देव दयानन्द के रूप में वेद ज्ञान के एक सूर्य का उदय हुआ, जो बड़ी तीव्र गति से घूमा।

उसी सूर्य का ज्ञान (प्रकाश) लेकर-लेखराम, दर्शनानन्द, गणपति शर्मा, धर्म भिक्षु, स्वामी योगेन्द्र पाल, राम चन्द्र देहलवी, भोजदत्त आर्य मुसाफिर, बुद्धदेव मीरपुरी ठाकुर अमर सिंह जी, बुद्धदेव विद्यालंकार, मनसाराम वैदिक तोप, पं० व्यास देव देवेन्द्रनाथ शास्त्री इत्यादि नक्षत्रों ने देव दयानन्द रूपी सूर्य के अस्त होने के पश्चात वैदिक धर्म के अन्तरिक्ष को प्रकाशित किया।

इनमें सभी एक से एक बढ़कर रहे, इस इन्द्र वृत्तासुर संग्राम में सभी इन्द्र सदृश पराक्रमी सिद्ध हुए इनमें सभी की अपनी-अपनी विशेषताएं थीं। इन महारथियों के उस शास्त्रार्थ युग के अपूर्व पराक्रमों को सुनकर आज की पीढ़ी आश्चर्य चकित एवं गौरवान्वित हो जाती है।

वैदिक संस्कृति के भव्य भवन के निर्माण में अपने को उसकी नींव में खपा देने वाली इन दिव्य विभूतियों के दर्शनों को आज का आर्य युवक उत्कण्ठित हो उठता है, सौभाग्य से उस युग की स्मृतियों में से श्री श्रद्धेय अमर स्वामी जी महाराज (पूर्व श्री ठाकुर अमर सिंह जी शास्त्रार्थ केसरी) हमारे मध्य में विराजमान है। श्री श्रद्धेय स्वामी जी की अपनी कुछ निराली ही विशेषताएं रही हैं। प्रमाणों के तो आप सागर ही हैं। किसी भी विष्य पर हजारों प्रमाणों की झड़ी लगा देते हैं। यद्रि आपको चलता-फिरता-पुस्तकालय कहा जाय तो अतिशयोक्ति नहीं है, शास्त्रार्थ काल में, आपके मुख से असंख्य प्रमाण प्रवाह को देखकर श्रोता चकित रह जाता है।

दूसरी विशेषता यह है कि, आपका चहुँमुखी ज्ञान है। शास्त्रार्थ समर में आप चतुर्दिक लड़ने की योग्यता रखते हैं। जब कि हमारे अन्य महारथी एक-एक मोर्चे के विशेषज्ञ रहे हैं। जैसे पं० मनसा राम जी वैदिक तोप, पं० बुद्धदेव जी मीरपुरी पुराणों के विशेषज्ञ थे।

देहलवी जी तथा धर्म भिक्षु यवनों का मुहं तोड़ उत्तर देने में सफल एवं सक्षम थे।

इसी प्रकार कोई क्रिश्चियनों का विशेषज्ञ था, और कोई जैनियों का परन्तु आज किसी भी मोर्चे पर आवश्यकता पड़े तो आर्य जगत बड़े विश्वास के साथ पूज्य स्वामी जी को शास्त्रार्थ के लिए भेज देता है। और यह भी चुटकी बजाते-बजाते विजय प्राप्त कर लेते हैं, तीसरी विशेषता वैदिक धर्म के प्रचार में प्रगाढ़ निष्ठा है, मुझे याद आता है कि, शायद आपके गाँव में ही जब थोथेश्वर माध्वाचार्य ने शास्त्रार्थ की इच्छा प्रकट की तब आप १०४ डीग्री ज्वर में पड़े थे, यह सुनते ही, हितैषीजनों के मना करने पर भी और अपनी मृत्यु की परवाह न करते हुए आपको चारपाई पर लिटाकर चार आदमी उठाकर शास्त्रार्थ करने को लाये थे। और उस अवस्था में भी आपने दम्भी दुश्मन को नाकों चने चबवा दिये थे। आज लगभग ८५ वर्ष की आयु में भी जबकि चलने फिरने तथा देखने में भी असमर्थ हो गये हैं। तो भी आप प्रचार कार्य में व्यस्त हैं। अभी-अभी पीछे ही आपने दिल्ली सब्जी मण्डी आर्य पुरा समाज में शास्त्रार्थ किये, जिसमें विरोधी छोकरे के छल-कपट करने के बावजूद भी उस बेचारे को पराजित तथा लज्जित होना पड़ा, अभी दो मास भी नहीं हुए थे कि, मेरठ के समीपस्थ ग्राम (बदरखा) में आपकी अपने पुराने प्रतिद्वन्दी माध्वाचार्य से जोरदार टक्कर हुई, और लोगों ने

देखा कि, इस बूढ़े शेर की गर्जना से वह युद्ध के बहाने से दक्षिणा प्राप्त कर भागा जा रहा है। जहां आप वाणी द्वारा वैदिक सिद्धान्तों का प्रचार करते रहे हैं। वहां आपने आर्य जगत को मौलिक साहित्य भी दिया है। जिसमें—आर्य सिद्धान्त सागर, एक अनुपम कृति है। इसी प्रकार जीवित पितर, हनुमानादि वानर बन्दर थे या मनुष्य ?, कौन कहता है द्रौपदी के पांच पति थे ?, क्या रावण वध विजय दशमी को हुआ था ?, इत्यादि ग्रन्थ आपके मौलिक ज्ञान, गम्भीर पाण्डित्य तथा विस्तृत स्वाध्याय एवं गहन चिन्तन के परिचायक है।

अंग्रेजी राज्य में स्वाधीनता प्राप्ति के लिए आपने अनेक बार जेल यात्राएं की, हैदराबाद सत्याग्रह, हिन्दी रक्षा आन्दोलन, तथा गौरक्षा सत्याग्रह में भी आपने जेल यात्रायें की, वैदिक धर्म के प्रचारक तैयार करने के लिए मोहन आश्रम हरिद्वार में संचालित उपदेशक विद्यालय के आप आचार्य रहे, दयानन्द ब्राह्म महाविद्यालय में भी आपने अध्यापन कार्य किया है। स्वामी जी के प्रिय एवं योग्य शिष्य, श्री लाजपत राय आर्य ने पूज्य स्वामी जी के नाम से प्रकाशन विभाग आरम्भ किया है। जिसके माध्यम से उत्तमोत्तम ग्रन्थों का प्रकाशन हो रहा है। आर्य जगत् की नई युवा पीढ़ी की यह इच्छा रही कि शास्त्रार्थ युग के रोचक संस्मरण प्रकाश में आने चाहिये, जिससे की वर्तमान पीढ़ी प्रेरणा प्राप्त कर सके, मुझे यह जानकर अतीव हर्ष है कि, प्रिय लाजपत राय जी आर्य—अमर स्वामी प्रकाशन विभाग के अन्तर्गत पूज्य अमर स्वामी जी महाराज के शास्त्रार्थों का संग्रह "निर्णय के तट पर" नाम से एक विशाल प्रकाशन करने जा रहे हैं। मैं इनके इस शुभ कार्य का अभिनन्दन करता हुआ उसकी सफलता का प्रार्थी हूँ।

तथा साथ ही अन्तर्यामी जगदीश्वर से श्री श्रद्धेय अमर स्वामी जी महाराज के उत्तम स्वास्थ्य दीर्घायुष्यनैरोग्य एवं सबलता की याचना करता हूँ। जिससे कि वे हमारे मध्य में रहते हुए हमें उचित दिशा का संकेत करते रहें। भूयश्च शरदः शतात्, अग्ने नय सुपथा..................

सत्य प्रिय शास्त्री, एम. ए.
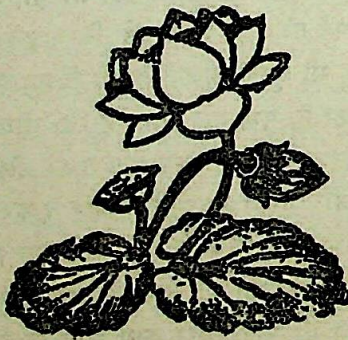
प्रकाशकीय

आर्य समाजियों का दुर्भाग्य

यह पुस्तक "निर्णय के तट पर" शास्त्रार्थों का संग्रह मैंने अथक परिश्रम तथा बड़ी मेहनत एवं लगन से जैसे-तैसे छपवाकर तैयार किया है।

यह मैं तो आर्य समाजियों का दुर्भाग्य ही कहूंगा कि इतने बड़े विद्वान के पास यह अद्भुत ज्ञान है, अगर समाज चाहे तो उनसे भारी लाभ हो सकता है।

समाज के वड़े-बड़े नेताओं ने, अधिकारियों ने आश्वासन तो बड़े-बड़े दिये, परन्तु किया आज तक कुछ भी नहीं और न उन्होंने कुछ करना है, उनको तो अपने-अपने पदों (कुर्सियों) की पड़ी है। उनको ज्ञान और विद्वानों से क्या मतलब ? मुझे निर्धन आर्य समाजियों ने तो सहयोग दिया, मगर बड़े-बड़े समाजी नेताओं ने मुझे सिवाय बातों के और कुछ न दिया।

इस समय स्वामी जी के लिखे हुए लगभग पचास ग्रन्थ ऐसे रक्खे हैं, जो अवश्य छपकर प्रजा के सामने आने चाहियें। उनसे समाज और देश को ज्ञान की राह मिलेगी, तथा अज्ञान का नाश होगा। परन्तु स्वामीजी तो वर्तमान परिस्थिति को देखते हुए हर ग्रंथ को लिखने के पश्चात् उसको लिफाफे में बन्द करके उसके ऊपर लिख देते है कि—

"वोद्धारो मत्सर ग्रस्ताः, प्रभवः समय दूषिताः।
अबोद्धा अपहस्तश्चान्ये, जीर्णमंगे सुभाषितम् ॥

अर्थात्—ज्ञानी लोग अभिमान में रहते हैं, धनी भी अभिमान से दूषित हैं। मूर्ख तो वैसे ही नष्ट हुए पड़े हैं। इसलिए ज्ञान शरीर में रहता हुआ ही वूढ़ा हो जायेगा, अर्थात् यह ज्ञान हमारे शरीर के साथ ही नष्ट हो जायेगा। यह आर्य समाजियों के लिए दुर्भाग्य की बात नहीं तो और क्या है। परन्तु इतना होने पर भी पूज्य स्वामीजी महाराज ने अपने पास रख-रखकर एक ऐसी सेना तैयार की है, जो सारे देश में, उपदेशक, भजनोपदेशक एवं अध्यापकों तथा अन्य रूपों में समाज का ऋषि के सिद्धान्तों का प्रचार व प्रसार कर रहे हैं। (शिष्यों की तालिका देखने के लिए अमर स्वामी प्रकाशन विभाग के ही अन्तर्गत प्रकाशित अमर गीतांजलि नामक पुस्तक में देखिये) इस कार्य में अमर स्वामी जी महाराज को किसी संस्था ने या किसी व्यक्ति ने कोइ भी सहायता नहीं की, उन युवकों को तैयार करने का सभी खर्च पूज्य स्वामी जी महाराज अपने पास से करते हैं। जो उपदेशों द्वारा धन प्राप्त होता है, वह उसे विद्यार्थियों पर खर्च कर देते हैं।

इसी कारण से स्वामी जी के पास कोई पैसा जमा नहीं है, उन्होंने सब कुछ समाज को ही समर्पित कर दिया, कोई समाज ऐसा नहीं है जो यह कहे कि स्वामी जी महाराज ने वहां पर दक्षिणा में झगड़ा किया, या कोई व्यक्तिगत मांग की हो। बल्कि कई समाजें तो ऐसी हैं, जिन्होंने उनको या तो कुछ भी दिया ही नहीं, अगर दिया भी तो वह इतना कि उससे किराया भी पूरा नहीं हुआ।

परन्तु ! स्वामीजी महाराज की यह विशेषता नहीं तो और क्या है कि दोबारा फिर अगर उस समाज का निमंत्रण आ गया तो फिर चले गये मना नहीं करना, अगर कहीं से पत्र आ जाये कि आप रुपया कितना लेंगे, तो स्वामी जी साफ शब्दों में उत्तर दिलवा देते हैं, कि हम उपदेशक हैं, बनिये (व्यापारी) नहीं है, हमारा काम उपदेश करना है, दक्षिणा श्रद्धा पर आधारित होती है, वह सौदे की चीज नहीं हैं। जो भी उपदेशक सौदागर बनकर आना चाहें आप प्रसन्नता से उनको बुला सकते हैं, आपके यहां मैं आने में असमर्थ हूं। स्वामी जी कभी इन छोटी-छोटी बातों को ध्यान में ही नहीं परन्तु हमारा कर्त्तव्य है कि, ऐसे विद्वानों से जो भी ज्ञान प्राप्त हो सके उसे प्राप्त करें। नहीं तो बाद में पछताने से लाते कुछ नहीं बनेगा मरने पर दो मिनट का मौन रखकर उनकी आत्मा को श्रद्धांजलि दे देना ही हम अपना परम कर्त्तव्य समझते हैं। परन्तु जीते-जी उनसे कोई लाभ नहीं लेते। दूसरे एक समस्या और भी है कि लोग आर्य समाज के साहित्य को महंगा कहते हैं, सब कहते हैं कि गोरखपुर की पुस्तकें देखिये कितनी सस्ती हैं। अब उन भोले लोगों को यह क्या पता है कि वहां पर बिरला, डालमियां, मोदी मोहताओं की झूठन भी जाती है।

ये लोग करोड़ों रुपया इधर-उधर से कमाकर उसका स्वल्पांश धर्म खाते के नाम वहां भेजकर अपने आप को पाप से मुक्त समझते हैं। और एक विशेष बात यह भी है कि उनकी पुस्तकें लाखों की संख्या में छपती हैं, इसलिए भी सस्ती पड़ती हैं, दूसरे उनको ये अमीर लोग और श्रद्धालु जन इतनी झूंठन फैंक देते हैं कि, जितने में वह पुस्तक तैयार हुई है, उससे ज्यादा दान एकत्रित हो जाता है, इसलिए वे जो भी पुस्तक का मूल्य रखते हैं, वह भी उनकी तरफ से ज्यादा ही होता है।

अब हमें तो कोई लागत का दसवां हिस्सा भी देने को तैयार नहीं होता। एवं पुस्तकों की बिक्री कम होने की वजह से कम संख्या में छपती है, इसलिए हमारी पुस्तकें उनको महंगी नजर आती है।

परन्तु फिर भी हम अपनी तरफ से मूल्य जहां तक भी होता है, कम ही रखते हैं। मुझे विश्वास है इस लेख को पढ़कर धनी व बुद्धिमान लोग विचार करेंगे, तथा कोई योजना इस तरह की बनायेंगे जिससे भोले लोगों की यह शिकायत भी दूर हो सके तथा इन अमूल्य ग्रंथों का प्रकाशन हो सके, जिससे अधिक से अधिक लोग उनसे लाभ उठा सकें।

मैं यह समझता हूं, कि महर्षि के सिद्धान्तों के मानने वालों के गलत होने से महर्षि के सिद्धांत गलत नहीं हो सकते। इसलिए मैं तो केवल इसी विचार से कार्य करता चला जा रहा हूं। हां ! अगर कुछ सभाएं अथवा धनी मानी सज्जन इस प्रकाशन की ओर भी ध्यान करेंगे तो यह कार्य बड़ी तेजी से तथा बड़ी सुगमता से आगे बढ़ सकेगा, और अच्छे अच्छे ग्रन्थ स्वाध्याय शीलों की भेंट किये जा सकेंगे।

विदुषामनुचर :
लाजपत राय आर्य
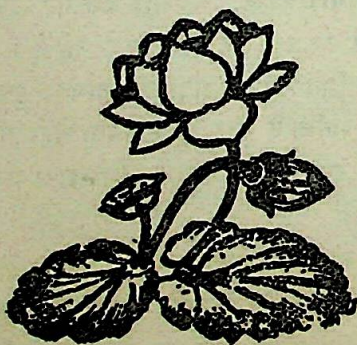
शास्त्रार्थ की आवश्यक बातें

(श्री पं० बिहारीलाल जी शास्त्री काव्यतीर्थ शास्त्रार्थ महारथी)

यद्यपि अब तो शास्त्रार्थ समाप्त से ही हो गये हैं, परन्तु अब से चालीस वर्ष पहले शास्त्रार्थों की धूम मची रहती थी। तर्क और बुद्धि से बैर रखने वाले कुछ राजनैतिक नेताओं ने प्रचार किया कि शास्त्रार्थों से मजहबी झगड़े पैदा होते हैं। अत: शास्त्रार्थ बन्द होने चाहिये परन्तु यह बात निर्मूल थी, जब शास्त्रार्थ होते थे तब रात के बारह-बारह बजे तक मस्जिदों में शास्त्रार्थ हुए हैं और मौलवी तथा पंडित हाथ मिलाकर विदा होते थे। बाज-बाज दफा तो एक ही स्थान में दोनों ठहरते और शास्त्रार्थ करते थे। शास्त्रार्थों के कारण एक पक्ष दूसरे पक्ष के ग्रंथ पड़ता था और विचार करता था। इससे बुद्धिवाद और सहिष्णुता (Tolerance) बढ़ते थे, जब से शास्त्रार्थ बन्द हुए तबसे मजहबी संकीर्णता-तंग दिली और असहिष्णुता (Intolerance) बढ़ गयी।

स्वराज्य मिलने के बाद तो मुसलमानों ने आर्य समाज में आना ही बन्द कर दिया, और इन २८ वर्षों में २५ या २६ साम्प्रदायिक दंगे हुए। विचार के स्थान को मानसिक विद्रोह ने ले लिया।

शास्त्रार्थ से पहले नियम निर्धारित करने आवश्यक हैं, और पक्ष प्रतिपक्ष निश्चित हो जाना चाहिये, शास्त्रार्थ का अध्यक्ष जनता पर प्रभाव रखने वाला व्यक्ति हो, और समझदार भी।

शास्त्रार्थ में जय-पराजय का निर्णय सदा जनता के अधिकार में रहना चाहिए क्योंकि जनता के विचार बदलने को ही शास्त्रार्थ होता है। जनता में लिखित शास्त्रार्थों की बात समय की बरबादी के अतिरिक्त कुछ नहीं हैं, शास्त्रार्थ मौखिक ही होने चाहिए, दोनों पक्ष समय का पालन करें। और अध्यक्ष समय का निर्देश करें, तथा जनता को शान्त रक्खें।

जनता को हर्ष या खेद प्रकट करने के लिए ताली बजाना वा शोर करना ये न होने दिया जावे, केवल मनों में ही जनता विचार करें, पक्ष तथा प्रतिपक्ष के नियम न्याय दर्शन में दिये हुए हैं। उनसे बाहर होने वाले वक्ता को रोकना अध्यक्ष का कर्त्तव्य है, शास्त्रार्थ तीन प्रकार का होता है, १. वाद, २. जल्प, ३. वितण्डा।

वाद—प्रमाण, तर्क, साधनोपालम्भः सिद्धांताविरुद्धः पचावयबोपपन्नः पक्ष प्रतिपक्ष परिग्रहो वादः।

(न्याय दर्शन १-२-१)

उचित प्रमाण और तर्कों से अपने पक्ष को सिद्ध करना और विपक्ष का उपालभ्य (खण्डन) करना, सिद्धांत के विरुद्ध न होना, पांच अवयवों से युक्त पक्ष और प्रतिपक्षों का ग्रहण करके जो कथोपकथन हो वह वाद है।

प्रतिज्ञा हेतूदांहरणोपनयन, निगमान्यवयवाः॥

(न्याय दर्शन १-१-३२)

१. प्रतिज्ञा (साध्य) २. हेतु (साधना) ३. उदाहरण ४. उपनय (इन्हें युक्त करना) ५. निगमन (पूरी संगति के साथ मेल करा देना) ये पांच अवयव हैं, शास्त्रार्थ (वाद) के।

जल्प—?

यथोक्तोपपन्नश्छल जाति निग्रह स्थान साधनोपालम्भो जल्पः ।

(न्याय दर्शन १-२-२)

प्रतिज्ञा आदि से युक्त, छल जाति और निग्रह स्थानों से खण्डन-मण्डन जल्प है।

छल—वचन विघातोऽर्थेपपत्याछलम् । (न्याय दर्शन १-२-५१)

वक्ता के भावों के विरुद्ध कल्पना करके वक्ता के पक्ष पर आक्षेप करना भूल है, यह वाक् छल उपचार छल आदि कई प्रकार का होता है।

जाति :—साधर्म्य वैधर्म्याभ्यां प्रत्यवस्थानं जातिः । (न्याय दर्शन १-२-५६)

विवाद करना और सब नियमों की उपेक्षा करना जाति कहाता है।

निग्रह-स्थान—विप्रतिपत्तिरप्रतिपत्तिश्च निग्रह स्थानम् । न्याय दर्शन १-२-६०

वक्ता के कहे हुए को उल्टा समझना और विवाद करना निग्रह स्थान है, जाति और निग्रह स्थान कई प्रकार के हैं।

हेत्वाभास :—जो हेतु सा लगे, परन्तु साध्य पर ठीक न बैठे, वह हेत्वाभास है। यथा—

सव्यभिचार, विरुद्ध, प्रकरणसम साध्यसम, कालतीता हेत्वाभासाः ।

(न्याय दर्शन १-२-४५)

सव्यभिचार अर्थात् अनैकान्तिक अतिव्याप्ति विरुद्ध प्रकरणसम साध्यसम अतीत काल ये हेत्वाभास हैं।

वितण्डा :—

स प्रतिपक्षस्थापना हीनो वितण्डा । (न्याय दर्शन १-२-४४)

प्रतिपक्ष, पक्ष स्थापना के बिना ही विवाद करने लगना वितण्डा है। शास्त्रार्थ की ये मोटी-२ बातें स्मरण रखना चाहिये, शास्त्रार्थ दो प्रकार के होते हैं।

१. सत्यासत्य के निर्णय के लिए।

२. केवल हार जीत के लिए।

हमने पौराणाणिक पण्डितों के साथ हमेशा यही देखा है कि छल से दुंद-दपाड़े से हुल्लड़ से शास्त्रार्थों में अपनी जीत कराना। वाराणसी में ऋषि दयानन्द जी के साथ शास्त्रार्थ में श्री स्वामी विशुद्धानन्द जी ने तथा अन्य पौराणिक पण्डितों ने यही किया था। विषयान्तर कर देना, हुल्लड़ मचाना और आज तक भी उनका यह व्यवहार बदला नहीं है। मौलवियों तथा पादरियों से शास्त्रार्थ आज तक शास्त्रार्थ मन्तक के अनुसार ही होते रहे हैं।

शास्त्रार्थों में ऐसे हुल्लड़ बाजों से रक्षा के लिए मजबूत स्वयं सेवकों का एक दल रखना चाहिए, शास्त्रार्थ में उत्तेजित भी कभी न होना चाहिये उत्तेजित होने वाला शास्त्रार्थ कर्त्ता पराजित हो जाता है। प्रमाण सही होने चाहिये, और अपने स्वयं देखे ग्रन्थों के हों, न कि दूसरों के बताये। दूसरों पर निर्भर रहना भी हार का कारण बन जाता है। झूठे प्रमाणों से छल कपट से नैतिकता नष्ट हो जाती है।

धर्मोपदेशकों को कभी कचहरी के वकीलों की नकल नहीं करनी चाहिए, हार हो वा जीत नैतिकता और सत्य का नाश न होने पावे।

पौराणिकों के शात्रार्थ हमने देखे हैं। नैतिकता, सभ्यता, और सत्य का गला ये लोग घोट डालते हैं। विशेषकर श्री माधवाचार्य का तो आधार ही कुतर्क, छल, असत्य रहते हैं। मुसलमान्-ईसाई विद्वान् लज्जायुक्त होते हैं पर ये माधवाचार्य आदि पौराणिक लज्जा को दूर भगा देते हैं।

अध्यक्ष—

शास्त्रार्थ में एक उत्तम अध्यक्ष होना चाहिए, जिसका जनता पर प्रभाव हो, प्रबन्ध में निपुण हो, पक्षपात रहित हो, परन्तु उसे निर्णय का अधिकार नहीं है। निर्णय तो जनता खुद अपने मन में करेगी। जनता भी प्रत्यक्ष निर्णय नहीं दे सकती जनता के विचार बदलने के लिए ही शास्त्रार्थ किये जाते हैं। हार जीत के लिए नहीं। जनता का ज्ञान बढ़े, तर्कों को समझे, पर यह काम शास्त्रार्थों में शान्ति रखने से होता है। अध्यक्ष महोदय समय का निर्देश करेंगे। और वक्ता को बदजुबानी करने से रोकेंगे। कोई भी पक्ष दुराग्रह करे तो अध्यक्ष उसे न माने स्वयं सेवक तकड़े-सावधान होने चाहिये, जो हुल्लड़ करने वालों एवं झगड़ा उठाने वालों को बाहर निकाल सकें, पुलिस का प्रबन्ध भी रहे तो अच्छा है।

प्रमाण—उन ग्रन्थों के होने चाहिये जिनको दूसरा पक्ष स्वीकार करता हो। वा बुद्धि और तर्क संगत हो।

ग्रन्थ—शास्त्रार्थ जिस विषय पर भी हो उस विषय से सम्बद्ध प्रमाणिक ग्रन्थ अपने साथ रखने चाहिये, लिखित शास्त्रार्थ—यह घरों पर बैठे-बैठे ही हो सकते हैं। इसके लिए सभा की आवश्यकता नहीं है। परन्तु समय नष्ट करने के लिए पौराणिकों ने यह ढंग रक्खा है, कि शास्त्रार्थ लिखित ही और संस्कृत में ही हो इससे जनता के पल्ले कुछ नहीं पड़ता, संस्कृत जानने वा व्याकरण अथवा दर्शन पर शास्त्रार्थ होना विद्या पर शास्त्रार्थ है, धार्मिक शास्त्रार्थ के लिए संस्कृत बोलने की आवश्यकता नहीं है। सम्भव हो तो शास्त्रार्थ के कथोय-कथन को टेप रिकार्ड कर लिया जावे।

असंगति और प्रकरण विरुद्धता—

शास्त्रार्थ को मुख्य पक्ष से हटाकर अन्यथा मोड़ देना यह काम धूर्त बेईमान, शास्त्रार्थ कर्त्ता करते हैं, हमारे शास्त्रार्थ कर्त्ताओं को इस विषय में सावधान रहना चाहिए।

शास्त्रार्थ भारत की पुरानी परम्परा है, महाराजा जनक की सभा में शास्त्रार्थ होते रहते थे, जैन, बौद्ध, चार्वाक, और वैदिक ब्राह्मणों में शास्त्रार्थ चलते रहे। शास्त्रार्थ करने से स्वाध्याय की रूचि बढ़ती है। ईसाई और पौराणिक तो शास्त्रार्थों में भाग लेते रहते हैं। हमें मुसलमान एवं अन्य मतावलम्बियों को भी सप्रेम समझा कर शास्त्रार्थों में लाना चाहिये।

बिहारी लाल शास्त्री "काव्य तीर्थ"
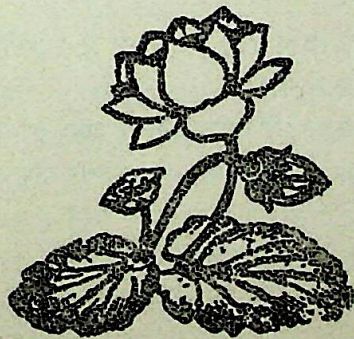
शास्त्रार्थ के सामान्य नियम

(महात्मा अमर स्वामी परिव्राजक)

शास्त्रार्थ दो पक्षों के मन्तव्य और अमन्तव्यों के सत्यासत्य की परीक्षा के लिए होता है, न कि दोनों पक्षों के वक्ताओं की विद्या की परीक्षा के लिए, इस लिए स्पष्ट है कि—

शास्त्रार्थ उस भाषा में होना चाहिए जिसको श्रोतासमुदाय सरलता से समझ सकता हो, व्याख्यान उस समुदाय को समझाने के लिए जिस भाषा में दिये जाते हैं, उस भाषा में ही, शास्त्रार्थ भी होने चाहिए, जिस भाषा में नित्य व्याख्यान होते हैं, उसको छोड़कर शास्त्रार्थ भिन्न भाषा (संस्कृत) में करने का आग्रह अनावश्यक, अनुपयुक्त, अयुक्त, और दुराग्रह मात्र हैं, जो सर्वथा असद्भावना का ही प्रमाण हैं।

जैनियों ने संस्कृत भाषा में शास्त्रार्थ करने का आग्रह कभी नहीं किया, ईसाइयों से असंख्य मुबाहिसे (शास्त्रार्थ) हुए उन्होंने अंग्रेजी या हिब्रू भाषा में मुबाहिसा करने की मांग कभी नहीं की।

मुसलमानों और अहमदियों के साथ भी असंख्य मुबाहिसे हो चुके उन्होंने कभी अरबी भाषा में मुबाहिसा करने का प्रश्न नहीं उठाया। केवल कोई, कोई पौराणिक संस्कृत में शास्त्रार्थ करने का हठ करते हैं। जो इस बात का पुष्ट प्रत्यक्ष प्रमाण है कि,—वे अपने मन्तव्यों की पोल को छुपाने के लिए ही संस्कृत की चादर में छुपना चाहते हैं। हम उनको कहते हैं कि जिस भाषा में आपने-अपने व्याख्यानों द्वारा जनता में भ्रम फैलाया है, लोगों को जिस भाषा द्वारा बहकाया है। उसी भाषा में शास्त्रार्थ होगा। और उसी भाषा में आपके मिथ्यामत की पोल खोली जायेगी। मेरा निश्चित मत है कि—पौराणिकों की इस चाल में कभी नहीं आना चाहिये। इस हठ और दुराग्रह के ये कारण हैं।

१. यदि संस्कृत में शास्त्रार्थ हुआ तो हमारे ढोल की पोल श्रोता समुदाय नहीं समझ सकेगा,।

२. यदि संस्कृत का हिन्दी में अनुवाद भी किया जायेगा तो भी पोल खुलने का डर आधा तो कम हो ही जायेगा।

३. संस्कृत और हिन्दी दोनों में शास्त्रार्थ होने से एक झगड़ा यह भी डाला जा सकता है, कि वक्ता ने संस्कृत में कुछ और तथा हिन्दी भाषा में और कुछ बोला है।

४. संस्कृत में शास्त्रार्थ होने से संस्कृत को अशुद्ध बताकर व्याकरण का झगड़ा डाला जायेगा। और सारा समय उसी में नष्ट हो जायेगा, पोल खुलने से बचाव हो जायेगा, "जान बची और लाखो पाये"।

५. सिधान्त निर्णय की दृष्टि से यदि संस्कृत में शास्त्रार्थ करने से इन्कार किया जायेगा, तो मूर्खों पर यह प्रभाव डाला जा सके, कि—"आर्य समाजी संस्कृत नहीं जानते हैं," पर यह इतना असत्य है जितना दिन को रात्रि बताना, आर्य समाज में शास्त्रियों और आचार्यों की भरमार हैं, विश्वविद्यालयों से परीक्षा पास किये हुए और उपाधिधारण किये हुओं की भी कोई कमी नहीं है। ऐसे भी बहुत हैं, जो विश्वविद्यालयों की परीक्षाओं में उत्तीर्ण न होते हुए भी धारा प्रवाह संस्कृत बोलते हैं। वे शास्त्रार्थों में संस्कृत केवल इसी कारण से स्वीकार नहीं करते हैं कि—इससे असत्य की पोल खुलने का अमूल्य समय आधा व्यर्थ नष्ट हो जायेगा।

क्या शास्त्रार्थ संस्कृत में होने से,—संस्कृत का प्रचार होगा ?

यह अयुक्तियुक्त बात एक बार हिन्दू महासभा के प्रधान श्री प्रो० राम सिंह जी ने केवल पौराणिकों को प्रसन्न करने के लिए ही कही थी। शास्त्रार्थ नित्य नहीं होते हैं, वर्षों-वर्षों के बाद कभी-कभी शास्त्रार्थ होते हैं। जिस समाज के मञ्च पर प्रो० साहब ने यह बात कही, उस समाज के जन्म से उस समय वह पहिले-पहिल शास्त्रार्थ हुए थे, वह शास्त्रार्थ यदि संस्कृत में हो जाते तो क्या संस्कृत का प्रचार हो जाता ? वहां का बच्चा-बच्चा संस्कृत बोलने लग जाता ? कदापि नहीं ? व्याख्यान इस समय तक कई हजार हो चुके जो सबके सब हिन्दी भाषा में हुए, यहां तक है कि—प्रो० साहब ने स्वयं अब तक अपनी आयु में कई हजार व्याख्यान हिन्दी ही में दिये हैं, संस्कृत का प्रचार करने की भावना उन व्याख्यानों के समय कभी जाग्रत नहीं हुई। वर्षों-वर्षों के पीछे कोई शास्त्रार्थ होगा, और वह संस्कृत में होगा तो उससे संस्कृत का प्रचार हो जायेगा, ऐसी कल्पना कभी भी सत्य नहीं मानी जायेगी, । हाँ ! इससे शास्त्रार्थ का उद्देश्य "सत्यासत्य" का जन समुदाय पर प्रकट करना, यह अवश्य नष्ट हो जाता है।

श्री प्रो० राम सिंह जी गुरुकुल विश्वविद्यालय कांगड़ी के वर्षों कुलपति रहे हैं, वहां उन्होंने कभी यत्न नहीं किया कि, वहां के रहने वाले सभी छात्र और अध्यापक सदा संस्कृत ही बोला करें।

मैं प्रो. साहिब का सदा सम्मान करता हूं और वह भी मेरा बहुत मान करते हैं पर यह व्यवस्था उनकी किसी प्रकार भी उचित नहीं जंची। उनकी व्यवस्था को सुनते ही आर्यों ने कहा कि यह केवल पौराणिकों को प्रसन्न करने का प्रयास है।

संस्कृत में लिखित शास्त्रार्थ—

पौराणिक लोग यह मांग भी अवश्य करते हैं कि, शास्त्रार्थ संस्कृत में हो, तथा लेख बद्ध हो। यह मांग सर्वथा छल युक्त है, इसको वह स्वीकार कर सकते हैं, जो शास्त्रार्थ से होने वाले लाभालाभ के विषय में कुछ भी ज्ञान नहीं रखते हैं, या जो कुछ भी न करके उन अनुचित मांग करने वालों को भी प्रसन्न करके भी नेता बने रहना चाहते हैं, संस्कृत में लेखबद्ध शास्त्रार्थ से क्या हानियाँ हैं ? इस पर भी विचार करिये। जो कुछ पांच मिनट में बोला जाता है, वह पच्चीस मिनट में लिखा जाता है, पांच मिनट की संस्कृत पच्चीस मिनट में लिखी गयी। और पच्चीस मिनट में उसका हिन्दी अनुवाद लिखा गया, पचास मिनट हो गये, फिर संस्कृत को पांच मिनट में सुनाया गया, और पांच मिनट में उसका अनुवाद सुनाया गया, तो एक घण्टा समाप्त हो गया।

इसी प्रकार दूसरे पक्ष का एक घण्टा समाप्त हुआ, इन दो घन्टों के शास्त्रार्थ में दोनों पक्षों से पांच-पांच मिनट श्रोताओं की भाषा बोली गई, दो घण्टे में केवल दस मिनट श्रोता समुदाय के लिए काम में आये, यदि चार घण्टे भी शास्त्रार्थ हो, तो केवल बीस मिनट उसमें श्रोताओं के लिए होंगे। लो ! हो गया शास्त्रार्थ ! हो गया निर्णय सत्यासत्य का !! पचास मिनट तक एक पक्ष का पण्डित बैठा लिखता रहेगा, तो श्रोता क्या वहां बैठे-बैठे मक्खी मारेंगे ? इसमें भी झगड़े डाले जा सकते हैं, शुद्धा-शुद्ध संस्कृत के ऐसे शास्त्रार्थ के लिए श्रोताओं को बुलाना महामूर्खता का काम है। अपने-अपने घर से दोनों पक्षों के पण्डित लिख-लिख कर भेजते रहें, ऐसे शास्त्रार्थ महीनों भी चल सकते हैं। तथा वर्षों भी चल सकते हैं इस प्रकार के शास्त्रार्थों की मांग करना धूर्त्तता के बिना नहीं हो सकता।

मध्यस्थ निर्णायक ?

तीसरी मांग पौराणिकों की ओर से यह होती है कि' शास्त्रार्थ में जय-पराजय जीत और हार का निर्णय देने वाला भी एक व्यक्ति मध्यस्थ या निर्णायक होना चाहिए, कभी-कभी तो वह यहाँ तक भी कहते हैं कि, कोई हाईकोर्ट का जज या कोई सुप्रीमकोर्ट का जज मध्यस्थ होना चाहिये " न नौ मन तेल हो, न ······नाचेगी इस मांग में क्या कोई औचित्य है, इस पर विचार किया जायेगा तो पता लगेगा कि-यह उनकी तीसरी मांग भी सर्वथा अनुचित और शास्त्रार्थ में रुकावट डालने वाली ही है, ।

मध्यस्थ कौन और कैसा हो सकता है ?

दोनों पक्षों के विद्वानों से अधिक संस्कृत तथा उस सारे साहित्य का प्रकाण्ड पंडित हो, जो दोनों पक्षों में माना जाता हो, और जिसके दोनों पक्षों से प्रमाण दिये जाते हैं, ऐसा विद्वान मध्यस्थ या तो आर्य समाजी होगा, या सनातन धर्मी होगा। जो आर्य समाजी होगा, उसके निर्णय को पौराणिक नहीं मानेग और अगर मध्यस्थ पौराणिक होगा तो उसके निर्णय को आर्य समाजी नहीं मानेगें, और यह भी हो सकता है कि मध्यस्थ पक्षपात करे। न भी करे तो हारा हुआ पक्ष यह कह सकता हैं कि, मध्यस्थ ने पक्षपात किया है, श्री प्रो० रामसिंह जी ने आवश्यकता न होते हुए भी यह कहा कि-मैं यदि मध्यस्थ हूंगा, तो कभी पक्षपात नहीं करूँगा कुछ लोगों ने उसी समय यह कहा कि, इन्होंने तो इस समय भी आवश्यकता और अधिकार न होते हुए भी पौराणियों के असत्य पक्ष का "संस्कृत में शास्त्रार्थ और मध्यस्थ" का व्यर्थ समर्थन किया है, जिसका प्रयोजन उनकी प्रसन्नता प्राप्त करने के सिवाय कुछ भी नहीं है। ईसाई या मुसलमान मध्यस्थ हों तो दोनों पक्षों के सारे साहित्य और संस्कृत का प्रकाण्ड पंडित उनमें कहां से आयेगा ?

व्यक्तिगत निर्णय की अपील

छोटी अदालत के निर्णय की अपील बड़ी अदालत में और उसके निर्णय की अपील उससे बड़ी अदालत में, की जाती है, यहाँ तक कि सर्वोच्च न्यायालय (सुर्पीमकोट) में भी अपील की जाती है सुप्रीम कोर्ट का निर्णय यद्यपि अन्तिम होता है, तो भी क्या वह ईश्वरीय न्याय के समान हो सकता है ? कदापि नहीं। सुप्रीम कोर्ट के जज सर्वज्ञ नहीं होते है। प्रश्न यह है कि-क्या मध्यस्थ के निर्णय की अपील भी हुआ करेगी ? यदि हाँ ! तो वह क्या निर्णय हुआ ? फिर प्रश्न है कि राज्य नियमों के पंडित धार्मिक सिद्धांतों का निर्णय दें, यह ऐसा ही है जैसा वकील द्वारा रोगों की चिकित्सा, और वैद्ययाहकीम द्वारा मुकदमा। यदि मध्यस्थ द्वारा ही जय पराजय और सत्यासत्य का निर्णय लेना हो, तो कमरे में दो पंडित शास्तार्थ करें, जज साहिब निर्णय दे दें, उसे प्रकाशित करा दिया जाये, श्रोताओं की भीड़ जमा करना व्यर्थ है, श्री आद्य शंकराचार्य जी द्वारा सैकड़ों शास्त्रार्थ हुए होंगे, मध्यस्थ तो एक मण्डन मिश्र वाले शास्त्रार्थ में ही मण्डन की मिश्र पत्नी मध्यस्थ बनी जिसने शास्त्रार्थ को कुछ भी न समझा और पति के गले की माला को मुरझायी हुई देखकर ही अपने पति के विरुद्ध निर्णय दे दिया, फिर स्वयं शास्त्रार्थ करने को बैठ गयी, सब कुछ चौपट कर दिया, उस ही के कारण मण्डन का मुण्डन हो गया, कोई भी विद्वान बुद्धिमान और सत्य का प्रचारक शास्त्रार्थ का निर्णय एक व्यक्ति द्वारा कराना पसन्द नहीं करेगा,। ये तीन अनुचित मांगें हैं। जो पौराणिकों की ओर से अपनी दुर्बलता छुपाने, शास्त्रार्थ को टालने अपना भयंकर घटाटोप दिखाने के लिए अवश्य ही रक्खी जाती है, मूर्ख उनके साथ हो जाते हैं। आर्य समाजियों को उनकी इन अनुचित मांगों के सम्मुख कदापि नहीं झुकना चाहिए, यदि इन मांगों की पूर्त्ति के बिना पौराणिक लोग शास्त्रार्थ न करें तो युक्ति, प्रमाण और सभ्यता पूर्वक, उनके मिथ्या मत की खूब पोल खोली जानी चाहिये, इनमें कभी कदापि न की जाये, और इन मागों की कलई खोली जावे। चौथी एक और भी अनुचित मांग यह है कि शास्त्रार्थ में प्रमाण केवल वेदों के ही दिये जावें। पौराणिकों की यह मांग भी सर्वथा अनुचित है, और यह मांग केवल इसलिए है कि, उनके अपने ही ग्रन्थों से उनके मन्तव्यों का खंडन और आर्य समाज के मन्तव्यों का मंडन न हो जाये, और पौराणिक पन्थ की पोल न खुल जाय, इस मांग के अनौचित्य पर भी प्रकाश डाला जाना चाहिए, इस विषय में उचित नियम यह है, जो पक्ष जिन-जिन ग्रन्थों को प्रमाणिक मानता है, उन-उन ग्रन्थों के प्रमाण उस पक्ष के लिए दिये जावेगें, यथा—जैनियों के लिए जैन ग्रन्थों के, ईसाइयों के लिए बाइबिल के, मुसलमानों के लिए कुरआन, हदीसों और तफसीरों आदि के, अहमदियों के लिए मिर्जा गुलाम अहमद आदि अहमदियों की किताबों के, पौराणिकों के लिए वेदादि के साथ पुराणादि ग्रन्थों के प्रमाण दिये जायेगें, आर्य समाजियों के लिए वेद तथा वेदानुकूल दर्शन उपनिषद तथा ऋषि दयानन्द जी के ग्रन्थ प्रमाण देने योग्य है, उपरोक्त रेखा वाला नियम

सबके लिए समान रूप से लागू हो सकता है, कि "जो पक्ष जिन-जिन ग्रन्थों को प्रामाणिक मानता है, उन-उन ग्रन्थों के प्रमाण उस पक्ष के लिए दिये जावें। केवल वेद के प्रमाणों वाला नियम कहीं भी उचित नहीं है।

सार रूप में नियम यह हुए

१. जिस भाषा में व्याख्यान दिये जाते हैं, जिस भाषा को श्रोता लोग समझते हैं। उसी भाषा में शास्त्रार्थ होना चाहिये, क्योंकि शास्त्रार्थ उन्हीं को सुनाने-समझाने तथा उन्हीं पर सत्यासत्य प्रकट करने के लिए होते हैं, शास्त्रार्थ कर्ताओं की योग्यता का प्रदर्शन करने या उनकी योग्यता की परीक्षा लेने के लिए नहीं।

२. शास्त्रार्थ-श्रोताओं के सम्मुख केवल मौखिक होना चाहिये। लेख वद्ध ही करना हो तो जन समुदाय को बुलाना व्यर्थ है, अपने-अपने घरों से लिख-लिख कर दोनों पक्ष भेजते रहें। साथ-साथ समाचार पत्रों में छपता रहे, या एकत्रित होकर पुस्तकाकार हो जावे।

३. शास्त्रार्थ के समय बताने तथा वक्ताओं को विषयान्तर में जाने से रोकने तथा श्रोताओं को नियन्त्रण में रखने के लिए एक या दो अध्यक्ष होने चाहिये।

४. जो पक्ष जिन-जिन ग्रन्थों को प्रामाणिक मानता है, उसके लिए उन-उन ग्रन्थों के प्रमाण दिये जायें।

५. एक समय में तीन घण्टे से अधिक शास्त्रार्थ नहीं होना चाहिए, पहली बारी में १५-१५ मिनट तथा आगे १०-१० मिनट वक्ता बोले, आवश्यकता समझें तो अन्तिम बारी में भी १५-१५ मिनट बोला जाय।

६. "अध्यक्ष" शास्त्रार्थ के विषय में कुछ सम्मति न दें, वह केवल आवश्यकतानुसार धन्यवाद तथा सभा समाप्ति को सूचना दें। श्रोता लोग कोई असभ्यता तथा अशिष्टता का व्यवहार न करें, जयकारे न लगायें तथा तालियां न बजायें।

७. दोनों पक्षों के शास्त्रार्थकर्त्ता-परस्पर सभ्यता से वाक् व्यवहार करें व्यक्तिगत आक्षेप कोई न करें।

८. दोनों पक्षों के सम्माननीय महानुभावों के नाम सभ्यता और सम्मान के साथ लिये जावें अपमानजनक शब्द न बोले जायें।

९. दोनों पक्षों के वक्ता शास्त्रार्थ में माधुर्य रखने तथा कटुता से बचने का विशेष ध्यान रक्खें, इन नियमों पर उभय पक्ष के अधिकारियों के हस्ताक्षर होने चाहिये और इन नियमों की कापियां दोनों पक्षों के पास रखनी चाहिये।

कुछ अपने साथियों के लिए

१. शास्त्रार्थ के लिए तैयारी सदा करते रहना चाहिये, युद्ध, यदा, कदा वर्षों के पीछे होते हैं, पर सिपाहियों की परेट तथा युद्धाभ्यास सदा होता रहता है, ध्यान रखना चाहिये कि "अनभ्यासे विषं विद्या"

२. बहुत कुछ कंठस्थ रहना चाहिए, ग्रन्थ तो थोड़े संकेत के लिये रहने चाहिए, ध्यान रहे—

पुस्तकस्था यथा विद्या परहस्त गतं धनम्।
कार्यं काले च सम्प्राप्ते, न सा विद्या न तद्धनम्॥

—अर्थात पुस्तकों में छपी विद्या एवं दूसरे के हाथ में गया धन कभी समय पर काम नहीं आते, हमेशा अपने कण्ठ की विद्या तथा अपनी जेब का पैसा ही समय पर काम आता है।

३. विरोधी के प्रत्येक प्रश्न-उत्तर-आक्षेप या प्रमाण नोट करते जाना चाहिये, विरोधी का भाषण सावधान होकर सुनना चाहिये।

४. विपक्षी की अनावश्यक बातों का संक्षेप में संकेत कर देना चाहिये, उन पर अधिक समय नहीं लगाना चाहिये, यदि उन्हीं में समय समाप्त हो गया और आवश्यक बातों को कहने के लिए समय न बचा तो विपक्षी अपने उद्देश्य में सफल हो गया, उसने अनावश्यक बातों में फंसा लिया।

५. आवश्यक बातें अवश्य कहनी चाहिये।

६. अधिक लम्बा बोलने के अभ्यासी शास्त्रार्थ में सफल नहीं होते हैं। अतः अपने उत्तर को संक्षेप में कहना चाहिये, पर इतना संक्षेप भी न करें कि बात ही न स्पष्ट होने पावे।

७. शास्त्रार्थ कर्त्ता के पास युक्तियों और प्रमाणों का बाहुल्य होना चाहिये।

८. शास्त्रार्थ के विषय में अपना पक्ष तथा विरोधी पक्ष दोनों का बहुत ज्ञान प्राप्त कर लेना चाहिये।

९. जब शास्त्रार्थ करने का समय आवे तब शास्त्रार्थ के विषय पर विशेष तैयारी कर लेनी चाहिये।

१०. अपने साथियों से विचार विनिमय करने, आवश्यक बातें पूछने तथा बताने में कभी संकोच नहीं करना चाहिए।

११. कहने योग्य प्रमाणों-युक्तियों और कहने योग्य प्रश्नों की सूची बनाकर मोटे-मोटे अक्षरों में लिखकर अपने पास रखनी चाहिये, और प्रमाणों की पुस्तकों में प्रमाण का संकेत तथा पृष्ठांक लिखकर कागज की पट्टियां लगा रखनी चाहिये।

१२. प्रमाण निकालने वाले सज्जन को सारे प्रमाण देख लेने चाहिये, सूची उनके पास भी रहे तो अच्छा है, प्रमाण निकालने में बहुत फुर्ती से काम लेना चाहिये। प्रमाण निकालने वाले की सुस्ती अच्छी नहीं उनकी असावधानी शास्त्रार्थकर्त्ता के साथ शत्रुता का काम देगी।

१३. शास्त्रार्थ में जिन ग्रन्थों के प्रमाण देने हों, उनको उस समय वेदी पर अवश्य रखना चाहिये। जो ग्रन्थ पास नहीं है, अथवा जिस प्रमाण का सही पता ज्ञात नहीं है, उस प्रमाण का देना पराजय का कारण बन सकता है।

१४. शास्त्रार्थ कर्त्ता को क्रोधावेश में नहीं आना चाहिये।

१५. शास्त्रार्थ करने के लिए उसी व्यक्ति को आना और लाना चाहिये, जिसके पास प्रमाणों का भण्डार हो जिसके पास बहुत सी युक्तियां हों और जिसको तात्कालिक बुद्धि हो जो प्रत्युत्पन्न मति हो, जिसने स्वपक्ष तथा परपक्ष को भी देखा हो, और समझा हुआ भी हो।

१६. वक्ता की वाणी में मिठास, बल, ओज और चमत्कार होना चाहिये, प्रश्न करते और उत्तर देते समय बहुत मनोरंजक वाक्य शैली का प्रयोग करने का अभ्यास रहना चाहिये।

१७. प्रथम समय में उपक्रम और अन्तिम समय में उपसंहार बहुत प्रभावोत्पादक होना चाहिये। मैंने सारी आयु शास्त्रार्थ किये हैं, मेरा देश भर के पौराणिकों एवं अन्य मतावलम्बियों को पहले भी खुला चैलेञ्ज है कि वैदिक धर्म (आर्य समाज) के सिद्धांत अकाट्य तथा सर्व प्रकार से सत्य हैं। इनको कोई भी असत्य सिद्ध नहीं कर सकता। मैं अब भी हर समय शास्त्रार्थ करने को तैयार हूँ, संसार का कोई भी मतानुयायी आर्य समाज के सिद्धान्तों पर, अगर उसे इनके सत्य होने में कोई शंका है तो वह शास्त्रार्थ कर सकता है।

प्रस्तुत पुस्तक के अन्त में उभय पक्ष तथा अपने पक्ष के विषयों पर खुला चैलेञ्ज छपा हुआ है। जो कि तीस वर्षों से हजारों की संख्या में कितनी ही बार छपवा-छपवा कर बांटे ज चुके हैं।

वैदिक धर्म का—
"अमर स्वामी परिव्राजक"

मुझे शास्त्रार्थ करने की प्रेरणा कैसे मिली ? और उनका आरम्भ कैसे हुआ ?

मुझको कुछ ऐसा भान होता है कि मेरे भीतर कुछ ऐसे संस्कार पूर्व जन्म के थे जिनसे मुझको वाद (शास्त्रार्थ) अच्छा लगता था। बाल्यकाल से संगीत में भी और साहित्य में वहुत रुचि थी।

मेरा सारा परिवार आर्य समाजी था। मेरे पिता जी विद्वान नहीं थे पर ऋषि दयानन्द जी के भक्त और थोड़े-थोड़े आर्य समाजी थे।

मेरे पिता जी ने ऋषि दयानन्द का एक बार ही दर्शन किया था और एक ही व्याख्यान सुना था। उसी से वह दयानन्द जी के भक्त बन गये थे, मुझको वह सत्यार्थ प्रकाश पढ़ने की प्रेरणा दिया करते थे।

मैं यह समझ गया था कि—युद्ध विद्या सीखने के लिए झूंठा युद्ध अवश्य करना पड़ता है। मेरी रुचि शास्त्रार्थों में हो रही थी इसके लिये मैं अपने परिवार के आर्य समाजियों से-सनातनधर्मी सा बनकर नित्य वाद विवाद किया करता था।

मेरे चचेरे भाई कुंवर रामशरणसिंह जी वड़े स्वाध्याय शील आर्य समाजी थे वह मेरे साथ नित्य उसी प्रकार निर्वैर रूपसे वाद विवाद करते थे जैसे एक ही गुरू और एक ही अखाड़े के दो युवक कुश्ती लड़ने के शौकीन अभ्यास के लिये अखाड़े में लड़ते हैं न उनको हारने का दुःख होता है और न जीतने का हर्ष।

हमारे पितृव्य (पूज्य चाचा जी) श्री मुंशी सांवलसिंह जी अपने पुत्र कुंवर रामशरणसिंह जी का तथा मेरा वाद विवाद नित्य ही रात्रि को अपनी उपस्थिति में कराया करते थे।

हमारी बहस में और भी कई आर्य समाजी-भाग लेने लगे और ऐसा भी प्रायः नित्य ही होने लग गया ग्राम निवासी २०-३० और कभी-कभी अधिक व्यक्ति भी हमारे वाद को सुनने के लिये आने और बैठने लग गये।

जो और लोग वाद में भाग लेते थे वे सब भाई रामशरणसिंह जी के पक्ष में ही बोलते थे मेरे पक्ष में कोई नहीं बोलता था।

हमारे इन वादों में कटुता कभी नहीं आती थी सदा प्रेम से ही वार्तालाप होता था। मेरे विरूद्ध कई-कई व्यक्ति बोल जाते मैं धैर्य और शान्ति के साथ सबके प्रश्नों और आक्षेपों को ध्यान पूर्वक सुनता और चटाक पटाक सबके उत्तर दे डालता। परमेश्वर की अपार कृपा से स्मरण शक्ति और उत्तरों की तात्कालिक सूझ बूझ मुझको इतनी थी कि मैं उस समय के प्रश्नों के प्रभावशाली उत्तर तत्काल दे देता था।

मेरे पितामह श्री ठाकुर कुंवर सिंह जी प्रायः कहा करते कि यह कौओं में हंस उत्पन्न हो गया है। मेरे एक चाचा श्री ठाकुर हेतराम सिंह जी मुझ को अभिमन्यु बताया करते थे कहते थे कि यह गर्भ में ही पढ़कर आया है।

आर्य प्रतिनिधि सभा उत्तर प्रदेश के एक उपदेशक प्यारे लाल शर्मा हमारे ग्राम में आये तो मुझको मेरे परिवार के लोगों ने उनसे प्रश्न करने को बिठा दिया और उनको कहा कि आप इसके संदेहों को निवारण कर दीजिये यह अच्छा आर्य समाजी बन जाय।

मेरे प्रश्नों को सुनकर वह क्रोध में आ गये और मुझको धमकाने लगे। इस पर मेरे मुझसे बड़े भाई श्री ठाकुर सरदार सिंह जी जो पीछे अखिल भारतीय क्षत्रिय महा सभा के महोपदेशक बने उन्होंने पण्डित जी से कहा कि पण्डित जी आप इसकी शंकाओं का समाधान कर सकते हैं तो करिये। धमकाने का काम तो हम भी कर सकते हैं। वह पण्डित जी मेरे प्रश्नों के उत्तर न दे सके।

एक बार गुरुकुल सिकन्द्राबाद के कर्ता-धर्ता श्री पं० मुरारीलाल जी शर्मा के पास मुझको शंकाएं करने को बिठाया गया, मेरी शंकाएं सुनकर उन्होंने मुझको प्रेम पूर्वक केवल इतना ही कहा कि-बेटा अभी और पढ़ो ! और स्वाध्याय किया करो।

बहस करने में मेरा उत्साह बढ़ता गया। मेरे परिवार में लोगों ने बाल्यकाल में भी मेरा कभी अपमान नहीं किया न कभी मेरा उत्साह घटाया।

बाहर के पौराणिको से मैं आर्य समाज के पक्ष में बोलता था और उनकी बातों का खण्डन करता उनके प्रश्नों के उत्तर देता था सत्यार्थ प्रकाश, ऋग्वेदादिभाष्यभूमिका ऋषिदयानन्द जी का जीवन चरित्र स्वामी दर्शनानन्द जी के ट्रैक्ट, रामायण महाभारत तथा बहुत सिद्धान्त सम्बन्धी पुस्तकें मैंने बाल्यकाल में ही पढ़ ली थीं।

हमारे भाई कुंवर सुखलाल जी मुझको बहुत प्यार करते थे और मेरा उनके साथ बहुत ही प्रेम था।

वह "मुसाफिर विद्यालय" आगरा की ओर से प्रचार करते थे और श्री पं० भोजदत्त जी आर्य मुसाफिर उनको अपना तीसरा पुत्र मानते थे दो पुत्र उनके श्री डा० लक्ष्मी दत्त जी आर्य मुसाफिर और पं० तारा दत्त जी वकील थे।

कुंवर सुखलाल जी मुझ को अपने साथ आगरा ले गये। उनका लक्ष्य यह था कि-यह मुसाफिर विद्यालय में प्रविष्ट न होगा तो भी सब के सम्पर्क में रहता-रहता बहुत कुछ सीख जायेगा।

मेरा विवाह १४ वर्ष की आयु में ही हो गया था। मुसाफिर विद्यालय में विवाहित युवक प्रविष्ट नहीं किये जाते थे।

मैं कुंवर सुखलाल जी के साथ आगरा चला गया, वहां मुसाफिर विद्यालय में नित्य ही रात्रि को विद्यार्थियों के आपस में शास्त्रार्थ हुआ करते थे और श्री पं० भोजदत्त जी आर्य मुसाफिर डा० लक्ष्मी दत्त जी आर्य मुसाफिर पं० तारा दत्त जी आर्य मुसाफिर ये तीनों उस बहस को नित्य सुना करते और उस बहस के गुण दोष बताया करते थे।

एक दिन विद्यार्थी लोग—मांस भक्षण पर वाद कर रहे थे मैं भी बोलना चाहता था। मैंने पास बैठे हुए एक विद्यार्थी को कुछ बताने का यत्न किया कि आप ऐसा इस विषय में कहो।

श्री डा० लक्ष्मी दत्त जी ने भांप लिया कि-यह लड़का बोलना चाहता है। उन्होंने मुझ से पूछा कि-तुम इस बहस में बोलना चाहते हो ? मैंने कुछ संकोच के साथ कहा कि हांजी बोलना चाहता हूँ। उन्होंने कहा-अच्छा बोलो !

मैं उस दिन मांस खाने के पक्ष में बोला क्योंकि मैं उस ओर बैठा था जिस ओर मांस के पक्ष में बोलने वाले बैठे थे।

दूसरे दिन अवतार वाद पर भी इसी प्रकार शास्त्रार्थ हुआ उस दिन उधर बैठा हुआ था जिधर अवतार सिद्ध करने वाले बैठे थे। उस दिन मैं अवतार के पक्ष में बोला।

श्री डाक्टर जी ने यह देखा कि और विद्यार्थी नित्य तैयारी करके किसी पक्ष में बोलते हैं और यह बिना तैयारी किये ही अपनी ओर बैठे हुओं के पक्ष में बोलता है और अच्छा बोलता है आगे वह पूछने लगे कि—तुम किस ओर बोलोगे तो मैं कहता कि जिस पक्ष को आप कमजोर समझें उधर ही मुझ को मिला दें। परीक्षार्थ डाक्टर जी ने यह भी किया कि सारे विद्यार्थी एक ओर हो जायें क्या तुम अकेले एक पक्ष में बोल सकते हो ! मैंने कहा कि बोलूंगा। ऐसा हुआ भी कि सारे विद्यार्थी एक पक्ष में रहे और मैं अकेला दूसरे पक्ष में, साथ ही मैंने यह भी कह दिया कि जो पक्ष कमजोर समझा जाय, वह मुझको दे दीजिये और जो पक्ष प्रबल समझा जाय वह इन सब को दे दीजिये।

इस प्रकार मेरी युक्तियां और मेरी शैली वाक्चातुरी आदि देखकर श्री डाक्टर जी ने कहा कि-तुम इस विद्यालय में प्रविष्ट हो जाओ। मैंने कहा कि-आपके यहां तो विवाहित विद्यार्थी प्रविष्ट नहीं किये जाते हैं, मैं विवाहित हूँ।

उन्होंने आपस में विचार करके कहा कि तुमको इस नियम की छूट दी जाती है। मैं सहर्ष प्रतिष्ट हो गया।

आगरा में कई मेले होते थे उनमें हम विद्यार्थी लोग आपस में शास्त्रार्थ करते थे। हमारा शास्त्रार्थ सुनने के लिए मेले में भीड़ इकट्ठी हो जाती थी। इस प्रकार अभ्यास भी बढ़ता गया उत्साह और शौक बढ़ता गया।

पौराणिकों ईसाइयों और मुसलमानों से छोटे-छोटे मुबाहिसे विद्यार्थी अवस्था में भी होते रहते थे। मैं अपने विद्यालय में रहता हुआ ही इस कार्य के लिये अपने साथियों में उत्तम माना जाने लगा था। इस पर रुष्ट होकर एक पुराना विद्यार्थी तो विद्यालय को ही छोड़कर चला गया था।

आर्य प्रादेशिक प्रतिनिधि सभा में उपदेशक नियुक्त होने पर पहिला शास्त्रार्थ पिण्डीघेप जिला अटक सीमा प्रान्त में हुआ था उसमें विजय पाकर शास्त्रार्थ केहरी बन गया।

फिर श्री महात्मा हंसराज जी ने मुझको यह सुविधा दे दी कि-उत्सवों पर शुक्रवार को जाना और सोमवार को वापिस लाहौर आ जाना चार दिन स्वाध्याय करना।

डी. ए. वी. कालिज का विशाल पुस्तकालय प्रयोग करने की मुझको पूरी सुविधा थी। परमेश्वर की कृपा।

अमर स्वामी परिव्राजक
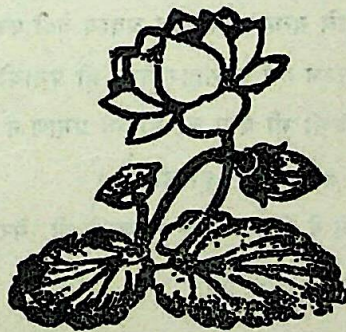
शास्त्रार्थ कर्त्ताओं के लिए निम्न योग्यताओं का होना तथा उनके लिए संक्षिप्त नियम व निर्देश

१. वक्ता को निर्भीक एवं साफ कड़कती हुई आवाज में बोलने का अभ्यास होना चाहिये।

२. प्रमाण देने के लिए उनका कठंस्थ होना अत्यावश्यक है। एवं वही प्रमाण दें, जिनके पते ठीक याद हों।

३. व्यक्तिगत आक्षेप न करके पहले किये गये प्रश्नों के उत्तर एवं बाद में प्रश्न करने चाहिये।

४. विपक्षी की अनावश्यक बातों का केवल संकेत करके अपनी बातों को रखना चाहिये। अनावश्यक बातों में समय बर्बाद न किया जावे।

५. वक्ता को चाहिए, जो भी बात कहे उसे पूर्ण रूप से स्पष्ट करे। अन्यथा उसके कहने का कोई लाभ नहीं होता तथा उसका परिणाम अच्छा नहीं रहता।

६. शास्त्रार्थ कर्त्ता को युक्तियां एवं प्रमाण अधिक से अधिक संख्या में याद रहने चाहिये।

७. शास्त्रार्थ कर्त्ता को हमेशा तैयारी करते रहना चाहिये जिससे अभ्यास बना रहे। जब शास्त्रार्थ का समय आवे तब विशेष तैयारी करे।

८. शास्त्रार्थ कर्त्ता को प्रमाण देने वाले ग्रन्थ अपने साथ अवश्य वेदी पर रखने चाहिये।

९. शास्त्रार्थ कर्त्ता के बोलने का आरम्भ एवं उपसंहार बहुत ही प्रभावोत्पादक होना चाहिये।

१०. शास्त्रार्थ कर्त्ता को चाहिये कि किसी भी बात का संदिग्ध प्रमाण न देवें। जिसका निश्चय हो वही प्रमाण दें। अन्यथा हार हो जावेगी।

नोट:—विस्तृत नियम व निर्देश देखने के लिए प्रस्तुत पुस्तक में ही मेरा लेख "शास्त्रार्थ के सामान्य नियम" पढ़िये।

वैदिक धर्म का—
"अमर स्वामी परिव्राजक"

[प्रथम शास्त्रार्थ]
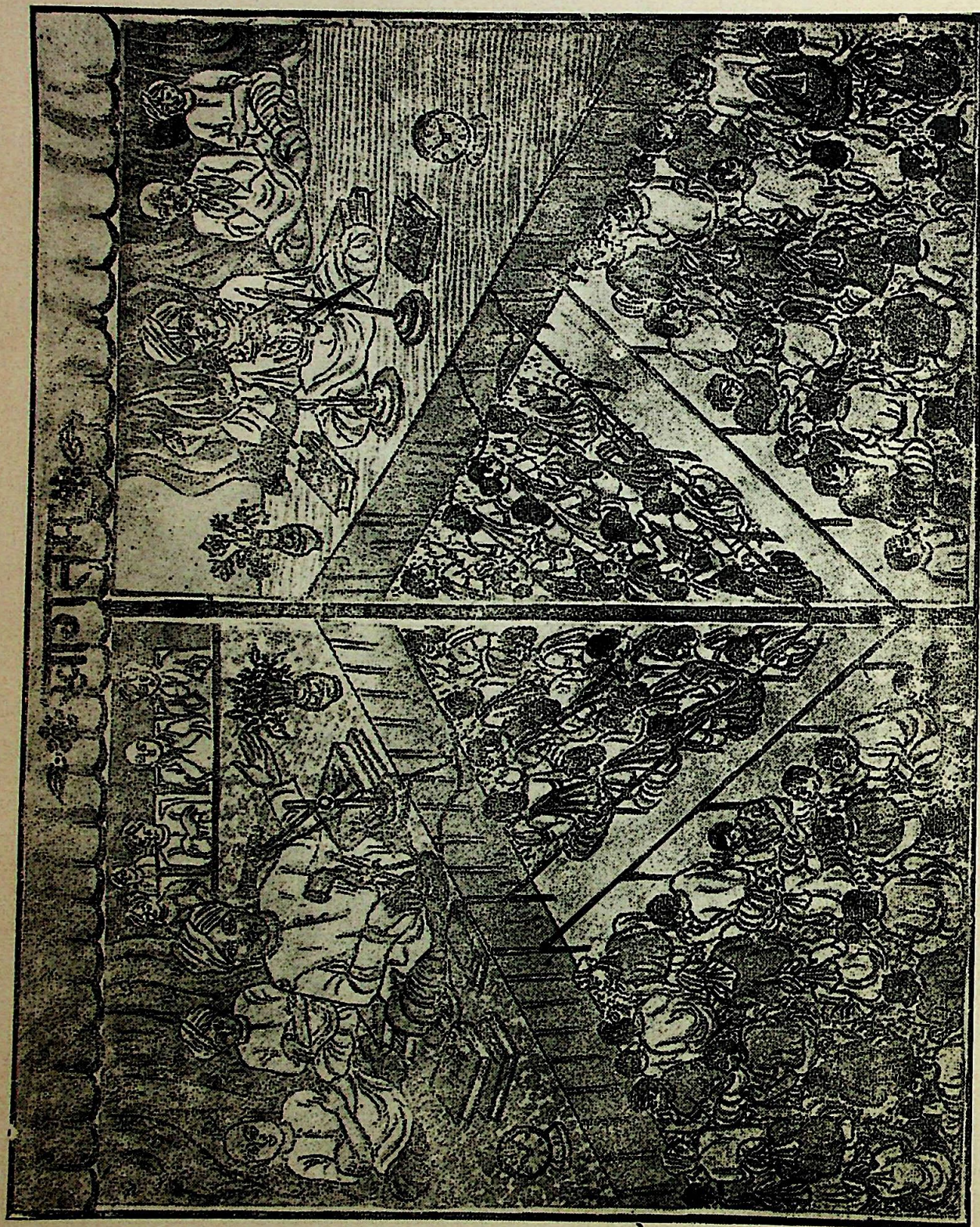
(शास्त्रार्थ करते हुए)

"श्री ठाकुर अमरसिंह जी शास्त्रार्थ केशरी तथा श्री पौराणिक पं० गीताराम जी शास्त्री"

स्थान : "पिण्डीघेप" जिला अटक (कैम्बलपुर) सीमा प्रान्त

(वर्तमान-पाकिस्तान)
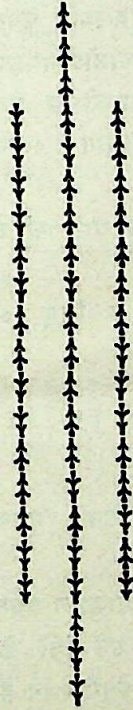
विषय : क्या मृतक श्राद्ध वेदानुकूल है

प्रधान : लाला अमीर चन्द जी रिटायर्ड तहसीलदार

दिनांक : तीन फरवरी सन् १९१९ ई०

शास्त्रार्थकर्त्ता : शास्त्रार्थ केसरी श्री अमर सिंह जी आर्य पथिक ।
(वर्तमान अमर स्वामी जी महाराज)

पौराणिक पक्ष की ओर से : पौराणिक पं० श्री गीता राम जी शास्त्री ।

॥ ओ३म ॥

श्री पं० गीतारामजी शास्त्री

सज्जन पुरुषों !

[यजुर्वेद अध्याय १९ मन्त्र ५७ और ५८ इस प्रकार हैं]
उपहूताः पितरः सोम्यासो बर्हिष्येषु निधिषु प्रियेषु ।
त आगमन्तु तइह श्रुवन्त्वधि ब्रुवन्तु तेऽवन्त्वस्मान् ॥५७॥
आयन्तु न पितरः सोम्यासोऽग्निष्वात्ता पथिभिर्देवयानैः ।
अस्मिन् यज्ञे स्वधयामदन्तोऽधि ब्रुवन्तु तेऽवन्त्वस्मान् ॥५८॥

इन दोनों मन्त्रों में "मृतक श्राद्ध" का स्पष्ट विधान है। इन मंत्रों में कहा गया है कि—जो पितर अग्नि में जलाए गये हैं, वह श्राद्ध में आवें और भोजन करें।

वेद में "मृतक श्राद्ध" का विधान है, और मृतक श्राद्ध को आर्य समाज नहीं मानता, तो वेद विरोधी समाज हुआ कि नहीं ? उत्तर दीजिए।

नोट—श्री पं० गीताराम जी शास्त्री को बोलने के लिए १० मिनट दिये गये थे, परन्तु वह केवल तीन मिनट बोलकर ही बैठ गये।

शास्त्रार्थ केसरी श्री पं० अमर सिंह जी

सत्यांभिलाषी सज्जनों !

श्री पं० जी ने यजुर्वेद के दो मंत्र बोले हैं। और उनसे "मृतक श्राद्ध" सिद्ध होता है, वह प्रतिज्ञा की है, परन्तु दोनों मंत्रों में न तो "मृतक" शब्द हैं और न "श्राद्ध"।

"छिन्ने मूले नैव शाखा न पत्रम्" ॥

जड़ ही कट गई, अब न शाखा होगी न पत्ते ! इन मंत्रों के शब्दों से यह सिद्ध होता है कि—जीवित माता-पिता तथा पितामह आदि को बुलाकर भोजन कराने का इनमें वर्णन है। सुनिये मैं इनका अर्थ बोलता हूं।

"उपहूताः.........पितरः.........आगमन्तु"

इसका अर्थ यह है, "बुलाये हुए पितर आवें" !

अब आप ही विचारिये, एक नाम के दो मनुष्य हों, उनमें से एक मर गया हो आप मुझे ही मान लीजिये। अमर सिंह दो थे, एक मर गया और एक जीवित है, एक ग्रहस्थ पुरुष किसी को कहें कि अमर सिंह को बुला लाओ वह भोजन कर ले।

आप सोचिये ! जिस व्यक्ति को भेजा जाय, वह यह पूछेगा कि कौन से अमरसिंह को बुला लाऊं ? क्या जो मर गया उसको ?

कहिये ऐसा पूछने वाले को पागल कहा जायेगा या नहीं ? मेरे विचार में तो अवश्य ही सब लोग उसे पागल बतायेंगे। और कहेंगे कि अरे मूर्ख ! कहीं मरे हुए भी बुलाये जाते हैं। जो जीवित है उसे बुलाकर ला। स्पष्ट है कि—

जीवित पितरों को बुलाने की बात है, मरे हुओं की नहीं।

दूसरी बात यह ध्यान देने की है, कि इन मंत्रों में चार शब्द हैं जो जीवितों के लिए ही कहे जा सकते हैं, मरे हुओं के लिए नहीं।

१. "श्रुवन्तु तें"

वे हमारे वचन सुनें।

अब आप लोग पण्डितजी से पूछिये कि मरा हुआ कैसे सुनेगा ?

जब कोई व्यक्ति मरता है, तब उसके सम्बन्धी रो रोकर कहते हैं, "कुछ हमारी भी सुनो ! मरे हुए की लाश पड़ी है, उसके कान भी हैं, फिर भी नहीं सुनता शव जलने के साथ साथ कानों के नष्ट होजाने पर वह कैसे सुनेगा।

२. "अधिब्रुवन्तु"

हम से भली प्रकार से बोलो।

लाश पड़ी होने पर सारे सम्बन्धी कहते हैं "कुछ हमको तो कह जाओ" अपनी पत्नी अपने पुत्रों को कुछ कहो, वह कुछ भी नहीं बोलता, जलने के बाद वह कैसे बोलेगा ?

३. "अवन्त्वस्मान"

हमारी रक्षा करें !

मरा हुआ अपनी लाश की रक्षा नहीं कर सका, जलने के बाद वह अब रक्षा करने को कैसे आयेगा ? क्या बुद्धि इन बातों को स्वीकार करती है ?

पंडित जी महाराज ! चुप क्यों हो ? कुछ तो सांस निकालो।

और देखो चौथा शब्द है।

४. "स्वधयामदन्तः'

अन्न के द्वारा भोजन से तृप्त होते हुए !

क्यों भइयों ! मुर्दा भोजन कैसे करेगा ? और कैसे तृप्त होगा ? अगर किसी ने मुर्दे को कहीं पानी भी पीते देखा हो तो खड़ा होकर बताये। भोजन की तो दूर की बात।

कोई खड़ा नहीं हुआ, जनता में हंसी !

स्पष्ट है कि—

जीवित पितरों को बुलाकर उनसे यह कामना की जा सकती है कि ये लोग यहां हमारे घर में—

१. भोजन से तृप्त हों
२. हमारी बातें अर्थात् प्रार्थनाएं आदि सुनें।
३. हमको उपदेश करें।
५. हमारी बातों के उत्तर दें।
५. हमारी रक्षा करें।

इन मंत्रों में क्या चारों वेदों में कहीं मृतक श्राद्ध का संकेत भी नहीं है आर्य समाज वेदों को जानता है मानता है उनका सम्मान करता है वेदों की निन्दा तो क्या अवहेलना भी कभी नहीं करता है, इसलिए आर्य समाज पूर्णरूपेण आस्तिक समाज हैं।

श्री शास्त्री जी के प्रश्न का उत्तर मैंने दे दिया और कहिये पंडित जी महाराज ! क्या पूछना है ?

श्री पं० गीताराम जी शास्त्री :—

श्री शास्त्री जी खड़े होकर बड़े जोश में बोले कि—यह अर्थ आप किसका किया हुआ बोलते है !

शास्त्रार्थ केसरी श्री पं० अमर सिंह जी

श्री ठाकुर साहब ने खड़े होकर पंडित जी से भी दुगने जोश के साथ कड़कती हुई आवाज में कहा कि—

पंडित जी महाराज ! यह अर्थ मेरा किया हुआ है अगर इसमें कोई दोष नजर आता हो तो बताइये ।

श्री पं० गीताराम जी शास्त्री

शास्त्रीजी कहने लगे कि—लो भाइयो सुना है आपने, हम तो श्री शंकराचार्य जी महाराज का किया हुआ अर्थ बोलते हैं । और ये महाराज जी अपना किया हुआ अर्थ बोलते है ! कहो ! सज्जनों !! श्री शंकराचार्य जी का अर्थ मानें या इनका मानें ? भाई हम तो श्री शंकराचार्य जी का ही अर्थ मानेंगे ।

श्री पं० अमर सिंह जी

पं० जी गर्जकर बोले कि श्री शंकराचार्य जी ने किसी वेद या एक भी वेद मन्त्र का भाष्य नहीं किया, आप बिल्कुल झूठ बोलते हैं ।

नोट :—"श्री पं० गीतारामजी शास्त्री के साथ दो पंडित सनातन धर्मी ही तिलक छाप लगाए हुए बैठे थे," उनकी तरफ श्री ठा० साहब ने इशारा करके कहा कि—

आप बताइये पण्डित जी आपने श्री शंकराचार्य जी का वेद भाष्य पढ़ा अथवा सुना है ? यदि हां तो बताइये कि किस वेद का भाष्य उन्होंने किया है और कहां छपा है ?

नोट :—श्री प्रधान लाला अमीरचन्द जी रिटायर्ड तहसीलदार के बार-बार विशेष आग्रह करने पर वह दोनों पंडित उठ खड़े हुए तथा हाथ जोड़कर बोले—

"श्री शंकराचार्य ने किसी भी वेद पर भाष्य नहीं किया" ।

यह सुनकर श्री पं० गीताराम जी शास्त्री क्रोध में भर गये, और अपने पोथी, पत्रे आदि उठाकर अपने दोनों साथियों को कोसते हुए तथा गाली देते हुए उठकर चले गये । और उन पंडितों से कहने लगे कि—

आर्य समाजियों की गवाही दे दी, मैं तुम्हारे लिए लड़ता था, तुम उनके साथी हो गये । मरो ! लो मैं जाता हूं ।

वह चले गये, शास्त्रार्थ समाप्त हो गया, और पं० अमर सिंहजी को उसी दिन से समाज के लोगों ने "शास्त्रार्थ केशरी" की पदवी दे दी । और पं० जी उसी दिन से शास्त्रार्थ महारथी हो गये ।

शास्त्रार्थ के समय आर्य प्रादेशिक सभा के महोपदेशक श्री महताराम चन्द्र जी शास्त्री, श्री पं० अमरनाथ जी मास्टर तथा श्री पं० यज्ञदत्त जी शास्त्री उक्त सभा के तीनों उपदेशक उपस्थित थे । आर्य समाज के प्रधान श्री ला० अमीरचन्द जी रिटायर्ड तहसीलदार तथा मन्त्री श्री लाला नत्थूराम जी एडवोकेट थे ।

नोट :—"श्री पं० अमरसिंह जी की आयु उस समय केवल चौबीस वर्ष की थी तथा यह शास्त्रार्थ उनके जीवन का प्रथम शास्त्रार्थ था" ।

इस शास्त्रार्थ में केवल २० मिनट ही लगे थे ।

[द्वितीय शास्त्रार्थ]

(शास्त्रार्थ करते हुए)

श्री पं० गोकुल चन्दजी शास्त्री तथा पंडित श्री ठाकुर अमर सिंह जी शास्त्रार्थ केशरी,

स्थान : "कोहाट" (सीमा प्रान्त) "फ्रान्टियर (वर्तमान पाकिस्तान)

विषय : क्या ईश्वर अवतार लेता है ?

दिनांक : २०, २१ दिसम्बर, सन् १९१९ (दिन के दो बजे)

स्थान। "कोहाट" (सीमा प्रान्त) "फ्रान्टियर"

(वर्तमान पाकिस्तान)

विषय : क्या ईश्वर का अवतार होता है ?

प्रधान : श्री मास्टर बोधराज जी

दिनांक : २०, २१, दिसम्बर सन् १६१६ (दिन के दो बजे)

शास्त्रार्थ कर्ता : शास्त्रार्थ महारथी श्री ठाकुर अमर सिंह जी 'आर्य पथिक'

(वर्तमान महात्मा अमर स्वामी जी महाराज)

एवं

सनातन धर्मियों की ओर से : श्री पं० गोकुल चन्द जी शास्त्री'

नोटः— आर्य समाज के मन्त्री मास्टर श्री नन्द लाल जी एवं श्री महता पृथ्वी चन्द जी प्रभाव शाला व्यक्ति तथा श्री बाबा हरा सिंह जी दानी पुरुष भी मौजूद थे।

नोट:—दिन के दो बजे श्री पं० गोकुल चन्द जी शास्त्री आर्य समाज मन्दिर कोहाट में प्रविष्ट हुए, गले में फूलों की माला पहिने हुए थे, बहुत से सनातन धर्मी आर्य समाज मन्दिर के द्वार तक उनके आगे शंख और घड़ियाल बड़े जोर-जोर से बजाते हुए आये।

श्री पं. गोकुल चन्द जी शास्त्री

सज्जन वृन्द !

आज के शास्त्रार्थ का विषय अवतार वाद निश्चय किया गया है। आर्य समाज ईश्वर को सर्व शक्ति-मान कहता हुआ भी अल्प शक्ति युक्त ही मानता है। आर्य समाज कहता है, कि वह परमेश्वर अवतार नहीं ले सकता, तो बताओ ! वह एक शक्ति से तो हीन हुआ।

१. मैं पूछता हूँ जो अवतार नहीं ले सकता, जन्म नही ले सकता, शरीर धारण नहीं कर सकता तो वह सर्व शक्तिमान किस प्रकार हुआ ?

सर्व शक्तिमान का अर्थ तो है ही यही, जिसमें सब कुछ करने की शक्ति हो, अत: अवतार न लेने से वह एक शक्ति हीन हुआ, तो सर्व शक्ति मान कहां रहा ?

२. सृष्टि में जब जब अधर्म बढ़ जाता है, तथा धर्म घट जाता है, तब-तब धर्म की स्थापना के लिए भगवान अवतार लेते हैं, और भांति-भांति के शरीर धारण करके अधर्म और अधर्मियों का संहार तथा धर्म का विस्तार करते हैं। गोस्वामी तुलसी दास जी ने भी कहा है—

जब-जब होप धर्म की हानी।
बाढ़हिं असुर-अधम, अभिमानी ।।
करहिं अनीति जाय नहीं वरणी।
सीदहिं विप्र धेनु सुर धरणी ।।
तब-तब प्रभु धरि विविध शरीरा।
हरहिं कृपा निधि सज्जन पीरा ।।

दोहा :—असुर मारि थापहि सुरन, राखहिं निज श्रुति सेतु।
जग विस्तारहिं विषद यश, राम जन्म कर हेतु ।।

इसी प्रकार गीता अध्याय ४ श्लोक ७, ८, में भगवान स्वयं कहते हैं—

यदा-यदा हि धर्मस्य, ग्लानिर्भवति भारत।
अभ्युत्थानमधर्मस्य, तदात्मानं सृजाम्यहम् ।।७।।
परित्राणाय साधूनां, विनाशाय च दुष्कृताम्।
धर्म संस्थापनार्थाय, सम्भवामि युगे-युगे ।।८।।

जब-जब धर्म की ग्लानि होतो है, और अधर्म बढ़ जाता हैं, तब तब मैं अपने आप को उत्पन्न करता हूं। अर्थात जन्म लेता हूँ।

किसी राजा का प्यारा बच्चा यदि अचानक पानी आदि में गिर जाये, तो राजा भी यह नहीं सोचता कि कोई नौकर ही उसको पानी में से निकाले, या राजा अपने नौकर से कहे, कि तुम बच्चे को निकालो, वह स्वयं ही बच्चे को निकालने के लिए जल में कूद पड़ता है, इसी प्रकार परमेश्वर भी जब भूमि पर अत्याचार देखते हैं, तो उसको

नष्ट करने के लिए स्वयं जन्म ले लेते हैं, अतः भगवान का अवतार वेदानुकूल है, और सर्व प्रकार से ठीक है, भगवान के अवतार को न मानना वेद का तथा परमेश्वर का अपमान करना है।

शास्त्रार्थ केशरी पं० अमर सिंह जी—

सज्जनों ! आज अत्यावश्यक विषय पर शास्त्रार्थ प्रारम्भ हुआ। यदि यह ढंग से चला तो सुनने वालों को अपार लाभ होगा, ईश्वर जन्म लेता है, या नहीं ? इसका आज भली-भाँति निर्णय आप लोगों के सामने आ जायेगा।

श्री पं० जी ने ईश्वर के अवतार को वेदानुकूल तो बताया पर वेद का प्रमाण ईश्वरावतार के पक्ष में एक भी न दिया। लीजिये मैं ईश्वर के शरीरधारी होने के विरुद्ध प्रमाण देता हूँ, और आवश्यकता होने पर बहुत से और प्रमाण भी दूंगा। सुनिये ! यजुर्वेद अध्याय ४० का आठवां मन्त्र—

"सपर्य्यगाच्छुक्रमकायमव्रणामस्नाविरं शुद्धमपाप विद्धम्"

यह मन्त्र का पूर्वार्द्ध है, इसमें कहा गया है कि, परमेश्वर सर्व व्यापक है, सर्वथा शुद्ध पवित्र है, और "अकाय" अर्थात शरीर रहित है। वेद पहले भी थे, अब भी है, और आगे भी सदा रहेंगे न वेद के शब्द बदलेंगे न अर्थ बदलेगा इस मन्त्र में परमेश्वर को "अकाय" शरीर रहित बताया है, इसका प्रयोजन यह है कि वह भूत भविष्यत् और वर्तमान तीनों कालों में शरीर रहित ही रहता हैं। कभी भी शरीर धारी नहीं होता है। पण्डित जी ने कोई प्रमाण न देकर परमेश्वर के सर्व शक्तिमान विशेषण पर व्यर्थ बहस की, यह नहीं सोचा कि शक्ति के रहते हुए भी शक्तिमान को वही कार्य करना चाहिए, जिसका करना उचित और आवश्यक हो, अनुचित और अनावश्यक कार्य को करने वाला मनुष्य बुद्धिमान् नहीं कहलाता है, परमेश्वर अनुचित और अनावश्यक कार्य को करेगा ही क्यों ? शरीर धारण करना उसकी शक्ति में है, केवल इसलिए शरीर धारण कर लेगा या उसकी आवश्यकता कोई होगी, तब करेगा ? यदि आवश्यकता होने पर शरीर धारण करेगा तो बताइये ऐसा कौन सा कार्य हैं, जिसको शरीर धारण किये बिना नहीं कर सकता ? सर्व शक्तिमान का अनावश्यक झगड़ा डाल कर आप "उभय पाशारज्जु" में फँस गये हैं।

यदि कोई कार्य ऐसा बतायेंगे जिसको बिना शरीर धारण किये नहीं कर सकता तो परमेश्वर आपके अर्थों में "सर्व शक्तिमान" नहीं रहेगा, क्योंकि आप स्वयं ही कहेंगे कि अमुक कार्य को वह नहीं कर सकता, यदि परमेश्वर में किसी कार्य विशेष के करने की शक्ति शरीर के बिना नहीं हैं। और शरीर धारण करने पर आयेगी तो वह शक्ति परमेश्वर की स्वाभाविक न हुई, शरीर के निमित्त से आने के कारण नैमित्तिक ही हुई। बस आपके अर्थों वाला वह सर्वशक्तिमान् न रहा।

रही चौपाइयों की बात, गोस्वामी तुलसीदास जी का वचन हमारे लिए प्रमाण नहीं हैं। गीता के दो श्लोक आपने बोले, वह श्री कृष्ण जी के वचन हैं, परमेश्वर के नहीं, श्री कृष्ण परमेश्वर हैं, यह तो आपको अभी सिद्ध करना शेष हैं जब तक आप यह सिद्ध न करलें कि श्री कृष्ण जी परब्रह्म परमेश्वर थे। तब तक आपके बोले हुए दोनों श्लोक प्रमाण नहीं बन सकते। यह भी साध्य है कि श्रीराम जी और श्री कृष्ण जी ईश्वर थे। और यह भी साध्य है कि ईश्वर अवतार लेता है। आप साध्य से साध्य की सिद्धि करना चाहते हैं। तो यह साध्यसम.हेत्वाभास हैं।

अतः यह प्रमाण व्यर्थ हुए, आपको यह भी बताना पड़ेगा कि सृष्टि के आरम्भ से अब तक कितने और कौन-कौन अवतार हुए ?

यह मेरा प्रश्न नोट करिये और अवतारों की संख्या तथा अवतारों के नाम भी बताने की कृपा करिये जिससे शास्त्रार्थ ठीक मार्ग पर चल सकें और किसी निर्णय पर पहुंचने में सहायता मिल सके राजा का उदाहरण आपने जो दिया वह विषम है, राजा एक देशी और अल्प शक्ति वाला होता है, और परमेश्वर सर्व देशी तथा अमर शक्तियों से

नोट:—दिन के दो बजे श्री पं० गोकुल चन्द जी शास्त्री आर्य समाज मन्दिर कोहाट में प्रविष्ट हुए, गले में फूलों की माला पहिने हुए थे, बहुत से सनातन धर्मी आर्य समाज मन्दिर के द्वार तक उनके आगे शंख और घड़ियाल बड़े जोर-जोर से बजाते हुए आये।

श्री पं. गोकुल चन्द जी शास्त्री

सज्जन वृन्द !

आज के शास्त्रार्थ का विषय अवतार वाद निश्चय किया गया है। आर्य समाज ईश्वर को सर्व शक्ति मान कहता हुआ भी अल्प शक्ति युक्त ही मानता है। आर्य समाज कहता है, कि वह परमेश्वर अवतार नहीं ले सकता, तो बताओ ! वह एक शक्ति से तो हीन हुआ।

१. मैं पूछता हूँ जो अवतार नहीं ले सकता, जन्म नही ले सकता, शरीर धारण नहीं कर सकता तो वह सर्व शक्तिमान किस प्रकार हुआ ?

सर्व शक्तिमान का अर्थ तो है ही यही, जिसमें सब कुछ करने की शक्ति हो, अत: अवतार न लेने से वह एक शक्ति हीन हुआ, तो सर्व शक्ति मान कहां रहा ?

२. सृष्टि में जब जब अधर्म बढ़ जाता है, तथा धर्म घट जाता है, तब-तब धर्म की स्थापना के लिए भगवान अवतार लेते हैं, और भांति-भांति के शरीर धारण करके अधर्म और अधर्मियों का संहार तथा धर्म का विस्तार करते हैं। गोस्वामी तुलसी दास जी ने भी कहा है—

जब-जब होय धर्म की हानी।
बाढ़हिं असुर-अधम, अभिमानी ।।
करहिं अनीति जाय नहीं वरणी।
सीदहिं विप्र धेनु सुर धरणी ।।
तब-तब प्रभु धरि विविध शरीरा।
हरहिं कृपा निधि सज्जन पीरा ।।

दोहा :—असुर मारि थापहि सुरन, राखहिं निज श्रुति सेतु।
जग विस्तारहिं विषद यश, राम जन्म कर हेतु ।।

इसी प्रकार गीता अध्याय ४ श्लोक ७, ८, में भगवान स्वयं कहते हैं—

यदा-यदा हि धर्मस्य, ग्लानिर्भवति भारत।
अभ्युत्थानमधर्मस्य, तदात्मानं सृजाम्यहम् ।।७।।
परित्राणाय साधूनां, विनाशाय च दुष्कृताम्।
धर्म संस्थापनार्थाय, सम्भवामि युगे-युगे ।।८।।

जब-जब धर्म की ग्लानि होती है, और अधर्म बढ़ जाता है, तब तब मैं अपने आप को उत्पन्न करता हूं। अर्थात जन्म लेता हूँ।

किसी राजा का प्यारा बच्चा यदि अचानक पानी आदि में गिर जाये, तो राजा भी यह नहीं सोचता कि कोई नौकर ही उसको पानी में से निकाले, या राजा अपने नौकर से कहे, कि तुम बच्चे को निकालो, वह स्वयं ही बच्चे को निकालने के लिए जल में कूद पड़ता है, इसी प्रकार परमेश्वर भी जब भूमि पर अत्याचार देखते हैं, तो उसको

नष्ट करने के लिए स्वयं जन्म ले लेते हैं, अतः भगवान का अवतार वेदानुकूल है, और सर्व प्रकार से ठीक है, भगवान के अवतार को न मानना वेद का तथा परमेश्वर का अपमान करना है।

शास्त्रार्थ केशरी पं० अमर सिंह जी—

सज्जनों! आज अत्यावश्यक विषय पर शास्त्रार्थ प्रारम्भ हुआ। यदि यह ढंग से चला तो सुनने वालों को अपार लाभ होगा, ईश्वर जन्म लेता है, या नहीं? इसका आज भली-भाँति निर्णय आप लोगों के सामने आ जायेगा।

श्री पं० जी ने ईश्वर के अवतार को वेदानुकूल तो बताया पर वेद का प्रमाण ईश्वरावतार के पक्ष में एक भी न दिया। लीजिये मैं ईश्वर के शरीरधारी होने के विरुद्ध प्रमाण देता हूँ, और आवश्यकता होने पर बहुत से और प्रमाण भी दूंगा। सुनिये! यजुर्वेद अध्याय ४० का आठवां मन्त्र—

"सपर्य्यगाच्छुक्रमकायमव्रणमस्नाविरं शुद्धमपाप विद्धम्"

यह मन्त्र का पूर्वार्द्ध है, इसमें कहा गया है कि, परमेश्वर सर्व व्यापक है, सर्वथा शुद्ध पवित्र है, और "अकाय" अर्थात शरीर रहित है। वेद पहले भी थे, अब भी है, और आगे भी सदा रहेंगे न वेद के शब्द बदलेंगे न अर्थ बदलेगा इस मन्त्र में परमेश्वर को "अकाय" शरीर रहित बताया है, इसका प्रयोजन यह है कि वह भूत भविष्यत् और वर्तमान तीनों कालों में शरीर रहित ही रहता हैं। कभी भी शरीर धारी नहीं होता है। पण्डित जी ने कोई प्रमाण न देकर परमेश्वर के सर्व शक्तिमान विशेषण पर व्यर्थ बहस की, यह नहीं सोचा कि शक्ति के रहते हुए भी शक्तिमान को वही कार्य करना चाहिए, जिसका करना उचित और आवश्यक हो, अनुचित और अनावश्यक कार्य को करने वाला मनुष्य बुद्धिमान् नहीं कहलाता है, परमेश्वर अनुचित और अनावश्यक कार्य को करेगा ही क्यों? शरीर धारण करना उसकी शक्ति में है, केवल इसलिए शरीर धारण कर लेगा या उसकी आवश्यकता कोई होगी, तब करेगा? यदि आवश्यकता होने पर शरीर धारण करेगा तो बताइये ऐसा कौन सा कार्य हैं, जिसको शरीर धारण किये बिना नहीं कर सकता? सर्व शक्तिमान का अनावश्यक झगड़ा डाल कर आप "उभय पाशारज्जु" में फँस गये हैं।

यदि कोई कार्य ऐसा बतायेंगे जिसको बिना शरीर धारण किये नहीं कर सकता तो परमेश्वर आपके अर्थों में "सर्व शक्तिमान" नहीं रहेगा, क्योंकि आप स्वयं ही कहेंगे कि अमुक कार्य को वह नहीं कर सकता, यदि परमेश्वर में किसी कार्य विशेष के करने की शक्ति शरीर के बिना नहीं हैं। और शरीर धारण करने पर आयेगी तो वह शक्ति परमेश्वर की स्वाभाविक न हुई, शरीर के निमित्त से आने के कारण नैमित्तिक ही हुई। बस आपके अर्थों वाला वह सर्वशक्तिमान् न रहा।

रही चौपाइयों की बात, गोस्वामी तुलसीदास जी का वचन हमारे लिए प्रमाण नहीं हैं। गीता के दो श्लोक आपने बोले, वह श्री कृष्ण जी के वचन हैं, परमेश्वर के नहीं, श्री कृष्ण परमेश्वर हैं, यह तो आपको अभी सिद्ध करना शेष हैं जब तक आप यह सिद्ध न करलें कि श्री कृष्ण जी परब्रह्म परमेश्वर थे। तब तक आपके बोले हुए दोनों श्लोक प्रमाण नहीं बन सकते। यह भी साध्य है कि श्रीराम जी और श्री कृष्ण जी ईश्वर थे। और यह भी साध्य है कि ईश्वर अवतार लेता है। आप साध्य से साध्य की सिद्धि करना चाहते हैं। तो यह साध्यसम हेत्वाभास हैं।

अतः यह प्रमाण व्यर्थ हुए, आपको यह भी बताना पड़ेगा कि सृष्टि के आरम्भ से अब तक कितने और कौन-कौन अवतार हुए?

यह मेरा प्रश्न नोट करिये और अवतारों की संख्या तथा अवतारों के नाम भी बताने की कृपा करिये जिससे शास्त्रार्थ ठीक मार्ग पर चल सकें और किसी निर्णय पर पहुंचने में सहायता मिल सके राजा का उदाहरण आपने जो दिया वह विषम है, राजा एक देशी और अल्प शक्ति वाला होता है, और परमेश्वर सर्व देशी तथा अमर शक्तियों से

युक्त सदा रहता है, एकदेशी राजा की तरह उसको जल आदि में कूदने की कुछ भी आवश्यकता नहीं है, वह जल आदि में सदा विद्यमान रहता हैं। वेद में कहा है—

"उतास्मिन् अल्प उदके निलीन :" अथर्ववेद काण्ड ४ सूक्त १६ मन्त्र ३,

वह पानी की प्रत्येक बून्द में भी विद्यमान है।

श्री पं० गोकुल चन्द जी शास्त्री

मैं पूछता हूँ क्या आप कोई काम ऐसे बता सकते हैं, जिन्हें परमेश्वर न कर सके, और क्या कोई कार्य ऐसे भी हैं, जिनका करना ईश्वर के लिए अनुचित हो? गोस्वामी तुलसी दास जी का वचन आपके लिए प्रमाण नहीं है, तो गीता का प्रमाण तो आप मानेंगे ही, लीजिये वेद का प्रमाण भी देता हूँ।

प्रजापतिश्चरति् गर्भे अन्तरजायमानो बहुधा विजायते।
तस्य योनिं परिपश्यन्ति धीरास्तस्मिन् ह तस्थुर्भुवनानि विश्वाः॥

(यह यजुर्वेद अध्याय ३१ का १९वां मन्त्र है,) इसमें स्पष्ट कहा है कि; प्रजापति परमात्मा गर्भ में आता है। और जन्म लेकर बहुत प्रकार से प्रकट होता है। आर्य समाजी पं० जी ने इस प्रश्न पर बहुत बल दिया है कि, भगवान के अवतार कितने और कौन-कौन से हुए हैं, यह बताया जाये। इसके उत्तर में मैं आपको बताता हूँ सुनिये—भगवान के अवतार अनादि काल से होते आये हैं। उनकी गणना कोई नहीं कर सकता है। तो भी मुख्य अवतार हमारे यहां २४ माने जाते हैं। उनमें से भी मुख्य दस कहे गये हैं।

चार सतयुग में।
तीन त्रेता युग में।
दो द्वापर में हुए।

इस प्रकार नौ अवतार हो चुके एक कलियुग में होता है सो होना शेष है। जो हो चुके उनके नाम लिखिये मैं बताता हूँ।

१. वराह (सूकर) २. मत्स्य ३. कच्छप ४. नृसिंह ये चार अवतार तो सतयुग में हुए।

तथा—

५. वामन ६. श्री राम जी ७. श्री परशुराम जी ये तीन अवतार त्रेता युग के इस प्रकार ये सात अवतार हुए

और—

८. श्री कृष्ण जी।
९. श्री बलराम जी।

ये दो अवतार द्वापर में हुए इस प्रकार कुल ९ अवतार हुए हैं, दसवां कलियुग में कल्कि अवतार होना है। सत्युग में चारों चरण धर्म रहता है। त्रेता युग में तीन चरण होता है। द्वापर में दो चरण होता है, तथा कलियुग में एक चरण धर्म शेष रह जाता है।

धर्म की रक्षा तथा अधर्म का विनाश करने के लिए भगवान का अवतार होता है। भगवान परम दयालु है। अपने भक्तों पर दया करके समय-समय पर शरीर धारण करते रहते हैं।

शास्त्रार्थ केशरी श्री पं० अमर सिंह जी

पण्डित जी महाराज! आपने बड़ी कृपा की जो एक वेद मन्त्र अपने पक्ष में समझ कर बोल दिया। मैं सर्व प्रथम उस मन्त्र पर ही विचार करता हूँ। क्योंकि—

अर्थकामेष्वसक्तानां, धर्मज्ञानं विधीयते ।
धर्म जिज्ञासमानानां प्रमाणं परमं श्रुतिः मनुस्मृति—अध्याय २ श्लोक १३,

जिनको सत्यासत्य के जानने की इच्छा है, उनके लिए वेद परम् प्रमाण है। ऐसा यह मनुस्मृति का वचन कहता है।

"प्रजापतिश्चरति गर्भे" का अर्थ आपने यह किया कि (परमात्मा गर्भ में आता हैं।) श्रीमान जी परमेश्वर तो सर्वदेशी हैं। तथा सर्वव्यापक है। उसका आना-जाना कैसा ? आना तो वहीं उसको होता है, जो जहां आने से पहले न हो। जो सब जगह मौजूद है, उसका आना क्या और जाना क्या ? क्या गर्भ में परमात्मा पहले नहीं होता, ? जो कभी आता है। महाराज जी वेद ही में कहा है—

"तदन्तरस्य सर्वस्य तदुसर्वस्यास्य बाह्यतः।" यजुर्वेद अध्याय ४० मन्त्र ५,

वह परमेश्वर इस सर्व जगत के भीतर है और बाहर (भी) है। वह गर्भ में भी बच्चे को भोजन देता है। उसको जीवित रखता और बढ़ाता है इस लिए कहा है कि—

"प्रजापतिश्चरति गर्भे"

प्रजापति परमात्मा गर्भ में भी कार्य करता है। आपने कहा जन्म लेकर बहुत प्रकार से प्रकट होता है। आपने जिस शब्द को "जायमान" समझा है। पण्डित जी महारज ! वह "अजायमान" है, और उसका अर्थ आपके आचार्य उव्वट और महीधर जी ने भी "अनुत्पद्यमान" न उत्पन्न होने वाला न जन्म लेने वाला, किया है। आप जन्म लेना उसका अर्थ कैसे करते हैं, इस मन्त्र में आगे कहा है।

"तस्य योनिं परिपश्यन्ति धीराः"

अर्थात् उसके स्वरूप को बुद्धिमान लोग ही देखते हैं। शास्त्री जी यदि परमात्मा शरीर धारण कर लेता तो उसके उस रूप को तो मनुष्य-पशु-गधे-घोड़े सभी देख सकेंगे, केवल बुद्धिमान ही नहीं वह केवल बुद्धि का विषय न रहकर आँखों का विषय बन जायेगा, आंखों से तो पशु भी देखता है। और पशु का अर्थ भी केवल आँखों से देखने वाला कहा गया है।

"पश्यतीति पशुः"

जो आखों से देखता है, बुद्धि से नहीं वही पशु है।

"तस्य योनिं परि पश्यन्ति धीराः" से शरीरधारी और साकार सिद्ध नहीं होता। इस मन्त्र से अवतारवाद का मण्डन नहीं होता। बल्कि खण्डन ही होता है, इसका अर्थ है कि बुद्धिमान लोग ही उस परमेश्वर के स्वरूप को देख सकते हैं, क्योंकि—वह बुद्धि से ही दीखता है आंखों से नहीं। आंखों से उसकी कारीगरी दीखती है।

उपनिषद में भी कहा गया है—

"दृश्यते त्वग्रया बुद्धया, सूक्ष्मया सूक्ष्म दर्शिभिः"

सूक्ष्म से सूक्ष्म देखने वालों के द्वारा बुद्धि से ही दीखता है, आँखों से नहीं, आपने अवतारों की संख्या और अवतारों के नाम बताकर शास्त्रार्थ का मार्ग प्रशस्त कर दिया।

भगवान् आपका भला करे।

शास्त्री जी !

जब सतयुग में चारोंचरण धर्म रहता है। तब तो एक भी अवतार की आवश्यकता नहीं, फिर चार अवतारों का होना बुद्धि संगत नहीं, आपकी युक्ति से तो, कलियुग में तीन द्वापर में दो त्रेता में एक, अवतार होता। सतयुग में एक भी नहीं होना चाहिये था, जब चारो चरण धर्म विद्यमान है, तब धर्म से ग्लानि हो ही नहीं सकती, परमेश्वर के

अवतार उस समय व्यर्थ ही कूदते रहते हैं। और कलियुग में धर्म के तीन चरण टूट जाते हैं, तब एक अकेला अवतार आकर क्या करेगा, ?

वास्तविकता यह है कि, ईश्वरावतार की कल्पना ही निराधार हैं, आपने अवतार होने के कारण इस प्रकार बताये।

१. धर्म की ग्लानि का होना।
२. अधर्म की वृद्धि होना।
३. धर्म की स्थापना।
४. धर्मात्माओं की रक्षा।
५. पापियों का विनाश।

आपके पुराणों में इसके विरुद्ध स्पष्ट लिखा है।

आपके बताये सारे अवतार शाप से हुए। भृगु ऋषि की पत्नी का शिर विष्णु जी ने इन्द्र के कहने पर काट दिया। इस पर भृगु ऋषि ने विष्णु को शाप दिया।

देखिये—

अवतारा: मृत्यु लोके, संतुमच्छाप संभवा: ।
प्रायोगर्भभवं दु:खं भुंक्ष्व पापाज्जनार्दन ॥८॥

देवी भागवत स्कन्द ४० अध्याय १२ श्लोक ८,

भृगु ने कहा—हे विष्णु मेरे शाप से मृत्यु लोक में तुम्हारे अवतार हों, हे विष्णु तुम (अपने इस) पाप से गर्भ में होने वाले दु:खों को भोगो। देवी भागवत् स्कन्द ५ अध्याय १९ श्लोक १८ में भी देखिये—

शप्तो हरिस्तु भृगुणा कमठेन कामं, मीनो बभूव कमठः खलुशूकरस्तु ।
पश्चान्नृसिंह इति यच्छल कृद्धराया, तान सेवताम् जननी मृत्यु भयं न किस्यात् ॥१८॥

कुपित भृगु के द्वारा दिये गये शाप से विष्णु मछली बना, अवतार धारण करके कच्छप बना, शूकर बना, पश्चात नृसिंह बना, और भूमि पर छल करने वाला (बली राजा को ठगने वाला वामन) अवतार हुआ।

......कहते हैं कि हे जननी !

उनको सेवन-पूजन करने वालों को मृत्यु का भय क्यों न होगा ? अर्थात् अवश्य होगा, इन प्रमाणों से स्पष्ट सिद्ध है कि, आपके भगवान का अवतार, धर्म का उद्धार करने के लिए नहीं प्रत्युत शाप का फलस्वरूप दु:ख भोगने के लिए, कच्छप, मछली और सूकर, जैसी नीच योनियों में उसको जाना पड़ा।

और सुनिये—

भृगु पत्नी शिरच्छेदाद्भगवान्हरिरच्युतः ॥३४॥
ब्रह्मा शापात्पशोर्योनौ, संजातो मकरादिषु।
विष्णुश्च वामनो भूत्वा, याचनार्थं बलेर्ग्रहे ॥३५॥
अतः किं परम् दु:खं, प्राप्नोति दुष्कृती नरः ।
रामोऽपि वनवासेषु, सीता विरहजं बहुः ॥३६॥
दु:खं च प्राप्तवान् घोरं भृगुशापेन भारत ॥३७॥

देवी भागवत स्कन्द ६ अध्याय ७ श्लोक ३४ से ३७,

भृगु ऋषि की पत्नी का सिर काट देने के कारण भगवान विष्णु भृगु ब्राह्मण के शाप से पशु योनियों में जन्मे, और वामन बनकर राजा बली के घर में भिक्षा मांगने के लिए गये। पाप कर्म करने वाला मनुष्य इससे अधिक दुःख और क्या भोग सकता है ?

राम जी भी बनवास में सीता के वियोग से उत्पन्न हुए घोर दुःख को भृगु शाप से प्राप्त हुए।

विष्णु ने जालन्धर का रूप बना कर वृन्दा से व्यभिचार किया, वृन्दा को जब व्यभिचार के पीछे पता लगा कि, यह मेरा पति जालन्धर नहीं है बल्कि यह तो विष्णु हैं, इस पर उसने शाप दिया—

हे विष्णो ! पराई स्त्री के साथ व्यभिचार करने वाले तेरे इस स्वभाव को धिक्कार है, मैंने जान लिया तू छल-कपट युक्त तपस्वी है, मुझको जैसे छल-युक्त तपस्वी द्वारा धोखा दिया गया है उसी प्रकार तुम्हारी पत्नी को भी कोई छली-कपटी, तपस्वी ले जायेगा।

(पद्म पुराण उत्तर खण्ड अध्याय १५० श्लोक १ से ३० तक) तथा (पद्म पुराण उत्तर खण्ड अध्याय १६, श्लोक ५४, से ७२ तक) एवं इसी प्रकार (शिव पुराण रूद्र संहिता अध्याय ३-४) में नारद के शाप से विष्णु का रामावतार होना बताया गया है।

श्री शास्त्री जी !

आपका कहना है कि भगवान का अवतार धर्म की रक्षा तथा अधर्म का विनाश करने के लिए होता है। यह आपके माने हुए पुराणों से सिद्ध नहीं होता है।

पुराणों से तो यह भी सिद्ध होता है कि पाप कर्मों का फल भोगने के लिए विष्णु के मछली आदि की योनियों में जन्म हुए।

देखिये शास्त्री जी महाराज ! और नोट कीजिये। गरुड़ पुराण पूर्व खण्ड आचार काण्ड अध्याय ११३ श्लोक १५ में—

ब्रह्मा येन कुलालवन्नियमितो, ब्रह्माण्ड भाण्डोदरे।
विष्णुर्येन दशावतार गहने, क्षिप्तो महासंकटे ॥
रूद्रो येन कपालपाणि, पुटके भिक्षाटनं कारितः।
सूर्यो भ्राम्यति नित्यमेव, गगने तस्मै नमः कर्मणे ॥

पण्डित जी !

मेरे पास सैकड़ों प्रमाण पुराण आदि ग्रन्थों के ऐसे हैं। जिनसे सिद्ध होता है कि, जिन-जिन को आप भगवान-परमेश्वर का अवतार मानते हैं, वह सब कर्म फल भोगने वाले जीव ही थे। परमेश्वर के अवतार नही।

बालमीकीय रामायण में श्री राम जी का वचन भी कहा हुआ यही सिद्ध करता है। सुनिये—

न मद्विधो दुष्कृत कर्मकारी, मन्ये द्वितीयोऽस्ति वसुन्धरायाम्।
शोकेन शोकोहि परम्पराया मामेति, भिन्दन् हृदयं मनश्च ॥३॥
पूर्वं मया नूनमभीप्सितानि, पापानि कर्माण्यसंकृत कृतानि
तत्रायमद्यापतितो विपाको दुःखेन दुःखं यदहं विशामि ॥४॥

बालमीकीय रामायण अरण्यकाण्ड सर्ग ६३ श्लोक ३,४,

श्री राम जी कहते है कि—मैं मानता हूं कि मेरे समान पाप कर्म करने वाला दूसरा मनुष्य इस भूमि पर नहीं है, शोक से शोक परम्परा से हृदय तथा मन को भेदन करता हुआ मुझको प्राप्त होता है, निश्चय ही मैंने पूर्व जन्म में, बहुत पाप बार-बार किये हैं। उन्हीं का फल मुझको यह है कि दुःख पर दुःख प्राप्त हो रहा है।

योग दर्शन में परमेश्वर का लक्षण इस प्रकार बताया है।

क्लेश कर्म विपाकाशयैरपरामृष्ट : पुरुष विशेष ईश्वरः ॥२९॥

(योग दर्शन पाद १ सूत्र २९)

अविद्या (विपरीत ज्ञान), अस्मिता (अहंकार), राग द्वेष और अभिनिवेष, (मृत्यु का भय) ये पांच क्लेश, जिनसे सुख और दुःख प्राप्त हों वह शुभाशुभ कर्म विपाक कर्म फल आशय (कर्मों की वासना) इनसे सर्वथा रहित पुरुष विशेष परमेश्वर है !

राम आदि सबको क्लेश हुए इनमें राग और द्वेष भी दिखाई देता हैं। ये कर्म फल भी भोगते थे, इस लिए ये सब ईश्वर नहीं थे। पण्डित जी महाराज !

सनातन धर्म के अनुसार तो यह भी सिद्ध होना कठिन है, कि ब्रह्मा, विष्णु, शिव, और दुर्गा, इन चारों में से परमेश्वर कौन है ?

पुराणों में कहीं ब्रह्मा जी को सबसे बड़ा बताया है, कहीं शिवजी को सबसे बड़ा बताया है, कहीं विष्णु जी ही सबसे बड़े कहे गये है। कहीं शक्ति को ही इन सब पर शासन करने वाली बतायी गयी है।

इतना ही नहीं कहीं ब्रह्मा की निन्दा लिखी है। कहीं शिव की और कहीं विष्णु की निन्दा की गयी है।

अतः बताने की कृपा करें कि आपका ईश्वर कौन है ? तथा आप किसका अवतार सिद्ध करना चाहते है ?

श्री पं० गोकल चन्द जी शास्त्री—

लीजिये मैं एक दो वेद मन्त्र और बोलता हूं —

इदं विष्णुर्विचक्रमे त्रेधा निदधेपदं समूढस्य पाँसुरे ॥१५॥

यजुर्वेद अध्याय ५ मन्त्र १५,

इस मन्त्र में विष्णु के वामनावतार के तीन पदों का वर्णन है, राजा बली के राज्यादि और शरीर को भी वामनावतार में तीन पगों से नाप लिया था।

२. प्रतद्विष्णु स्तवते वीर्येण मृगो न भीमः कुचरो गिरिष्ठाः।
यस्योरुषु त्रिषु विक्रमणेष्वधिक्षियन्ति भुवनानि विश्वा ॥२०॥

यजुर्वेद अध्याय ५ मन्त्र २०

इस मन्त्र में विष्णु के नृसिंहावतार का वर्णन है।

३ भद्रो भद्रया सचमान आगात् स्वसारं जारो अभ्येति पश्चात् ॥३॥

ऋग्वेद मन्डल १० सूक्त ३ मन्त्र ३,

इस मन्त्र में रामावतार और सीता तथा सीता के जार रावण का भी वर्णन है, और वराह व कृष्ण नाम भी वेद में आते हैं, पुराणों के आपने बहुत प्रमाण दिये हैं, दुर्भाग्य से हमने श्रीमद्भागवत पुराण ही पढ़ा है, और गरुड़ पुराण तो बार-बार ही पढ़ना पड़ता है, जब किसी की मृत्यु हो जाती है, तब उस घर में हम गरुड़ पुरण ही पढ़ते है।

ब्रह्मायेन कुलाल वन्नियमितो० आदि

यह श्लोक तो उसमें कभी आया ही नहीं।

अन्य पुराणों को हमने पढ़ा नहीं है, इस लिए उनके विषय में अभी कुछ कह नहीं सकते। नारद ने विष्णु को शाप क्यों दिया, इसको स्पष्ट करिये। ब्रह्मा आदि की प्रशंसा जहां-जहां है, "वह तो जिसका विवाह उसके गीत' पर पुराणों में निन्दा भी इनकी है, ऐसा हमारा विश्वास नहीं है, बता सकते हो तो बताइये ?

आर्य समाजी पंडित जी की बहुत बातों का उत्तर हमारे पास नहीं है। उनका पांडित्य भी बहुत है, तथा उनकी सभ्यता और शिष्टाचार की हम सराहना करते हैं, इस शास्त्रार्थ से बहुत सी बातें नई सामने आई हैं, पण्डित जी के

अन्तिम भाषण में और भी आयेंगी, उन सब पर हम विचार करेंगे, और हम आशा करते है, श्री पण्डित अमर सिंह जी महाराज से हमारा फिर भी सम्पर्क और सम्वाद होगा।

श्री पण्डित अमर सिंह जी शास्त्रार्थ केशरी

श्री पं० गोकुल चन्द जी शास्त्री विद्वान तथा हठ दुराग्रह से रहित हैं। मैं आशा और विश्वास करता हूं कि, श्री पं० जी शीघ्र ही आर्य समाजी हो जावेगें, और यह मानने लगेगें कि ईश्वर कभी जन्म नहीं लेता है। पण्डित जी ने जो वेदमन्त्र बोले है, उनके विषय में मैं स्पष्टीकरण करता हूं। सुनिये! पण्डित जी ध्यान से सुनें।

१. **इदं विष्णुर्विचक्रमे०** इस मन्त्र में न तो वामन अवतार का नाम है, और न राजा बली का केवल तीन पगों (पदों) का वर्णन होने से न वामनावतार न बली राजा को ठगना, अर्थात उससे ठगी करना सिद्ध होता है। धोखा देना परमेश्वर का काम नहीं है, इस मन्त्र में विष्णु नाम से सूर्य का वर्णन किया जाता है, सूर्य के तीन पग, पृथ्वी, अन्तरिक्ष और द्यौ में होतें है, दूसरा अर्थ विष्णु का यज्ञ है। शतपथ ब्राह्मण में भी कहा गया है कि—

"यज्ञो वै विष्णु:"

वह भी पृथ्वी अन्तरिक्ष, और द्यौ तक जाता है, श्री मनु जी ने भी मनुस्मृति में कहा है—

"अग्नौ प्रास्ताहुति सम्यक् आदित्यमुप तिष्ठते"

अग्नि में अच्छी प्रकार दी हुई आहुति सूर्य तक पहुंचती है। विष्णु परमेश्वर का भी नाम है। उसके तीन पग कई प्रकार से कहे जाते है, सूर्य, अग्नि, और वायु, पृथ्वी, अन्तरिक्ष और द्यौ, तथा भूत, भविष्यत् और वर्तमान आदि।

ईश्वर जन्म लेता है, ऐसा बताने वाला वेद में कोई मन्त्र है तो बताइये?

२ **प्रतद्विष्णु स्तवते वीर्येण०**—आदि मन्त्र में न नृसिंह अवतार का नाम है, न भक्त प्रह्लाद् तथा व उसको सताने वाले उसके पिता हिरण्यकश्यप का कहीं नाम निशान है। मन्त्र का अर्थ इस प्रकार है।

इस मन्त्र में उपमालंकार है, जैसे सिंह अपने पराक्रम से अन्य पशुओं का वध करता फिरता है, वैसे जगदीश्वर अपने पराक्रम से सब लोगों का नियमन करता है।

३ **भद्रो भद्रया सह०** इस मन्त्र में न राम है, न सीता, और न रावण है, भद्र का अर्थ राम ही क्यों कोई भी भला पुरुष भद्र कहला सकता है। मैं कहता हूं इस मन्त्र में भद्र श्री पं० गोकुल चन्द जी शास्त्री को कहा गया है। तो आप कैसे मेरी बात का खन्डन करेगें,। वैसे इस पूरे मन्त्र का अर्थ में आपको कहे देता हूं। पहले पूरा मन्त्र सुनिये—

भद्रो भद्रया सचमान आगात्स्वसारं जारो अभ्येति पश्चात्।
सुप्रकेतैर्द्युभिरग्निर्वितिष्ठन्नुशद्भिर्वर्णैरभि राममस्थात्॥३॥

ऋग्वेद मन्डल १० सूक्त ३ मन्त्र ३,

जैसे (जार:) रात्रि का विनाश करता हुआ सूर्य (स्वसारं पश्चात् अभि एति) अपनी भगिनी के तुल्य अन्धकार हटाने वाली उषा के पीछे-पीछे दौड़ता है, और स्वयं (भद्र:) सुखकारी होकर (भद्रया सचमान: आगात्) सुखदायिनी उषा के साथ मिल कर आता है, और वह (उशद्भि: वर्णै:) उज्वल रश्मियों से (रामम् अभि अस्थात्) रात्रि के अन्धकार को पराजित करता है, वैसे ही (भद्र:) प्रजा को सुख देने वाला विद्वान (भद्रया सचमान:) प्रजा को सुख देने वाली बुद्धि वा नीति से युक्त होकर (आगात्) प्राप्त हो। वह (जार:) शत्रु या दुष्टों का नाश करने वाला होकर (स्वसारं) सुख से शत्रु को उखाड़ने वाली सेना वा (स्वसारं) स्वयं आने वाली प्रजा के (पश्चात् अभिएति) पीछे तदनुकूल रहकर वश करे। वह (अग्नि:) अग्नि के समान पुरुष (सु-प्र-कैतै:) ज्ञानवान् (द्यु भि:) रश्मितुल्य विद्वानों के

साथ (वितिष्ठन्) विविध कार्यों को करता हुआ (उशद्भिः) उज्ज्वल कामना वाले (वर्णैः) विद्वानों के साथ (रामम् अभिअस्थात्) अन्धकार तुल्य शत्रु पर चढ़ाई करे।

नोट—इस मन्त्र में जार यदि रावण को कहा गया है, तो—

"स्वसारं जारो अभ्येति"

का क्या अर्थ होगा ?

"स्वसा" का अर्थ तो बहिन है, बहन को जार सब ओर से प्राप्त होता है। पर यह कौन सा अवतार सिद्ध हुआ ?

"वराह" का अर्थ निरुक्त में यास्काचार्य ने "मेघ" किया है। यथा—

"वराहो मेघो भवति" निरुक्त ५-४,

राम का अर्थ किसी भाष्यकार ने भी दशरथी राम नहीं किया और न कोई और रामावतार हुआ। और न बताया। सायण, महीधर तथा उव्वट तीनों आचार्य, राम का अर्थ रात्रि का अन्धेरा और कृष्ण का अर्थ वासुदेव का पुत्र कृष्ण न करके काला रंग बताते हैं। नारद के शाप की बात आपने पूछी है। सो ध्यान देकर सुनिये और नोट करिये ! शिव पुराण रुद्र संहिता २, अध्याय ३-४, श्री वेंक्टेश्वर प्रैस बम्बई, भाषा टीका सहित सम्वत् १९८२ विक्रमी को प्रकाशित हुई। एक राजकन्या का स्वयंवर होना था, नारद जी ने विष्णु जी से कहा कि मेरा मुख सुन्दर बना दीजिये। जिससे राजकन्या मुझी को अपना पति वरण करे, श्री विष्णु जी ने नारद जी का मुंह बन्दर का सा बना दिया, और स्वयं स्वयंवर में जा विराजे, राजकन्या ने विष्णु जी को ही वरण कर लिया, नारद जी ने अपना मुँह जल में देखा तो वह बन्दर का-सा मुख था, तो श्री नारद जी ने, विष्णु जी को शाप दिया, और रुष्ट होकर नारद जी बोले—

हे हरे त्वम् महा दुष्टः कपटी विश्व मोहनः।
परोत्साहं न सहसे मायावी मलिनाशयः॥६॥

शिव पुराण रुद्र संहिता २ अध्याय ४,

अर्थ—हे विष्णु तुम महा दुष्ट हो, कपटी हो, विश्व को मोहने वाले हो, पराई उन्नति को तुम सहन नहीं करते हो, तुम मायावी हो, और मलिन आशय वाले हो, मैं तुम्हें शाप देता हूं, कि तुम भी अपनी स्त्री के वियोग दुःख को प्राप्त करो।

नारद के इस शाप से विष्णु जी ने राम का जन्म लिया, और अपनी स्त्री को जो रावण हरकर ले गया था, तब उसके वियोग का दुःख नारद के शाप से उन्होंने भोगा। ब्रह्मा, विष्णु और शिव की निन्दा पुराणों में कहां है। यह आपने पूछा है। सो अति संक्षेप में बताता हूं। विस्तार से बोलने के लिए बहुत समय ही नहीं बल्कि बहुत दिन होने चाहियें।

१ आपने शास्त्री जी श्रीमद्भागवत् को पढ़ा है, उसमें ही पुत्री गमन का दोष ब्रह्मा जी पर लगाया गया है। यही नहीं अन्य भी जो जो दोष लगाये गये उनको कहता हूं,

१ ब्रह्मा जी पुत्रीगामी थे। श्रीमद्भागवत् स्कन्ध ३ अध्याय १२। २८-२९,
२ ब्रह्मा जी का वीर्यपात।
३ ब्रह्मा के पांच सिर थे। शिवपुराण विंद्येश्वरी संहिता अध्याय ८ श्लोक ४ तथा ७,

१. श्री ब्रह्मा जी पर पुत्रीगमन का घृणित दोषारोपण—

वाचं दुहितरं तन्वीं स्वयं भूर्हरतींमनः।
अकामां चसे छलः सकाम इति न श्रुतम् ॥२८॥

तमधर्मेकृतमतिं विलोक्य पितरं सुताः।
मरीचि मुख्याः मुनयो विश्रम्भात् प्रत्यबोधयन् ॥२९॥
नैतत पूर्वैः कृतं त्वद्य न करिष्यन्ति चापरे।
यस्त्वं दुहितरं गच्छेरनिगृह्यांगजां प्रभुः ॥३०॥

श्रीमद्‌भागवत् पुराण स्कंध ३ अध्याय १२ श्लोक २८-२९-३०,

टीका—हे विदुर ! वाणी से श्रेष्ठ देह वाली सरस्वती हुई, कि जिसे देखकर ब्रह्मा जी ने काम के वशीभूत होकर उसके साथ काम की इच्छा की ऐसा ही मैंने सुना है।

सम्पूर्ण पुत्र मरीचि आदि ऋषियों ने अपने पिता की खोटी बुद्धि देखकर समझाया। कि ऐसा पहले किसी ने नहीं किया और न कोई करेगा कि जो तुम अपने अंग से उत्पन्न हुई पुत्री को ग्रहण करते हो यह ग्रहण करने योग्य नहीं है।

ब्रह्मा जी के पांच सिर थे—

३. शिवजी की आज्ञा से भैरव ने उन पाँच सिरों में से एक को काट दिया, देखिये—महादेव द्वारा ब्रह्मा जी का अभिमान दूर करना :—

ससर्जाथ महादेवः पुरुषं कंचिदद्‌भुतम्।
भैरवाख्यं भ्रुवोमध्याद्‌ब्रह्म दर्पं जिघांसया ॥ १ ॥
सवै तदा तत्रपतिं प्रणम्य शिवमंगणे।
किं कार्यं करवाण्यत्र शीघ्रमाज्ञापय प्रभो ॥ २ ॥
वत्सपोऽयं विधिः साक्षाज्जगतामाद्यदेवतम्।
नूनमर्च्चय खड्गेन तिग्मेन जवसा परम् ॥ ३ ॥
सवै गृहीत्वैक करेण केशं, तत्पंचमंदृप्तमसत्य भाषिणम्।
छित्वा शिरोह्यस्य निहन्तुमुद्यतः प्रकम्पयन खड्गमतिस्फुटं करैः ॥ ४ ॥
पिता तवोत्सृष्ट विभूषणांवर स्रगुत्तरीयामलकेश संहतिः।
प्रवातरंभेव लतेव चंचलः पपात वै भैरव पाद पंकजे ॥ ५ ॥
तावद्विधि तात दिदृक्षुरच्युतः कृपालुरस्मत्प्रतिपाद पल्लवम्।
निषिच्य वाष्पैरवदत्कृताञ्जलिर्यथाशिशुः स्वपितरं कलाक्षरम् ॥ ६ ॥

शिवपुराण विद्ये सं० १ अध्याय ८ भाषा टीका वाले का पृष्ठ १३ (वेंकटेश्वर प्रेस बम्बई से प्रकाशित)

अर्थ—तब महादेव जी ने ब्रह्मा जी का मद दूर करने के लिए भृकुटी के मध्य से एक अद्‌भुत पुरुष भैरव की रचना की। उत्पन्न होते ही समरांगण में उस पुरुष ने शिवजी को प्रणाम किया। और कहा भगवन्। मैं क्या करूं ? शीघ्र आज्ञा दीजिये।

शिवजी ने कहा—हे वत्स ! यह जो जगत के आदि देवता ब्रह्मा है, तीक्ष्ण धारवाले वेगवान खड्ग से इनकी अर्चा (पूजा) करो अर्थात् इन पर प्रहार करो। यह सुनते ही भैरव ने एक हाथ से केश पकड़कर वह ब्रह्मा जी का पाचवां असत्य भाषी सिर काट, हाथ से स्फुरायमान होते हुए खड्ग से उनके और भी सिर काटने की इच्छा की। तब तुम्हारे पिता ब्रह्मा जी गहने-माला और उत्तरीय वस्त्र त्याग केश खोले हुए हवा चलने से केले और बेल के समान कम्पित होकर भैरव जी के चरण कमल में गिर पड़े। ब्रह्मांजी की यह दशा देखते ही, विष्णु जी ने हमारे स्वामी के चरण कमलों में अश्रुमोचन करते-करते हाथ जोड़कर कहा। जैसे बालक, पिता से कहते हैं। उन्होंने कहा—

त्वया प्रसन्नेन पुराहिवत्तं यदीश पंचाननमीश चिन्हम् ।
तस्मात्क्षमस्वाद्यमनुग्रहार्हं कुरु प्रसादं विधये ह्यमुष्यं ॥ ७ ॥
(शिवपुराण विद्ये० सं० १ अध्याय ८ भाषा टीका पृष्ठ १३ वेंकटेश्वर प्रेस बम्बई से प्रकाशित)

अर्थ—

विष्णु बोले—हे भगवान ! प्रथम आपने कृपा करके इनको पांच सिर दिये थे। अब एक जाता रहा, इस कारण क्षमा करके ब्रह्माजी पर प्रसन्नता करो। विष्णु जी की निन्दा तो आपने अभी सुनी है। विष्णु जी ने विन्दा से व्यभिचार किया, उसके पति जालन्धर का रूप बनाकर धोखे से उसका पतिव्रत धर्म नष्ट किया। विष्णु ने नृसिंह बनकर शिव के भक्त हिरण्यकश्यप का वध किया, तो उसके दण्ड स्वरूप शिवजी ने नृसिंह को पटक-पटककर मारा, और उसकी खाल उतार ली, शिवजी के चित्रों में शेर का चमड़ा पहने हुए उनको अब भी दिखाया जाता है। और शिवजी के गले में कभी-कभी एक नर मुण्डों की माला दिखाई जाती हैं। उसके बीच में नृसिंह का भी मुख दिखाया जाता है।

शास्त्री जी ! आप निम्न पते पर पूरे विस्तार से देख सकते हैं।

"शिवपुराण शत रुद्र संहिता" ३। अध्याय १२, श्लोक १ से ३६ तक।

शिव पुराण में शिवजी का नंगे होकर ऋषि पत्नियों के सामने जाना लिखा है। ऋषियों के शाप से शिवजी की मूत्रेन्द्रिय टुकड़े-टुकड़े होकर भूमि पर गिर गयी—देखिये—शिव पुराण कोटिरुद्र सं० अ० ११ श्लोक ६ से १९ तक।

शिवजी ने विष्णु जी के मोहनी रूप को देखा तो उनका वीर्यपात हो गया—देखिये—

श्रीमद् भागवत् स्कं० ८ अ० १२ श्लोक १८ से ३३ तक।

शिवजी ने महानन्दा नाम वाली वेश्या से समागम किया—देखिये—

शिवपुराण शतरुद्र सं० अ० २५ श्लोक १३ से ३० तक।

ब्रह्मा, विष्णु और शिवजी तीनों ने अत्रि ऋषि की पत्नी अनुसूइया के साथ अत्यन्त घृणित कुचेष्टाएं कीं।

देखिये— भविष्यपुराण प्रतिसर्ग पर्वखण्ड ४, अध्याय १७ श्लोक ६७ से ७५ तक।

मैं आपको आज एक या दो नहीं अनेकों प्रमाण दूंगा और तब तक देता रहूंगा जब तक शास्त्री जी अच्छी तरह छक न जायें और मना न करने लगें।

बीच में ही उठकर श्री पं० गोकुल चन्द जी शास्त्री कहने लगे–बस महाराज इतने ही प्रमाण बहुत हैं।

श्री ठाकुर अमर सिंह जी ने अन्त में कहा कि—माननीय शास्त्रीजी !

आपने यह कहा कि, ब्रह्मा, विष्णु और शिवजी की भिन्न-भिन्न पुराणों के भिन्न-भिन्न स्थलों में जो एक-दूसरे से बढ़ाकर प्रशंसा लिखी है। वह तो "जिसका विवाह उसके गीत" हैं। यदि आपकी यह बात भी मान ली जाये, तो भी तो वह तीन पृथक-पृथक सिद्ध हुए।

मेरा तो प्रश्न यह है कि इन तीनों में से किसको परमेश्वर माना जाए ? जब परमेश्वर का निश्चय ही नहीं तो अवतार किसका सिद्ध करोगे। मैंने तो सिद्ध कर दिया कि ईश्वर का अवतार किसी प्रकार भी सिद्ध नहीं हो सकता, शास्त्रार्थ का समय तो समाप्त हो गया। और नियमानुसार मुझे ही अन्त में बोलना था, शास्त्री जी आपका तो अन्तिम भाषण हो चुका, तो भी यदि आप कुछ कहना चाहें तो मैं कोई आपत्ति नहीं उठाऊंगा आप कुछ कहना चाहें तो कहें।

श्री पं० गोकल चन्द जी शास्त्री

मैं शास्त्रार्थ के अन्त में आर्य पण्डित को धन्यवाद देता हूं कि उन्होंने मेरा बोलने का अधिकार न रहने पर भी मुझको अपनी उदारता से बोलने का अधिकार दिया है। मैं उनका हार्दिक धन्यवाद करता हूं। और आगे कुछ और न चाहता हुआ यह ही कहता हूं कि पुराणों के सारे प्रमाण तथा मेरे दिये हुए वेद मन्त्रों के अर्थ भी मेरे लिए सर्वथा नये हैं। मैं इन सब पर फिर विचार करूंगा।

निवेदन इतना ही है कि सनातन धर्म के अवतारवाद विधायक पक्ष को अभी सर्वथा खण्डित हुआ न माना जावे, मुझको बहुत कुछ नई बातें मिली हैं। उन पर विचार करूंगा श्री पं० जी मेरे लिए शुभकामना ही करेंगे ऐसी मुझको आशा है।

श्री ठाकुर अमरसिंह जी शास्त्रार्थ केशरी

इसमें तनिक भी सन्देह नहीं है कि पण्डित जी हठ, दुराग्रह रहित तथा निष्कपट हैं। एवं विद्वान तथा सज्जन साधु स्वभाव वाले हैं। सनातन धर्मी भाई इनको बहुत श्रद्धा के साथ लाये हैं। मैं उनसे प्रार्थना करता हू कि, श्री शास्त्री जी को उसी प्रकार श्रद्धा और प्रेम के साथ ले जावें, पण्डित जी में कोई कमी नहीं हैं। वास्तविकता यह है, कि अवतारवाद का मानना सर्वथा अनुचित है। इसको कोई भी सत्य सिद्ध कर ही नहीं सकता, मैं श्री पं० जी के लिए यह शुभ कामना करता हूं कि वह परमेश्वर की कृपा से अवतारवाद के मिथ्या मत को छोड़कर सत्य सनातन वैदिक धर्म के मानने वाले बन जायें।

जनता में चारों ओर हर्ष ध्वनि

आप लोग हंसे नहीं!

आज बहुत सी बातें सामने आयीं अनेकों प्रमाण सामने आये, जिनसे मैं समझता हूं श्रोतागणों को अत्याधिक लाभ होगा। इस प्रकार के वाद-विवाद होते ही रहने चाहियें, इनसे बड़ी-बड़ी समस्याओं का समाधान होता है।

श्री पंडित गोकलचन्द जी शास्त्री बड़े विद्वान एवं साधु स्वभाव के व्यक्ति हैं। इनका पांडित्य भी कम नहीं है। आज का यह शास्त्रार्थ निर्विघ्न समाप्त हुआ।

इसके लिए आप सभी धन्यवाद के पात्र हैं।

नोट :—पण्डित गोकल चन्द जी शास्त्री स्टेज से उठकर चलने लगे।

सनातन धर्मी लोग बिना शंख, घड़ियाल बजाये शास्त्री जी को बिना पुष्प हार पहनाये चुपचाप लेकर चले गये।

आर्य समाज का बहुत अच्छा प्रभाव रहा, अपने और परायों सभी ने आर्य पण्डित श्री ठाकुर अमरसिंह जी शास्त्रार्थ केशरी की भूरि-भूरि प्रशंसा की।

एवं पुष्प मालाओं से ठाकुर अमर सिंह जी को लाद दिया। चारों ओर से जयकारों से आकाश गूंज उठा—

वैदिक धर्म की—जय

महर्षि दयानन्द की—जय

आर्य समाज—अमर रहे।

वेद की ज्योति—जलती रहे

परमेश्वर का अवतार—नहीं होता।

परमेश्वर का अवतार—नहीं होता।

ठाकुर अमरसिंह जी शास्त्रार्थ केशरी की—जय

तथा ठाकुर साहब को हाथों पर उठा लिया, एवं पिण्डाल से जहां ठाकुर साहब ठहरे हुए थे, वहां तक हाथों ही हाथों पर लिए हुए जुलूस की हालत में नारे लगाते हुए पहुंचे।

इस प्रकार यह शास्त्रार्थ समाप्त हुआ।

॥ इतिशम् ॥
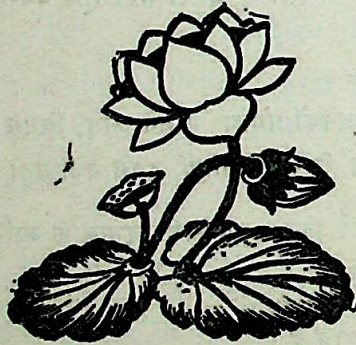
[तृतीय शास्त्रार्थ]
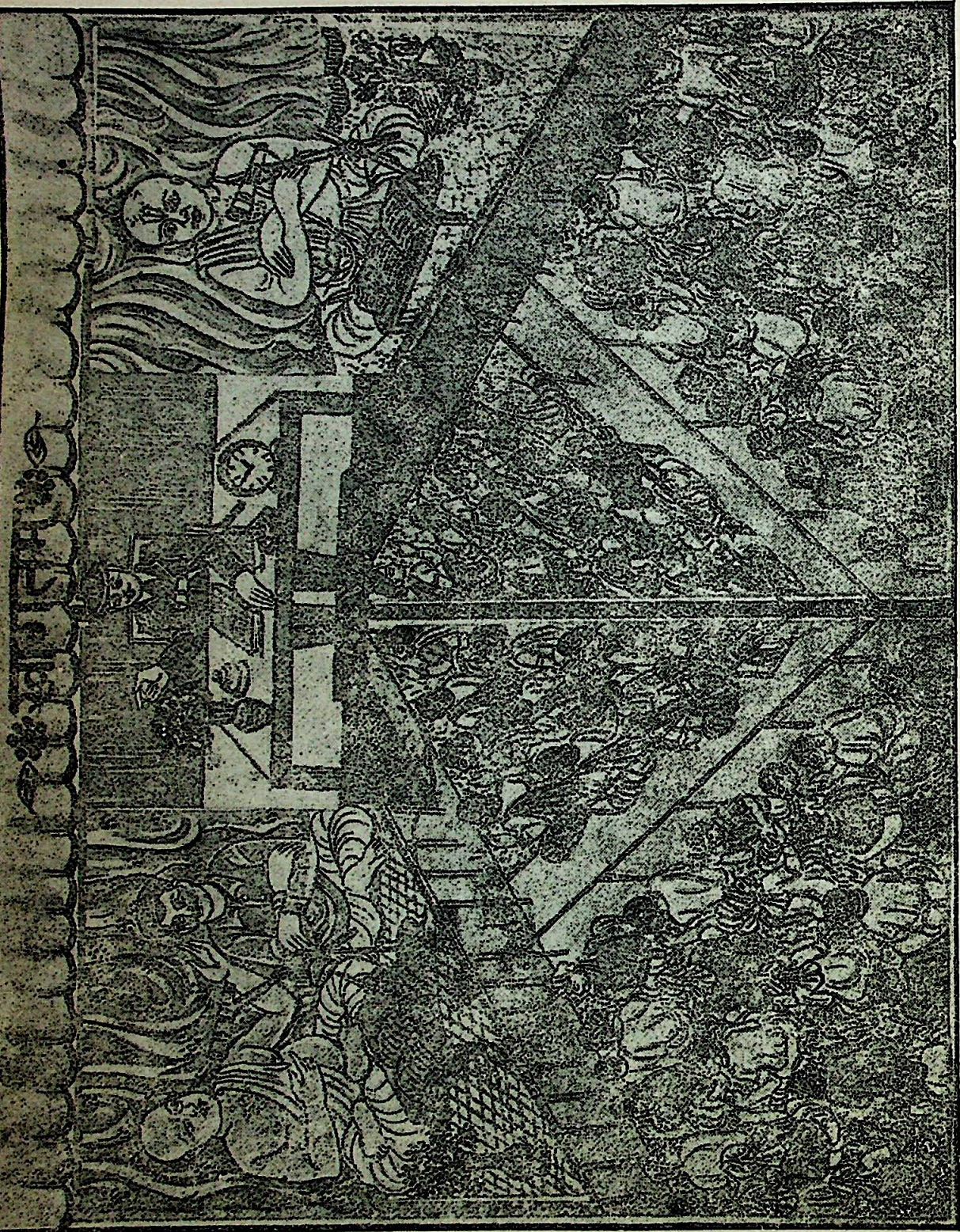
(शास्त्रार्थ करते हुए)
"श्री पं० कृपाराम जी तथा प्रो० राजाराम जी शास्त्री एवं पौराणिक पं० श्री गणेशदत्त जी शास्त्री"

स्थान : "वजीराबाद" जिला गुजरांवाला (पंजाब)

(वर्तमान-पाकिस्तान)
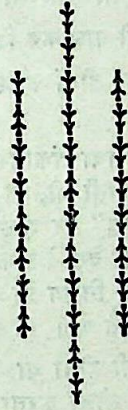
नोट—प्रोफेसर मैक्समूलर, अध्यक्ष संस्कृत विभाग, ऑक्सफोर्ड युनिवर्सिटी, जर्मनी निवासी की सम्मति सहित।

विषय : क्या मृतक श्राद्ध वेदानुकूल है?

प्रधान : बाबू सिकन्दर लाल जी (मजिस्ट्रेट)

दिनांक : १९ मई सन् १८९५ ई० (दिन के चार बजे)

शास्त्रार्थ कर्ता : पौराणिकों की ओर से—श्री पं० गणेशदत्त जी शास्त्री,

एवं

आर्य समाज की ओर से—श्री पं० कृपाराम जी शास्त्रार्थी

(जो बाद में स्वामी दर्शनानन्द जी के नाम से विख्यात हुए)

नोट—यह शास्त्रार्थ लिखित रूप में हुआ, एवं इसमें डी० ए० वी० कालेज के प्रोफेसर श्री पं० राजाराम जी शास्त्री भी मौजूद थे।

मध्यस्थ : प्रो. मैक्समूलर, ऑक्सफोर्ड, (जर्मनी निवासी)

इस शास्त्रार्थ के विषय में

माननीय !

पाठक गण, मुझे पूज्य महात्मा अमर स्वामी जी महाराज की छत्र-छाया में काफी लम्बा समय व्यतीत करने का अवसर प्राप्त हुआ। बल्कि अगर यह कहा जाये कि मुझे बचपन से जवानी तक अगर बड़ा करने वाले हैं तो केवल स्वामी जी महाराज हैं।

दुनियां में अपनों को तो सभी को पालते देखा है।
मगर किसी दूसरे को पाल कर दिखाये तो हम जानें ।।

स्वामी जी महाराज ने मुझे माता-पिता एवं गुरु तीनों का संयुक्त प्यार देकर पाला है। ऐसे तो कोई अपनों को भी नहीं पाल सकता।

मैंने उनके साथ रहकर उनके अनेकों व्याख्यान तथा शंकासमाधान एवं शास्त्रार्थ सुनने व देखने का सौभाग्य प्राप्त किया है। जब भी कभी शास्त्रार्थों की चर्चा होती थी, तो इस शास्त्रार्थ का बड़ा हवाला दिया जाता था, एवं अब भी दिया जाता है। कोई भी पौराणिक "मृतक श्राद्ध" पर शास्त्रार्थ करे तो वह इस शास्त्रार्थ का हवाला दिये बगैर नहीं रह सकता, और वह बार-बार जनता की ओर देख-देख कर कहते ! सुनो भाईयो, आज से ७०-७५ वर्ष पूर्व आर्य समाज को सनातन धर्म ने हरा दिया था। जिसका निर्णय प्रो० मैक्स मूलर द्वारा हुआ था, परन्तु दिखाते नहीं थे, केवल जैसे उधर से कहते थे, ऐसे ही इधर से उत्तर दे देते थे।

परन्तु मुझे ऐसा देखकर व सुनकर बड़ा दुःख भी होता था, तथा कभी-कभी आश्चर्य एवं गुस्सा भी आता था। कभी-कभी सब झूठ-सा भी मालूम होता था, मगर मैं सोचा करता था कि झूठ तो हो नहीं सकता, अगर बिल्कुल झूठ होता तो वह इस प्रकार से कह ही नहीं सकते थे। कुछ न कुछ बात अवश्य है। और मैंने ऐसा जान कर स्वामी जी महाराज से पूछा, कि वह 'मृतक श्राद्ध" पर मैक्स मूलर द्वारा निर्णय वाला शास्त्रार्थ कहां प्राप्त हो सकेगा, कब छपा था ? यह सब बताओ !

स्वामी जी महाराज ने कहा—

बेटे ! हमारे पास एक प्रति थी, उसको मैंने वर्षों तक संभाल कर रक्खा अब तुम पुस्तकालय में खोज करो, हो सकता है मिल जावे अन्य कोई जगह ऐसी नहीं हैं जहां से वह प्राप्त हो सके चाहे आप पैसा भी कितना ही खर्च करो। क्योंकि इतनी छोटी पुस्तक का इतने विशाल पुस्तकालय में मिलना आसान काम नहीं है। मैंने मन में सोचा मिले या न मिले, मैं कोई जगह कोई पुस्तक ऐसी नहीं छोडूंगा जहां न देखूं, और बड़े दृढ़ विश्वास के साथ लग गया, ५ दिन जब बराबर ढूंढ़ते हुए हो गये तो मैं भी कुछ निराश सा होने लगा था। मगर छटे दिन पुस्तक मिलते ही मुझे जितनी खुशी हुई, मैं प्रकट नहीं कर सकता। और पुस्तकालय में से उछलता हुआ "मेरी मेहनत सफल हो गयी" कहता हुआ गुरु जी के पास आया।

गुरु जी ने कहा ! बेटे यह तुम्हारा ही काम था, जो तुमने इस पुस्तक को खोज निकाली, अन्य कोई इतना परिश्रम न करता। मैंने उसे बड़े ध्यान से पढ़ा, देखा, और मूल सहित इस पुस्तक में छपवा दिया, ताकि भविष्य में सभी सज्जन देख सकें कि असलियत क्या है ?

इस शास्त्रार्थ के देखने व पढ़ने से "मृतकों का श्राद्ध" करना चाहिये यह कदापि नहीं सिद्ध होता है, एवं न ऐसा कुछ मैक्समूलर का निर्णय ही है। इसी प्रकार जब कोई पौराणिक इस शास्त्रार्थ का हवाला देता था तो स्वामी जी महाराज चैलेञ्ज करके कहते थे, कि ऐसा कुछ भी मैक्समूलर का निर्णय नहीं है, यह सब झूठ है। तो फिर आखिर उसने क्या निर्णय दिया ! यह आप अपनी आंखों से प्रस्तुत पुस्तक में देखिये तथा पढ़िये ! मूल पुस्तक के मुख पृष्ठ का फोटो भी साथ छपा हुआ है।

निवेदक—
लाजपत राय आर्य

शास्त्रार्थ से पहले

वजीराबाद (पंजाब) में आर्य समाज का बहुत प्रचार था, वहां के प्रचार को देखकर सनातनधर्मी भाइयों के पेट में दर्द होता था। परन्तु एक प्रसिद्ध कहावत है कि— "जब गीदड़ की मौत आती है, तो वह शहर की तरफ दौड़ता है" इसी प्रकार सनातन धर्मी भाइयों ने सिर उठाना आरम्भ किया, तो परिणाम स्वरूप वहां पर शास्त्रार्थ नियत हो गया, शास्त्रार्थ का दिन, समय, तारीख, निश्चित कर दी गयी। ठीक दिन के चार बजे १६ मई सन् १८९५ ई० में स्थान हनुमान का कटरा शहर का मुख्य स्थान इस कार्य के लिए सुसज्जित किया गया।

दोनों ओर मेज और कुर्सियां लग गयी, वेद आदि पुस्तकों के ढेर के ढेर लग गये। और पुरवासी एकत्रित हो गये। इस समय शास्त्रार्थ के लिए बाबू श्री सिकन्दर लाल जी मजिस्ट्रेट शास्त्रार्थ के प्रधान नियुक्त किये गये। तथा उन्होंने सनातन धर्म का पक्ष लेकर निम्नलिखित नियम बनाये। जिनको आजकल भी हमारे सनातन धर्मी दुराग्रह से रखने की चेष्टा करते हैं। इन नियमों से क्या-क्या हानियां हैं, इसी पुस्तक के आरम्भ में महात्मा अमर स्वामी जी महाराज का लेख "शास्त्रार्थ की सामान्य बातें" अर्थात् लेखक का निवेदन पढ़िये।

नियम जो निर्धारित किये:—

१. शास्त्रार्थ संस्कृत में होगा।
२. वेद (संहिता भाग) शतपथ ब्राह्मण, निरूक्त, मनुस्मृति आदि के अनुकूल शास्त्रार्थ होगा, इनसे भिन्न किसी ग्रन्थ का प्रमाण नहीं माना जायेगा।
३. दोनों अपने-अपने पक्षों को आधा-आधा घण्टे में समाप्त करेंगे।
४. शास्त्रार्थ लेखबद्ध होगा।
५. दोनों लेख किसी मध्यस्थ के पास भेज दिये जावेंगे और जैसा वह निर्णय दे वही दोनों पक्षों को मानना होगा।
६. किसी एक विषय के निश्चय हो जाने से बाकी के सब विषय उसी प्रकार के फैसले पर समझे जावेंगे।

नोट:—शास्त्रार्थ "मृतक श्राद्ध" पर नियत हुआ है!

"शास्त्रार्थ की मूल प्रति से उदधृत"

श्री पण्डित गणेश दत्त जी शास्त्री द्वारा लिखित

॥ ॐ ॥

वजीराबाद नगरेऽद्यतनार्य्यं सामाजिकैः सह मृतक श्राद्ध विषये मदीयः शास्त्रार्थः सम्वृत्तः । आर्य्यैः स्वीकृतं ऋग्वेदादिसंहितादयः स्वतः प्रमाणम् । तत्र सनातन सभातो मयोक्त विषयस्य प्रमाणमधस्तनं दत्तम् । ऋग्वेद १० म, मण्डले १४ सूक्ते परेयिवासं षोडशर्चं चर्तुदशं सूक्तं "परेयिवासं" प्रथम मंत्रः ।

तत्र यमोवर्णितः । "यमः नः गातुं' द्वितीयमन्त्रे पितरः कथिताः । अग्रिमेष्वपि मन्त्रेषु मृतक श्राद्ध वर्णना स्फुटीकृता । आर्य्य सामाजिकैर्मनुस्मृतिरपि परतः प्रामाण्येन स्वीक्रियते । तत्र पितृणाम्प्रथमोत्पत्तौ मनुस्मृतेः प्रथमाध्यायस्य सप्तत्रिंशः श्लोकः कथितः मनुस्मृति, अध्याय १ श्लोक ३७ पुनश्च तृतीयाध्याये ब्राह्मणादि वर्णानां पितरः पृथक् निर्दिष्टाः । मनुस्मृति अध्याय ३ श्लोक १९४ आरभ्य २०० पर्यन्तं । पुनः मनुस्मृति अध्याय ५ श्लोक ८३, अस्मिन् मृतक सम्बन्धिनी अपवित्रता पातकतयोक्ता दिन संख्यापिकृता ।

पुनर्मनुः अध्याय १ श्लोक ६५, ६६, अत्र पितृणां मानुषेभ्यः काल विभेदः प्रदर्शितः । गीतायामपि "पतन्ति पितरोह्येषां लुप्त पिण्डोदक क्रियाः" प्रथमाध्याये, पुनर्गीतायां अ० १० "पितृणामर्य्यमाचास्मि" अन्यत्रापि एवमादीनि प्रमाणानि सन्ति मृतक श्राद्ध विषये, परन्तु कृत विद्यानां भवतां निष्पक्षपातिनां सन्निधानेऽलमतिगहनावगाहनेन ।

इदानीं भवन्तो मध्यस्था अत्रत्यैर्विधीयन्ते । तस्मिन् सूक्ते मृतक श्राद्ध सिद्धिर्भवतिनवेति कृपया स्फुटं लेखनीयम् ! शम् ॥

"पं० गणेश दत्त शास्त्री"

(प्रो० ओरियन्टल कालेज—लाहौर) वर्तमान–पाकिस्तान

श्री पं० कृपा रामजी (जो बाद में स्वामी दर्शनानन्द जी के नाम से विख्यात हुए)

एवं

श्री पं० राजा राम जी शास्त्री (प्रो० डी० ए० वी० कालेज–लाहौर) **द्वारा लिखित**—

॥ ओ३म् ॥

लक्षण प्रमाणाभ्यां वस्तुसिद्धिर्नतु प्रतिज्ञामात्रेण । वेदस्य यल्लक्षणं ऋषिभिः कृतं यद्विरूद्धोयोऽर्थो भवेत् नास्तितस्य प्रामाण्यम् (यथा) कणादेन स्वकीये वैशेषिक शास्त्रे प्रतिपादितं "बुद्धिपूर्वाक्कृत्तिर्वेदे । तथा च, तद्वचनादाम्नायस्य प्रामाण्यम् । अन्यच्च गौतमे नोक्तं तदप्रामाण्यमनृतव्याघात पुनरूक्त दोषेभ्यः ।

एभिः स्पष्टतया प्रतीयते वेदानांयोऽर्थः क्रियते तेनार्थेन यदि वेदेषु कश्चिद्दोषः आगच्छति नास्ति स वेदार्थः पिता पुत्र सम्बन्ध विचारावसरे एते प्रश्णाः प्रतिपद्यन्ते । पिता पुत्रादि सम्बन्धाः शरीरे वर्त्तन्ते तथा चात्मनि तथा विशिष्टे शरीरे चेत्तर्हि शरीर पितृवधस्य पातकी भवेत् आत्मनि चेतत्रापि वक्तुं न शक्यते, आत्मनो नित्यत्वात् ।

विशिष्टे चिन्नास्ति मृतकानां पितृत्वं पितृत्वाभावात् नास्ति मृतक श्राद्धं तत्वज्ञानुकूल्यम् । तत्वज्ञान विरुद्धत्वान्नास्ति वेदार्थः वेदेषु मृतक विशेषणाभावात् तथाचत्रियाणा पितृणामेव श्राद्धस्य विहितत्वात् जीवित पितृषु संघटते तथान्य कृतस्यान्येस्मिन् फलाभावात् यदि अन्य कृतस्य अन्योमुक्ते तर्हि बद्धानां कृत कर्म्माणांमुक्तानामपि बंधस्यापत्तिः तथा च वेदेषु पितृणामावाहन प्रतिपादनात् । न तेनान्य देहे गतानामावाहनं संघटति यदि शरीरं विहाय आयाति तर्हि पितृहिंसा भवेत् यदि नायाति तर्हि वैदिक क्रियासु अनुत्पत्तिः ।

वेदेषु अनृताभावात् नास्ति मृतकानामावाहनं, एभिः प्रमाणैः स्पष्टतया प्रतीयते जीवितामेव श्राद्धं वेदानुकूल्यमस्ति।

"पं० कृपा राम व पं राजा राम"

प्रो. डी. ए. वी. कालेज लाहौर!

नोटः—इन दोनों लेखों का भावार्थ पूज्य महात्मा अमर स्वामी जी महाराज ने किया है। जो नीचे दिया जाता हैं।

प्रथम लेख का भावार्थः—

वजीराबाद नगर में आज आर्य समाजियों के साथ मृतक श्राद्ध विषय पर मेरा शास्त्रार्थ आरम्भ है।

आर्य सामाजिकों ने ऋग्वेद आदि संहिताओं को स्वतः प्रमाण स्वीकार किया है वहाँ सनातन धर्म की ओर से मैंने उक्त विषय के नीचे प्रमाण दिये हैं।

"ऋग्वेद मण्डल १० सूक्त १४ मन्त्र १"

परेयिवासं ....

यहां इसमें यम का वर्णन है।

२. "यमोनोगातुं..........................

इसी मन्डल व सूक्त के दूसरे मन्त्र में पितरों का वर्णन हैं। अर्थात पितर कहे गये हैं। इससे अगले मन्त्र में भी मृतक श्राद्ध का वर्णन स्पष्ट रूप में है। आर्य समाजियों के द्वारा मनुस्मृति भी परतः प्रमाण रूप से स्वीकार की जाती है। वहां पितरों की प्रथमोत्तपत्ति में मनुस्मृति के अध्याय १ श्लोक ३७ में वर्णन है। फिर तीसरे अध्याय में ब्राह्मण आदि वर्णों के (ब्राह्मण, क्षत्रिय वैश्य, शूद्र) पृथक्-पृथक् पितर बताये गये हैं।

मनुस्मृति अध्याय ३ श्लोक १९४ से आरम्भ करके श्लोक २०० तक। फिर मनुस्मृति अध्याय ५ श्लोक ८३ में मृतक के सम्बन्ध में अपवित्रता (पातक) के दिनों की संख्या बताई है। फिर मनुस्मृति अध्याय १ श्लोक, ६५,६६, में पितरों और मनुष्यों के काल का भेद बताया गया हैं। गीता में भी—

"पतन्ति पितरोह्येषां लुप्तपिण्डोदक क्रियाः" गीता अध्याय १ श्लोक। ४२।

फिर गीता अध्याय १० श्लोक। २९।

"पितृणामर्यमाचास्मि...................

और स्थानों में भी मृतक श्राद्ध विषय में, इसी प्रकार के प्रमाण हैं। परन्तु विद्या प्राप्त किये हुए पक्षपात रहित आप लोगों के सम्मुख अधिक खोज करने से बस (समाप्त) करता हूँ।

अब आप मध्यस्थ निश्चय किये गये हैं। उस सूक्त में मृतक श्राद्ध सिद्धि होती है कि नहीं कृपया स्पष्ट लिखिये!

"गणश दत्त शास्त्री"

प्रोफेसर-ओरियण्टल कालिज-लाहौर

दूसरे लेख का भावार्थः—

लक्षण और प्रमाणों (दोनों) से वस्तु की सिद्धि होती है प्रतिज्ञा मात्र से नहीं। वेद का जो लक्षण ऋषियों ने किया है उससे जो विरुद्ध हो, उसको प्रमाण मानना योग्य नहीं हैं। (जैसे) ऋषि कणाद ने अपने वैशेषिक शास्त्र में प्रतिपादन किया हैं। "वेद में बुद्धि पूर्वक वाक्य हैं" और भी उस परमेश्वर के वचन होने से वेदों की प्रामाणिकता है। और भी-ऋषि गौतम ने कहा है "अनृत-मिथ्या, व्याघात-परस्पर विरूद्ध, पुनरूक्त-आवश्यकता के बिना बार-बार एक ही बात का कहना, इन दोषों युक्त ग्रन्थों की प्रामाणिकता नहीं हैं। इन वचनों से स्पष्टतया प्रतीत होता है कि-वेदों का जो अर्थ किया जाता है, उस अर्थ से यदि वेदों में कुछ दोष आता है, तो वह वेदार्थ नहीं हैं। पिता-पुत्र सम्बन्ध विचार के अवसर पर इतने प्रश्न उत्पन्न होते हैं।—पिता-पुत्रादि सम्बन्ध शरीर में होते हैं या जीव में, या जीव और शरीर दोनों इकट्ठे रहने में ?

यदि शरीर में पिता-पुत्र सम्बन्ध हैं तो मरे हुए पिता के शरीर को भस्म करने पर पुत्र पितृघात का दोषी हो जायेगा। जीव में पिता-पुत्र सम्बन्ध माना जाये, जीव के नित्य होने से यह भी नहीं कहा जा सकता, (पिता-पुत्र सम्बन्ध नित्य नहीं अनित्य है, नित्य जीवात्मा के साथ पिता-पुत्रादि अनित्य सम्बन्ध रह नहीं सकते हैं)। यदि जीव और शरीर दोनों के संयोग में पिता-पुत्र सम्बन्ध हैं, तो मरने पर वह सम्बंध समाप्त हो गया, मृतक में पितृत्व पालन क्रिया का अभाव होने से (जीव और शरीर का संयोग होने में पिता-पुत्र सम्बन्ध था, वह संयोग रहा नहीं तो पिता-पुत्र सम्बन्ध भी नहीं रहा,) इसलिए मृतक श्राद्ध तत्त्वज्ञों ज्ञानियों के अनुकूल नहीं हैं। तत्वज्ञान के विरुद्ध होने से (मृतक-श्राद्ध बताने वाला अर्थ वेदार्थ नहीं हैं। पितर शब्द के साथ) मृतक विशेषण का अभाव होने से (अर्थात् वेदों में पितर शब्द के साथ मृतक विशेषण नहीं हैं। इसलिए "पितर" का अर्थ जीवित माता-पिता आदि ही हैं। मरे हुए नहीं क्योंकि पितर का अर्थ रक्षा करने वाले हैं, रक्षा करने की सामर्थ्य जीवितों में ही होती है। मृतकों में नहीं) और तीन पितरों (पिता, पितामह, प्रपितामह,) का श्राद्ध ही विधान में होने से भी जीवितों का ही श्राद्ध होता है, क्योंकि इन तीन का जीवित रहना अधिक सम्भव है।

और, अन्य के किये का फल अन्य को न मिलने से भी मृतक श्राद्ध असिद्ध हैं। यदि अन्य का किया अन्य भोग सकता है, तो बद्ध जीवों के कर्मों से मुक्तों का बन्ध भी मानना पड़ेगा।

और भी वेदों में-पितरों को बुलाने का विधान होने से भी (यही सिद्ध होता है कि श्राद्ध मृतकों का नहीं हो सकता है) क्योंकि-न मृतकों को बुलाया जा सकता है, न मृतक बुलाने से आ सकते हैं। जो मर जाता है वह कहीं न कहीं जन्म ले लेता है। "ध्रुवं जन्म मृतस्य च" गीता (में कहा है) मरने वाले का जन्म अवश्य हैं।

उससे अन्य देह में गये हुओं का बुलाना हो नहीं सकता है। यदि वह पितर शरीर को छोड़कर आयेगा तो पितृ हिंसा हो जायेगी। यदि नहीं आयेगा तो वैदिक (कहलाने वाली) क्रिया झूठी हो जायेगी। वेदों में अनृत (झूठ) का, अभाव है, इससे मृतकों का बुलाया जाना असम्भव है। इन प्रमाणों से स्पष्टतया यह सिद्ध होता है, कि जीवितों (माता-पिता आदि) का श्राद्ध (श्रद्धा से किया गया तर्पण) ही वेदों के अनुकूल हैं।

"पं. कृपा राम व पं. राजा राम शास्त्री,
प्रो. डी. ए. वी. कालेज लाहोर"

जर्मनी भेजने का निश्चय :—

उपरोक्त दोनों लेखों को जैसा निश्चय किया गया था, उसके अनुसार श्री बाबू सिकन्दर लाल जी मजिस्ट्रेट ने जो उस शास्त्रार्थ सभा के प्रधान भी थे, लेकर रजिस्ट्री से मध्यस्थ (श्री प्रो. मैक्समूलर) के पास निर्णयार्थ जर्मनी भेज दिया था। वहां से जो निर्णय आया उसको मूल कापी सहित सनातन धर्म सभा ने प्रकाशित करा लिया था। अगले पृष्ठों में उस मूल कापी के दर्शन करें एवं उस निर्णय को भी पढ़ें जो जर्मनी से आया था।

* श्रीः *

शास्त्रार्थ श्राद्ध।

आर्यसमाज वजीराबाद (पञ्जाब)

और

पण्डित गणेशदत्त शास्त्री,

प्रोफेसर संस्कृत और धर्मशास्त्र सनातनधर्म कालेज, भूतपूर्व प्रोफेसर गवर्नमेंट कालेज और ओरियण्टेल कालेज, रिटायर्ड प्रोफेसर फोरमेन क्रिश्चियन कालेज इत्यादि २।

दी राइट आनरेबल प्रोफेसर एफ़ मैक्समूलर के एम. महोदय की सम्मति सहित

सर्वाधिकार रक्षित।

द्वितीयवार— मूल्य ✶)

नोट—जो निर्णय जर्मनी से प्रो० मैक्समूलर जी ने भेजा था, उसको लेकर सनातन धर्म सभा ने सर्वाधिकार के साथ कई बार प्रकाशित किया। जिसकी द्वितीय बार प्रकाशित प्रति का फोटो ऊपर दिया गया है। आप इसे अच्छी तरह देख सकते हैं। अन्दर का निर्णय अगले पृष्ठों में पढ़िये !

"निवेदक"

लाजपत राय आर्य

Oxford, 13th September 1896.

My friends,

My hair has long ago turned white and I have seen the children nay to enter the Asharama of Sanyasa.

But though I long for rest and feace, I receive so many letters, not only from England, France, Germany, Italy, but from America, and particularly. From India that I should literally have no time left to my self the whole day, if I were to attempet to answer them all. Still, when I received your first letter I read it carefully and even began to ansuier it but afterwards I could not find it again it had shoun it must have carried it away. I confess however that I felt at the time what I feel even now, that you with your intimate knowledge of the Shastras, are far better judges than I am as to the original purpose of the Sharaddha.

You find some thing like your Sharaddha among other Aryan Nations also.

In fact aneestorworship is found among other nations also, who do not speak Aryan Langurges. It arose simply from a very natural human felling to give up some thing that is dear to us, to those who were dear to us and are no longer among us, just as the bow and sacrificial vessels were thrown on the funeral piles to be burnt with the body of the deceased.

The question whether the departed would come back to take and eat the pindas was never asked it was enough to have given them and thus to have honoured the memory of our parents, grand parents, and great grand parents, as these offerings were made originally at times when the remaining members of a family were gathered at a meal, the living also partook of the meals offered.

Or distributed them to worthy people. Hence the Shraddha was both for the departed and for the survivors. Very soon however, superstition came on and people parsuaded themselves that the departed spirits returned in a bodily shape to earth, to partake of the offerings, and than the scoffers began to say that those Shraddhas were absured because the departed spirits were never seen to consume them or benefit by them.

In this way superstition always creates the scepticism of the Nastiks.

You get a very good defination of Shraddha in the Nirnaya Sindhu. There marichi says.

प्रेतं पितॄंश्च निर्दिश्य भोज्यं यत्प्रियमात्मनः ।
श्रद्धया दीयते तत्र तच्छ्राद्धं परिकीर्तितम् ॥

In the same place it is stated that the Yejur Vedas looked upon the Shraddha as 'Pind Danam, the Rig Vedas as Dvijarcha Sam Vedas as both :

"यजुषां पिण्डदानं तु बह्वृचानां द्विजार्चनम् ।
श्राद्ध शब्दाभिधेयं स्यादुभयं सामवेदिनाम् ।।"

I hold that in this case the Sama Vedas were right and that the Shraddha was meant both as am honorable offering to the "Mritas" and as an honor to the living, particularly of the Dwijas who came to assist at the Shraddha.

These gifts should be bestowed on near relatives and friends and I my self, as having studied the Vedas, have frequently received such Shraddha gifts from India, though I was not born in "Arya Varta".

Now I must close my letter being very busy, and I remain your friend and very distant Sahinda.

(Sd.) F. Max-Muller.

हिन्दी अनुवाद :—

ओक्सफोर्ड, १३ सितम्बर सन् १८९६,

मेरे दोस्तो !

मेरे बाल सफेद हुए जमाना बीत गया । और मेरे बच्चे संन्यास आश्रम में पदार्पण कर चुके ।

यूं तो मन आराम व शान्ति चाहता है, अगर मेरे पास इंगलैंड, फ्रांस, जर्मनी इटली बल्कि अमरीका व विशेष-कर भारत से इतने पत्र आते हैं कि अगर मैं सभी का जवाब देना चाहूं तो खुद अपने लिए कुछ भी मेरे पास समय न रहेगा ।

खैर ! जब तुम्हारा पहला पत्र मिला मैंने उसे ध्यानपूर्वक पढ़ा, और उसका जवाब देना भी आरम्भ किया । मगर बाद में मुझे वह पत्र न मिल सका कहीं खो गया । मैं मानता हूं कि आप शास्त्रों का ज्ञान रखते हुए श्राद्ध के मूल कारण को मुझसे ज्यादा जानते हैं । श्राद्ध का रिवाज अन्य आर्य देशों में भी मिलता है । बल्कि अनार्य देशों में भी पूर्वजों की पूजा पाई जाती है ।

यह रिवाज एक बिल्कुल स्वाभाविक मानव प्रवृत्ति से शुरू हुआ—अपने गुजरे हुए प्रियजनों को कोई प्रिय वस्तु अर्पण करने की भावना ।

जैसे कि जलती चिता पर मृत शरीर के साथ धनुष व अन्य चीजें जला देना ।

क्या मरे हुए उन चीजों को लेने आते है । यह जानना जरूरी नहीं था । यही सन्तोष की बात है कि हमने उन्हें कुछ दिया । ज्यादातर ऐसा परिवार के अन्य सदस्यों की उपस्थिति में किया जाता था—जैसे कि भोजन के समय जबकि वे खुद भोजन ग्रहण करते थे । अथवा अन्य योग्य पुरुषों को भोजन कराते समय !

इस लिए श्राद्ध मृत व जीवित दोनों के लिए था, लेकिन जल्द ही यह अन्धविश्वास फैल गया कि मृत फिर शरीर धारण कर धरती पर लौटते हैं । उन अर्पण की हुई चीजों का भोग करने ।

तभी से नास्तिक लोग श्राद्ध को अन्ध विश्वास बताने लगे । इस तरह अन्ध विश्वास से ही नास्तिकों में संशय पैदा हुआ ।

निर्णय—सिन्धु में श्राद्ध की बहुत अच्छी परिभाषा मिलती है।

मरीचि कहता है—

"प्रेत और पितरों का निर्देश करके जो आत्मा को प्रिय है। उस भोजन का देना श्राद्ध कहलाता है।"

उसी जगह यह बताया गया है कि, यजुर्वेद श्राद्ध को "पिण्डदान" और "ऋग्वेद" द्विजार्चन मानते हैं और सामवेद दोनों को मानता है। "यजुर्वेद" के द्वारा पिण्डदान, और बहुत सी ऋचाओं के द्वारा ब्राह्मणों का पूजन, सामवेदियों में इन दोनों को श्राद्ध कहते हैं।

मेरे ख्याल में सामवेद का मत ठीक है कि श्राद्ध मृत व जीवित दोनों के लिए एक दक्षिणा समान था। इसमें जीवितों का सम्मान था। खास कर द्विज जो श्राद्ध के समय उपस्थित रहते थे। ये उपहार अपने नजदीकी रिश्तेदारों व दोस्तों पर अर्पण करने चाहिये। और मुझे खुद (वेद पढ़ने के नाते) ऐसे कई श्राद्ध उपहार भारत से उपलब्ध हुए हैं। जब कि मैं आर्यावर्त्त में पैदा नहीं हुआ।

अब मैं पत्र समाप्त करता हूं। काम बहुत है। मैं तुम्हारा दोस्त और दूर का सपिण्ड।

"मैक्समूलर"
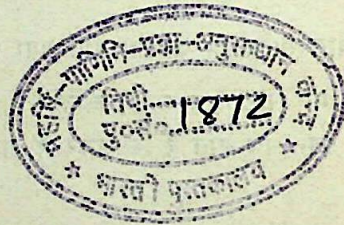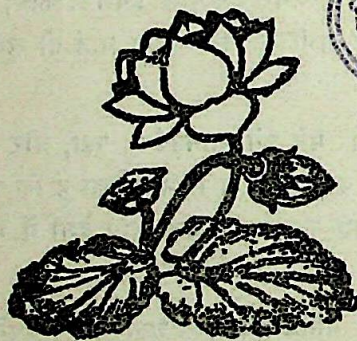
इस सम्बन्ध में कुछ ध्यान देने योग्य बातें

१. श्री पं० गणेश दत्त जी शास्त्री के लेख में अन्तिम-वाक्य यह है—

"तस्मिन् सूक्ते मृतक श्राद्ध सिद्धिर्भवति न वेति"

इसका अर्थ यह है कि—

ऋग्वेद के जिस सूक्त से मैंने प्रमाण दिये हैं उस सूक्त से "मृतक श्राद्ध" की सिद्धि होती है या नहीं ?

"कृपया स्फुट लेखनीयम्"

कृपा करके यह स्पष्ट लिखिये !

मैक्समूलर साहिब ने सारे पत्र में यह कहीं भी नहीं लिखा कि—

ऋग्वेद से या ऋग्वेद के इस दशम मण्डल के बयालिसवें सूक्त से "मृतक श्राद्ध" की सिद्धि होती है ।

स्पष्ट है कि—इस सूक्त से मृतक श्राद्ध की सिद्धि नहीं होती है ।

मैं (अमर स्वामी) कहता हूँ कि—

चारों वेदों से ही सिद्धि नहीं बल्कि—"मृतक श्राद्ध का खण्डन होता है ।"

इसकी सिद्धि के लिए वेदों में एक भी मन्त्र नहीं हैं ।

२. मैक्समूलर का यह वाक्य—

"क्या मरे हुए उन चीजों को लेने आते हैं ? यह जानना आवश्यक नहीं था"

यह वाक्य भी ध्यान देने योग्य है । बिलकुल स्पष्ट है कि—मैक्समूलर के विचार में श्राद्ध पहुंचने की भावना से नहीं किया जाता था ।

३. मैक्समूलर का यह वाक्य भी ध्यान देने योग्य है—

"जल्द ही यह अन्ध विश्वास फैल गया कि, उन अर्पण की हुई चीजों को भोग करने को मृत पितर फिर शरीर धारण कर धरती पर लौट आते हैं" ।

अर्थात नहीं आते हैं । "आतें हैं यह अन्ध विश्वास हैं ।"

४. "इसमें जीवितों का सम्मान होता है" ये उपहार अपने नजदीकी रिश्तेदारों और दोस्तों पर अर्पण करने चाहिये और मुझे वेद पढ़ने के नाते ऐसे कई उपहार भारत से उपलब्ध हुए हैं" ।

५. —मैक्समूलर जी के लेख में पाचवीं बात यह भी विशेष विचारणीय है कि—

वेद का एक भी प्रमाण मृतक श्राद्ध के पक्ष में नहीं दिया है। "निर्णय सिन्धु" एक अनार्ष एवं पौराणिक ग्रन्थ है। उसका एक श्लोक देकर यह लिखा है कि—

"उस ग्रन्थ में ऐसा माना गया है"

स्पष्ट है कि—

मैक्स मूलर जी ने उस शास्त्रार्थ पर कोई निर्णय नहीं दिया। और यह स्पष्ट लिख दिया कि—

"मृतकों के पास पहुंचाने के लिए नहीं केवल उपहार रूप में ही वस्तुएं जीवितों को दी जाती थी, और दी जानी चाहियें।

"अमर स्वामी परिव्राजक"

श्री पं० गणेशदत्त जी शास्त्री के पत्र पर विचार श्री शास्त्री जी ने ऋग्वेद के मं० १० सूक्त १४ के १-२ मन्त्रों की प्रतीकें दी हैं और मैक्समूलर जी से सम्मत्ति माँगी है कि इस सूक्त से मृतक श्राद्ध सिद्ध होता है या नहीं ? यह स्पष्ट लिखिये।

मैक्समूलर जी ने इस सूक्त को छुआ भी नहीं। वास्तविकता यह है कि—उस सूक्त में मृतक श्राद्ध की गन्ध भी नहीं है सूक्त में १६ मन्त्र हैं इनमें एक बार "पिता" शब्द आया है और पांच बार "पितर" शब्द आया है पर सारे सूत्र में—"मृतक" शब्द एक बार भी नहीं आया है।

पौराणिक पण्डितों ने एक मिथ्या धारणा बना रक्खी है कि—"पितर" शब्द "मृतक" के अर्थ में रूढ़ हैं।

वेद में रूढ़ि अर्थ में एक भी शब्द नहीं है और "पितर" शब्द "मृतक" के अर्थ में रूढ़ है यह उनकी धारणा सारे संस्कृत साहित्य के विरूद्ध है।

एक प्रमाण यहाँ वेद का इसी विषय में देता हूं—यजुर्वेद अध्याय २५ मन्त्र २२ इस प्रकार है—

"शतमिन्नु शरदो अन्ति देवा यत्रा नश्चक्राजरसं तनूनाम। पुत्रासो यत्र पितरो भवन्ति मा नो मध्या रीरिषतायुर्गन्तो॥

इस मन्त्र में यह प्रार्थना है कि—हे परमेश्वर हम बुढ़ापे तक जीवित रहें हम उस समय तक जीवित रहें जब हमारे पुत्र "पितर" हो जायें।

यदि इस मन्त्र में "पितर" शब्द का अर्थ "मृतक" लिया जाय तो घोर अनर्थ हो जायेगा। क्या कोई पिता परमेश्वर से ऐसी प्रार्थना कभी भी कर सकता है कि—मैं उस समय तक जीवित रहूं जब मेरे पुत्र मर जायें ? स्पष्ट है कि—ऐसी प्रार्थना कोई भी कभी नहीं करेगा।

इस मन्त्र में आये "पितर" शब्द का अर्थ महीधर और उव्वट ने यह किया है—

"अस्मत् पुत्रा पुत्रवन्तो भवन्ति अस्मत्पोत्रा भवन्तीर्थः।

इसका भावार्थ यह है कि—हम उस समय तक जीवित रहें जब हमारे पुत्र "पितर" अर्थात् पुत्रों वाले हो जायें अर्थात् हमारे पौत्र हो जायें। "पितर" का अर्थ है सन्तान वाले सन्तान का पालन करने वाले। क्योंकि—पितृ और पिता शब्द एक वचन है और यह शब्द "पा" धातु से बनता है जिसका अर्थ "रक्षा" है।

रक्षा करने वाला "पितृ" या "पिता" ही हो सकता है निरुक्त में पिता का अर्थ किया है।

"पिता पाता पालयितावा"

पिता-पालन करने वाला और रक्षा करने वाला। "पितृ" और "पिता" शब्द का बहुवचन है "पितर" तो पितर का अर्थ हुआ "रक्षा करने वाले"। रक्षा तो जीवित ही कर सकता है मृतक तो अपनी भी रक्षा नहीं कर सका और की रक्षा कैसे करेगा ? अतः स्पष्ट है कि "पितर" का अर्थ—"मृतक" कभी हो ही नहीं सकता है। इस सारे सूक्त में एक मन्त्र में भी मृतक श्राद्ध नहीं है।

पं० गणेशदत्त शास्त्री जी ने मनुस्मृति के अध्याय तीन में बताया है कि—वहाँ चारों वर्णो के पृथक्-पृथक् पितर बताये हैं।

इस पर भी विचार कर लें—

मनुस्मृति अध्याय ३ श्लोक १९७ में कहा गया है कि—

सोमयानाम विप्राणां क्षत्रियाणां हविर्भुजः।
वैश्यानां आज्यपानाम, शूद्राणां सुकालिनः॥

अर्थ—ब्राह्मणों के पितर "सोमपा" हैं क्षत्रियों के "हविर्भुज" हैं। वैश्यों के पितर "आज्यपा" नाम वाले हैं और शूद्रों के पितरों का नाम सुकालिन है।

ये हैं कौन ? इससे अगले श्लोक में बताया गया है—

"सोमपास्तुकवेः पुत्रा हविष्मन्तोङ्गिरः सुताः।
पुलस्त्यस्याज्यपाः पुत्रा वसिष्ठस्य सुकालिनः॥ मनु० ३।१९८,

ब्राह्मणों के पितर सोमपा, कविउशना के पुत्र हैं, क्षत्रियों के पितर हविष्मन्त "हविर्भुज" अंगिरा के पुत्र हैं, वैश्यों के पितर "आज्यपा" पुलस्त्य के पुत्र हैं, और शूद्रों के पितर "सुकालिन्" वसिष्ठ के पुत्र हैं।

इन श्लोकों में तो उस समय के जीवित लोगों को भिन्न-भिन्न वर्णो के पितर बताया गया है। ब्राह्मणों, क्षत्रियों वैश्यों और शूद्रों के मरे हुए पितर पितामह आदि का वर्णन यहां कहाँ है ? और ब्राह्मणों, क्षत्रियों, वैश्यों और शूद्रों के मरे हुए पितर, कवि, अंगिरा, पुलस्त्य और वसिष्ठ के पुत्र कैसे हो जायेंगे ? स्पष्ट है कि यहाँ भी मृतक श्राद्ध नहीं है।

रहा एक प्रमाण गीता का—वह इस प्रकार है—

संकरो नरकायैव कुलघ्नानां कुलस्य च।
पतन्ति पितरोह्येषां लुप्तपिण्डोदकक्रिया॥ गीता अध्याय १ श्लोक ४१,

इस श्लोक का पौराणिक लोग मृतक श्राद्ध सिद्ध करने वाले अर्थ यह लेते हैं कि—वर्णसंकर सन्तान के पितर पतित हो जायेंगे क्योंकि पिण्डोदक क्रिया बन्द हो जायेगी।

यहाँ पहिले मैं यह बतलाता हूं कि गीता में पितर शब्द जीवितों के लिये आया है देखिये प्रमाण—

तत्रापश्यत् स्थितान् पार्थः पितृनथ पिता महान्।
आचार्यान्मातुलान् भ्रातृन् पुत्रान् पौत्रान् सखींतस्था॥

गीता अध्याय १ श्लोक २६

वहाँ युद्धस्थल में अर्जुन ने देखा खड़े हुए आचार्यों को, पितरों को पितामहो को मामाओं को भाइयों, पुत्रों पौत्रों और मित्रों को।

कहिए यहाँ मरे हुए पितरों को युद्ध के लिए खड़े देखा था या जीवितों को? निश्चय ही कहना पड़ेगा कि जीवितों को ही देखा था।

दूसरा प्रमाण और देखिये गीता अध्याय १ श्लोक ३-३४

आचार्याः पितराः पुत्रास्तथैव च पितामहा।
मातुलाः श्वसुराः पौत्राः श्याला सम्बन्धिनस्तथा।
एतान्न हन्तुमिच्छामि, घ्नतोऽपि मधुसूदन ।।३४।।

अर्जुन ने कहा कि—जिनके लिये मैं राज्य और सुख चाहता था वह सभी प्राणों और धनों का लोभ त्याग कर यहाँ युद्धस्थल में खड़े हैं।

आचार्य, पितर, पुत्र और पितामह, मामा, श्वसुर, पौत्र, साले और अन्य सम्बन्धी। यह मुझको मारें तो भी मैं इनको मारना नहीं चाहता हूं।

यहां पितर शब्द जीवितों के लिये ही आया है कौन मान लेगा कि मरे हुए पितर लड़ने मरने को खड़े थे और उन मरे हुओं को कहता था कि मैं इनको नहीं मारना चाहता हूँ ये मुझको मारे तो भी।

बस वहां जो कहा है कि उनके पितर पतित हो जायेंगे सो मरे हुए कैसे पतित हो जायें? रोटी पानी न मिलेगा तो भूख के मारे जीवित पितर पतित हो जायेंगे। "बुभुक्षित: किन्नकरोति पापम्"। भूखा क्या पाप नहीं करता है?

ये प्रमाण हैं श्री पं० गणेशदत्त जी शास्त्री के जो मैक्समूलर के पास भेजे गये थे, इनकी यहीं धज्जियाँ उड़ गई।

पाठकगण देख लें कि पं० गणेशदत्त जी शास्त्री झूठी बातों पर भी मैक्समूलर जी से मृतक श्राद्ध के पक्ष में स्वीकृति की सम्मति चाहते थे।
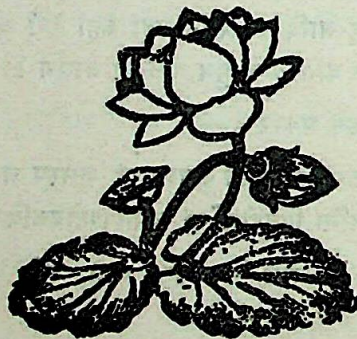
वजीराबाद शास्त्रार्थ और मैक्समूलर की सम्मति पर

मेरे विचार

वह शास्त्रार्थ क्या था ? एक खेल था जो वजीराबाद के हठी सनातन धर्मियों के हठ और दुराग्रह पर वजीराबाद के आर्य समाजियों ने इस लिए इस पर स्वीकृति दे दी कि–झूंठे को घर तक पहुंचाने के लिये यह ही सही।

मैंने श्री पं० राजाराम जी से पूछा था कि—आपने यह पौराणिकों की अनुचित मांग मान क्यों ली थी ?

उन्होंने बताया कि—वजीराबाद के आर्य समाजियों ने मुझसे और श्री पं० कृपाराम जी (स्वामी दर्शनानन्द जी) से पूछे बिना यह नियम स्वीकार कर लिये थे।

हमने तो कहा था कि—पौराणिकों की मांगें अनुचित हैं वजीराबाद आर्य समाज के अधिकारियों की बात रखने के लिये ही यह खेल खेला गया था।

दोनों पक्षों से केवल १०—१२ पंक्तियों का एक-एक पत्र लिखा जाय, इसका नाम शास्त्रार्थ है ?

पक्ष प्रतिपक्ष की ओर से विस्तारपूर्वक ४-६ बार उत्तर प्रत्युत्तर लिखे जाते तो विषय का रूप कुछ समझ में भी आता। इस शास्त्रार्थ के खेल में दोनों पक्षों से ही अधूरा-अधूरा लिखा गया।

मैक्समूलर के पास इसको निर्णयार्थ भेजे जाने में भी कुछ तुक नहीं थी, कोई भी आर्य समाजी विद्वान मैक्समूलर को महापण्डित मानने को तैयार नहीं है।

मैक्समूलर के विषय में महर्षि दयानन्द जी महाराज की सम्मति यह है—

"जो लोग कहते हैं कि जर्मनी देश में संस्कृत विद्या का बहुत प्रचार है और जितनी संस्कृत मैक्समूलर साहिब पढ़े हैं उतना कोई नहीं पढ़ा, यह बात कहने मात्र है क्योंकि—

"यस्मिन् देशे द्रुमोनास्ति तत्रैरण्डो द्रुमायते"

अर्थात् जिस देश में कोई वृक्ष नहीं होता, उस देश में एरण्ड ही को बड़ा वृक्ष मान लेते हैं वैसे ही योरोप देश में संस्कृत विद्या का प्रचार न होने से जर्मन लोगों और मैक्समूलर ने थोड़ा सा पढ़ा वह ही उन के लिये तो अधिक है। परन्तु आर्यावर्त देश की ओर देखें तो उनकी बहुत न्यून गणना है क्योंकि मैंने जर्मनी देश निवासी एक प्रिन्सिपल के पत्र से जाना कि जर्मनी देश में संस्कृत चिट्ठी का अर्थ करने वाले भी बहुत कम हैं। और मैक्समूलर के संस्कृत साहित्य और थोड़ी सी वेद की व्याख्या देखकर मुझको विदित होता है कि मैक्समूलर साहब ने इधर-उधर आर्यावर्तीय लोगों की, की हुई टीका को देखकर कुछ-कुछ यथा-तथा लिखा है जैसा कि—

युञ्जन्ति ब्रध्न मरुषंचरन्तं परितस्थुषः।
रोचन्ते रोचनादिवि॥,

इस मन्त्र का अर्थ "घोड़ा" किया है। इससे तो जो सायणाचार्य ने "सूर्य" अर्थ किया है सो अच्छा है परन्तु इसका

ठीक अर्थ परमात्मा है सो मेरी बनाई "ऋग्वेदादि भाष्य भूमिका" में देख लीजिये। उसमें इस मन्त्र का अर्थ यथार्थ किया है।

इतने से जान लीजिये कि जर्मनी देश और मैक्समूलर साहब में संस्कृत विद्या का कितना पाण्डित्य है।,

"सत्यार्थ प्रकाश एकादश समुल्लास"

श्री मैक्समूलर न संस्कृत के बड़े विद्वान थे न वेदों के ज्ञाता थे। आर्य समाजी कोई विद्वान उनको इस योग्य नहीं मानता है कि वह हमारे शास्त्रार्थों पर निर्णय दे सकें।

क्या मैक्समूलर ने शास्त्रार्थ का निर्णय दिया ?

भारत से जो दो पर्चे शास्त्रार्थ के उनको भेजे गये वह उन से खो गये थे, उनसे बार-बार यहां के पौराणिकों ने प्रार्थना की कि "मृतक श्राद्ध" पर अपनी सम्मति भेज दीजिये, तब एक वर्ष बीतने के पश्चात् उन्होंने अपनी सम्मति शास्त्रार्थ पर नहीं "मृतक श्राद्ध" पर दी और "मृतक श्राद्ध" को वैदिक नहीं बताया वेद का एक भी मन्त्र उन्होंने मृतक श्राद्ध के पक्ष में नहीं दिया।

यह लिखा कि मृतक श्राद्ध तो मरे हुओं की स्मृति में किया जाता था और जो वस्तुएं उन लोगों को प्यारी लगती थीं वह उनकी याद में लोगों को भेंट स्वरूप दी जाती थी मुझ को भी ऐसी अनेक वस्तुएं भारत से अनेक बार भेंट में प्राप्त हुई हैं ?

मैक्समूलर ने लिखा कि–"यह तो कभी प्रश्न ही नहीं उठता था कि—मृतकों के नाम पर जो वस्तुएं दी जाती हैं वह उनको पहुंचती है या नहीं। और जब यह कहा जाने लगा कि ये वस्तुएं मृतकों को पहुंचती है तब से नास्तिक लोग इस पर शंकाएं करने लगे।

"नास्तिक" शब्द से उनका संकेत चार्वाकों की ओर है। जिन्होंने यह प्रश्न उठाये हैं—

(१) मृतानामपि जन्तूनां, श्राद्धं चेत्तृप्ति कारणम्।
गच्छतामिह जन्तूनां, व्यर्थं पाथेय कल्पनम्॥

मरे हुए मनुष्यों के लिये श्राद्ध यदि तृप्ति करने वाला हो सकता है तो घर से दूर यात्रार्थ जाने वालों को मार्ग के लिये भोजनादि की व्यवस्था करनी व्यर्थ है।

घर में ब्राह्मण को बुलाकर भोजन करा दें तो यात्रा में गये हुए लोगों को वहीं पहुंच जाया करेगा। साथ क्यों व्यर्थ बोझा उठाया जाय।

गरुड़ पुराण में भी ऐसा कहा गया है—

मृतानामपि जन्तूनां, श्राद्धमाप्यायनंयदि।
निर्वाणस्य प्रदीपस्य, तैलं सवर्द्धयेच्छिखाम्॥६॥

गरुण पुराण प्रेत खण्ड धर्म काण्ड, अध्याय १० श्लोक ६ श्री वेङ्कटेश्वर प्रेस बम्बई पृष्ट १७७,

"—मरे हुए मनुष्यों के लिये यदि श्राद्ध तृप्ति कर सकता है तो तेल बुझे दीपक की शिखा को बढ़ा देवे।"

ये प्रश्न हैं जिनको मैक्समूलर के शब्दों में "नास्तिकों के प्रश्न" कह दिया जाय, पर इनका उत्तर न मैक्समूलर के पास था न "मृतक श्राद्ध" के मनाने वाले पौराणिकों के पास है। यह बात तो बीच में आ गई पर मेरे इस लेख का प्रयोजन यह है कि मैक्समूलर ने उस शास्त्रार्थ पर निर्णय नहीं दिया, "मृतक श्राद्ध" पर केवल अपनी सम्मति लिखी, जिसमें दो बातें स्पष्ट हैं—

(१) श्राद्ध-मृतकों की स्मृति (यादगार) के रूप में ही होता था।

(२) यह प्रश्न ही नहीं था कि मृतकों की याद में दिया सामान उनको पहुंचता है या नहीं।

तीसरी बात यह मैक्समूलर के लेख से निकलती है कि जब से यह दावा किया जाने लगा कि—मृतकों के नाम पर दिया हुआ भोजन वस्त्रादि मृतकों को पहुंच जाता है तब से अनेकानेक प्रश्न उठने लगे।

"अमर स्वामी परिव्राजक"

[चतुर्थ शास्त्रार्थ]
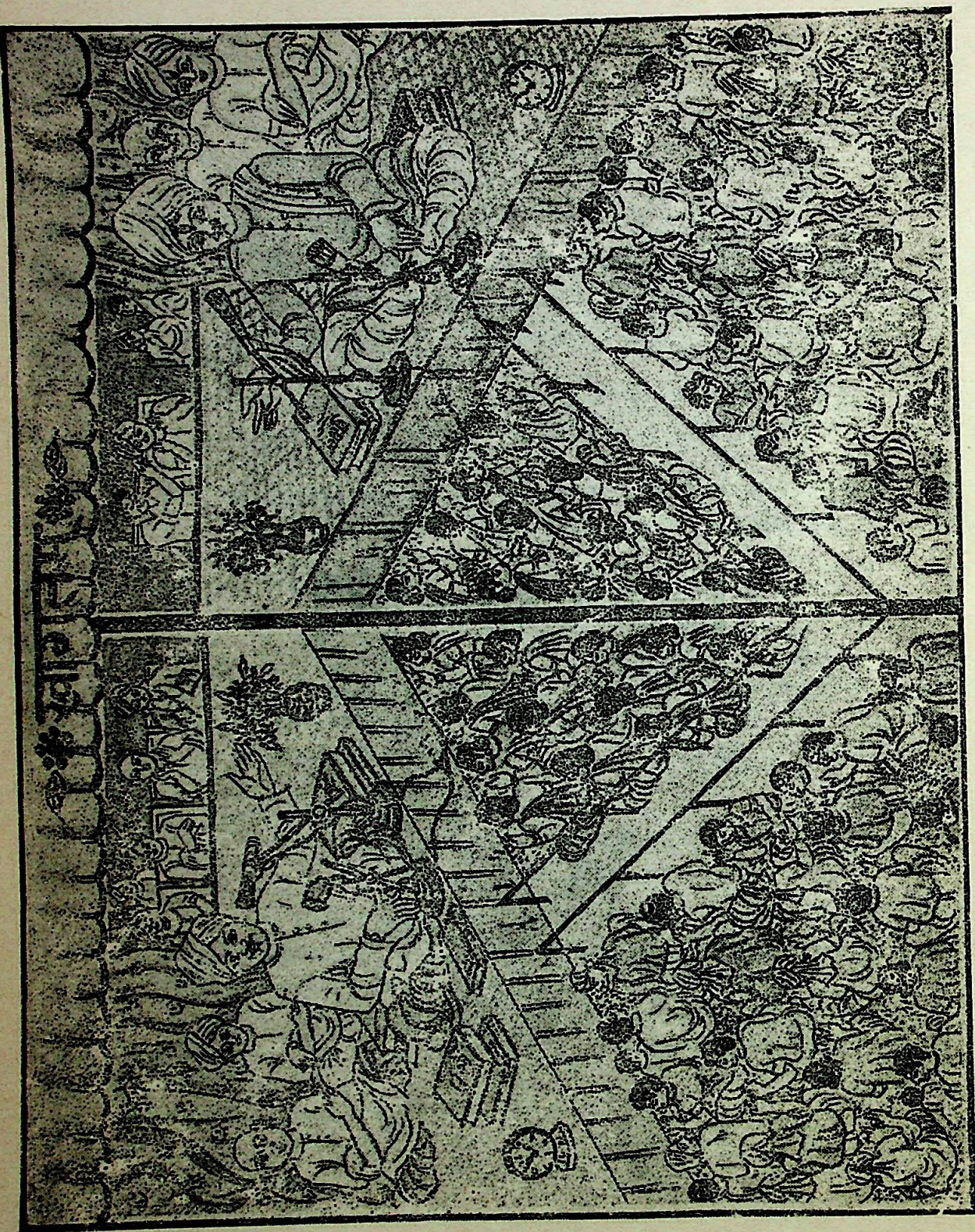
(शास्त्रार्थ करते हुए)

"श्री ठाकुर अमरसिंह जी शास्त्रार्थ केशरी तथा पौराणिक पं० श्रीकृष्ण शास्त्री"

स्थान : "मियानी" जिला सरगोधा-पंजाब

(वर्तमान पाकिस्तान)

विषय : क्या मूर्ति पूजा वेदानुकूल है ?

प्रधान : पं० श्री बुद्धदेव जी मीरपुरी

दिनांक : ११, दिसम्बर सन् १९४० ई०

शास्त्रार्थ कर्ता पौराणिकों की ओर से : पौराणिक पं० श्रीकृष्ण शास्त्री,

एवं

आर्य समाज की ओर से : श्री ठाकुर अमर सिंह जी शास्त्रार्थ केशरी,

नोट:—इस शास्त्रार्थ में पौराणिक पं० श्री कृष्ण जी शास्त्री के सहायक पं० बाबा चमन लाल जी भजनोपदेशक थे, एवं श्री पं० अमर सिंह जी के साथ पं० मनसा राम जी वैदिक तोप थे।

श्री ठाकुर अमरसिंह जी शास्त्रार्थ केसरी

ओ३म शन्नो मित्रः शं वरुण, शनो भवत्वर्यमा।
शन्न इन्द्रो बृहस्पतिः, शन्नो विष्णुरुरुक्रमः॥
ओ३म् नमो ब्रह्मणे नमस्ते वायो त्वमेव प्रत्यक्षं ब्रह्मासि।
त्वामेव प्रत्यक्षं ब्रह्म वदिष्यामि ऋतं वदिष्यामि॥
सत्यं वदिष्यामि, तन्मामवतु तद्वक्तारमवतु।
अवतु मामवतु वक्तारम्॥

धर्म के श्रद्धालु सज्जनों!

आज हम यह निर्णय करने के लिए इकट्ठे हुए हैं कि—परमेश्वर की मूर्ति बनाकर पूजना, वेदों, शास्त्रों, और तर्कों से सिद्ध होता है वा नहीं। मैं प्रारम्भ में कुछ प्रश्न इस विषय में रखता हूं और आशा करता हूं, कि मेरे विद्वान मित्र वेदों के प्रमाणों द्वारा मेरे प्रश्नों के उत्तर देने का कष्ट सहन करेंगे।

१. प्रथम प्रश्न मेरा यह है कि वेद के किस-किस मन्त्र में परमेश्वर की मूर्ति बनाने की आज्ञा है? बताइये?

२. दूसरा प्रश्न यह है कि—चारों वेदों में से कोई मन्त्र ऐसा बताइये अथवा दिखाइये? जिसमें परमेश्वर की मूर्ति को बनाने और पूजने की आज्ञा हो?

३. वेद मन्त्रों द्वारा बताइये कि—ईश्वर की मूर्ति-सोना-चांदी, पीतल, पत्थर, मिट्टी, लकड़ी आदि किस चीज की बनानी चाहिये?

४. ईश्वर की मूर्ति—कितनी लम्बी, कितनी चौड़ी एवं कितनी भारी बनाई जाये? और उसकी आकृति कैसी हो? उसका रंग लाल-पीला-हरा आदि कैसा हो? ऐसा वेद के किन-किन मन्त्रों में बताया गया है?

५. आजकल मन्दिरों में जिन मूर्तियों की पूजा की जाती है। उनमें से परमेश्वर की मूर्ति कौन सी है? चार मुख—एक मुख दो भुजा अथवा चार भुजा या आठ भुजाओं वाली या रुण्ड-मुण्ड-गोल-मटोल या अन्य कोई? वेद मन्त्रों द्वारा परमेश्वर की मूर्ति की पहचान बताइये? इनमें से कौन-सी वेदानुकूल एवं कौन-सी वेद विरुद्ध है?

६. जितनी भी मूर्तियां यत्र-तत्र देखी जाती हैं, वह सब ही मनुष्यों तथा पशुओं आदि की हैं। राम-कृष्ण आदि मनुष्यों वृषभ, शूकर आदि पशुओं और मछली-कछुआ जलचरों की है। इसी प्रकार अन्य भी हैं। परमेश्वर की मूर्ति कोई भी नहीं है। अगर हैं तो बताइये कौन-सी हैं?

अब मैं परमेश्वर अमूर्त्त अर्थात् निराकार हैं इस विषय के प्रमाण देता हूं, सुनिये, और खण्डन कर सकते हों तो करिये?

१. सपर्यगाच्छुक्रमकायम्…… ………यजुर्वेद अध्याय ४० मन्त्र ८,

इस मन्त्र में परमेश्वर को, "अकायम्" अर्थात् शरीर रहित बतलाया गया है, जिसका शरीर ही नहीं उसकी मूर्ति कैसी?

२. सर्वे निमेषा जज्ञिरे, विद्युतः पुरुषादधि।
नैनमूर्ध्वं न तिर्य्यञ्चं न मध्ये परिजग्रभत्॥ २
यजुर्वेद अध्याय ३२ मन्त्र २,

इस मन्त्र में बताया गया है कि—परमेश्वर को ऊपर, नीचे, टेढ़ा, तिरछा, मध्य में कहीं से भी नहीं पकड़ा जा सकता, इसका सीधा अर्थ यह है कि—उसका कोई आकार नहीं है। अतः उसको कोई भी मूर्ति नहीं है।

३. हिरण्यगर्भः समवर्त्ततात्रे, भूतस्य जातः पतिरेक आसीत् ।
स दाधार पृथिवीं द्यामुतेमां कस्मै देवाय हविषा विधेम ॥
यजुर्वेद अध्याय २५ मन्त्र १०,

इस मन्त्र में परमेश्वर को हिरण्य गर्भ कहा है। और भूमि आदि सबका आधार बताया है। आपकी मूर्तियों को तो दूसरे आधारों की आवश्यकता पड़ती हैं। सर्वाधार की कोई मूर्ति नहीं हैं, अगर है तो बताइये।

४. तदेजति तन्नैजति, तद्दूरे तद्वन्तिके।
तदन्तरस्य सर्वस्य, तदु सर्वस्यास्य बाह्यतः।
यजुर्वेद अध्याय ४० मन्त्र ५,

इस मन्त्र में परमेश्वर को सबका चलाने वाला "भ्रामयन् सर्व भूतानि" गीता में कहा है, सब भूतों को चलाने वाला और मन्त्र में उसको सबका चलाने वाला बताकर कहा कि—"तत् न एजति" वह स्वयं नहीं चलता है। वह दूर से दूर है। और निकट से निकट है। वह सब जगत के भीतर है और सबके बाहर है, अर्थात् सर्वव्यापक हैं। सर्वव्यापक वही हो सकता है, जो निराकार (अमूर्त्त) हो उसकी मूर्ति नहीं।

५. गीता में इस मन्त्र से सर्वथा मिलता हुआ श्लोक है।

बहिरन्तश्च भूतानां, अचरं चरमेव च।
सूक्ष्मत्वादविज्ञेयम्, दूरस्थं चान्ति के च तत् ॥ १५ ॥
श्रीमदभगवद्‌गीता अध्याय १३ श्लोक १५,

इस श्लोक का वही अर्थ है, जो अभी बोले गये वेद मन्त्र का है।

अर्थात् :—

वह परमेश्वर सबके बाहर भी है, और भीतर भी है, वह चर—चलाने वाला भी है, और अचर, न चलने वाला भी, वह दूर भी है। तथा निकट भी है इतना इस श्लोक में विशेष कहा गया है कि परमेश्वर सूक्ष्म हैं, इस प्रकार बहुत से प्रमाण हैं, जिनसे सिद्ध है कि, ईश्वर निराकार है, अमूर्त्त है, न उसकी मूर्ति—है, और न हो सकती है।

पं० श्री कृष्ण जी शास्त्री

सज्जनों !

श्री ठाकुर जी महाराज ने जो प्रश्न किये हैं, मैं उन सबके उत्तर देता हूं। आज आपको पता लगेगा कि, मूर्ति-पूजा वेदों में भरी पड़ी है। श्री ठाकुर जी ने वेदों के प्रमाण मांगे हैं, मैं हर प्रश्न के उत्तर में वेदों के प्रमाण दूंगा, सुनिये—

१. रूपं-रूपं प्रति रूपो बभूव, तदस्य रूपं प्रति चक्षणाय।

इस मन्त्र में साफ कहा है, कि—परमात्मा के सैंकड़ों रूप हैं, वह बहुत प्रकार के रूप बनाता है, उसकी बहुत प्रकार की मूर्तियां हैं। वेद से बता दिया कि उस परमात्मा की मूर्ति बनाओ अब मूर्तियों को पूजने की आज्ञा वेद मन्त्र द्वारा बताता हूं—

२. अर्चत प्रार्चत प्रिय मेधासो अर्चत ॥

इस मन्त्र में साफ कहा हैं कि उसकी मूर्ति को पूजो।

३. बालमीकिय रामायण में लिखा है कि, माता कौशिल्या उस समय मूर्ति पूजा कर रही थीं, जिस समय भगवान राम उनसे बन जाने की आज्ञा लेने को गये थे। मूर्ति काहे की बनानी चाहिये, और कितनी बड़ी होनी चाहिये, इस पर

यजुर्वेद की माध्यन्दिनी शाखा के शतपथ का प्रमाण सुनिये शतपथ के बिना तो यजुर्वेद का अर्थ ही नहीं हो सकता है, उसका प्रमाण कान खोलकर सुनिये।

शतपथ में महावीर की मूर्ति मिट्टी की बनानी लिखी है। और उसका मुख तीन अंगुल का बनाने की आज्ञा है। उसको पढ़िये और कुछ शर्म करिये।

नोट :—"शर्म करिये" इस वाक्य पर सनातन धर्म के प्रधान जी ने पंडित जी को ऐसा कहने से रोका।

"अकायम्" का अर्थ यह है कि—भगवान का शरीर हमारे शरीर जैसा नहीं होता है। जो शरीर कर्म के फल से प्राप्त होता है, उसका नाम काया होता है। परमेश्वर का शरीर कर्मफल के बिना होता है। इसलिए उसको "अकायम्" कहा है।

भगवान ने स्वयं गीता में कहा है कि—

"जन्म-कर्म में च मे दिव्यम्"

मेरे जन्म और कर्म दिव्य है। मेरा शरीर कर्म-फल से नहीं होता है।

ठाकुर जी महाराज !

वेद मन्त्र में "अकायम्" के साथ "अव्रण" भी कहा है। अर्थात् भगवान के शरीर में छिद्र और जख्म नहीं हो सकता ऐसा उसका शरीर होता हैं।

श्री ठाकुर अमरसिंह जी शास्त्रार्थ केशरी

श्री शास्त्री जी ने मेरे कुछ प्रश्नों का उत्तर देने का यत्न किया है, पर पूरा उत्तर नहीं हुआ, और न कभी होगा।

(१) "रूपं रूपं"·········ऋ० ६।४७।१८, इस मन्त्र में आपने ईश्वर की मूर्ति बनाने की, आज्ञा बताई है। इस मन्त्र में एक भी शब्द ऐसा नहीं है, जिसका यह अर्थ हो कि, "परमेश्वर की मूर्ति बनाओ" यदि ऐसे शब्द हैं, तो अबकी बारी में अवश्य ही बताना।

आपने यह जाना कि—इन्द्र बहुत रूपों में आता है। तो यहां इन्द्र के दो अर्थ हैं। एक जीवात्मा दूसरा सूर्य। जीव-पुरुष स्त्री पशु पक्षी कृमि, कीट पतंग आदि के शरीरों में उसी के नाम से पुकारा जाता है। यथा—

"त्वं स्त्री त्वं पुमान्" अथर्ववेद १०-८-२७,

तू स्त्री बनता है, तू पुरुष बनता है आदि-आदि।

उपनिषद् में भी देखिये—

नैवस्त्री न पुमानेषः न चैवायं नपुंसकः।
यद्यत शरीरमाधत्ते, तेन-तेन स युज्यते ॥१०॥

श्वेताश्वेतर उपनिषद् अध्याय ५ वाक्य १०,

न यह जीव स्त्री है, न पुरुष है। और न यह नपुंसक है। जिस-जिस शरीर को यह धारण करता है, उस-उस से युक्त होता है। जीव स्त्री के शरीर में स्त्री, पुरुष के शरीर में पुरुष, और नपुंसक के शरीर में नपुंसक, कहा जाता है।

गीता में कहा है कि—

विद्या विनय सम्पन्ने ब्राह्मणे गवि हस्तिनि।
शुनि चैव श्वपाके च, पण्डिताः समदर्शिनः ॥१८॥

गीता अध्याय ५ श्लोक १८,

ब्राह्मण, गौ, हाथी, कुत्ता, चाण्डाल आदि में पण्डित लोग समान (बराबर) आत्मा देखते हैं। (बाह्य) रूप भिन्न भिन्न बहुत होते है। सूर्य भी प्रातः, मध्यान्ह और सायंकाल को भिन्न-भिन्न रूपों में दिखाई देता है।

पौराणिक साहित्य में कहीं भी इन्द्र को परमात्मा नहीं माना गया है। पुराणों में तो ब्रह्मा, विष्णु, शिव और देवी इन्हीं चार को जगतकर्त्ता जगदीश्वर कहा गया है। इन्द्र जो आपके यहां कहीं और कभी परमेश्वर नहीं माना गया, वह यदि अनेक रूप बनाकर आता है, तो आता रहे। इससे परमेश्वर की मूर्ति बनाना और उसको पूजना सिद्ध नहीं होता है।

(२) "अर्चत प्रार्चत०"............ऋ० ८। ६९। ८, इस मन्त्र में भी मूर्ति शब्द तक नहीं है। परमेश्वर की स्तुति, प्रार्थना और उपासना होनी ही चाहिये वही इस मन्त्र में कहा गया। मूर्ति पूजा करना किन शब्दों का अर्थ है। यह आप नहीं बता सके, न बता सकेंगे।

(३) श्री राम जी के वन गमन के समय माता कौशल्या मूर्ति पूजा कर रही थी, यह आपने खूब कही, सारी वाल्मीकिय रामायण में, एक भी श्लोक ऐसा नहीं है, जिसमें यह बात कही हो, जो आपने कह डाली। सुनिये माता कौशिल्या उस समय क्या कर रही थी, वहां लिखा है—

सा क्षौम वसना हृष्टा, नित्यं वृत्त परायणा।
अग्निं जुहोतिस्मतदा, मंत्रवत् कृत मंगला ॥१५॥

बाल्मिकीय रामायण अयोध्याकाण्ड सर्ग २० श्लोक १५,

"अग्निं जुहोतिस्म" अर्थात् अग्नि में आहुति डाल रही थी। अर्थात् महाराज जी ! वह मूर्तिपूजा नहीं बल्कि यज्ञ (हवन) कर रही थी।

"ददर्श मातरं तत्र हावयन्ती हुताशनम् ॥

माता कौशल्या को श्री राम जी ने "हावयन्ती हुताशनम्" हवन करती हुई को देखा, मूर्ति पूजा का वहां पर संकेत भी नहीं है।

(४) वेद के नाम से आपने ब्राह्मण ग्रन्थ का प्रमाण दिया, और उसमें से निकाला क्या—? "महावीर" अजी ! यह तो बताइये कौन सा महावीर ? एक तो महावीर जैनियों के एक तीर्थंकर का नाम है, और एक महावीर, हनुमान जी का नाम है। जिनको आप पूंछ वाला बन्दर मानते हैं। क्या उन्हीं की मूर्ति आप ब्राह्मण ग्रन्थ के प्रमाण से सिद्ध करना चाहते हैं। आपने मुख तो महावीर का तीन अंगुल का बताया, पर यह नहीं बताया कि, सारा शरीर कितना लम्बा हो, और यह भी न बताया कि, पूंछ कितनी लम्बी बनायी जावे, क्या बिना पूंछ का महावीर बनायेंगे ? यदि ऐसा है तो सनातन धर्मी लोग आपका बहिष्कार कर देंगे।

एक बात यह भी ध्यान देने योग्य है कि, मैं पूछ रहा हूं, परमेश्वर की मूर्ति ? और आप बता रहे हैं, महावीर की मूर्ति ! आप क्या महावीर को ही परमेश्वर मानने लगे हैं ? या उनकी पूंछ को घिसा कर परमात्मा बनाना चाहते हैं।

पण्डित जी महाराज ! कुछ सोच समझ कर प्रमाण दीजिये। शतपथ ब्राह्मण में महावीर एक यज्ञपात्र का नाम है। और वह मिट्टी से बनाया जाता है, और अग्नि में तपाया जाता है।

(५) "अकायम्" का अर्थ आपने किया—"कर्म फल रहित शरीर" पर आपके यहां जितने भी अवतार माने जाते हैं। उनमें से एक का भी शरीर बिना कर्म फल के नही है। आप किसी अवतार का नाम लीजिये, मैं सिद्ध करूंगा उसका जन्म भी कर्म फल भोगने के लिए ही हुआ था।

(६) "अव्रण" बिना छिद्र और बिना जख्म भी किसी का शरीर नहीं हुआ, श्री कृष्ण जी की तो मृत्यु ही एक शिकारी के वाण से उनके पांव में जख्म होने से हुई थी। अब नये प्रश्न और सुनिये—पांच प्रश्न मैं पहले कर चुका हूँ। जिनका कोई उत्तर आपसे नहीं बना।

छटा प्रश्न—शिव, विष्णु, राम, कृष्ण आदि कोई भी आपके ग्रन्थों से अपने रहन-सहन, चाल, ढाल, व्यवहार से परमेश्वर सिद्ध नहीं होते हैं। फिर इनके नाम से बनी मूर्तियों को, परमेश्वर की मूर्ति क्यों बताते हो ? क्या इनको परमेश्वर सिद्ध करने की शक्ति आप में है। मेरा दावा है कि आप इनको कदापि परमेश्वर सिद्ध नहीं कर सकते हैं। इस लिए इनकी मूर्ति परमेश्वर की मूर्ति नहीं है।

सातवां प्रश्न—चतुर्भुजी, अष्टभुजी, एक मुखी, चतुर्मुखी, पंचमुखी, सूंड़ वाली, या गोल-मटोल, रूण्ड-मुण्ड, इनमें से कौन सी मूर्ति परमेश्वर की है। यदि सारी ही परमेश्वर की हैं तो इनमें इतना भेद क्यों है ? अब ये सात प्रश्न हुए, अब नये प्रमाण भी लीजिये।

(६) न तस्य प्रतिमास्ति यस्य नाम महद्यशः।

यजुर्वेद अध्याय ३२ मन्त्र ३,

इस मन्त्र में कहा गया है कि, उस परमेश्वर की कोई मूर्ति नहीं है। अर्थात् प्रतिमा नहीं है। प्रतिमा=प्रतिकृति मूर्ति=मूर्तिमान की होती है, अमूर्त्त की नहीं। मेरे सब प्रश्न एवं सब प्रमाण वैसे के वैसे ही विद्यमान है, न तो आपसे अभी तक कोई उत्तर बन पड़ा और न आगे वन सकेगा।

पं० श्री कृष्ण जी शास्त्री

ठाकुर साहिब ! माता कौशल्या हवन नहीं कर रही थी, मूर्ति पूजा कर रही थी। उनके पास हमारी तरह मूर्ति पूजा की सामग्री-मोदक-हवि-धान की खीलें और खीर रक्खी हुई थी, और रामायण में स्पष्ट लिखा है—

"देव कार्य निमित्तं च"

देव कार्य के लिए यहां ग्यारह पतियों की लीला नहीं चल सकती है, जो आपके गुरु दयानन्द ने लिखी है।

नोट—इस वाक्य पर तभी आर्य समाज की ओर के प्रधान जी ने सनातन धर्म की ओर के प्रधान जी को कहा—

श्री प्रधान जी ! अपने पण्डित जी को विषयान्तर में जाने से रोकिये। सनातन धर्म के प्रधान जी ने पण्डित श्री कृष्ण जी शास्त्री को कहा कि—

"वास्तव में ग्यारह पतियों वाली बात" को कहना—विषयान्तर में जाना हैं। आपको ऐसा नहीं करना चाहिये।

इस पर पं० श्री कृष्ण जी शास्त्री ने सनातन धर्म सभा की ओर के प्रधान जी को कहा कि—आप मुझको नहीं रोक सकते।

श्री प्रधान जी ने अपने पक्ष के दो प्रतिष्ठित सज्जनों को बुला कर कान में कुछ बात—चीत की, और कार्यवाही आगे चल पड़ी। पण्डित जी आगे बोले—

श्री ठाकुर साहब ! आप सोच समझकर प्रश्न करिये। में आपके सब प्रश्नों के उत्तर युक्ति और प्रमाणपूर्वक देता हूं। और आप.................।

इस वाक्य पर बीच में ही जनता में बड़े जोर की हंसी से सारा वातावरण गूंज गया।

नोट—श्री पं० ठाकुर अमर सिंह जी ने लोगों को हंसने से रोका। आगे फिर पण्डित जी बोले—

महावीर बनाने की विधि जब मैंने बताई तो श्री ठाकुर साहब इधर-उधर भागते हैं। और महावीर को यज्ञ पात्र कहकर ही टालते हैं। भगवान की मूर्ति यज्ञपात्र तो होती ही है। उन्हीं के लिये तो यज्ञ किया जाता है। भगवान ! अगर यज्ञ पात्र नहीं हैं तो क्या आप हैं ? महावीर को अग्नि में तपाना तो आपने भी माना, यह उनकी पूजा ही तो है।

आपने कर्म-फल रहित शरीर पूछा—सो सुनिये !

भगवान राम का शरीर कर्म फल रहित था, सब अवतारों के शरीर कर्म फल रहित ही होतें हैं। उन्हीं के शरीर का नाम "अकायम्" हैं। भगवान श्री कृष्ण जी के पैर में वाण व्याध ने तब मारा था, जब वह शरीर त्याग चुके थे। जब शरीर त्याग दिया तो वह भगवान का शरीर रहा ही नहीं। उसमें चाहे जितने जख्म आते रहें। जब तक वह शरीर भगवान का रहा, तब तक उसमें एक भी जख्म कभी नहीं हुआ। पीछे उसमें व्रण हुआ तो क्या हुआ ?

"न तस्य प्रतिमास्ति"

इसमें प्रतिमा का अर्थ तोलने और नापने का साधन है। मूर्ति नहीं, इस लिए इसमें ईश्वर की मूर्ति का निषेध नहीं है। तौलने-मापने के साधन का है।

भिन्न-भिन्न रूप की जो मूर्तियां हैं। वह सब ही परमात्मा की मूर्तियां हैं। हम सभी मूर्तियों को भगवान की मूर्तियां मानते हैं। रूपों का भेद अवस्था भेद से होता है। बाल्यकाल, युवावस्था, तथा वृद्धावस्था में किसी का भी एक जैसा रूप नहीं रहता। आयु के अनुसार भी रूप भिन्न-भिन्न होते हैं। और कार्य के अनुसार भी भिन्न-भिन्न रूप और भेद होते हैं।

मनुष्य, पुलिस या मिल्टरी में ड्यूटी पर वर्दी पहनता है। पर घर में सादे कपड़े बदल लेता है।

विवाह-बारात आदि में और ही प्रकार के कपड़े पहनता है। "वर" तो सर्वथा भिन्न ही प्रकार का रूप धारण करता है। मैंने आपके सब प्रश्नों के उत्तर दे दिये। "रूपं रूपं···" मन्त्र से परमेश्वर की मूर्ति बनाना सिद्ध कर दिया। और "अर्चत प्रार्चत········" मन्त्र से मूर्ति की पूजा सिद्ध कर दी।

श्री ठाकुर अमर सिंह जी शास्त्रार्थ केशरी

श्री पं० जी ने वेद तो छोड़ दिया, अब आपके शास्त्रार्थ का निर्भर रामायण पर है "डूबते को तिनके का सहारा" निश्चय समझिये यह सहारा आपको बचा नहीं सकेगा।

लड्डू, खीर, खील, चावल, सब हवन का ही सामान है, वहां देव कार्य लिखा है, तो आपको इतना भी पता नहीं है कि, अग्नि होत्र का दूसरा नाम "देव यज्ञ" है। कम से कम मनुस्मृति ही पढ़ ली होती, पण्डित जी महाराज ! मनुस्मृति में कहा गया है—

ऋषियज्ञं-देवयज्ञं-पितृयज्ञं च सर्वदा ।
नृ यज्ञं-भूतयज्ञं च यथा शक्ति न हापयेत् ॥

मनुस्मृति अध्याय ४ श्लोक २१,

भगवान मनु जी ने जो पांच महायज्ञ कहे हैं, उनमें दूसरा देव यज्ञ है, और श्री मनु जी ने ही, देव यज्ञ का अर्थ मनुस्मृति अध्याय ३ श्लोक ७०। में बताया है, "होमोदेवः" होम—हवन का नाम देव यज्ञ हैं, मैंने "अग्निं जुहोतिस्म" और "हावयन्ती हुताशनम्" वाक्य वहां लिखे बताये, आप तीन काल में भी यह सिद्ध नहीं कर सकेंगे, कि कौशल्या माता मूर्ति पूजा कर रही थी। शास्त्रार्थ मूर्ति पूजा पर हो रहा है। पर आपको याद आ गयी ग्यारह पतियों की, असल में यह आपका दोष नहीं है, यह कृपा तो भंग भवानी की है, जो आप प्रयोग करके आये हैं। धन्य हो महाराज ! "बोलो भंग भवानी की जय"।

ग्यारह पतियों से आपका क्या सम्बन्ध है ?

आपके यहां द्रौपदी के पांच, जटिला के सात-वार्क्षी के दस और दिव्या देवी के इक्कीस पति लिखे हैं। पर पण्डित जी महाराज यह विषयान्तर हैं। आगे से ऐसी भूल मत करना। नहीं तो मुझको छेड़ कर पछताना पड़ेगा।

मैंने "महावीर" को यज्ञ पात्र कहा तो आपने पात्र का और अर्थ कर लिया, अब मैं यज्ञ में आहुति डालने का

बर्तन कहता हूं। आप ग्रन्थों को पढ़ते तो हैं नहीं, सुनी-सुनाई बातें कहते है। अब आप सुनिये ध्यान से कि महावीर क्या होता है ? शतपथ ब्राह्मण में लिखा है कि—

प्रश्न— तदाहुः। यद्वानस्पत्यैर्देवेभ्यो जुहृत्यथ कस्मोदेतं।
मृन्मयेनैव जुहोतीति···तन्मृदश्चा पांश्च महावीराः कृता भवन्ति ॥

शतपथ ब्राह्मण १४।२।२।५३।

उत्तर— स यद्वानस्पत्यः स्यात् प्रदह्येत। यद्धिरण्यमयः स्यात् प्रलीयेत्। यल्लोह मयः स्यात् प्रसिच्येत।
यदस्मयः स्यात् प्रदहेत्। परीशासावथैषऽएवं तस्माऽप्रतिष्ठत तस्मादेतं मृन्मयेनैव जुहोति॥

शतपथ ब्राह्मण, १४।२।२।५४।

भावार्थ :—प्रश्न हुआ कि, जब लकड़ी के स्रुवा आदि से देवयज्ञ में आहुति दी जाती है। तो यहां मिट्टी के पात्र "महावीर" से क्यों आहुति दी जाती है। मिट्टी से महावीर बनाये जाते हैं।

उत्तर यह दिया गया है कि, (विशेष बड़ा यज्ञ होने से) यदि लकड़ी का बर्तन हो तो जल जाये, यदि सोने का हो तो पिंघल जाये, यदि फौलाद का हो तो हाथ को जला देवे। यदि लोहे का हो तो चू जावे, इस लिये मिट्टी के बर्तन से ही आहुति दी जाती है। आग से तपाने को आप पूजन कहते हैं। धन्य हो!

पर यह आपको पता नही कि महावीर को किस चीज से तपाया जाता है। सुनिये! और अच्छी तरह कानों को खोलकर सुनिये, मैं बिना प्रमाण के कोई बात नहीं कहता हूँ।

अश्वस्य त्वा वृष्णः शक्न धूपयामीति। शतपथ ब्राह्मण, १४।१।२।२०,

"अश्व शकृता धूपयति अश्वस्य इति प्रतिमन्त्रम्" कात्यायन श्रोत सूत्र २६।१।२३

घोड़े की लीद से महावीरों को तपाया जाता है। और देखिये—

"अश्वस्य त्वा वृष्णः शक्राधूपयामि" यजुर्वेद अध्याय ३७ मन्त्र ९,

इस मन्त्र के भाष्य में आपके माननीय आचार्य महीधर जी भी यही कहते हैं कि—"महावीरों को घोड़े की लीद से आग में तपावें" वाह जी वाह! वहुत अच्छी पूजा हुई!! पूजा के लिए पदार्थ भी बहुत बढ़िया निकाला। घोड़े की विष्ठा-(लीद) यह धूप तो बहुत सस्ती है। क्यों पण्डित जी? इस पवित्र धूप से अन्य देवों की, पूजा की जाया करेगी या अकेले महावीर में ही यह विशेषता है कि इस सर्वोत्तम प्राकृतिक धूप से उन्हें पूजा जावे?

यदि दूसरे देवों को भी इस धूप से पूजा जावे तो अच्छा नहीं क्या? उनके लिए इसमें क्या बुराई है?

आप कहते हैं कि—श्री कृष्ण जी ने जब शरीर त्याग दिया था, तब उनके पैर में तीर से जख्म लगा था। यह सर्वथा झूठ है। दिखाइये ऐसा कहां लिखा है? श्री शास्त्री जी! इन सीधे-सादे सनातन धर्मियों पर दया करके कुछ पढ़ा करिये। सुनिये मैं आपको बताता हूँ, महाभारत में लिखा है—

आपके पास महाभारत की पुस्तक रक्खी है उठाओ और खोलकर देखो—

जराथतं देशमुपाजगाम लुब्धस्तदानीं मृगलिप्सुरुग्रः।
सकेशवं योगयुक्तं शयानं, मृगासक्तो लुब्धकः सायकेन ॥२२॥
जराविध्यत पादतले त्वरावां, स्तं जिघ क्षुर्जगाम।
अथापश्यत पुरुषं योगयुक्तं, पीताम्बरं लुब्धकोऽनेकबाहुम् ॥२३॥
मत्वात्मान त्वपराद्धं स तस्य, पादौ जरा जगृहे शंकितात्मा।
आश्वासयस्तं महात्मा तदानीं, गच्छन्नूर्ध्वं रोदसी व्याप्य लक्ष्म्या ॥२४॥

महाभारत मौसल पर्व अध्याय ४ श्लोक २२ से २४,

भावार्थ—उसी समय जरा नामक एक भयंकर व्याध मृगों को मार ले जाने की इच्छा से उस स्थान पर आया। उस समय श्री कृष्ण जी योग युक्त होकर सो रहे थे। मृगों में आसक्त हुए उस व्याध ने श्री कृष्ण को भी मृग ही समझा और बड़ी उतावली के साथ बाण मार कर उनके पैर के तलवे में घाव कर दिया। फिर उस मृग को पकड़ने के लिये जब वह

निकट आया "तब योग में स्थित"—"पीताम्बर धारी भगवान श्री कृष्ण पर उसकी दृष्टि पड़ी" तब तो जरा (व्याध) अपने को अपराधी मानकर मन ही मन बहुत डर गया। उसने भगवान श्री कृष्ण के दोनों पैर पकड़ लिये। तब महात्मा श्री कृष्ण ने उसको आश्वासन दिया और अपनी कान्ति से पृथ्वी एवं आकाश को व्याप्त करते हुए वे ऊर्ध्व लोक में अपने परम धाम को चले गये ॥२४॥

ग्रन्थों को आप हाथ नहीं लगाते हैं, जो मुह में आता हैं, उत्तर दे देते है। कहिये ? जीवित श्री कृष्ण जी के पाव में जख्म लगा कि नहीं, यदि लगा तो उनका शरीर "अव्रण" कैसे हुआ ?

"न तस्य प्रतिमास्ति०" यह वेद मन्त्र है कि नहीं, और इसमें ईश्वर की प्रतिमा मूर्ति का निषेध है कि नहीं ? इस प्रमाण का खण्डन आप कभी भी नहीं कर सकेंगे, भिन्न-भिन्न रूपों का उत्तर आपने खूब दिया। यह रूप भेद परमेश्वर की आयु के भेद से होते हैं। छोटी आयु में एक मुख फिर अनेक मुख, छोटी आयु में दो भुजा, और बड़ी आयु में चार, आदि-आदि।

ये रुण्ड-मुण्ड, गोल-मटोल आदि किस अवस्था के है। ये गर्भावस्था के होंगे ? धन्य हो ! सनातन धर्मियों को भी, आप जैसा वकील कभी कोई नहीं मिला होगा, और न मिलेगा।

आपने कहा है कि सब अवतारों के शरीर कर्म फल के बिना हुए हैं। और होते है। पर सुनिये पुराण क्या कहता है—

ब्रह्मा येन कुलाल वन्नियमितो, ब्रह्माण्ड भाण्डोदरे।
विष्णुर्येन दशावतार गहने, क्षिप्तो महासंकटे ॥
रुद्रो येन कपाल पाणि पुटके भिक्षाटनं कारितः।
सूर्यो भ्राम्यति नित्यमेव गगने तस्मै नमः कर्मणे ॥

गरुड पुराण पूर्व खण्ड आचार काण्ड अध्याय ११३ श्लोक १५ पृष्ठ ७३ वेंङ्कटेश्वर प्रेस बम्बई,

ब्रह्मा, विष्णु और शिव भी कर्म के वश में रहते हैं। विष्णु कर्म के वश में होकर दस अवतार धारण करके महासंकट में पड़े, आपने श्री राम का नाम लिया, "मुद्दई सुस्त गवाह चुस्त" श्री राम जी कहते हैं कि, मेरे समान पाप कर्म करने वाला भूमण्डल में कोई नहीं है। मैं उन पाप कर्मों का फल भोग रहा हूँ। मेरे पांच मन्त्र पहले और सात प्रश्न अब के वैसे के वैसे ही खड़े हैं। उनका उत्तर आपने न तो अब तक दिया, और न ही आपसे आगे दिया जा सकेगा। मूर्ति पूजा का विधान करने वाला कोई वेद मन्त्र न आप दिखा सके एवं न दिखा सकेंगें।

नये प्रश्न और सुनिये—

यदि आप कहें कि, भक्तों की भावना से जैसा-जैसा रूप भक्तों के ध्यान में आया, भक्तों ने वैसी-वैसी मूर्तियां बना ली, मैं पूछता हूं कि, भक्तों के ध्यान से मूर्तियां बनी, तो यह क्यों कहते हो कि मूर्ति से ध्यान होता है। ध्यान से मूर्ति बनी तो मूर्ति से ध्यान कैसा ? यह अन्योन्याश्रय दोष है। इसका निवारण आप नहीं कर सकेंगे, तो मूर्ति पूजा कैसे सिद्ध हो जावेगी ? दूसरे आप यह बताइये कि मूर्ति निराकार ब्रह्म की बनाई जाती है। या साकार की, यदि निराकार की बनाई जाती है, तो कैसे ? अमूर्त की मूर्ति कैसी ? यदि कहो कि साकार की बनाई जाती है। तो ईश्वर की साकारता सिद्ध करिये।

पं० श्री कृष्ण जी शास्त्री

माता कौशल्या मूर्ति पूजा कर रही थी। यह साफ़ लिखा हैं। देखिये—

"देव कार्य निमित्तं च"

देव कार्य के लिए ! कहिये देव कार्य मूर्ति पूजा नहीं तो और क्या है ? महावीर की मूर्ति को घोड़े की लीद से तपाना बताया, यह आप झूंठ बोलते हैं। जब वह मूर्ति बन जाती है। तब उसको तपाते है।

तब तक उसका नाम महावीर नहीं होता है। जब तक उसकी देवसंज्ञा नहीं हुई और महावीर नाम भी नहीं हुआ जब तक किसी से तपाया जाये। इसमें हमारे देव का अपमान क्या हुआ ? जब महावीर नाम हो गया, तब वही हमारा देव हो गया। उसके पीछे धूप, दीप, नैवेद्य आदि से पूजा होगी। उसके बाद लीद आदि से तपाना कौन कहता है। दयानन्द की मूर्ति पर हैदराबाद में तड़ातड़ जूता पड़ा और·········

नोट—इस वाक्य पर शास्त्रार्थ के बीच में ही श्रोताओं में से "शर्म करो-शर्म करो" एवं मारो-मारो की आवाजें आई, चारों तरफ कोलाहल पैदा हो गया। श्री ठाकुर अमर सिंह जी ने खड़े होकर सबको बड़ी मुश्किल से शान्त करके बैठाया, और श्रोताओं को कहा गया कि-आप नहीं जानते, ये पण्डित जी महाराज तो चाहते ही यही है कि किसी तरह पीछा छूटे। इसी लिए गडवड़ बातें करते है। मैं आपसे अनुरोध करूंगा कि आप सहयोग देंगे तो यह शास्त्रार्थ किसी निश्चय पर पहुंच सकेगा। मैं भी अब उत्तर ऐसे दूंगा कि जो पण्डित जी को छठी का दूध याद आ जाये। (श्री सनातन धर्मके पण्डित जी को सनातन धर्म के प्रधान जी ने कहा कि आपको ऐसे अपशब्द नहीं बोलने चाहियें) यह हमारे लिए लज्जा की बात है।

पं० श्री कृष्ण जी शास्त्री

"ब्रह्मायेन कुलावन्नियमितो०"

गरुड़ पुराण पूर्व खण्ड आचार काण्ड अ० ११३ श्लोक १५,

यह श्लोक का टुकड़ा किसी प्रामाणिक ग्रन्थ का नहीं है। यह आपने भर्तृहरि शतक का श्लोक बोल दिया ब्रह्मा विष्णु और शिव कर्मों का फल भोगते हैं ऐसा नहीं बल्कि इसमें तो यह कहा कि, वह तीनों सृष्टि रचना आदि करके अपने-अपने कर्मों को करते हैं। इसमें फल की बात कहां ?

आप व्यर्थ बातें करते तथा थोथे चैलेन्ज करते हैं। भगवान राम ने यह कहीं भी नहीं कहा, कि मैंने पाप कर्म किये थे। उनका फल भोग रहा हूँ। यह भी आप झूठ बोलते हो। भगवान ने तो यह बताया कि किसी की स्त्री खो जाये तो उसको ऐसा कहना तथा विलाप करना चाहिये। वे तो आदर्श बताने आये थे। जैसे नाटक करने वाला नाटक में कहता और करता है। नाटक कार को कोई दुःख नहीं होता, पर प्रदर्शन ऐसा ही करता हैं। जैसे इसको महान दुःख हो रहा हो। वैसा ही भगवान ने बताया। उनमें पाप और दुःख कुछ भी नहीं था, "रूपं-रूपं" इस मन्त्र पर पं० सातवलेकर जी का अर्थ देखो, वेदामृत का प्रथम संस्करण जो आर्य प्रतिनिधि सभा पंजाब ने छपाया है। जिसके मन्त्री महाशय कृष्ण जी प्रताप अखबार के मालिक हैं, पं० सातवलेकर जैसे विद्वानों का अर्थ नहीं मानोगे तो किसका अर्थ मानोगे ?

आप ठाकुर क्यों हैं ? आप तो वेदवेत्ता हैं। ब्राह्मण क्यों नहीं बने ? आर्य समाज की गुण-कर्म स्वभाव वाली वर्ण व्यवस्था का कहीं दिवाला तो नहीं निकल गया ? अगर ब्राह्मण बन गये हो तो दयानन्द जी की बात मानों, मेरे जैसे ब्राह्मण को अपना बाप बनाओ, मुझसे अच्छा विद्वान ब्राह्मण पिता बनने को और कौन मिलेगा ?

नोट—इस पर जनता में फिर पूर्व की भांति गडवड़ हुई, परन्तु उस गडबड़ी को जैसे-तैसे करके बड़ी मुश्किल से दबाया जा सका।

श्री ठाकुर अमर सिंह जी शास्त्रार्थ केशरी

सज्जनो ! पं० श्री कृष्ण जी शास्त्री शास्त्रार्थ से पीछा छुड़ा कर इधर-उधर भागते है। परन्तु उनको यह नहीं पता कि आज पाला किससे पड़ा हुआ है। तो भी मैं गलियों का उत्तर गालियों में नहीं दूगा। गालियों का शास्त्रार्थ तो पण्डित जी किसी भटियारिन से करें।

मैं ठाकुर क्यों हूँ ? ब्राह्मण क्यों नहीं बना ? यह यद्यपि विषयान्तर है, तथापि इसका उत्तर देता हूं। मुझको आर्य समाज ब्राह्मण मानता है। और ब्राह्मण वंश में पैदा हुए अनेकों युवक मेरे शिष्य है। मुझको गुरू मानते एवं मेरे

पैर छूते हैं। ठाकुर भी कोई, वर्ण बोधक शब्द नहीं हैं, विश्व कवि श्री रवीन्द्र जी ब्राह्मण कहलाने वाले वंश में उत्पन्न हुए, रवीन्द्र नाथ ठाकुर कहे जाते हैं। उनके स्वर्गीय पिता जी महर्षि देवेन्द्र नाथ ठाकुर कहलाते थे। भारत भर में विख्यात रागी, पं० ओंकार नाथ ठाकुर कहे जाते हैं। आपके पूर्वज सैकड़ों वर्षों से पीतल आदि के नकली ठाकुरों के चरण धो-धोकर उनका चरणामृत पीते आये हैं। इसलिए में भी अपने को कभी-कभी ठाकुर कहलवा लेता हूँ। कि जब मैं पूज्य हूँ तो पूजारी क्यों बनूं ?

नोट—इस उत्तर पर श्री सनातन धर्म सभा की ओर के प्रधान एवं सारी जनता में बड़े जोर की हंसी हुई, तथा पं० श्री कृष्ण जी शास्त्री का चेहरा एक दम फीका पड़ गया।

सबने अपने भावों से प्रकट किया कि "उत्तर बहुत बढ़िया मिला" रही यह बात कि मैं पं० श्री कृष्ण शास्त्री को अपना बाप मानूं इसका उत्तर भी दूंगा, परन्तु इस बार नहीं अगली बारी में

नोट—बीच में ही सनातन धर्म के प्रधान खड़े हो गये और कहने लगे माफ कर दीजिये। फिर सभी लोगों ने भी कहा कि ठाकुर साहब माफ कर दीजिये।

ठीक है, आप लोग कहते हैं तो मैं अब शास्त्रार्थ आरम्भ करता हूं।

पण्डित जी ने कहा है कि कौशल्या जी मूर्ति पूजा कर रही थी, प्रमाण क्या हैं ? कहते हैं कि वहां लिखा है, "देव कार्यं निमित्तं च"

वाह वा ! महाराज जी खूब समझे, श्री मान पं० जी किसी सनातन धर्मी विद्वान से ही पूछ लेते, अग्नि होत्र का नाम देव यज्ञ ही है। "देव यज्ञ" अग्नि होत्र की सामग्री कौशल्या जी के पास रक्खी थी। और श्री राम जी ने उनको देखा "हावयन्ती हुताशनम्" अग्नि में आहुति दे रही थी। और "अग्निं जुहोतिस्म तदा" ये वाक्य हैं। वहां पर मूर्ति पूजा आपने कहां से निकाल ली ? आप कहते हैं कि जब लीद से तपाते हैं तब तक उसका नाम महावीर नहीं होता है। जब महावीर नाम हो जाता है। तब देव होता है। फिर उसकी पूजा अन्य वस्तुओं से होती है। आश्चर्य हैं कि—आपने इस विषय में पढ़ा कुछ नहीं हैं। और सुनी सुनाई बातें लेकर शास्त्रार्थ करने को आ गये। कुछ पढ़ लिया होता तो यह ऊट-पटांग न हांकवे। परन्तु आपको तो भंग भवानी ही घोटने से फुरसत नहीं मिलती।

सुनिये वहां तो पाठ यह हैं—

"त्रीन महावीरान् अश्वस्य शक्ना धूपयेत्"

यहां पर "त्रीन महावीरान्" तीन महावीरों को अब आप कान खोलकर सुन लीजिये, फिर न कहना कि-उस समय तक उसका नाम महावीर नहीं होता हैं।

आप कहते हैं कि—श्री राम जी ने कभी नहीं कहा कि-मैंने पाप कर्म किये हैं। श्री शास्त्री जी आप बिना प्रसंगों को पढ़े कैसे शास्त्रार्थ करने को आ गये। और किस तरह जो मुंह में आता है बोल देते हैं। मुझको आश्चर्य है। सुनिये श्री राम जी का वचन यह है—

"न मद्विधो दुष्कृत कर्मकारी, मन्ये द्वितीयोऽस्ति वसुन्धरायाम्"

बालमीकीय रामायण अरण्य कांड सर्ग ६३, श्लोक ३,

मैं यह मानता हूं कि-मेरे बराबर पाप कर्म करने वाला इस पृथ्वी पर दूसरा कोई नहीं हैं। आगे और सुनिये—

"पूर्वं मयानूममीप्सितानि, पापानि कर्माण्य सत्कृत् कृतानि।
तत्रायमद्या पतितो वियाको, दुःखेन दुःखं यदहं विशामि ॥४॥

पूर्व जन्म में मैंने निश्चय ही पाप कर्म किये हैं। उनका विपाक (कर्म-फल) मैं अब भोग रहा हूँ। जो एक दुःख से दूसरे दुःख में प्रविष्ठ होता हूँ।

"ब्रह्मायेन कुलालवन्नियामितो......" इस श्लोक का यह अर्थ कदापि नहीं हैं, कि-ब्रह्मा आदि सृष्टि रचना आदि

कर्मों को करते हैं। इसमें बिल्कुल स्पष्ट कहा है—

"विष्णुर्येन दशावतार गहने क्षिप्तो महासंकटे" तस्मै नमःकर्मणे।

विष्णु जिसके वश में होकर दश अवतार ग्रहण करके महासंकट में पड़ा। उस कर्म को नमस्कार है।

आपने इस श्लोक को भृर्तहरि शतक का बता दिया। भाईयों ये महाराज जी भी क्या करें इन्होंने पढ़े ही भृर्तहरि शतक है, पुराण देखे ही नहीं।

श्रीमान् जी! यह श्लोक गरुड़ पुराण पूर्व खंड आचार काण्ड अध्याय ११ का पन्द्रहवां श्लोक है। जिसको धनी लोगों के मरने पर आपने बहुत बार बाँचा होगा। और उनके घर वालों से बहुत सा धन ऐंठा होगा पर वह भी आपने पूरा नहीं पढ़ा, आपको जब केवल प्रेत खण्ड़ ही पढ़ने पर मुर्दों का माल मिल जाता है। पूरा पढ़ने का कष्ट क्यों उठावें? श्री मान माननीय पण्डित जी महाराज! पुराण हमने ही पढ़ें हैं।

श्री राम जी को नाटक कार कह कर आपने उनका घोर अपमान किया है। नाटक कार तो सीता भी बनती है। तो सीता का सा प्रेम उसमें नहीं बनता है। यदि कोई राम बनता है। तो राम का सा गुण उसमें एक भी नहीं दीखता सभी कुछ बनावट, सभी कुछ झूठ होता है। आप श्री राम जी को भी ऐसा ही बताते हैं। शोक! महाशोक!!

"रूपं-रूपं···" इस मंत्र में जीवात्मा का वर्णन है। परमेश्वर का नहीं, आपके मत में इन्द्र को कभी परमेश्वर नहीं माना गया।

"अर्चत-अर्चत···" इस मन्त्र में मूर्ति पूजा की गन्ध भी नहीं है। इस मन्त्र में मूर्ति का कहीं जिक्र नहीं। फिर मूर्ति पूजा कहां? यदि साहस है तो किसी भी मन्त्र में मूर्ति पूजा का विधान दिखाइये। और मन्त्र अगर न आते हों तो जो दो मन्त्र आपने दिये हैं। उन्हीं में मूर्ति, तथा मूर्ति पूजा दिखाइये। यदि परमात्मा साकार है, जिसकी आप मूर्ति बनाते हों, तो क्या वह पत्थर, पर्वत, भूमि, बर्फ आदि की भाँति साकार हैं।

यदि हाँ तो वह परमाणु से बना हुआ होगा। परमाणु जन्य नाशवान होता है।

आप कोई उदाहरण दीजिये! जो साकार हो, और परमाणु जन्य (उत्पन्न होने वाला) न हो, या परमाणु जन्य तो हो, पर नाशवान न हो।

मैं निश्चय पूर्वक कहता हूँ कि आप कदापि ऐसा नहीं बता सकेंगे। फिर जो नाशवान है। वह परमात्मा कैसा?

"चौबे जी गये छब्बे बनने पर दुबे भी न रहे"

आप परमेश्वर की मूर्ति सिद्ध करते-करते परमेश्वर को भी नाशवान् बना बैठे। धन्य हो देवता जी!

यदि परमात्मा शरीर धारी साकार है, जैसा कि जीवात्मा तो परमात्मा परिमित हुआ जैसे शरीर भी परिमित और जीवात्मा भी परिमित, आप कोई उदाहरण दें, जो शरीर धारी तो हो, पर-परिमित न हो। मैंने आपको पांच वेद मन्त्र पहले दिये थे, अब और लीजिये।

अनेजदेकं मनसो जवीयो, नैनद्देवा: आप्नुवन पूर्व मर्षत् ॥
तद्धावतोऽन्यानत्येति तिष्ठत्, तस्मिन्पो मातरिश्वा दधाति ॥

यजुर्वेद अध्याय ४० मन्त्र ४,

स ओतःप्रोतश्च विभुः प्रजासु ।
स ऊ अल्प उदके निलीनः ॥

यजुर्वेद अध्याय ३२ मन्त्र ८,

वह परमेश्वर चलता नहीं है। फिर भी मन से अधिक वेगवान है। इन्द्रियां उसे प्राप्त नहीं कर सकेंगी, क्योंकि वह

उनमें पहले से ही विद्यमान है। वह ठहरा हुआ भी सब दौड़ने वालों से आगे होता है। क्योंकि सर्व व्यापक है। और सर्वत्र है। वह सारी प्रजाओं में भीतर भी है तथा बाहर भी है।

वह पानी की एक बूंद में भी व्यापक है। कहिये ! उस निराकार अमूर्त की मूर्ति कैसी ? पण्डित जी महाराज ! कुछ तो बोलो ? अरे ! और अब आप बोलेंगे भी क्या, पहले अब आप अपने घर को टटोलिये। वहां क्या-क्या तथा कितना स्पष्ट लिखा है।

यस्यात्म बुद्धिः कुणपे त्रिधातुके, स्वधी कलत्रादिषु भौम इज्यधि।
यत्तीर्थ बुद्धिः सलिलेन कर्हिचित्त, जनेष्वभिज्ञेषु स एव गोखरः॥

श्रीमद्भागवत् पुराण स्कन्द-१०, अध्याय ८४, श्लोक १३,

इस श्लोक में मूर्ति पूजा करने वालों को बैलों का चारा ढोने वाला "गधा" कहा है।

पं० श्री कृष्ण शास्त्री

आपको क्या पता श्री राम चन्द्र जी क्या कहते और क्यों कहते हैं।

कहीं-कहीं थोड़ा झूठ बोलना भी धर्म होता है। भगवान ने अपने चरित्र से बतलाया कि, जहां आवश्यकता हो, वहां झूठ भी बोलना चाहिये, जैसे आगे से गौवें जा रही हों, और कसाई उन्हें ढूंढ़ता आ रहा हो, और जिसने देखी हों, उससे पूछे कि, इधर गौवें गई हैं ? देखने वाले का धर्म है कि, यह झूठ बोलकर कसाई को धोखे में डाल दे कि, जिधर गौवें गई हों, उधर न बताकर दूसरी ओर बता दे। ऐसा झूठ बोलना धर्म है।

इसी प्रकार भगवान ने शूर्पणखां से कहा कि, यह मेरा भाई लक्ष्मण कुवांरा है। उसके पास जाओ। वह तुम्हारे साथ विवाह कर लेगा। शूर्पणखा लक्ष्मण जी के पास गई। लक्ष्मण जी ने उसकी नाक काट ली। इसी प्रकार भगवान ने यह आदर्श बताया कि, अपनी पत्नी के वियोग में ऐसा सबको कहना चाहिये।

मूर्ति पूजा करने कराने वाले यदि गधे होते हैं, तो स्वामी दयानन्द और उनके बाप-दादे भी तो मूर्तिपूजा करते थे, वह क्या थे ? स्वामी दयानन्द जी ने मूर्ति-पूजा अपनी संस्कार विधि में बहुत जगह लिखी है। पढ़ो और ध्यान से देखो, शीशे के महल में बैठकर दूसरों को पत्थर मारने का परिणाम क्या होता है यह ठाकुर साहब आप नहीं जानते ? चल दिये दूसरों पर छींटा-कसी करने को, कभी संस्कार विधि भी खोलकर देखी है ?

वहां लिखा है कि, उस्तरे तुझको हमारा नमस्कार हो।

इस बच्चे की हिंसा मत करना, मूसल, उलूखल की पूजा, पटेले को घी और शहद से पूजना, यह सब क्या मूर्ति पूजा नहीं है ? आर्य समाजी पण्डित तो वेद मन्त्र बोला नहीं करते, आपने कई बोल दिये, मैंने सबका उत्तर दे दिया। लीजिये वेद का एक अति प्रबल प्रमाण देता हूं।

"मुखाय ते पशुपते नमः चंक्षूषि ते भव।"

अथर्ववेद काण्ड ११ सूक्त २ मन्त्र ५,

इस मन्त्र में शिवजी की मूर्ति को पूजने का विधान है। शिवजी की मूर्ति के लिए कहा है, आपके मुख के लिए नमस्कार है। आपकी आंखों के लिए नमस्कार, इससे स्पष्ट और क्या चाहते हैं ?

श्री ठाकुर अमरसिंह जी शास्त्रार्थ केशरी

धन्य हो ! सनातन धर्म को आप जैसा वकील मिला, तब तो अवश्य सनातन धर्म का कल्याण हो जावेगा। यह आपने नई खोज निकाली, और अवतारों की महिमा बहुत बढ़ा दी। कि अवतार, झूठ बोलना भी सिखाते हैं।

महाराज जी !

आपके अवतारों के आने से पहले भी दुनियां के लोग आपके माने हुए अवतारों से भी अधिक झूठ बोलते थे। और बहुत झूठ बोलना जानते थे। झूठ बोलना भी कोई सिखलाने के योग्य विद्या है ? खैर यह सब आपने समय काटने के लिए कहा, तो भी समय शेष रह गया तो विवश होकर बैठ गये। मैं आप की तरह समय नष्ट नहीं करना चाहता, आगे चलिये—और अपने प्रश्नों के उत्तर लीजिये।

स्वामी दयानन्द जी के बाप-दादे यदि मूर्ति पूजा करते थे, तो वह क्या थे ? यह क्या प्रश्न है ? वही थे, जो आपके बाप-दादे थे। मैं यह पूछता हूं कि, श्रीमदभागवत पुराण में यह श्लोक है कि नहीं ? और उसमें मूर्ति पूजकों को गधा बताया कि नहीं ?

आपने कहा स्वामी जी ने संस्कार विधि में लिखा है कि "हे उस्तरे तुझको हमारा नमस्कार हो" मैं कहता हूं यह सर्वथा झूठ है। यदि संस्कार विधि में आप यह लिखा दिखला दें तो इसी पर और यहीं पर शास्त्रार्थ समाप्त, में ऐसा लेख देखकर आपकी विजय तथा अपनी पराजय मान लूंगा। संस्कार विधि को महर्षि दयानन्द जी ने लिखा है, यदि आपके पास नहीं है, तो मेरे पास है। यह लीजिये, और निकालकर दिखलाइये। या कहिये कि मैंने झूठ बोला।

नोट : श्री ठाकुर अमरसिंह जी ने संस्कार विधि सनातन धर्म की ओर से जो प्रधान थे, ठाकुर साहब ने उनके पास भेजी, और कहा कि इसमें से उस्तरे को नमस्ते या नमस्कार लिखा दिखलाइये, श्री प्रधान जी ने संस्कार विधि और एक पुस्तक श्रीकृष्ण जी शास्त्री ने दी उन दोनों को देखने के लिए ले लिया। और श्री ठाकुर अमरसिंह जी से निवेदन किया कि, मैं इन दोनों पुस्तकों को देख लूं। इतना समय कृपा करके आप मुझे प्रदान कीजिये। और मुझ पर विश्वास कीजिये, मैं जो भी कहूंगा सत्य ही कहूंगा, मेरी प्रार्थना है कि, आप शास्त्रार्थ जारी रखने की कृपा करें।

श्री ठाकुर अमरसिंह जी शास्त्रार्थ केशरी

मुझको श्री प्रधान जी पर पूरा भरोसा है। मैं शास्त्रार्थ जारी करता हूं, सुनिये संस्कार विधि मुण्डन संस्कार की विधि में "शिवो नामासि······" इस मन्त्र द्वारा परमेश्वर को नमस्ते है, उस्तरे को कदापि नहीं।

और जहां उस्तरे को नमस्ते की गई है, उस जगह को श्री प्रधान जी आपको बतायेंगे, तथा दिखायेंगे वह सच्चे पुरुष हैं। मैं उन पर पूर्ण विश्वास रखता हूं।

"मूसल-उलूखल" की पूजा संस्कार विधि में कहीं नहीं लिखी है। पंचयज्ञों में एक "बलिवैश्वदेव यज्ञ" हैं। उसमें "मूसल-उलूखल" के नाम से कुछ अन्न का भाग भोजन से पूर्व इसलिए निकालकर रखने का विधान है कि मूसल और ओखली से कई कृमि, कीट, आदि के अंग भंग हो जाते है। और अनजाने में ही हो जाते हैं। उनका प्रायश्चित रूप यह कार्य है। जिससे उन दुःखी प्राणियों को कुछ उसी स्थान पर खाद्य-पदार्थ मिल जाये, वह मूसल और उलूखल के खाने के लिए नहीं, उनके द्वारा जो प्राणी पीड़ित हुए हों, उनके लिये अन्न भाग रक्खा जाना चाहिये।

जैसे दान करते समय, लोग धर्मशाला, पाठशाला, स्कूल, गुरुकुल, आदि के नाम पर धन दान देते हैं। ऐसे ही यह मूसल, उलूखल के खाने के लिए नहीं, उनके द्वारा जिन प्राणियों को पीड़ा पहुंची हो, उनके लिये वह भाग होता है। देखिये—मनुस्मृति अध्याय श्लोक ८८ और इसके भी आगे-पीछे देख सकते हैं।

दण्ड और जूते की पूजा दिखाइये कहां लिखी है ? तथा यह भी बताइये कि दण्ड और जूता आपके कौन से देव तथा कौन से देवों की मूर्तियां हैं ?

हम भोजन करते समय "ओ३म् अन्नपतेऽन्नस्य········" आदि मन्त्र बोलते है। पुरानी परिपाटी है कि, वस्त्र

पहिनें तो मन्त्र बोलें, ब्रह्मचारी दण्ड धारण करें तो मन्त्र बोले, समावर्तन के समय जूता पहनें तो मन्त्र बोले, सामान्य व्यवहारों में बहुत से मन्त्रों तथा उनके अर्थों का ज्ञान हो जाय, यह उन मन्त्रों के बोलने का प्रयोजन होता है। इससे ईश्वर की मूर्ति बनाकर उसकी पूजा करना कैसे सिद्ध हो गया ?

पटेला भी कोई न आपका देव है, न वह ईश्वर की मूर्ति, महर्षि दयानन्द जी ने लिखा है कि, खेतों में गन्दे पदार्थ न डाले जावें, अच्छा खाद डालने से अन्नादि पदार्थ अच्छे पैदा होते हैं। आपको अगर पता न हो तो किसी समझदार (अनुभवी) माली से ही पूछ लीजिये कि सोंठिया, सोफिया और दूधिया एवं आम, सोंठ, सोफ आदि के अर्क और दूध आदि का बीजों और भूमि में सेचन करने से आम्रफल में उनका प्रभाव आता है। आपके प्रश्नों के उत्तर दे दिये, मेरे पहले प्रश्नों के उत्तर आप नहीं दे सके, नये और सुनिये तथा नोट कीजिये।

शैव तथा शैवों के ग्रन्थ कहते हैं कि—शिव ही परमेश्वर थे, उन्होंने ही ब्रह्मा, विष्णु तथा सृष्टि को बनाया। वैष्णव तथा उनके ग्रन्थ कहते हैं कि, विष्णु ही परमेश्वर हैं। विष्णु ने ही सृष्टि तथा शिव और ब्रह्मा को बनाया। कोई पुराण कहता है, ब्रह्मा ने ही सबको बनाया। शाक्त कहते हैं कि, शक्ति ने ही, ब्रह्मा, विष्णु, शिव तथा सृष्टि को बनाया, आप पहले यह निर्णय कीजिये कि इनमें से ईश्वर कौन है ? और किसकी मूर्ति ईश्वर की मूर्ति मानी जावेगी ? जब आपके ईश्वर का निश्चय नहीं तो मूर्ति किसकी ? पुराणों में कहा है।

दुर्गाग्रे शिव सूर्यस्य, वैष्णवाख्यान मेव च।
यः करोति विमूढ़ात्मा गार्दभीं योनिमाविशेत्॥३१॥
भविष्य पुराण मध्य पर्व २, अध्याय ७ श्लोक ३१,

इसमें कहा है कि दुर्गा के आगे शिव, सूर्य या विष्णु की स्तुति जो मनुष्य करता है, वह मूढ़ गधे की योनि में जाता है। हिरणाकुश ओर प्रह्लाद में यह मतभेद बताया गया है कि हिरणाकुश कहता था कि, विष्णु को छोड़कर शिवजी की पूजा कर। प्रहलाद कहता था कि मैं शिव की पूजा नहीं करूंगा, यह विरोध यहां तक बढ़ा बताया गया कि बाप-बेटे को जान से मारने को उद्यत हो गया। और उसने बेटे को मरवाने हेतु अनेकों उपाय किये।

"मुखायते पशुपते......" इस मन्त्र का अर्थ आप बताते हैं। उसके अनुसार तो शिवजी के गुण की पूजा होनी चाहिये। पर आप लोग तो किसी अन्य अंग की ही पूजा करते हैं। जिसे गुप्तांग कहते हैं। मैं खुला नाम लेकर अपनी वाणी को गंदी नहीं करना चाहता। वह पूजा तो वेद विरुद्ध ही हुई जो आप करते हैं। श्रीकृष्ण शास्त्री जी ने बैठे-बैठे ही पूछा कि आप इसका अर्थ क्या लेते हैं ? श्री ठाकुर साहब जी ने कहा कि, मैं तो इसका अर्थ राजा परक लेता हूं। टन...टन...टनन...टन..............घंटी बजी और कहा गया कि ठाकुर साहब जी की बारी का समय समाप्त हो गया है।

पं० श्रीकृष्ण जी शास्त्री

इसमें कुछ सन्देह नहीं कि, भगवान श्री रामचन्द्र जी ईश्वरावतार थे। और उन्होंने आवश्यकता पड़ने पर झूठ भी बोला और इसीलिए बोला कि, लोग समय पड़ने पर इसको धर्म समझकर बोले।

"हे उस्तरे नमस्ते......" यह स्वामी जी ने भाषा में तो नहीं लिखा पर "शिवोनामासि..." मन्त्र यह लिखा है। इसका अर्थ रामगोपाल विद्यालंकार का किया हुआ मेरे पास है। आप चाहें तो मैं आपको दिखला सकता हूं। आप बड़े-बड़े विद्वानों का किया हुआ अर्थ नहीं मानते, जो मन्त्र मैंने दिये हैं, उनके अर्थ पं० विश्व बन्धु जी शास्त्री एम० ए० ने भी ऐसे ही किये हैं। आप कैसे इन्कार कर सकते हैं ?

आप लोग तो कहा करते हैं कि जूते की पूजा यही है कि, उसे पैर में पहनना, आज पूजा से साफ इन्कार करते हैं। आपने शैवों तथा वैष्णवों की बात कही, शैवों तथा वैष्णवों की पूजा में भेद है। जो जिस इष्ट देव की पूजा करता है, उसको उसी की करनी चाहिये। दूसरे की कभी नहीं करनी चाहिए, हमारे बहुत से देव हैं, देवों के भी महकमें हैं।

एक महकमा वाले अफसर दूसरे महकमे वालों से ताल्लुक नहीं रखते हैं। इसको समझने हेतु बड़ी बुद्धि की आवश्यकता है।

हिरण्यकश्यप नास्तिक था, वह कदापि शैव नहीं था, उसको कहीं भी शैव नहीं लिखा, यदि हिम्मत है तो दिखाओ ? नहीं तो अपने झूठ पर शर्म खाओ।

स्वामी दयानन्द जी ने "भद्र काल्यै नमः" लिखा है। यह तो मूर्ति पूजा है कि नहीं ? बताओ ! भद्र काली आपकी क्या लगती है ? "मुखायते पशुपते" इस मन्त्र को आपने राजा परक बताया। पर बताइये इसमें आंखों के लिये "चक्षूंसि" यह बहुवचन है कि नहीं ? इसका अर्थ है तीन आंखें, राजा की तीन आंखें कहां होती हैं ? तीन नेत्र कहने से तो "त्रिलोचन" भगवान शंकर की मूर्ति की ही पूजा माननी पड़ेगी।

भगवान रामचन्द्र जी भी तो मूर्ति पूजा ही किया करते थे। आप रामायण पढ़कर देखें, मूर्ति पूजा का फल होता है, देखो महाभारत में लिखा है। "एकलव्य" ने गुरु द्रोणाचार्य की मूर्ति बनाकर पूजी। उसका फल यह हुआ कि, वह धनुर्विद्या में बड़ा प्रवीण हो गया, लीजिये वेद का एक और प्रमाण देते हैं। "अहं संगमनी वसूनां……" यह वेद में भगवती दुर्गा का वचन है। लीजिये दुर्गा की पूजा भी वेद में दिखलादी। आप शिवजी और विष्णु जी के लिए पूछते हैं। कि इनमें से परमेश्वर कौन सा है ? आपको पता होना चाहिये कि, हम इन सबको एक ही मानते हैं। भावना में भेद है। देखो भक्त शिरोमणि गोस्वामी तुलसी दास जी ने जब वृन्दावन में भगवान श्रीकृष्ण जी की मूर्ति देखी तो उसको नमस्कार नहीं किया, और कहा कि—

मोर मुकुट कटि काछनी भले बने हो नाथ।
तुलसी मस्तक जब झुके, धनुष बाण लो हाथ।।

वह अपना इष्ट श्री रामचन्द्र जी को मानते थे। आपके सब प्रश्नों के उत्तर हो गये। आप थोथे चैलेन्ज करते हैं।

श्री ठाकुर अमरसिंह जी शास्त्रार्थ केशरी

झूठ आदर्श स्थापित करने के लिए नहीं बोला जाता झूठ तो असमर्थ या स्वार्थी बोलता है। समर्थ को झूठ बोलने की कोई आवश्यकता नहीं है। और झूठ बोलना सिखाने के लिए परमेश्वर को जन्म लेना पड़े। यह तो बहुत ही बेतुकी बात है। दुनिया में लाखों करोड़ों बेईमान हैं। जो स्वयं भी झूठ बोलते हैं। तथा औरों को भी बुलवाते हैं। "शिवोना-मासि……" इस मन्त्र को स्वामी जी ने लिखा है। पर इस मन्त्र में तो उस्तरा या उस्तरे का वाचक कोई शब्द नहीं है। तथा यजुर्वेद भाष्य में इस मन्त्र का अर्थ भी लिखा है। वहां भी उस्तरे का नाम नहीं है। आप चाहें राम गोपाल से अर्थ करा लें, चाहे सातवलेकर जी या विश्वबन्धु जी से। इनके किये अर्थ ऋषि दयानन्द जी के गले नहीं मढ़े जा सकते। हम पर ऋषि दयानन्द जी के अर्थों का ही उत्तरदायित्व है। और किसी का नहीं, विश्वबन्धु जी का आप नाम लेते हैं। उनको हमारी वेदी से बोलने तथा खड़े होने का भी अधिकार नहीं है। पूजा का अर्थ उचित उपयोग मानने से हम अब भी कहां इन्कार करते हैं, शिव पुराण में लिखा है कि गणेश जी ने विष्णु जी की लात से पूजा कर दी थी, यह भी तो पूजा ही है। मनुस्मृति में कहा है, "यत्र नार्यस्तु पूज्यन्ते…" यहां नारियों की पूजा बताई है, तो क्या धूप-दीप-नैवेद्य आदि से घन्टी बजाकर और "त्वमेव माता च पिता त्वमेव……" कहकर स्त्रियों की पूजा करते हैं क्या ?

आपके देवों के महकमें भी खूब हैं। एक महकमा दूसरे महकमें को गाली देता है। एक महकमा कहता है कि, दुर्गा के आगे, शिव, विष्णु, आदि की स्तुति करने वाला गधे की योनि में जायेगा। और दूसरे महकमें वाला कहता है कि जो शिव और विष्णु को मानता है। वह साठ हजार वर्ष तक "विष्ठा" में कीड़ा बन कर जन्म लेता है, देखिये—

सौर पुराण

"षष्टि वर्ष सहस्राणि विष्टायां जायते कृमि"

हिरण्यकश्यप नास्तिक था या शैव, मेरा प्रमाण सुन कर सब बुद्धिमान लोग निर्णय करेंगे, आप तो महाराज जी कुछ पढ़ते हैं नहीं, पद्म पुराण में देखिये हिरण्यकश्यप प्रह्लाद को कहता है कि,—

"त्यज शत्रुं कैटभारिं पूजयस्व त्रिलोचनम्" ।

पद्म पुराण उत्तरखण्ड अध्याय २३८ श्लोक ३२,

तू उस विष्णु शत्रु को त्याग कर त्रिलोचन शिव की पूजा कर । प्रह्लाद का वचन भी सुनने योग्य है, हमारे पण्डित जी महाराज ने तो न कभी सुना और न कभी पढ़ा, परन्तु आज चलो उनको भी सुनने का मौका मिल जावेगा । देखिये और ध्यान से सुनिये ! पण्डित जी आप भी कान खोलकर सुनिये !!

"कथं पाखण्डमाश्रित्य पूजयामि च शंङ्करम्"

पद्म पुराण उत्तरखण्ड अध्याय २३८ श्लोक ४५,

प्रह्लाद कहता है कि, मैं पाखण्ड का आश्रय लेकर शंकर की पूजा क्यों करूँ ? मैं तो विष्णु की ही पूजा करूँगा ।

बाप अपने बेटे को मरवाने के अनेक उपाय करता है । और केवल इस लिए कि शिव की पूजा न करके यह विष्णु की पूजा क्यों करता है ।

नोट :—इस प्रमाण को एवं इसके अर्थ को सुनकर चारो ओर सन्नाटा छा गया, सब लोग ठाकुर साहब के चेहरे पर बड़ी आश्चर्य वाली दृष्टि से देखने लगे ।

श्री ठाकुर अमर सिंह जी शास्त्रार्थ केशरी

और पण्डित जी महाराज आपके देवों के महकमों से तो वर्तमान सरकार के महकमे सौ दर्जा अच्छे हैं, सिविल वाले पुलिस को बुरा नहीं कहते, और पुलिस वाले मिलटरी वालों को और मिलटरी वाले पुलिस वालों को एवं सिविल वालों को बुरा नहीं कहते । माल वाला महकमा फौजदारी वाले महकमें को और फौजदारी वाला महकमा, माल वाले महकमें को, कभी गालियां नहीं देता । बल्कि एक सरकारी महकमें वाले यदि दूसरे सरकारी महकमें वालों के कार्य में बाधा डालें, तो सख्त सजा पायें ।

आप पूछते हैं कि राजा के तीन नेत्र कहां होते हैं ? मैंने तो सोचा था, कि आज कुछ पढ़ा-लिखा कोई व्यक्ति शास्त्रार्थ करने सामने आयेगा, पर हाय रे तकदीर !

महाराज जी ! अगर शास्त्रार्थ करने का शौक है, तो कुछ पढ़ा करिये, क्यों इन सीधे-सादे बेचारे सनातन-धर्मियों की नाक कटवाते हो, लो सुनो, कान खोलकर—"चक्षुंषि" का अर्थ तीन आंखें नहीं हैं । बहुत आँखें हैं । इसी सूक्त के एक और मन्त्र में रूद्र की सहस्त्रों आखें बताई हैं ।

रूद्र, दुष्टों, पापियों, चोरों, बदमाशों को दण्ड देकर रुलाने वाले राजा का नाम है । राजा की सहस्रों आंखें होती हैं । तभी तो बनों, पहाड़ों, नगरों, ग्रामों, गलियों, और घर-घर का उसको पता रहता है कि कहां क्या हो रहा है । सहस्रों आंखों से देखने वाला राजा ही राज्य कर सकता है । और आपको अपने लिए आदर्श मिला वह भी कौन ? एकलव्य ! एक भील !!

कोई ऋषि मुनि तो मूर्ति पूजा करने वाला मिला नहीं ।

आपने मूर्ति पूजा के लिए गुरु बनाया, और वह भी एक भील को।

धन्य हो महाराज ! आपकी ज्योति को !!

पर श्री मान शास्त्री जी उसने भी द्रोणाचार्य की मूर्ति की कभी पूजा नहीं की, द्रोणाचार्य की मूर्ति से वह धनुर्विद्या में निपुण नही हुआ, वह तो अपनी मेहनत से हुआ।

करत करत अभ्यास के जड़मति होत सुजान।
रसरी आवत-जात ते शिल पर पडत निशान॥

मूर्ति पूजना तो दूर रहा, केवल बनाने का ही यह फल निकला कि, अपना अगूंठा भेंट चढ़ाना पड़ा !

आप भी अब तैयार हो जाइये ! (जनता में चारो ओर हंसी)

द्रोणाचार्य तो मूर्तिमान् मनुष्य थे, मूर्तिमान् की मूर्ति वन सकती है।

यदि वह एकलव्य ने बना ली तो, इससे निराकार परमेश्वर की मूर्ति कैसे सिद्ध हुई ?

पर आपको तो कुछ न कुछ कहना है, चाहे तुक लगे, या न लगे, पुराने प्रश्न आपने सुने, और सुनकर कोई उत्तर नहीं दिया। और उनको श्राद्ध की खीर की तरह पी गये,—डकार तक भी नहीं ली। (जनता में हंसी)

नये प्रश्न और सुनिये—

मूर्ति बनाने वाला, मूर्तिमान को देख कर मूर्ति बनाता है, परन्तु आपके भगवानों की मूर्तियों को बनाने वाले, संग तराश होते हैं। कुछ अनपढ़ हिन्दू अधिकतर मुसलमान, क्या मैं पण्डित जी महाराज पूछ सकता हूं, कि उन्होंने आपके भगवान को देखा है ?

यदि इन मूर्खों, अनपढ़ों ने आपके भगवान के दर्शन किये हैं, जिसके आधार पर उस भगवान की मूर्ति की रचना करते हैं। तो आप जैसे, पण्डितों को उनकी बनाई मूर्तियों के द्वारा भगवान की पूजा, और प्राप्ति का यत्न करते हुए लज्जा आनी चाहिये ! बल्कि कहीं चुल्लु भर पानी में डूब कर मर जाना चाहिये। उन मूर्खों ने तो आपके भगवान को देख कर उसकी मूर्ति बना दी, और आप उनकी बनाई मूर्तियों को देख कर भी भगवान को नहीं पहचान सके। शिव पुराण में कहा है कि—

तीर्थानि तोय पूर्णानि, देवान् पाषाण मृन्मयान्।
योगिनो न प्रपद्यन्ते स्वात्म प्रत्यय कारणात्॥२६॥

शिव पुराण वायु संहिता उत्तर भाग अध्याय-४० श्लोक २६,

योगीजन न पानी के स्थानों को तीर्थ रूप मानते हैं। न पत्थर आदि की मूर्तियों को देव मानते हैं। मूर्ति पूजा व्यर्थ हुई।

और देखिये—श्रीमदभागवत् पुराण में कहा है—

न ह्यम्यानि तीर्थानि न देवा मृच्छला मयाः॥११॥

श्री मद्भागवत् पुराण स्कन्द १०, अध्याय ८४ श्लोक ११,

जल स्थान, नदियां, तथा तालाब आदि तीर्थ नहीं होते, न मिट्टी पत्थर आदि की मूर्तियां देव होती हैं।

"अहं संगमनी···" इस मन्त्र में क्या बल्कि सारे सूक्त में भी आप कहीं दुर्गा का नाम दिखा दें, तो मैं अपनी हार मान लूंगा, और अगर न दिखा सके तो आप अपनी हार मान लेना।

दिखाइये मैं चैलेञ्ज करता हूं।

पं० श्री कृष्ण शास्त्री

पं० सातवलेकर जी आदि को आप आर्य समाज से निकालते जाइये, हम उनको सनातन धर्म में लेते जायेंगे, श्री पं० भीमसेन जी एवं श्री पं० अखिलानन्द जी को आर्य समाज ने निकाला, हमने अपना लिया।

जब स्वामी दयानन्द जी ने मन्त्रों के अर्थ नहीं किये, तो कोई भी करे वह मानने ही पड़ेंगे। और दूसरी बात यह है कि, अपने इष्ट की ही पूजा करनी चाहिये, यह मैं पहले ही बता चुका हूँ। भक्त शिरोमणि गोस्वामी तुलसीदास जी का उदाहरण इसमें प्रबल प्रमाण है। आपकी समझ में ना आवे तो मैं क्या करूँ ?

हिरण्यकश्यप पूरा नास्तिक नहीं था, तो कुछ तो नास्तिक था ही, भगवान शंकर को परिमित मानता था, उसे आस्तिक कौन सिद्ध कर सकता है। परमात्मा अवतार लेता है, वह साकार होता है, तभी तो उसकी मूर्तियां बनाई जाती हैं, भक्त लोग इन मूर्तियों की पूजा करते हैं, आप लोग तो नास्तिक हैं, एकलव्य भील था, तो भगवान श्री राम चन्द्र जी तो श्रेष्ठ थे, आप उनको अवतार नहीं मानते, तो मर्यादा पुरुषोत्तम तो मानते ही हैं। वह भी मूर्ति पूजा करते थे। कम से कम उनका ही अनुकरण करो।

निराकार परमात्मा ऐसे साकार होता है, और अवतार धारण करता है, जैसे बिजली निराकार है, और बटन दबाने से साक्षात् रूप में प्रकट होती है। यह भी नहीं कि, एक समय में, एक जगह ही प्रकट होती हो। एक ही समय में सैकड़ों स्थानों में प्रकट होती है। और भिन्न-भिन्न आकारों, और भिन्न-भिन्न रंगों के बलबों में भिन्न-भिन्न आकृतियों और भिन्न-भिन्न रंगों में दिखाई देती है।

और सुनो ठाकुर साहब ! अभी उस्तरे के नमस्कार से पीछा नहीं छूटेगा। नहीं तो संस्कार विधि के मन्त्रों का अर्थ स्वामी दयानन्द जी से करा लेते। अब तो जिसका भी अर्थ होगा, मानना ही पड़ेगा, दुर्गा की पूजा वेद में साफ लिखी है।

"रूपं रूपं······" इस मन्त्र से मैंने सिद्ध कर दिया है कि, परमात्मा की तरह-तरह की मूर्तियां बनानी और पूजनी चाहिये। "अर्चतप्रार्चत···" इस मन्त्र से मैंने मूर्ति पूजा सिद्ध कर दी, ऊखल, मूसल की पूजा करते हो, और भगवान की मूर्ति बनाकर पूजने से पेट में दर्द होता है, आप बार-बार चैलेञ्ज करते हैं, आपके चैलेञ्जों की हम कुछ भी परवाह नहीं करते हैं, सब लोग जान गये हैं, कि मूर्ति पूजा सिद्ध हो गयी है।

श्री ठाकुर अमरसिंह जी शास्त्रार्थ केशरी

महाराज ! आर्य समाज में जितने भी विद्वान हैं, वह सभी प्रायः सनातन धर्म में से ही, आये हैं। और स्वयं ही उस मत को मिथ्या मान कर छोड़ आये हैं, आर्य समाज से एक-दो जो आपके यहां गये हैं, वे आर्य समाज द्वारा निकाले हुए गये हैं। आप स्वयं भी कहते हैं कि, "आप निकालते जाइये हम अपनाते जायेंगे।" हम जिनको बुरा समझकर निकालेंगे, उनको आप अपनायेंगे, स्वयं कोई भी छोड़कर आर्य समाज को आपके पास नहीं जायेगा।

जादू वह है, जो शिर पै चढ़के बोले।
क्या मजा जो गैर पर्दा खोले॥

उस्तरे को नमस्कार या नमस्ते, ऋषि दयानन्द जी के लेख में नहीं दिखा सके, और तीन काल में भी नहीं दिखा सकेंगे।

"शिवोनामासि स्वधितिस्ते पिता नमस्ते··················" ॥६३॥

यजुर्वेद अध्याय ३ मन्त्र ६३,

इस पर ऋषि दयानन्द जी का भाष्य है, आपको तो लिखने पढ़ने से कोई मतलब है नहीं, जो मुह में आया कह दिया। और फिर लिखें-पढ़ें तो तब, जब भंग भवानी से पीछा छूटे।

इस मन्त्र में उस्तरे का नाम निशान भी नहीं है। ऋषि दयानन्द जी का भाष्य इस पर भी है, आपने नहीं पढ़ा तथा नहीं देखा तो यह आपका दोष है। ऋषि के भाष्य में उस्तरे को नमस्ते लिखा दिखा दे तो मैं हार मान लूंगा। दिखाते क्यों नहीं ?

जिस मन्त्र पर स्वामी दयानन्द जी का भाष्य विद्यमान है, उस पर आप क्यों "डूबते को तिनके का सहारा" राम गोपाल आदि के अर्थ ढूढ़ते फिरते हो ?

श्री गोस्वामी तुलसीदास जी ने श्री कृष्ण की मूर्ति को नमस्कार नहीं किया, तो मेरी मान्यता सिद्ध हुई, कि मूर्ति पूजा से साम्प्रदायिक फूट पैदा होती है। जैसे हिरण्यकश्यप और प्रहलाद में हुई उसी का नमूना तुलसीदास जी ने दिखाया।

आपने मेरे प्रश्न का क्या खाक उत्तर दिया, बल्कि मेरी ही बात को प्रमाणित कर दिया।

नोट :—"बीच में ही एक व्यक्ति ने खड़े होकर जोर से नारा लगाया,

बोलो वैदिक धर्म की—जय

"तुरन्त श्री ठाकुर साहब ने उसे बिठा कर शान्ति स्थापित की" हिरण्य कश्यप के लिए अभी आप कह रहे थे, वह कदापि शैव नहीं था। जब उसके शैव होने के पुष्ट और अकाट्य प्रमाण दिये तो उनका नाम भी नहीं लिया, उन प्रमाणों को श्राद्ध की खीर की तरह पी गये। अब कहते हैं कि—

वह शिवजी को परिमित मानता था, इसलिए पूरा नहीं था, तो आधा नास्तिक अवश्य था।

महाराज जी ! इस प्रकार तो आधे नास्तिक आप भी हैं। आप शिव, ब्रह्मा, विष्णु, दुर्गा सभी को परिमित मानते हैं। मैं कहता हूं कि—

आप शैवों को नास्तिक या आधा नास्तिक कहते हैं। तो ऐसी घोषणा करते हुए डरते क्यों हैं ? जैसा कि पद्म पुराण में प्रह्लाद का वचन बताया गया है—

"कथं पाखण्डमाश्रित्य, पूजयामि च शंकरम् ?"

पद्म पुराण उत्तरखण्ड अध्याय २३८, श्लोक ४५,

"मैं क्यों पाखण्ड का सहारा लेकर शिव को पूजूं ? पद्म पुराण में अन्य भी अनेकों जगहों पर ऐसे वचन हैं, जिनमें शैवों को पाखण्डी कहा गया है,

आप क्यों डरते हो ? उनको कहिये ना पाखण्डी और नास्तिक, । आपने हमको तो नास्तिक कहा, जो परमेश्वर को सर्व व्यापक मानते हैं, आपकी दृष्टि में परमेश्वर को सर्व व्यापक मानने वाले पूरे नास्तिक हैं, और परमेश्वर को परिमित मानने वाले, आधे नास्तिक हैं, तो आस्तिक वही हैं, जो परमेश्वर को मानते ही नहीं।

श्रोताओं में हंसी..........

बस ! हो गयी सनातन धर्म की जय। आप कहते हैं, श्री राम चन्द्र जी ने मूर्ति पूजा की थी। मैं कहता हूँ कदापि नहीं की बल्कि सन्ध्या करते थे, जैसा कि श्री विश्वामित्र जी का वचन है—

कौशल्या सुप्रजा राम, पूर्वा सन्ध्या प्रवर्तते।
उत्तिष्ठ नर शार्दूल, कर्त्तव्यं दैवमाह्निकम् ॥२॥

वाल्मीकीय रामायण बालकाण्ड सर्ग २३ श्लोक २,

महर्षि वाल्मीकि जी कहते हैं कि—विश्वामित्र जी ने सुबह होते ही श्री रामचन्द्र जी को कहा ! हे कौशल्या के सुपुत्र राम उठो ! प्रातः सन्ध्या काल हो गया है। श्री वाल्मीकि जी आगे कहते हैं कि—

तस्यर्षेः परमोदारं वचः श्रुत्वा नरोत्तमौ ।
स्नात्वा कृतोदकौ वीरौ जेपतुः परमं जपम् ॥

वाल्मीकीय रामायण बालकाण्ड सर्ग २३ श्लोक ३,

उस ऋषि के परम उदार वचन सुन कर राम-लक्ष्मण दोनों भाई, उठ खड़े हुए, और दोनों ने स्नान आदि करके परम् जप का जाप किया, अर्थात सन्ध्या की, ओ३म् और गायत्री का जाप किया। जो ग्रन्थ आपके हैं, उनको भी आप नहीं पढ़ते, उन्हें भी हम ही पढ़ते हैं, देखिये गोस्वामी तुलसीदास जी भी कहते हैं कि—

विगत दिवस मुनि आयसु पाई ।
सन्ध्या करन चले दोऊ भाई ॥

राम चरित मानस बालकाण्ड,

घण्टी हिलाने तो नहीं गये थें, सन्ध्या ही की थी ना, । श्री राम जी को तो आप परमेश्वर कहते हो, फिर परमेश्वर जी किसकी मूर्ति पूजते थे ?

अपनी या आपकी ?

जनता में चारों ओर वड़े जोरों की हंसी........

आपको तो महाराज जी ! कहते हुए भी लज्जा नहीं आती है। यदि श्री राम जी मूर्ति पूजा करते भी हों, तो हमको क्या ? जो कार्य वेद विरुद्ध है, वह तो वेद विरूद्ध ही है, चाहे उसे राम करे या श्याम करें, मूर्ति पूजा को आप वेद विहित न सिद्ध कर सके न कभी कर सकेगें। बिजली का उदाहरण आपने खूब दिया, मान गये पण्डित जी महाराज आपको भी तुक लगे चाहे न लगे, समय तो कट ही जावेगा ।

श्रीमान् जी ! बिजली घटती-बढ़ती रहती है। दाखिल होती और खारिज होती है। क्या आपने बैटरियाँ भी नहीं देखी, जिनमें से बिजली खारिज होती है। और खारिज होते, होते खत्म भी हो जाती है।

परमेश्वर जो सर्व व्यापक एक रस है, उसके लिए बिजली का उदाहरण नहीं बनता, और जिस अंश में आपने यह उदाहरण दिया, उसमें सर्वथा विषम है। बिजली कितनी निकल गई, यह बताने के लिए मीटर लगे रहते हैं। क्या आपके मत में परमेश्वर भी इसी प्रकार घटता, बढ़ता, निकलता है ? अब तो पण्डित जी महाराज ! मन्दिरों में भी मीटर लगवाइये, जहां पता लगे कि, परमेश्वर कितना निकल गया, निकलते-निकलते खत्म भी हो जायेगा। ध्यान रखना फिर आपके परमेश्वर की भी बैटरी चार्ज करनी पड़ेगी।

(जनता के नारों एवं तालियों की गडगड़ाहट से आकाश गूंज उठा,)

उसे शान्त कराकर श्री ठाकुर अमर सिंह जी बोले—महाराज जी !

आप क्यों अपनी हंसी करवाते हो, तथा इन सीधे सादे सनातन धर्मियों को लज्जित करवा रहे हो, साफ-साफ क्यों नहीं कह देते, कि वह परमेश्वर निराकार सर्वज्ञ, एवं सर्वशक्तिमान है, उसकी मूर्ति बनाना एवं उस मूर्ति की पूजा करना व्यर्थ है। वेद विरूद्ध है।

अन्यथा कुछ सोच समझ कर बोलिये ! व्यर्थ में समय काहे को बरबाद करते हो पण्डित जी !

वैसे तो पण्डित जी आप अब समाप्त हो चुके हो, आपके पास न अब कोई युक्ति है, न प्रमाण हैं, इधर-उधर हाथ मार रहे हो।

आपके चैलेञ्ज तो देख लिये, अब हमारे चैलेञ्ज देखिये—जिन पर हार-जीत की शर्त हैं।

१. दिखाइये स्वामी दयानन्द जी ने उस्तरे को नमस्कार कहां लिखा हैं? दण्ड, जूता, मूसल, उलूखल, पटेला आदि इनकी पूजा आरती धूप-दीप नैवद्य आदि कहां लिखे हैं? इनको ईश्वर या किस देव की मूर्ति लिखा है? और कहां लिखा है?

२. "रूपं रूपं······" इस मन्त्र में जीव का वर्णन है, परमेश्वर का नहीं।

३. "अर्चत प्रार्चत······" इस मन्त्र में मूर्ति पूजा बताने वाले कौन से शब्द हैं?

४. "अहं संगमनी······" इस मन्त्र या सारे सूक्त में दुर्गा का नाम कहां है! दिखाइये या अपना झूठ स्वीकार करिये।

५. "महावीर······" जिसको मैंने अग्निहोत्र में काम आने वाला मिट्टी का बर्तन सिद्ध कर दिया, उसको आपने परमेश्वर की मूर्ति किस आधार पर कहा? और महावीर को हनुमान ही आप मानते हो, तो हनुमान भी तो ईश्वर नहीं फिर हनुमान या महावीर की मूर्ति बनाने मात्र से परमेश्वर की मूर्ति और उसकी पूजा कैसे हुई? हनुमान को परमेश्वर कौन मानता है?

मेरे पुराने प्रश्नों के उत्तर आप अब तक नहीं दे सके। और मैं अठारह प्रश्न अब तक आप पर कर चुका हूं, आप एक का भी उत्तर नहीं दे सके। नये प्रश्न और सुनिये, हर बार नये-नये प्रश्न आप पर जड़ता जाऊंगा लीजिये—

(१९) श्रीमद्भागवत् में लिखा है—

> यो मां सर्वेषु भूतेषु सन्तमात्मानमीश्वरम्।
> हित्वार्चां भजते मौढ्यात्भस्मन्येव जुहोति सः ॥२१॥
>
> अहं सर्वेषु भूतेषु, भूतात्मा वस्थितः सदा।
> तमवज्ञाय मां मर्त्यः कुरुतेऽर्चा विडम्बनम् ॥२२॥

श्रीमद्भागवत पुराण स्कन्द ३, अध्याय २९, श्लोक २१, २२

इन श्लोकों का संक्षिप्त अर्थ यह है—

जो मुझ सन्तों के आत्मा रूप परमेश्वर को छोड़कर मूर्खता से (मूर्ति) पूजा करते हैं, वह ऐसे हैं, जैसे कि भस्म (राख) में हवन करता है। मैं सारे प्राणियों और अप्राणियों में सदा स्थित रहता हूं। मेरी अवज्ञा करके जो पूजा करते हैं, वह पूजा नहीं विडम्बना है। मैंने आपके सब प्रश्नों के उत्तर दे दिये, और बार-बार दिये। आपके सारे प्रमाणों को मैंने काट दिया। मेरे सारे प्रमाण तथा प्रश्न वैसे के वैसे स्थित हैं।

आपने सनातन धर्म की कुछ सेवा नहीं की, व्यर्थ समय नष्ट किया, जिसके कारण सभी सनातन धर्मी दुःखी हो रहे हैं, तथा अपने भाग्य को कोस रहे हैं।

पं० श्रीकृष्ण जी शास्त्री

आप बार-बार वेद का प्रमाण मांगते हैं। लीजिये अब की बार वेद का ऐसा प्रमाण देता हूं, जिसमें परमेश्वर की पत्थर की मूर्ति का स्पष्ट विधान है, यह अकाट्य प्रमाण है। इसका खण्डन करो तो जानूं, मन्त्र इस प्रकार है—

"एह्यश्मान मातिष्ठ, अश्मा भवतु ते तनूः"

अथर्ववेद, २। १३। ४,

हे परमेश्वर !

आप पत्थर में स्थित हूजिये, यह पत्थर आपका शरीर होवे। मूर्ति में जब प्राण प्रतिष्ठा कराई जाती है, तब यह मन्त्र पढ़ा जाता है, इससे स्पष्ट और मन्त्र मूर्ति बनाने का हो ही नहीं सकता।

आंखों तथा अक्ल के अन्धों को क्या-क्या दिखावें ? इस एक ही प्रमाण से मूर्ति पूजा सिद्ध हो गयी, और कोई प्रमाण देने की आवश्यकता नहीं है, इसी पर शास्त्रार्थ समाप्त हो जायेगा।

(श्री ठाकुर अमरसिंह जी ने बैठे-बैठे ही कहा, कि कृपया मन्त्र पूरा पढ़ दीजिये)

श्रीकृष्ण शास्त्री ने झल्लाते हुए बड़े जोर से कहा—

मैंने जितना वेद मन्त्र पढ़ना था, पढ़ दिया, पूरा वेद मन्त्र पढ़ने की मुझको आवश्यकता नहीं है, अभी आप कहते हैं, पूरा वेद मन्त्र पढ़िये, फिर कहेंगे पूरा वेद ही पढ़कर सुनाइये। (जनता में हंसी) उस्तरे को नमस्ते, स्पष्ट लिखा है, उससे पीछा नहीं छूटेगा, "उस्तरे को नमस्ते" वाला मन्त्र दयानन्द जी ने संस्कार विधि में स्वयं लिखा है। आप स्वामी दयानन्द जी के लेख से इन्कार करते हैं। और आप स्वयं भी स्वामी दयानन्द जी की मूर्ति पूजते हैं, अगर नहीं पूजते, तो लीजिये, यह रही स्वामी दयानन्द जी की तस्वीर मारिये इस पर जूता। बुद्धदेव विद्यालंकार ने हैदराबाद में इस पर जूता मार दिया था, आर्य समाज में उनकी भारी दुर्गति हुई थी आपकी भी वैसी ही होगी।

सारा आर्य समाज दयानन्द जी के चित्र की पूजा करता है। आप भी करते हैं, नहीं करते हैं तो दिखाइये न हिम्मत ! जूता मारने की !! आप मुझसे हार गये, अब आप मुझे अपना पिता बना लीजिये।

नोट :—सनातन धर्म सभा की ओर के प्रधान जी श्री कृष्ण शास्त्री के इस वाक्य पर बहुत बिगड़े, और उनको ऐसे शब्द कहने से रोका। इस पर श्रीकृष्ण जी शास्त्री भी बिगड़ गये, कि आप कुछ नहीं जानते आप चुपचाप बैठ जाइये, प्रधान जी तभी कुर्सी छोड़कर चलने लगे। तब कई सज्जनों ने बहुत प्रार्थनाएं करके उनको कुर्सी पर पुनः बिठा दिया।

श्री ठाकुर अमरसिंह जी शास्त्रार्थ केशरी

श्रीमान पण्डित जी आपने आज मूर्ति पूजा का अच्छी तरह खण्डन करवा दिया। आर्य समाजियों को चाहिए कि आज आपको भर पेट मिठाई खिलावें सनातन धर्म के मन्तव्य पर मूर्ति पूजा की निर्मूलता जैसी आज आपने प्रकट करवाई, ऐसी आशा तो उन्हें स्वप्न में भी नहीं थी।

आपने मूर्ति पूजा का विधान करने वाला बहुत बढ़िया मन्त्र निकाला, लगता है कि यह मन्त्रार्थ आपने कहीं किसी से सुन लिया है। न मन्त्र का भाष्य ही पढ़ा न पूरा मन्त्र ही बोला, पूरा मन्त्र आपको याद ही नहीं है तो बोलोगे कहां से ?

लीजिये मैं पूरा मन्त्र बोलता हूं। और इसका अर्थ भी करता हूं, मन्त्र इस प्रकार है, और यह मन्त्र अथर्ववेद काण्ड २ सूक्त १३ का चौथा मन्त्र है, यकीन न हो तो अथर्ववेद में देख लीजिये। जो इस प्रकार है—

एह्यश्मानमातिष्ठ, अश्मा भवतु ते तनूः।
कृण्वन्तु विश्वेदेवाः आयुष्टे शरदः शतम् ॥४॥

अथर्ववेद काण्ड २ सूक्त १३ मन्त्र ४,

इस मन्त्र का अर्थ इस प्रकार है—

हे ब्रह्मचारी ! आ, इस पत्थर पर बैठ, तेरा शरीर पत्थर के सदृश सुदृढ़ होवे। सारे विद्वान तुझको आशीर्वाद देकर तेरी आयु सौ वर्ष की करें।

आपने अपने गुरु श्री आचार्य सायण का भी भाष्य नहीं देखा, इस मन्त्र पर सायणाचार्य का भाष्य इस प्रकार है।

"हे माणवक ! एहि, आगच्छ ॥ अश्मानम् आतिष्ठ, दक्षिणेन-पादेन आक्रम। ते तव तनूः शरीरम् अश्माभवतु, अश्मवद् रोगादि विनिर्युक्तं दृढं भवतु ॥ विश्वेदेवाश्च ते तव शतसंवत्सर परिमिते आयुः कृण्वन्तु कुर्वन्तु"।

सायणाचार्य के इस संस्कृत भाष्य का हिन्दी भाषा में अर्थ—

"सनातन धर्म पताका," मासिक पत्र मुरादाबाद के सम्पादक ऋषिकुमार श्री पं० रामचन्द्रजी शर्मा ने इस प्रकार किया है।

हे बालक ! आ और दाहिने पैर से इस पत्थर पर चढ़, तेरा शरीर पत्थर के समान रोग रहित और दृढ़ रहे। और विश्वेदेवा भी तेरी आयु सौ वर्ष की करें।

धन्य हो शास्त्री जी ! आपने परमेश्वर की आयु भी सौ वर्ष की कर दी, और वह भी सर्व देवों के आशीर्वाद के साथ।

"एक भिखारिन बुढ़िया को मेरठ के कमिश्नर श्री "मार्श" ने दस रुपये दे दिये। बुढ़िया दस रुपये का नोट देखकर अत्यन्त प्रसन्न हुई और उसने आशीर्वाद में कमिश्नर साहब को कहा कि—

"परमात्मा करे, बेटा तू पटवारी हो जाये।"

श्रोताओं में हंसी..........

आप उस बुढ़िया से भी आशीर्वाद देने में बहुत बढ़ गये, आपने कभी भी न मरने वाले परमेश्वर को सौ वर्ष तक जीवित रहने का आर्शीवाद दे दिया।

श्रीमान जी ! इस मन्त्र में परमेश्वर की मूर्ति पत्थर की बनाने का विधान नहीं है। इसमें तो ब्रह्मचारी, विद्यार्थी को आशीर्वाद है कि, तेरा शरीर पत्थर जैसा मजबूत हो जाय।

कौशिक सूत्र में भी इस मन्त्र का विनियोग—विद्यार्थी को पत्थर पर बैठाकर आशीर्वाद देने में ही है। पर दिन-रात भङ्ग भवानी की गोद में सोने वालों को ग्रन्थ पढ़ने का अवकाश कहां ? रही चित्र पर जूता मारने की बात, ये आपने खूब कही।

श्रीमान जी ! चित्र इसलिए है कि चित्र वाले के चित्र को देखें और उसके चरित्र को याद करें।

"चित्र पर जूता मारना और फूल चढ़ाना दोनों ही मूर्खता हैं।"

श्रोताओं में हंसी.........

मैं दोनों में से एक मूर्खता को भी नहीं करूंगा और यह कोई युक्ति भी नहीं है कि जिस वस्तु को अपना इष्टदेव न मानते हों, और जिसकी पूजा न करते हों तो उस पर जूता मारो, अगर आपकी दृष्टि में ऐसा ही है तो आपके शिर पर यह जो पगड़ी है, यह ब्रह्मा, विष्णु, शिव किसी भी आपके इष्टदेव की मूर्ति नहीं है, आप इसकी पूजा आदि नहीं करते हो तो, इसको मेज पर रखकर इसके ऊपर पांच जूते गिनकर मार दीजिये और अभी पांच रुपये इनाम में लीजिये। आप अगर खुद न मार सकें तो अन्य किसी से लगवा दीजिये। और अभी तुरन्त इनाम प्राप्त करिये।

श्रोताओं में तालियों की गड़गड़ाहट के साथ बेहद हंसी……

आपको मेरा पिता बनने की बहुत आवश्यकता हो रही है। इसमें कुछ गुप्त रहस्य तो नहीं है ? पत्नी का पिता भी पिता ही कहलाता है, जिसको उर्दू वाले "कानूनी बाप" और अंग्रेजी वाले "फादर इन ला" कहते हैं। संस्कृत में भी कहा जाता है।

"जनकश्चोपनेता च पत्नी तातस्तथैव च"

आप ऐसा ही पिता बनना चाहते हैं क्या ?

जनता में अपार हंसी……

उस्तरे को नमस्ते, माननी ही पड़ेगी। क्योंकि स्वामी जी ने लिखी है।

पंडित जी आपसे एक बात पूछता हूं, ये जो हजारों लोग श्रोता के रूप में बैठे हैं, आप इनको बिल्कुल ही मूर्ख समझकर उत्तर दे रहे हैं जबकि इनमें, वकील, डाक्टर, शास्त्री, आचार्य एवं और भी अच्छे योग्य व्यक्ति उपस्थित हैं। मैं अब आपकी पोल अच्छी तरह खोलता हूं।

मैं श्री सनातनधर्म पक्ष के श्री प्रधान जी से पूछता हूं और प्रार्थना करता हूं कि मैंने आपको ऋषि दयानन्द जी महाराज की लिखी संस्कार विधि दी है। और यजुर्वेद का भाष्य भी महर्षि दयानन्द जी का दिया है। उसमें "शिवो नामासि"—मन्त्र केभाष्य पर चिन्ह लगाकर दिया है, कृपा करके आप बताओ कि "उस्तरे को नमस्ते" है ? इन्होंने तो बताना है नहीं, ऐसे ही व्यर्थ में समय बरबाद करते रहेंगे।

नोट :—श्री प्रधान जी तभी तत्काल दोनों पुस्तकें हाथ में लेकर उठे, और बोले—

सज्जन पुरुषो !

आर्य समाज के महाविद्वान पंडितजी ने मुझसे जो पूछा है उसके उत्तर में मैं निवेदन करता हूं कि, ऋषि दयानन्द जी की संस्कार विधि में "उस्तरे को नमस्ते" नहीं है।

श्रोताओं के नारों से आकाश गूंज उठा !

बोलो वैदिक धर्म की जय !

बोलो महर्षि दयानन्द की जय

श्री ठाकुर अमरसिंह जी शास्त्रार्थ केशरी की, जय।

नोट :—श्रीकृष्णजी शास्त्री श्री प्रधान जी पर बहुत बिगड़े और बोले, आप कुछ नहीं जानते हैं, आपने शास्त्रार्थ का नाश कर दिया।

फिर प्रधान जी ने कहा—

मैं आर्य समाज के पंडित जी की योग्यता और सभ्यता दोनों पर बहुत मुग्ध हूं।

मेरा मत है कि, "आपने सनातन धर्म के पक्ष को बिल्कुल हरा दिया" श्री प्रधान जी कुर्सी छोड़कर यह कहते हुए चले गये कि—मैं अब प्रधान नहीं रहूंगा।

यदि शास्त्रार्थ आगे चलाना है, तो प्रधान किसी और को बना लें। ऐसी घोषणा करके प्रधान जी तो सभा से ही चले गये। सभा में गड़बड़ और हलचल मच गयी श्री कृष्ण शास्त्री जी भी उठकर चले गये।

सभा भंग हो गयी।

शास्त्रार्थ समाप्त हो गया।

आर्य समाज की ओर से घोषणा की गई कि—

"कल को शास्त्रार्थ मृतक श्राद्ध विषय पर निश्चित है, अतः वह यहीं इसी स्थान पर होगा।"

धन्यवाद !!

—:०:—

अगले दिन दिनांक १२-१२-१९४० ई० का
विवरण

मियानी जिला सरगोधा, पंजाब जो अब पाकिस्तान में है। वहां आर्य समाज और सनातन धर्म के मध्य तीन शास्त्रार्थ होने निश्चित हुए थे।

१. क्या स्वामी दयानन्द कृत ग्रन्थ वेदानुकूल है, १० दिसम्बर सन् १९४० ई०

२. क्या मूर्ति पूजा वेदानुकूल है ? ११ " "

३. क्या मृतक श्राद्ध वेदानुकूल है ? १२ " "

शास्त्रार्थ कर्त्ता—आर्य समाज की ओर से

१. श्री पं बुद्ध देव जी मीर पुरी,

२. (मैं) अमर सिंह, आर्य पथिक,

३. श्री पं० मनसा राम जी वैदिक तोप,

सनातन धर्म की ओर से—

१. श्री पं० श्री कृष्ण जी शास्त्री,

प्रथम दिन का शास्त्रार्थ

क्या स्वामी दयानन्द जी कृत ग्रन्थ वेद विरुद्ध हैं ? इस विषय पर दिनांक दस दिसम्बर सन् १९४० को दो बजे दिन से ५ बजे तक तीन घण्टे शास्त्रार्थ होना निश्चित हुआ था।

सनातन धर्म सभा की ओर से, प्रश्नकर्त्ता श्री पं० श्री कृष्ण जी शास्त्री थे, और उत्तर दाता श्री पं० बुद्ध देव जी मीर पुरी थे ।

समय पर शास्त्रार्थ आरम्भ हुआ, श्री पं० श्री कृष्ण जी शास्त्री ने प्रश्न किये, श्री पं० बुद्ध देव जी मीर पुरी उत्तर देने लगे ।

सनातन धर्म सभा के मंच के आगे लगभग वीस लड़के बिठाये हुए थे, जिनको सिखा कर लाया गया था कि, श्री कृष्ण जी शास्त्री जब भी हाथ से संकेत करें तभी वह सारे उठकर बीच में नाचने और हल्ला करने लगें ।

पं० श्री कृष्ण शास्त्री के प्रश्न काल में टोली चुपचाप बैठी रहती थी, और श्री पं० बुद्ध देव जी मीर पुरी के उत्तर देने के समय में श्री कृष्ण शास्त्री जी का संकेत होते ही, वह टोली, नाचने और जोर-जोर से गीत गाने लगती, जिससे श्री पं० बुद्ध देव जी मीर पुरी की आवाज दब जाती थी, कुछ भी समझ में नहीं आता था, कि क्या कहा, क्या नहीं कहा, लगभग एक घण्टे तक इसी प्रकार की गडबड़ होती रही। नगर के सभ्य सज्जनों ने सम्मति करके शास्त्रार्थ बन्द करा दिया।

पश्चात कुछ समझदार लोगों की समिति बनी, उसमें विचार हुआ कि, अगले होने वाले, दो शास्त्रार्थ कराये जावें या वह भी बन्द करा दिये जावें, फिर अन्त में काफी विचार विमर्श होने के बाद यही निश्चय हुआ कि शास्त्रार्थ तो अवश्य कराये जावें, परन्तु इस गडबड़ी का इलाज करके ही शास्त्रार्थ कराये जायें।

दूसरे दिन का शास्त्रार्थ

उस समिति के तत्वधान में यह दूसरा शास्त्रार्थ मेरे साथ ग्यारह दिसम्बर को दिन के ठीक दो बजे प्रारम्भ हुआ। और ढाई घन्टे से कुछ पांच-सात मिनट आगे तक ही चल पाया था, कि, पं० श्री कृष्ण जी शास्त्री का अपने ही पक्ष के श्री प्रधान जी से झगड़ा हो गया।

श्री प्रधान जी अध्यक्ष पद की कुर्सी ही छोड़कर चले गये, और शास्त्रार्थ समाप्त कर दिया गया।

तीसरा शास्त्रार्थ

"क्या मृतक श्राद्ध वेदानुकूल हैं ?" पूर्व निश्चयानुसार ठीक वही १२ दिसम्बर को प्रात: आठ बजे से ११ बजे तक पूरे तीन घण्टे होना निश्चय हुआ।

शास्त्राथ कर्त्ता आर्य समाज की ओर से—

श्री पं० मनसा राम जी "वैदिक तोप"

शास्त्रार्थ कर्त्ता सनातन धर्म की ओर से—

श्री पं० श्री कृष्ण जी शास्त्री

शास्त्रार्थ का अध्यक्ष

(मैं) अमर सिंह "आर्य पथिक" नियत हुआ। प्रात: आठ बजे से पहले शास्त्रार्थ के लिए दोनों पक्षों के निमित्त आर्य समाज की ओर से दो मंच बना दिये गये। दोनों ओर तख्त बिछाये गये, दोनों ओर कुर्सियां व मेजें लगा दी गई, आर्य समाज की ओर से, (मैं) ठाकुर अमर सिंह अध्यक्ष और शास्त्रार्थ कर्त्ता—श्री पं० मनसा राम जी वैदिक तोप तथा प्रमाण निकालने वाले, सहायक श्री पं० बुद्ध देव जी मीरपुरी। हम लोग अपने मंच पर विराजमान हो गये, मनों पुस्तकों को नित्य की भांति चुन दिया गया, ठीक घड़ी ने आठ बजे की घण्टी दी।

नोट :—आठ बजे का अलार्म पहले ही भरकर रख दिया गया था।

शास्त्रार्थ आरम्भ करने का समय हो गया !

सनातन धर्म सभा की ओर से शास्त्रार्थ करने कोई नहीं आया। कुछ देर प्रतीक्षा करके, शास्त्रार्थ के अध्यक्ष मैंने (अमर सिंह) ने घोषणा की कि, सनातन धर्म की ओर से, शास्त्रार्थ कर्त्ता कोई नहीं आये हैं।

पं० श्री कृष्ण जी शास्त्री उपस्थित नहीं हैं। समय व्यर्थ न जाये, और आये हुए उपस्थित श्रोताओं को कुछ लाभ पहुंचे इस दृष्टि से मैं श्री पं० मनसा राम जी वैदिक तोप से निवेदन करता हूँ। कि वह शास्त्रार्थ के विषय "मृतक श्राद्ध" पर व्याख्यान आरम्भ करने की कृपा करें। जिससे सब समझ लें कि सनातन धर्म का पक्ष हार गया।

नोटः—मैंने जब हारने का नाम लिया, तो इतना सुनते ही एक ग्रेजुएट युवक सनातन धर्मी उठ खड़ा हुआ कि—आप व्याख्यान आरम्भ न करें। थोड़ी देर प्रतीक्षा कर लें।

मैं स्वयं अभी जाकर अपने पण्डित जी को बुला कर लाता हूँ।

तब मैंने उस युवक को कहा—ठीक है बेटे ! पर व्याख्यान तो अवश्य आरम्भ होगा और अभी होगा, मगर ज्यों ही आप अपने पण्डित जी को लेकर आयेंगे, मैं तुरन्त कह कर व्याख्यान बन्द करा दूंगा, ऐसी मेरी घोषणा है, आप तुरन्त बुला कर लाइये।

वह नवयुवक पण्डित जी को बुलाने चला गया। इधर मैंने पं० श्री मनसाराम जी वैदिक तोप से प्रार्थना करके व्याख्यान आरम्भ करवा दिया।

इधर व्याख्यान आरम्भ हो गया। उधर वह नवयुवक उस मन्दिर में गया, जहां पण्डित श्री कृष्ण जी शास्त्री ठहरे हुए थे। उस समय पं० श्री कृष्ण जी शास्त्री अपने नित्य नियमानुसार अपने पीने के लिए बादाम व भंग भवानी को घोट रहे थे।

उस युवक ने जाकर कहा—पण्डित जी ! जल्दी चलिये, वहां शास्त्रार्थ के क्षेत्र में हजारों व्यक्ति आपकी प्रतीक्षा कर रहे हैं।

पण्डित श्री कृष्ण जी शास्त्री ने गर्ज कर कहा—करने दो इन्तजार करते हैं तो, मैं नहीं जाता हूं।

उस युवक ने कहा—वहां सनातन धर्म की बहुत हंसी उड़ रही है, और बड़ा भारी अपमान सनातन धर्म का उन लोगों के द्वारा हो रहा है। और आप यहां भंग घोट रहे हैं।

पं० श्री कृष्ण शास्त्री बोले—यह मैं आज थोड़े ही घोट रहा हूँ। यह तो मैं नित्य ही घोटता हूं। किसी के बाप का क्या लेता हूँ ?

सनातन धर्म का अपमान होता है तो होने दो, जब कल मेरा अपमान भरी सभा में किया गया था, तब ये सनातनधर्मी लोग कहां गये थे ? क्यों मेरा अपमान करवाया था ? और तुमने ही कल उन्हें क्यों नहीं रोका था। अब हंसी उड़ने दो ! होने दो अपमान !!

मैं शास्त्रार्थ नहीं करूँगा ! मैं किसी भी कीमत पर नहीं जाऊँगा।

युवक ने कहा—ठीक है, मैं चलता हूं, तुम्हारी असलियत का पता चल गया।

उस युवक को आते देखकर मैंने श्री पं० मनसाराम जी वैदिक तोप को रुकने का इशारा किया। उन्होंने व्याख्यान बन्द कर दिया।

मैंने कहा—लो भाई शायद लगता है, पण्डित जी महाराज आ गये।

बड़े ही हर्ष की बात है। अब शास्त्रार्थ आरम्भ होगा।

सब श्रोता लोगों में सन्नाटा छा गया। वह नवयुवक अकेला ही आया, उसे जब पूछा गया कि भाई क्या बात है पण्डित जी कहां हैं ? तो उस नवयुवक ने गुस्से में आकर जो वार्तालाप पण्डित जी से हुई थी कह डाली, जिसका वर्णन ऊपर किया गया है।

सारी सभा में तालियों की गड़गड़ाहट........

मैंने श्रोताओं को शान्त करके श्री पं० मनसाराम जी वैदिक तोप का व्याख्यान पुनः आरम्भ करा दिया।

श्री पं० मनसाराम जी ने जो प्रबल खण्डन किया, कि मृतक श्राद्ध की धज्जियां ही उड़ा कर रख दी।

नोटः—"श्री पं० मनसा राम जी वैदिक तोप, पंजाब आर्य प्रतिनिधि सभा में थे, एवं मैं और श्री पं० बुद्धदेव जी मीरपुरी हम लोग आर्य प्रादेशिक प्रतिनिधि सभा में थे, परन्तु जब कहीं शास्त्रार्थ होता था, तो हम तीनों एक साथ ही जाते थे। हमारा तीनों का निश्चय था कि हममें से एक शास्त्रार्थ करेगा, एक प्रमाण छांटेगा, तथा एक प्रधान (अध्यक्ष) बनेगा।"

यह शास्त्रार्थ और सारा विवरण मेरे पास उसी समय का सुरक्षित रक्खा हुआ था। वैसे इसके कागज काफी खस्ता हालत में हो गये थे। कहीं-कहीं से गल भी गये थे, बड़ी कठिनाई से मैंने उसकी प्रतिलिपि करके श्री लाजपत राय आर्य जी को दी,

१२ दिसम्बर को श्री पं० श्री कृष्ण जी शास्त्री तथा उनके साथी श्री बाबा चमन लाल जी भजनोपदेशक को किसी सनातन धर्मी ने भोजन नहीं कराया, दिन भर दोनों भूखे ही रहे, रात्रि को एक सिक्ख सज्जन ने बहुत ही श्रद्धा एवं आग्रह के साथ मुझे, तथा श्री पं० बुद्ध देव जी मीरपुरी और श्री पं० मनसाराम जी वैदिक तोप, तीनों के लिए भोजन का प्रबन्ध अपने घर पर करने का निश्चय किया, और हमसे आकर पूछा कि—पण्डित जी मेरी इच्छा है आपके साथ-साथ उन दोनों सनातन धर्मी पण्डितों को भी भोजन करवाऊं। आप अगर आज्ञा दें तो उनको बुलवा लूं। हमने कहा अवश्य बुलवा लीजिये हमें एक साथ भोजन करके बड़ी प्रसन्नता होगी।

आप उनको तुरन्त बुलवाइये।

पांचों पण्डितों के लिए इकट्ठा भोजन का प्रबन्ध उसी घरमें हुआ।

पाचों पण्डितों ने बड़े प्रेम से मिलकर भोजन किया।

हमारी उदारता, सभ्यता एवं सद्भावना का उस सिक्ख परिवार के ऊपर बड़ा भारी प्रभाव पड़ा।

भोजनोपरान्त श्री पं० श्री कृष्ण जी शास्त्री ने कहा—

ठाकुर साहब आपका-अध्ययन बहुत है।

मैंने कहा, सो तो है परन्तु मैं यह पूछता हूं कि आप आज शास्त्रार्थ करने क्यों नहीं आये ?

पंडित जी ने कहा—

मूर्ति पूजा वाले शास्त्रार्थ में कल प्रधान जी ने मेरा घोर अपमान किया था। और सनातन धर्म के अन्य

अधिकारियों ने भी मेरा पक्ष न लेकर आपका ही पक्ष लिया। और मेरा अपमान किया, हम तो इनके पक्षों को लेकर इनकी वकालत करते फिरते हैं, और इनका यह व्यवहार है।

यही सोच कर मैं शास्त्रार्थ करने नहीं आया। और मैंने कह दिया कि, शास्त्रार्थ कराना हो तो कोई दूसरा पण्डित ढूंढ लो।

श्री बाबा चमन लाल जी कहने लगे कि, आज उन धूर्तों ने हमारे प्रातराश और भोजन का भी प्रबन्ध नहीं किया था।

इस प्रकार से हमारी वार्ता समाप्त हुई और हमने एक दूसरे से बिदाई ली।

"अमर स्वामी परिव्राजक"
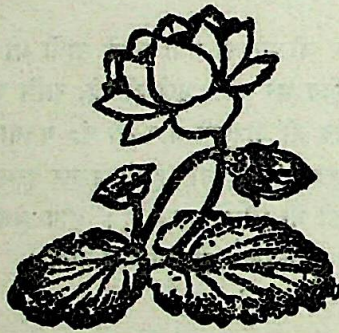
[पांचवा शास्त्रार्थ]
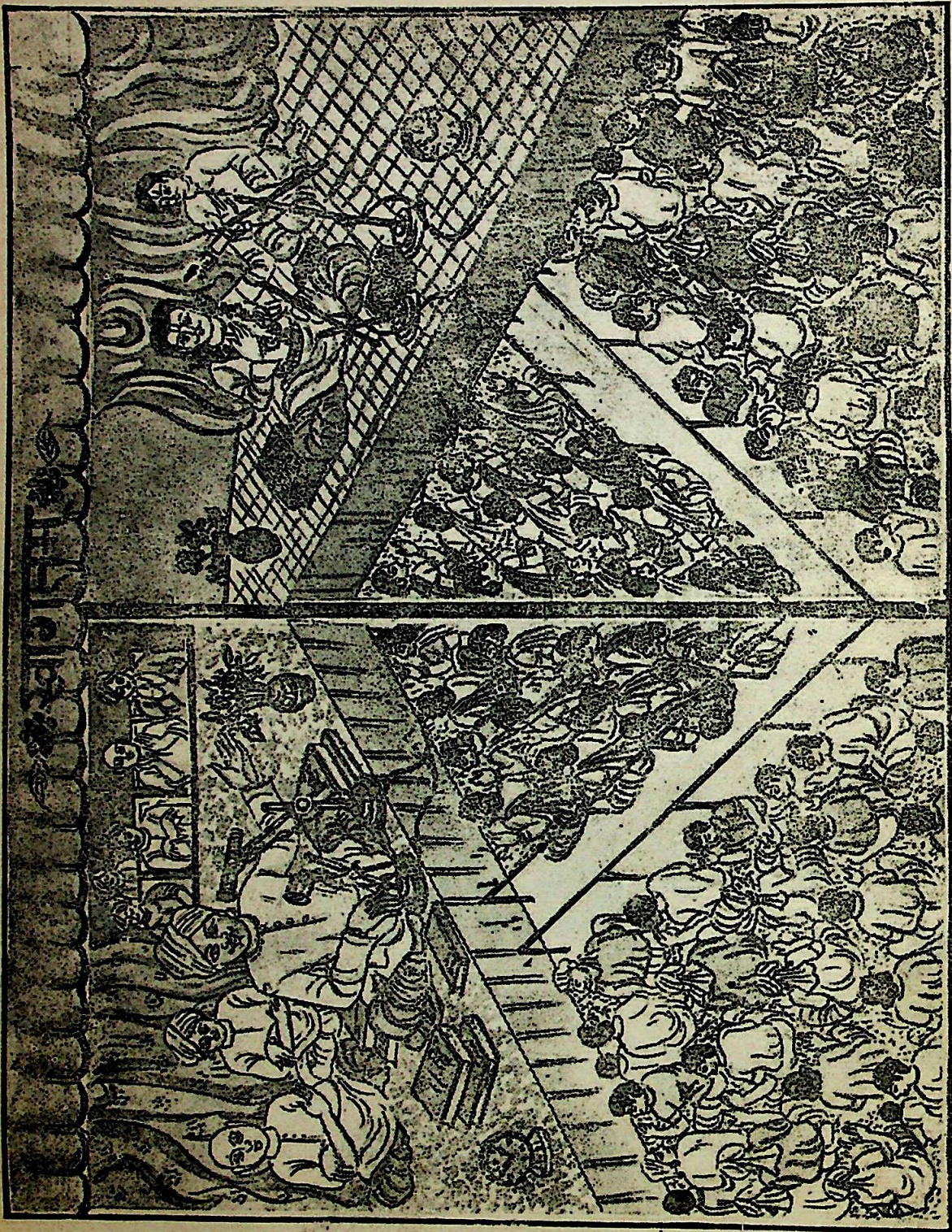
(शास्त्रार्थ करते हुए)।
"श्री ठाकुर अमरसिंह जी शास्त्रार्थ केशरी तथा पौराणिक पं० श्री कालूराम जी शास्त्री"

स्थान : "होशियारपुर" पंजाब
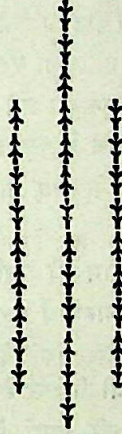
विषय : क्या विधवा विवाह सनातन धर्म शास्त्रों के अनुकूल है ?

प्रधान : श्री पं० मूलराज जी शर्मा

दिनांक : २४ मार्च, सन् १९३५ ई० (दिन के चार बजे)

श्री सनातन धर्म विधवा विवाह सहायक सभा
होशियारपुर की ओर से शास्त्रार्थकर्त्ता : श्री ठाकुर अमर सिंह जी शास्त्रार्थ केशरी

उपस्थित : श्री पं० गंगाशरण जी शर्मा
श्री पं० मलिक बेलीराम जी शास्त्री (एम० ए०, एम० ओ० एल०,)

एवं

श्री सनातन धर्म सभा होशियारपुर की ओर से शास्त्रार्थ कर्त्ता : श्री पं० कालूराम जी शास्त्री
सहायक : श्री पं० अखिलानन्द जी कविरत्न (सनातन धर्मी)

श्री सनातन धर्म विधवा विवाह सहायक सभा के मन्त्री : श्री दौलतराम जी शर्मा बी०,ए०एल०एल०बी०, (एडवोकेट) होशियारपुर,

श्री सनातन धर्म सभा होशियारपुर के मन्त्री : प्रिंसिपल जगतराम जी (संस्कृत कालेज) होशियारपुर

होशियारपुर का अद्भुत शास्त्रार्थ

सनातन धर्मियों का शास्त्रार्थ सनातन धर्मियों के साथ

होशियारपुर पंजाब में उस प्रान्त का उपवन (गार्डन) कहलाता है। इस नगर में एक "सनातन धर्म विधवा विवाह सहायक सभा" बनी श्री पं० दौलतराम जी बी. ए., एल. एल. बी. (एडवोकेट) उसके संचालक थे। एवं अलग से सनातन धर्म सभा भी थी। उस सनातन धर्म सभा ने "सनातन धर्म विधवा विवाह सहायक सभा को लिखा कि—यह सभा केवल "विधवा विवाह सभा" रहे इसके नाम के साथ से "सनातन धर्म" नाम हटा दिया जावे। यदि न हटावें तो "विधवा विवाह को सनातन धर्म के अनुकूल सिद्ध करने के लिए शास्त्रार्थ करें"। उसने "सनातन धर्म" नाम हटाना स्वीकार न करके शास्त्रार्थ करना स्वीकार कर लिया।

श्री पं० मौलिचन्द जी शर्मा और श्री पं० नेकीराम जी शर्मा भिवानी वाले दोनों नेता और प्रभावशाली वक्ता थे दोनों ही विधवा विवाह के पक्ष में थे। इनसे जब शास्त्रार्थ करने की प्रार्थना की गई तो दोनों ने कहा व्याख्यान विधवा विवाह के पक्ष में हम दे सकते हैं शास्त्रार्थ नहीं कर सकते हैं।"

श्री पं० केदारनाथ जी (श्री आचार्य लक्ष्मीदत्त जी दीक्षित के पूज्य पिताजी) ने श्री ठाकुर अमरसिंह जी शास्त्रार्थ केशरी को बुलाने का प्रस्ताव किया। श्री पं नेकीराम जी शर्मा ने भी समर्थन किया श्री पं० केदारनाथ जी ने श्री ठाकुर अमरसिंह जी को बुलवा लिया ठाकुर साहिब तीन मन से भी अधिक पुस्तकें लेकर होशियारपुर पहुंच गये।

शास्त्रार्थ का विषय निश्चय हुआ—क्या विधवा विवाह सनातन धर्म ग्रन्थों के अनुकूल हैं ?

सनातन धर्म सभा की ओर से शास्त्रार्थ कर्त्ता श्री पं० कालूराम जी शास्त्री नियत हुए और उनके सहायक थे श्री पं० अखिलानन्द जी कविरत्न।

पं० कालूराम जी अपने नाम के साथ "युक्ति विशारद" लिखते-लिखाते थे पर यहां शास्त्रार्थ के नियमों में उन्होंने निश्चय कराया कि—शास्त्रार्थ में युक्तियां नहीं दी जायें।

श्री ठाकुर अमरसिह जी शास्त्रार्थ केशरी को सम्मुख आया देखकर पं० अखिलानन्द जी ने उनको पहचान लिया। और विशेष रूप से पूछा कि—आपका शुभ नाम क्या है ? श्री ठाकुर जी ने कहा मेरा नाम वही है जो श्री कविरत्न अखिलानन्द जी जानते हैं ! (सभा में हंसी) तो भी बताइये तो ! श्री ठाकुर जी ने अपना नाम लिया। पंडित अखिलानन्द जी ने कहा कि—आप तो आर्य समाजी हैं श्री ठाकुर जी ने कहा—जी हां कट्टर ! पक्का !!

पूछा गया कि—फिर आप सनातन धर्म की ओर से शास्त्रार्थ करने कैसे आये हैं ?

श्री ठाकुर जी ने तत्काल उत्तर दिया कि—'मैं इनका वकील हूं" इस उत्तर पर बड़ी तालियां बजी और बड़ी प्रसन्नता प्रकट की गई।

कविरत्न जी ने कहा कि—फिर आप कहेंगे कि—मैं इन ग्रन्थों को नहीं मानता हूं।

श्री ठाकुर जी ने कहा—आज ऐसी आवश्यकता ही नहीं होगी।

आज मैं यह सिद्ध करूंगा कि—"विधवा विवाह" सनातन धर्म ग्रन्थों के अनुकूल है विरुद्ध नहीं। मैं उन सब ग्रन्थों के प्रमाण दूंगा जिनको मेरा मवक्किल (Client) मानता है और आप मानते हैं।

मैं उन सब ग्रन्थों से आपके इस पक्ष को कि—"विधवा विवाह सनातन धर्म ग्रन्थों के विरुद्ध है" कदापि सिद्ध नहीं होने दूंगा।

चारों ओर से अपार हर्षध्वनि हुई और बहुत तालियां बजी। करतल ध्वनि के साथ शास्त्रार्थ के लिए श्री ठाकुर अमर सिंह जी खड़े हो गए।

नोट—यह पूरी वार्ता पूज्य स्वामी जी से पूछ कर दी गयी है।

"लाजपत राय आर्य"

श्री ठाकुर अमरसिंह जी शास्त्रार्थ केशरी

धर्मानुरागी सज्जनों ! आज के शास्त्रार्थ में यह निर्णय होगा कि, विधवा विवाह सनातन धर्म शास्त्रों के अनुकूल है वा प्रतिकूल। दूसरे शब्दों में यूं कहिए कि—विधवा विवाह धर्म है, या अधर्म।

धर्मज्ञ मनु जी महाराज कहते हैं कि—

वेदः स्मृतिः सदाचारः स्वस्य च प्रियमात्मनः।
एतच्चतुर्विधं प्राहुः साक्षाद्धर्मस्य लक्षणम् ॥१२॥

मनुस्मृति अध्याय २ श्लोक १२,

धर्म के साक्षात् चार लक्षण कहे गये हैं।

१. वेद,
२. स्मृति (धर्म शास्त्र)
३. सदाचार (इतिहास)
४. जो आत्मा को प्रिय हो,

"वेदोऽखिलो धर्ममूलम्" मनुस्मृति अध्याय २ श्लोक ६,

वेद अखिल धर्म का मूल है। और देखिये—

"धर्मं जिज्ञासमानानां प्रमाणं परमं श्रुतिः।" मनुस्मृति अध्याय २, श्लोक १३

धर्म जानने की इच्छा रखने वालों के लिए परम प्रमाण वेद ही है। इसलिए सर्वप्रथम मैं वेद में से ही प्रमाण देता हूं। देखिये अथर्ववेद में कहा है—

या पूर्वं पतिंवित्वा अथान्यं विन्दते परम्।
पञ्चौदनं च तावजं ददातो न वियोषितः ॥२७॥
समान लोको भवति पुनर्भुवा परः पतिः।
योऽजं पञ्चौदनं दक्षिणा ज्योतिषं ददाति ॥२८॥

अथर्ववेद ६५ मन्त्र २७, २८,

जो स्त्री पहले पति को प्राप्त करके उसके मरने पर दूसरे पति को प्राप्त होती है, वह स्त्री और उसका वह दूसरा पति अजपंचौदन हवन करें। तो फिर वियोग को प्राप्त न हों। दूसरी बार विवाह करने वाली वह स्त्री और उसका पति दोनों पहले विवाह करने वाले के समान लोक (दर्जे) वाले ही होते हैं। उनसे इनमें कुछ भेद नहीं होता है। दो प्रमाण वेद के हुए, अब स्मृति (धर्म शास्त्र) के प्रमाण लीजिये।

सा चेदक्षतयोनिः स्याद्गतप्रत्यागताऽपिवा।
पौनर्भवेन भर्त्रा सा पुनः संस्कारमर्हति ॥६॥

मनुस्मृति अध्याय ६ श्लोक १७६,

अक्षत योनि विधवा स्त्री का दूसरा विवाह हो जाना चाहिये।

और सुनिये—

नष्टे मृते प्रव्रजितेक्लीवे च पतिते पतौ।
पंचस्वापत्सु नारीणां पतिरन्यो विधीयते ॥३०॥

पाराशर स्मृति अध्याय ४ श्लोक ३०,

पति के लापता होने या मर जाने अथवा संन्यासी हो जाने वा नपुंसक (नामर्द) हो जाने और धर्म से पतित हो जाने रूप पाँच आपत्तियों में स्त्री को दूसरे पति का विधान है। यह हुआ स्मृति का प्रमाण अब सदाचार सत्पुरुषों का आचार इतिहास पर भी नजर डालिये। यदुकुल कमल दिवाकर श्री कृष्ण चन्द्र जी महाराज योगीराज के परम सखा श्री अर्जुन का विवाह उलूपी नाम्नी विधवा के साथ हुआ। देखिये महाभारत में कहा गया है कि—

अर्जुनस्य सुतः श्रीमानिरावान्नाम वीर्य्यवान्।
स्नुषायां नागराजस्य जातः पार्थेन धीमता ॥७॥
ऐरावतेन सा दत्ता अनपत्या महात्मना।
पत्यौहते सुपर्णेन कृपणा दीनचेतना ॥८॥
भार्यार्थं तां च जग्राह पार्थः कामवशानुगाम्।
एवमेष समुत्पन्नः परक्षेत्रेऽर्जुनात्मजः ॥९॥

महाभारत भीष्म पर्व अध्याय, ९ श्लोक ७, ८, ९,

उलूपी के पति के मरने पर ऐरावत ने वह सन्तानहीन स्त्री अर्जुन को दी, अर्जुन ने उसे अपनी स्त्री बनाया, और बुद्धिमान अर्जुन द्वारा, इरावान् नामक पुत्र उत्पन्न हुआ।

श्रीकृष्णचन्द्र जी महाराज ने अर्जुन के इस कार्य को कभी बुरा नहीं कहा। ये हुई इतिहास की बात, अब सुनिये चौथी आत्मप्रियता की बात।

आत्मप्रियता के बारे में श्रीकृष्णचन्द्र जी गीता में कहते हैं कि—

"आत्मौपम्येन सर्वत्र समं पश्यति योऽर्जुन"।

श्रीमद्‌भगवद् गीता अध्याय ६ श्लोक ३२

आत्मप्रियता के बारे में महर्षि व्यासजी कहते हैं कि—

"आत्मनः प्रतिकूलानि परेषां न समाचरेत्"

महाभारत

जो कार्य अपनी आत्मा के विरुद्ध हों उन्हें दूसरे के विरुद्ध न करे। प्रत्येक मनुष्य अपने-अपने आत्मा से पूछे कि उसकी इच्छा विवाह करने की होती है या नही, जब पुरुष एक स्त्री के मरने पर दूसरी शादी कर लेता है, दूसरी स्त्री के मरने पर तीसरी, चौथी, पाँचवी, चाहे जितनी स्त्रियाँ विवाहता है, और सत्तर-सत्तर वर्ष की आयु के बूढ़े भी विवाह करने की इच्छा रखते हैं। तो किसी को क्या अधिकार है कि, वह एक युवती विधवा से कहे कि तू विवाह न कर।

नोट :—"इस पर सनातन धर्म सभा के प्रधान ने कहा कि आप युक्ति न देवें, केवल प्रमाण ही देने का कष्ट करें।"

श्री ठाकुर अमर सिंह जी

प्रधान जी ! मैं तो मनु के प्रमाणों से धर्म के चारों लक्षणों के अनुकूल विधवा विवाह को सिद्ध कर रहा हूं, मैंने इन प्रमाणों द्वारा यह सिद्ध कर दिया है कि—विधवा विवाह वेदानुकूल और शास्त्र सम्मत है, इतिहास कहता है कि, पूर्वजों ने भी किया है तथा आत्मा के अनुकूल भी है, पंडित जी इसका खंडन करें, और इसी प्रकार वेद आदि के प्रमाण विधवा विवाह के विरुद्ध देवें।

पं० श्री कालूराम जी शास्त्री

सज्जनो ! ठाकुर साहब ने जो दो वेद मन्त्र बोले हैं, इनका विधवा विवाह देवता नहीं है निरुक्त में कहा गया है कि—

"या तेनोच्यते सा देवता"

जिस मन्त्र में जो विषय है, वही उसका देवता है। सो इन मन्त्रों का विधवा विवाह देवता ही नहीं, तो इनसे विधवा विवाह कैसे सिद्ध हो जायेगा, दिखाने का कष्ट करें क्या इनका विधवा विवाह देवता है ?

ये तो दोनों मन्त्र विवाह से पहिले जब सगाई हो गई हो, और वह मर जाय जिसके साथ सगाई हुई, तब दूसरे के साथ विवाह की आज्ञा देते हैं। मन्त्र में कहा है—

'या पूर्वं पतिंवित्वा अथान्यं विन्दते परम्'

अथर्ववेद काण्ड ९ सूक्त ५ मन्त्र २७,

पहिले पति को (वित्वा) जान कर प्राप्त करके नहीं उसके मरने पर दूसरे से विवाह करती है। जिसको अभी जाना ही है। सगाई हुई है, प्राप्त नहीं किया, विवाह नहीं हुआ। उसके मरने पर दूसरे का विधान है।

सा चेदक्षत योनि·····मनुस्मृति का प्रमाण दिया है, इससे पहला श्लोक नहीं पढ़ा, जिसमें मनु जी कहते हैं, जो घर से भाग गई हो। और बाहर से अक्षतयोनि होकर आयी हो, उससे जो सन्तान हो, उसके साथ विधवा का विवाह करे। भागी हुई का क्या जिक्र है। विधवा का विवाह दिखाइये।

नष्टे मृते······पाराशर स्मृति का श्लोक आपने पढ़ा, इसमें भी सगाई के बाद का जिक्र है। विवाह के बाद का नहीं।

फिर इससे आगे का श्लोक पढ़िये, जिनमें विधवा को दो ही आज्ञा दी गई हैं। एक आजन्म ब्रह्मचारिणी रहने की दूसरी आज्ञा पति के साथ सती हो जाने की ! श्लोक यह है—

मृते भर्तरि या नारी ब्रह्मचर्य्यव्रते स्थिता।
सामृता लभते स्वर्गं यथा ते ब्रह्मचारिणः ॥२६॥
तिस्त्रकोट्योऽर्द्ध कोटी च यानि लोमानि मानवे।
तावत्कालं वसेत्स्वर्गे भर्तारं यानुगच्छति ॥२७॥

कलकत्ते में प्रकाशित—पाराशर स्मृति अध्याय ४ श्लोक २६, २७,

जो विधवा ब्रह्मचारिणी रहती है, वह स्वर्ग में जाती है। जो सती हो जाती है, वह इतने स्वर्गों को जाती है, जितने उसके शरीर पर बाल हैं।

ठाकुर अमर सिंह जी शास्त्रार्थ केशरी

पंडित जी महाराज ! विधवा विवाह देवता वाली बात आपने खूब कही, आप ऐसे विद्वान पुरुष हैं, आपको ऐसी ना समझी की बातें नहीं करनी चाहिए, आपने मुझसे विधवा विवाह देवता पूछा है, सो कृपा करके नोट करिये—और अपनी बारी में सर्व प्रथम किसी मन्त्र का विधुर (रण्डुआ) विवाह देवता बताइये ?

कन्या विवाह देवता, और आपके किये अर्थ के अनुसार वाग्दत्ता विवाह (जिसकी-सगाई हो गयी है) देवता बताइये। अच्छा चलो, छोड़ो सब बातों को, आप वेद में कहीं किसी मन्त्र में विवाह देवता ही दिखा दें, आपकी विजय हो जायेगी। और मेरी पराजय, यदि न दिखा सके तो, सारे विवाह कराने छोड़ दें। क्योंकि किसी भी मन्त्र का विवाह देवता नहीं है। या तो अपनी बारी में, सर्व प्रथम ये देवता दिखा दीजिये, अन्यथा विधवा विवाह देवता वाला प्रश्न सदा के लिए छोड़ दीजिये।

मन्त्रों का अर्थ आपने सगाई पर लगाया है, और इस आधार पर कि,-शब्द "वित्वा" का अर्थ है, "जान कर के" प्राप्त करके नहीं, शोक ही नहीं महाशोक है। आप विद्वान होकर ऐसी बात करते हैं।

पंडित जी महाराज! "वित्वा" विद्लृलाभे से बना है। जिसका अर्थ "प्राप्त करके" ही होता है। न कि जान करके, विद ज्ञाने से बनता तो "जान करके" अर्थ होता, सो विद् ज्ञाने से "वित्वा" नहीं बनता "विदित्वा" बनता है, इसलिए ये दोनों मन्त्र स्पष्ट विधवा विवाह का विधान करते हैं। फिर दोनों मन्त्रों का अर्थ जो मैंने किया है, वही अर्थ प्रसिद्ध सनातन धर्मी पंडित अखिलानन्द जी कविरत्न ने वैधव्य विध्वंसन चम्पू नामक पुस्तक में किया है। पूछ लीजिये आपके पास ही विराजे हुए हैं।

आपने "सा चेदक्षत योनि" इससे पूर्व का श्लोक पूछा है। सो वह यह है, नोट करिये—

या पत्यावा परित्यक्ता विधवा वा स्वेच्छया।
उत्पादयेत्पुनुर्भूत्वा स पौनर्भव उच्यते ॥

इसका अर्थ पहले जो पति ने त्याग दी हो, अथवा विधवा हो, वह स्वेच्छा से विवाह करके जिस सन्तान को उत्पन्न करती हैं, वह पौनर्भव होती है।

वह पति से त्यागी हुई, अथवा विधवा अक्षत योनि स्त्री दूसरे पति से विवाह करने योग्य है।

पंडित जी महाराज! हमारी समझ में आपका यह वाक्य नहीं आया कि—"जो घर से भाग गई हो, और बाहर से अक्षत योनि होकर आई हो"

बाहर से अक्षत योनि होकर किस प्रकार आई, यह आप ही समझाइये! और भागी नहीं, महाराज, पति से त्यागी हुई हो, अथवा विधवा हो, "नष्टे मृते प्रव्रजिते······" इसमें सगाई की गन्ध भी नहीं है। और यदि यह श्लोक शादी के बाद का विधान करता है। विवाह के बाद का नहीं, तो आप कहते हैं कि—इससे अगले श्लोक में, स्त्री को आयु पर्यन्त ब्रह्मचारिणी रहने का उपदेश है। और उससे अगले में, सती होने का, तो क्या विवाह से पहले सगाई वाला लड़का मर जाये तो वह कन्या जिसका अभी विवाह भी नहीं हुआ, वह आयु भर ब्रह्मचारिणी रहे, या सती हो जाये, "कुंवारी सती," क्या खूब!

आप कहते हैं, ये दोनों आज्ञा विधवा को है, तो विवाह से पहले ही विधवा हो गई? या यह श्लोक ही ऐसा है कि जब मैं इसे विधवा विवाह का बताऊँ, तो यह सगाई का हो जाये। पर आपको जब विधवा को ब्रह्मचर्य तथा सती होने का उपदेश देना हो, तब यही विवाह के बाद का विधवा परक बन जाये, वाह! वाह!! कमाल हैं आपके भी।

विधवा के लिए यहाँ दो आज्ञा नहीं है बल्कि तीन हैं प्रथम यह है कि—विवाह करले "पतिरन्यो विधीयते" द्वितीय—विवाह न करे तो ब्रह्मचारिणी रहे, ब्रह्मचारिणी न रह सके तो सती हो जाये, ये दो आज्ञायें खूब हुई कि—उसे विवाह तो करने न दिया जाय और बलात् ब्रह्मचारिणी रक्खा जाय, या सती कराया जाय, यानी कि विधवा को दो सजा है।

१. उम्रकैद (काला पानी) ।

२. फांसी ।

ध्यान रहे आपने विधवा विवाह के निषेध में कोई प्रमाण नहीं दिया है ।

वेद का और शास्त्र का कोई प्रमाण दीजिये ।

सनातन धर्मी श्री पं० अखिलानन्द जी कविरत्न

यह जो आपने मेरी पुस्तक से पढ़ा है । यह पूर्व पक्ष है, इसका उत्तर पक्ष देखे विना, इस पर कुछ न कहिये ।

ठाकुर अमर सिंह जी शास्त्रार्थ केशरी

महाराज जी ! क्या आप कृपा करके वतला सकते हैं, कि वह उत्तर पक्ष कहां है ?

सनातन धर्मी पं० अखिलानन्द जी कविरत्न

वह दूसरी पुस्तक छप रही है उसमें है ।

श्रोताओं में हंसी.....................

पण्डित कालू राम जी शास्त्री

अपने सम्वन्ध में कविरत्न जी ने कह ही दिया है । इस पर मैं कुछ नहीं कहता हूँ । लीजिये विधवा विवाह के विरुद्ध प्रमाण, गीता में कहा है—

कुलक्षये प्रणश्यन्ति कुलधर्माः सनातनाः ।
धर्मे नष्टे कुलं कृत्स्नमधर्मोभिभवत्युत ॥४०॥
अधर्माभिभवात्कृष्ण प्रदुष्यन्ति कुलस्त्रियाः ।
स्त्रीषु दुष्टासु वार्ष्णेय जायते वर्णसंकरः ॥४१॥
संकरो नरकायैव कुलघ्नानां कुलस्य च ।
पतन्ति पितरो ह्येषां लुप्तपिण्डोदकक्रिया ॥४२॥

श्रीमदभगवद् गीता अध्याय, १ श्लोक—४०, ४१, ४२,

इन श्लोकों में विधवा विवाह का कैसा स्पष्ट निषेध है । साफ कहा है कि, स्त्रियां दूषित हो जावेंगी और वर्ण संकर सन्तान उत्पन्न होंगी । जो नर्क में जावेंगी ।

आप ब्रह्मचर्य को काले पानी की सजा कहते हैं, और पवित्र सती धर्म को फांसी, यह ठीक नहीं है ।

मनु ने स्वयं विधवा विवाह का निषेध किया है - उसमें विधवा विवाह का विधान कैसे हो सकता है ?

भाग गई हो, साफ है, "गतप्रत्यागतापिवा" नष्टे मृते ''''यह सगाई का है । भट्टोजी दीक्षित ने लिखा है, "चतुर्विशंतिमतसंग्रह" में देखिए । सारे शास्त्रों मे ब्रह्मचर्य्य की महिमा कही गयी है, और सती होना, बड़ा पवित्र धर्म है । मैंने इतने प्रमाण विधवा विवाह के विरुद्ध दिये, आप और कोई प्रमाण विधवा विवाह के पक्ष में दीजिए । पाराशर स्मृति का प्रमाण मनु के विरुद्ध होने से अप्रामाणिक है ।

ठाकुर अमर सिंह जी शास्त्रार्थ केशरी

पण्डित अखिलानन्द जी कहते हैं कि, उस पुस्तक में पूर्व पक्ष है, उत्तर पक्ष की पुस्तक छप रही है।

यह खूब रही ! यह नया ढंग निकाला है कि, पूर्व पक्ष और पुस्तक में हो, और उत्तर पक्ष किसी और में, और फिर आश्चर्य की बात यह है कि—पूर्व पक्ष वाली पुस्तक को छपे लगभग २५ वर्ष हो गये, उत्तर पक्ष वाली पुस्तक की आज घोषणा की जा रही है, पर पण्डित जी को पुस्तक लिखे देर हो गयी है। इस लिए भूल गये, मालूम होते हैं। उस पुस्तक में पूर्व पक्ष और उत्तर पक्ष दोनों हैं। पूर्व पक्ष किसी और की ओर से रखकर पण्डित जी स्वयं उत्तर दे रहे हैं, और उसी उत्तर में ये मन्त्र यही अर्थ तथा अन्य अनेक प्रमाण हैं। इसके अतिरिक्त दूसरी पुस्तक अथर्ववेदालोचन में भी यही दोनों मन्त्र तथा यही अर्थ है। आगे पण्डित जी की अपनी सम्मति है कि—

"हम अक्षत योनि कन्या के पुनर्लग्न से सहमत हैं"। कहिये महाराज जी ! क्या यह भी पूर्व पक्ष है ?

आशा है अब आगे न बोलेंगे।

अब श्री पंडित कालूराम जी शास्त्री सुनें—

मनुस्मृति में कहीं भी विधवा विवाह का निषेध नहीं है। यदि है तो दिखाइये ? और मैं तो कहता हूँ, कि आप सनातन धर्म के किसी भी प्रामाणिक ग्रन्थ से दिखाइये।

मनु ने, "या पत्या वा परित्यक्ता........." और "साचेदक्षत योनिस्यात्........." दोनों में साफ विधवा विवाह का विधान किया है। आपने मेरे किये, अर्थ का खण्डन नहीं किया, और मेरा चैलेञ्ज है कि कभी खण्डन नहीं कर सकेंगे।

"नष्टे मृते........" श्लोक कदापि सगाई के बाद का नहीं हो सकता, उसमें कोई शब्द सगाई के सम्बन्ध में नहीं है।

इस श्लोक में पति और नारी शब्द पड़े हुए हैं। सप्तपदी से पहिले वह पति ही नहीं हो सकता, यथा—"पतित्वं सप्तमे पदे"।

"पाणिग्रहणिका मंत्रास्तु नियतदारलक्षणम्"।
तेषांनिष्ठा तु विज्ञेया विद्वद्भिः सप्तमे पदे ॥

मनुस्मृति—अध्याय ८ श्लोक २२७,

चतुर्विंशति मत संग्रह पृष्ठ ८८ पंक्ति १७ तथा

नोदकेन नवा वाचा कन्यया पतिरुच्यते।
पाणिग्रहणसंस्कारात् पतित्वं सप्तमे पदे ॥ (यम स्मृति के नाम से)

चतुर्विंशति मत संग्रह पृष्ठ ८९ पंक्ति ४ भट्टो जी दीक्षित द्वारा संकलित,

कन्या—सप्तपदी तक कन्या रहती है, नारी नहीं बनती।

मण्डपो मधुपर्कश्च लाजा होमस्थैव च।
यावत्सप्तपदी नास्ति तावत् कन्या कुमारिका ॥

मण्डप छा जाये, मधुपर्क हो जाये, लाजा होम, खीलों की आहुतियां जो परिक्रमाओं के साथ होती हैं, हो जावें, अर्थात् परिक्रमा भी हो जाये जिस समय तक सप्तपदी न हो, तब तक कन्या कुंवारी रहती है। सप्तपदी जब तक न हो, तब तक न वह पति बनता है, और न वह पत्नी, आपने सगाई पर ही पति-पत्नी बना दिये, धन्य हो महाराज ! आपकी लीला को !!

मेरा दावा है इन दोनों प्रमाणों का कदापि अर्थ नहीं बदला जा सकता, जब तक मनुस्मृति से विधवा विवाह निषेध का कोई प्रमाण आप न दिखा दें, तब तक पाराशर स्मृति को उसके विरुद्ध कहना व्यर्थ है, मनु का प्रमाण इस समय तक नहीं दिखा सके, और कभी नहीं दिखा सकेंगे गीता के जो श्लोक आपने पढ़े हैं, उनमें विधवा विवाह का निषेध नहीं है। प्रत्युत उनमें स्त्री को पति के बिना नहीं रहना चाहिए, यह ध्वनि निकलती है। इनका भावार्थ यह है कि—

युद्ध करने से कुल नष्ट हो जायेगा, (यानी कुल के पुरुष मारे जायेंगे) कुल के पुरुषों के मारे जाने पर कुल के धर्मनष्ट हो जायेंगे कुल-धर्म नष्ट होने पर स्त्रियां दूषित हो जायेंगी, दूषित स्त्रियों से वर्ण संकर उत्पन्न हो जायेंगे आदि। वर्ण संकर वह होते हैं, जो अन्य वर्ण की स्त्री में अन्य वर्ण के पुरुष द्वारा उत्पन्न हों, कुल के सारे पुरुष मारे जायेंगे, तो स्त्रियां दूसरे कुल=वर्ण से व्यभिचार द्वारा दूषित होंगी और दूसरे वर्ण से वर्णसंकर सन्तान उत्पन्न होगी, पति के मरने पर भी यदि कुल के अन्य पुरुष जीवित रहेंगे, तो विधवाएं उनमें से किसी के साथ विवाह करके सन्तान उत्पन्न करेंगी। न इस प्रकार वे दूषित होंगी, और न सन्तान वर्ण संकर उत्पन्न होंगी। स्पष्ट है कि—इन श्लोकों में वर्ण संकर सन्तान हो जायेंगी, यह भय दिखाया गया है। जो कि अन्य वर्ण की स्त्री में अन्य वर्ण के पुरुष द्वारा, उत्पन्न हो। सो यदि इसमें निषेध है, तो अन्य वर्णस्थ स्त्री पुरुषों के साथ व्यभिचार का निषेध है। अपने वर्ण के पुरुष के साथ विधवा के विवाह का इनमें कदापि निषेध नहीं है। यदि है तो दिखायें वे कौन से शब्द हैं ?

इसके अतिरिक्त यह भी ध्यान रहे और याद रहे कि, ये श्लोक अर्जुन की ओर से कहे गये हैं, न कि भगवान श्री कृष्ण की ओर से फिर इनका, प्रामाण्य ही क्या ? अर्जुन, तो स्वर्ग से गिराने वाले और अपयश कराने वाले, अनार्य्यों द्वारा सेवित कल्मष में फंसा हुआ था। यदि विधवा विवाह का वह निषेध करें भी, जैसा कि आप करते हैं, तो मानता कौन है ? आप सनातन धर्म के माने हुए वेद शास्त्र, पुराण, इतिहास, किसी भी ग्रन्थ से विधवा विवाह के विरुद्ध प्रमाण दिखाइये ! मेरा दावा है कि—आप कदापि न दिखा सकेंगे।

पं० कालू राम जी शास्त्री

आप ब्रह्मचर्य को काले पानी की सजा कहते हैं। और पवित्र सतीधर्म को फांसी की सजा कहते हैं। यह कौनसा धर्म है ? पति के मरने पर स्त्रियां पति के साथ सती हो जाती थीं, प्राण त्याग देती थी।

मैं इसको बहुत पवित्र धर्म मानता हूँ।

विधवा विवाह निषेध का आप बार-बार प्रमाण मांगते हैं, लीजिये और मनुस्मृति का प्रमाण विधवा विवाह को चकनाचूर करने वाला लीजिए—

नान्यस्मिन् विधवा नारी नियोक्तव्या द्विजातिभिः।
अन्यस्मिन् हि नियुञ्जानाधर्मं हन्युः सनातनम् ॥६४॥

मनुस्मृति अध्याय ९ श्लोक ६४,

इस श्लोक में साफ कहा है कि—जो विधवा स्त्री विवाह कर लेती हैं। वह सनातन धर्म को नष्ट करती हैं। इससे स्पष्ट और क्या प्रमाण होगा, विधवा विवाह सनातन धर्म के सर्वथा विरुद्ध है।

"नष्टे मृते…………" इस श्लोक पर मैंने चतुर्विशंति मत संग्रह का प्रमाण दिया कि,—उसमें इसे सगाई के बाद का बताया है, विवाह के बाद का नहीं, और लीजिये निर्णय सिन्धु में भी इसे सगाई के बाद का बताया है।

सकृदंशो निपतति सकृत् कन्या प्रदीयते।
सकृद्दाह ददानीति त्रीण्येतानि सतां सकृत् ॥ मनुस्मृति अध्याय ९ श्लोक ४७,

इस श्लोक में कहा है कि—कन्या का दान एक ही बार होता है। दूसरी बार कैसे हो सकता है ? विधवा विवाह के विरुद्ध और प्रमाण लीजिए—

अपत्य लोभात्तुया स्त्री भर्तारमति वर्तते।
सेह निन्दामवाप्नोति पतिलोकाच्चहीयते ॥१६१॥

मनुस्मृति अध्याय ५ श्लोक १६१,

संतान के लोभ से जो स्त्री दूसरे पति को स्वीकार करती है, वह यहां निन्दा को प्राप्त होती है। और पति लोक से वंचित (महरूम) रह जाती है।

पतिव्रता निराहारा शोष्यते प्रोषिते पतौ।
मृतंभर्तारमादाय ब्राह्मणी वन्हिमाविशेत् ॥५२॥
जीवन्ती चेत्यक्त केशा तपसा शोधयेद्वपुः।
सर्वावस्थासु नारीणां नयुक्तं स्यादरक्षणम् ॥५३॥

व्यास स्मृति अध्याय २ श्लोक ५२, ५३,

मृते भर्तरि या नारी समारोहेद् हुताशनम्।
सा भवेत्तु शुभाचारास्वर्गे लोके महीयते ॥१९॥
व्यालग्राही, यथा व्यालं बलादुद्धरते विलात्।
तथा सा पतिमुद्धृत्य तेनैव सह मोदते ॥२०॥

दक्ष स्मृति अध्याय ४ श्लोक १९, २०,

इन चारों श्लोकों में यह बताया गया है कि, जो स्त्री पति के साथ सती हो जाती है। अर्थात अग्नि में जलकर मर जाती है। वह यहां कीर्ति पाती है। और स्वर्ग में जाती है। अपने पति के साथ आनन्द मनाती है। देखिये विधवा विवाह के विरुद्ध कितने प्रमाण हैं। हम देखेंगे कि आप इनका किस प्रकार खण्डन करते हैं। और अब आगे अपने पक्ष में कौन से प्रमाण देते हैं।

ठाकुर अमर सिंह जी शास्त्रार्थ केशरी

पंडित जी महाराज ने मेरे दिये वेद मन्त्रों को तो छोड़ दिया, बल्कि यों कहिये कि छोड़ क्या दिया, मान लिया उन पर कुछ कहना शेष नहीं रहा है। अब अपने दिये हुए प्रमाणों की समालोचना सुनिये। आपके प्रमाण तिनकों की तरह उड़ते दिखाई देंगे।

नान्यस्मिन् विधवा नारी, नियोक्तव्या द्विजातिभिः।
अन्यस्मिन्हि नियुंजाना धर्मं हन्युः सनातनम् ॥

मनुस्मृति अध्याय ९ श्लोक ६४,

मनुस्मृति के इस श्लोक में, विधवा विवाह का जिक्र तक नहीं, विधवा शब्द आ जाने से ही, आपने विधवा विवाह निषेध निकाल लिया।

महाराज जी ! इसमें तो यह कहा गया है कि—विधवा स्त्री अन्य वर्ण के पुरुष से नियोग न करे। जो अन्य वर्ण के पुरुष से नियोग करती हैं। वह सनातन धर्म का हनन करती हैं।

इसमें तो अन्य वर्ण के पुरुष के साथ नियोग का निषेध है। विधवा-विवाह निषेध का तो इसमें नाम भी नहीं हैं। मनु जी महाराज का ही दूसरा श्लोक देखिये:—

अपत्य लोभात्तु या स्त्री भर्तारमति वर्तते।
सेह निन्दा मवाप्नोति पतिलोकाच्च हीयते॥

मनुस्मृति अध्याय ५ श्लोक १६१,

यह श्लोक भी नियोग प्रकरण का है, और इसमें भी यह बताया गया है कि—सन्तान के लोभ से जो स्त्री पति की आज्ञा का उल्लंघन करती है, वह निन्दा को प्राप्त होती है। और पति लोक से वंचित रहती है। इसमें जो स्त्री पति की आज्ञा के विरुद्ध नियोग करती है, उसकी निन्दा है। विधवा तो पति के मरने पर ही होती है, क्यों पंडित जी फिर उसकी आज्ञा का उल्लंघन क्या ?

सकृदंशो निपतति सकृत्कन्या प्रदीयते। मनु० ९/४७

इसमें आपने बताया है कि—कन्या का दान एक ही बार होता है। सो ठीक है, विवाह के बाद लड़की कन्या रहती ही नहीं, जैसे जलने के बाद शरीर नहीं रहता, विवाह के बाद पति के मरने पर विधवा स्त्री रहती है। उसके विवाह पर विचार है। न कि कन्या के दूसरे विवाह पर और मनु जी ने स्वयं कहा है कि—"स्वेच्छया" वह अपनी इच्छा से विवाह कर सकती है। उसके दान की आवश्यकता ही नहीं, निषेध यदि होता है तो इससे आपके वाग्दान के बाद वाग्दान का होता है। जिस पर आप विधवा विवाह के श्लोकों को भी लगाने का व्यर्थ यत्न करते रहते हैं। विधवा विवाह का निषेध नहीं है। चार श्लोक आपने सती होने के लिये दिये हैं, उनके विरुद्ध सुनिये—

मृतानुगमनं नास्ति ब्राह्मण्या ब्रह्म शासनात्।
इतरेषां तु वर्णानां स्त्री धर्मोऽयं परं स्मृतः॥

पैठिनस स्मृति

अन्य स्मृति में देखियें—

उपकारं यथा भर्तुर्जीवन्ती न तथा मृता।
करोति ब्राह्मणी श्रेयो भर्तुः शोक करी चिरात्॥
अनु वर्तेत जीवन्तं नानुयायान्मृतं पतिम्।
जीव्य भर्तुर्हितं कुर्यात् मरणादात्म घातिनी॥

अंगिरा स्मृति में देखिये—

यस्या ब्राह्मण जातीया मृतं पति मनुव्रजेत।
सा स्वर्गमात्म घातेन नात्मानं न पतिं नयेत्॥

अंगिरा स्मृति

ये चार श्लोक पाराशर स्मृति माधव व्याख्या पृष्ठ ५६ बम्बई में छपी सम्वत् १८९८ विक्रमी, में दिये हुए हैं, इन चारों में ब्राह्मणी को सती होने से रोका गया है। और सती होने वाली स्त्री को आत्मघातिनी कहा है। और अन्तिम श्लोक में तो यह भी कहा है कि—न वह स्वर्ग को प्राप्त करती है न पति को, ब्राह्मणी को ही सती होने का इनमें निषेध है। स्मृति के वाक्यों में परस्पर विरोध हो तो वहां वेद के वाक्य से निर्णय होगा। सो सुनिये वेद तो आत्मघात मात्र को भी पाप बताता है। यथा—

असुर्या नाम ते लोका अन्धेन तमसावृता।
तांस्ते प्रेत्याऽपि-गच्छन्ति ये के चात्म हनोजनाः॥३॥

यजुर्वेद अध्याय ४० मन्त्र ३,

जो भी आत्म हनन करते हैं, वह असुरों (पापियों) के लोकों को प्राप्त होते हैं, जो लोक घोर अन्धकार से ढके हुए हैं। "नष्टे मृते···" इस श्लोक पर चतुर्विशंति मत संग्रह और निर्णय सिन्धु की सम्मति आपने बताई कि इन्होंने इस श्लोक को सगाई परक बताया है। सो सुनिये मैं कहता हूं, इन्होंने मूल के विरुद्ध इस अर्थ में लगाया है और आपने स्वयं कहा है कि जो अर्थ इस मूल के विरुद्ध होगा उसे हम नहीं मानेंगे चाहे किसी का भी हो। यही मैं भी कहता हूं कि इन दोनों ने मूल के विरुद्ध अर्थ लगाया है। इसलिए कदापि मानने योग्य नहीं है।

मैंने इस श्लोक में आये हुए पति शब्द और नारी शब्द से सिद्ध कर दिया है कि, यह श्लोक विवाह के बाद का है। इससे पहले का कदापि नहीं, (सप्तपदी) से पहले न वह पति बनता है न वह नारी बनती है। इसका खंडन न हो सका, और न कभी हो सकेगा, अब आगे आप इस पर कुछ न कहेंगे।

मनु के दो श्लोक आपने दिये, उनमें विधवा विवाह का निषेध नहीं है, दो श्लोक मैंने मनु के दिये, उनमें विधवा विवाह का स्पष्ट विधान है। लीजिये अब प्रमाणों की वर्षा होगी, पहले वेद का ही एक मन्त्र और लीजिये!

उदीर्व्व। नार्यभि जीवलोकमिता सुमेतमुपशेष एहि।
हस्त ग्राभस्य दिधिषो स्त्वमेतत्पत्युर्जनित्वमभि संबभूवं ॥१४॥
तैतिरीयारण्यक प्रपाठक ६ अनुवाक मन्त्र १४,

तैतिरीयारण्यक बंगाल एशियेटिक सोसाइटी कलकत्ता से जो सन् १८७२ में प्रकाशित हुई उस में ही इस पर सायणाचार्य जी का भाष्य देखिये, मैं पढ़ता हूं, ध्यान देकर सुनिये—

हे नारी! त्वं इतासुं गत प्राणं एतं पतिं उपशेषे उपेत्य शयनं करोषि उदीर्ष्वअस्मात्पतिसमी पाद्दुत्तिष्ठजीव लोकमभि जीवन्तं प्राणी समूहमभि लक्ष्य एहि आगच्छ। त्वं हस्तग्राभस्य पाणि ग्राहवतः दिधिषोः पुनर्विवाहेच्छोः पत्युः, एतत् जानित्वं जायात्वं अभि सम्बभूव आभि मुख्येन प्राप्नुहि॥

अर्थ :—हे नारी! तू इस मरे हुए पति के समीप सो रही है, उसके समीप से उठ, और इन जीवित पुरुषों को देख, इधर आ। जो इनमें पुनर्विवाह की इच्छा करने वाला हो, उसकी पत्नी बन। मरे हुए के पास सोने से उसके स्थान में सोने का अभिप्राय है, अन्यथा मुर्दे के पास तो स्त्री कोई सोती ही नहीं। वेद के प्रमाण के आगे किसी अन्य प्रमाण की कोई शक्ति नहीं है।

पर आपके पास तो कोई प्रमाण ही नहीं, न वेद का न शास्त्र का, मैंने जो प्रमाण स्मृतियों के दिये हैं, उनको आप बिना किसी आधार के, सगाई के बाद से बताते रहे हैं, मैं पूछता हूं स्मृतियों और पुराणों में "नचप्राप्तातु मैथुनम्" क्यों कहा गया है। विवाह के पूर्व भी आपके मत में मैथुन होता है क्या?

नोट :—शास्त्रार्थ के बीच में ही सनातन धर्म सभा के प्रधान ने खड़े होकर कहा—यह कहां लिखा है, ठाकुर साहब इसका पता दीजिए।

ठाकुर साहब ने कहा—आप थोड़ा-सा समय दीजिये, अभी अनेक प्रमाण दिये देता हूं।

प्रधान जी—ठीक है, आप अगली बारी में अपने ही समय में दीजिए तब तक ढूंढ़ लीजिये।

ठाकुर साहब—बहुत अच्छा, मैं अगली बारी······टन-टना-टन-टन······घंटी बजी।

प्रधान जी ने कहा—आपका समय हो गया है।

पं० कालूराम जी शास्त्री

हम मनु को प्रामाणिक मानते हैं। पाराशर को मनु के विरुद्ध होने से प्रामाणिक नहीं मानते, मनु ने विधवा विवाह का स्पष्ट निषेध किया है। देखिए—

नान्यस्मिन् विधवा नारी नियोक्तव्या द्विजातिभिः।
अन्यस्मिन्हि नियुंजाना धर्मंहन्युः सनातनम् ॥६४॥

मनुस्मृति अध्याय ९ श्लोक ६४,

जो विधवा स्त्री अन्य पुरुष के साथ सम्बन्ध करती है, वह सनातन धर्म को नष्ट करती है।

या पत्यावा परित्यक्ता विधवा वा स्वेच्छया।
उत्पादयेत्पुनर्भूत्वा स पौनर्भव उच्यते ॥१७५॥
सा चेदक्षत योनिः स्याद्गत प्रत्याऽगतापिवा।
पौनर्भवेन भर्त्रासा पुनः संस्कार मर्हति ॥१७६॥

मनुस्मृति अध्याय ९ श्लोक १७५-१७६,

इन श्लोकों में यदि विधवा विवाह की आज्ञा मनु ने दी है तो यह गलती मनु की है, मेरी नहीं!

श्रोताओं में हंसी व हल्की तालियों की गड़गड़ाहट……

यह क्या वेहूदगी है, हंस दिए, तालियां बजाना आरम्भ कर दिया, हम जो बात कहते हैं उसे ध्यान से सुनिए!

हां! तो मैं कह रहा था, कि आप ब्रह्मचर्य को काले पानी की सजा कहते हैं। यह बड़े आश्चर्य की बात है।

यह कौन-सा धर्म है?

सर्व शास्त्रों में ब्रह्मचर्य की महिमा कही गई है, आप बताइये क्या आप नहीं मानते हैं? सती धर्म की बड़ी महिमा है। उसको आप फांसी की सजा कहते हैं।

उदीर्ष्व नार्य्यभिजीव लोकमिता सुमेतमुपशेष एहि।
हस्त ग्राभस्य दिधिषोस्तमेतत् पत्युर्जनित्वमभि सं बभूव ॥१४॥

तैतिरियारण्यक प्रपाठक ६ अनुवाक १ मंत्र १४,

आपने यह वेद का मन्त्र कहा है कि—

इस मन्त्र का तो अर्थ है कि मरे हुए पति की सन्तान को संभाले दिधिषु का अर्थ मरा हुआ पति है। आपका यह अर्थ कौन स्वीकार करेगा कि मरे हुए पति के पास से उठकर जीतों में से किसी के साथ विवाह कर ले, इसे कोई पसन्द नहीं करेगा।

नोट :—इतना कहकर श्री पं० कालूराम जी शास्त्री बैठ गए।

प्रधान जी ने कहा—अभी आपका समय शेष है।

शास्त्री जी ने कहा—ठाकुर साहब को दे दीजिए, ताकि वह मेरे प्रश्नों का उत्तर ठीक तरह से दे सकें।

ठाकुर साहब ने कहा—मुझे उधार लेने व खाने की आदत नहीं है।

साफ क्यों नहीं कहते कि और प्रमाण है ही नहीं, कुछ याद हो तो बोलें, मुझे आपके समय में से समय लेने की कोई आवश्यकता नहीं है।

ज्योंहि शास्त्री जी बोलने के लिए खड़े हुए, टनं-टनं-टन-टन……घंटी बजी, समय हो गया, बैठ जाइए।

श्री ठाकुर अमर सिंह जी शास्त्रार्थ केशरी

आप स्पष्ट कहें कि हम पाराशर स्मृति को प्रामाणिक नहीं मानते और अगर नहीं मानते थे तो उसके प्रमाण पर अब तक बहस क्यों करते रहे ? पहले भी तो आरम्भ में ही साफ इन्कार किया जा सकता था। परन्तु बात मानने या न मानने की नहीं है, महाराज जी ! असली बात तो यह है कि उस पर आपसे बहस चल नहीं सकी, तो यह कहने लगे, पर आप याद रक्खें आपका यह बहाना भी मैं चलने नही दूंगा।

धन्य हो ! भगवान ही आपका भला करे।

अरे महाराज ! तब तो जितने भी क्वारी कन्याओं के विवाह होते हैं, ये भी आपके कथनानुसार विधवा विवाह ही हुए। यह विधवा विवाह का खण्डन हुआ या मण्डन ?

पद्म पुराण के श्लोक मैंने पढ़े, इनके साथ मैंने न काशी के राजा का नाम लिया, न दिव्या देवी का, आपने ऐसे ही कह दिया, मुझे यह बताइये कि, जो व्यवस्था पंडितों ने दी है, वह विधवा विवाह की व्यवस्था है कि नहीं ? उसमें स्पष्ट शब्द हैं—

"पति मृत्युं प्रयात्यस्या नोचेत्संगं करोति च"।

विवाह से पहले वह पति कैसे हुआ ? पति तो सप्तपदी के बाद होता है। पहले मैंने प्रमाण दिये हैं। फिर इसमें शब्द भी तो है कि—

"नोचेत्संगं करोति च"

क्या सगं भी विवाह से पहले ही हो जाता है ?

आपके सनातन धर्म में हो जाता होगा। हमारे में तो होता नहीं।

आपने दिव्या देवी का नाम ले दिया, जिसके एक के बाद एक २१ पति हुए।

इसी व्यवस्था के अनुसार जिसमें "उद्वाहिता" शब्द डंके की चोट कह रहा है कि—यह व्यवस्था विवाह के बाद की है। विवाह से पहले की नहीं।

अन्य प्रमाण जो मैंने दिये, उनको तो आप मान गये प्रतीत होते हैं। उन पर अब कुछ नहीं कहते हैं। मैं तो प्रमाणों की वर्षा करता जाऊंगा ! और—प्रमाण लीजिये—आज से ढाई हजार वर्ष का पुराना ग्रन्थ कौटिल्य का अर्थ शास्त्र है, उसमें लिखा है कि—

"दीर्घ प्रवासिनः प्रव्रजितस्य प्रेतस्य वा भार्य्या सप्ततीर्थान्याकांक्षेत ॥४३॥ संवत्सरं प्रजाता ॥४४॥ ततः पति सोंदर्यं गच्छेत् ॥४५॥ बहुषु प्रत्यासन्नं धार्मिकं भरणसमर्थं कनिष्ठमभार्यं वा ॥४६॥ तदभावेऽप्यसोंदर्यं सपिंड तुल्यंवा ॥४७॥ कौटिल्य अर्थ शास्त्र द्वितीय भाग तृतीय अधिकरण अध्याय ४ वाक्य ४३ से ४७,

अर्थ—जो बहुत देर से परदेश चला गया हो, वा सन्यासी हो गया अथवा मर गया हो, उसकी पत्नी सात ऋतुकाल (सात महीने) प्रतीक्षा (इन्तजार) करे। यदि उसके सन्तान हो चुकी हो तो, एक साल इन्तजार कर ले, उसके पीछे पति के सगे भाई (देवर) से विवाह कर ले, जो अच्छा हो, भरण-पोषण का सामर्थ्य रखता हो। और स्त्री रहित हो, उसको प्राप्त होवे। यदि ऐसा न मिले तो उस खानदान का कोई हो वा उसके समान हो, उसको प्राप्त हो, कहिये कैसा प्रमाण है ? और सुनिये—

अर्जुन ने उलूपी विधवा से विवाह कर लिया, आपसे उसका खन्डन न हो सका, अब दमयन्ती का सुनिये—महाभारत वन पर्व में लिखा है कि—

आस्थास्यति पुनर्भैमी दमयन्ती स्वयंवरम् ।
तत्र गच्छन्ति राजानो राज पुत्राश्चसर्वशः ॥२४॥
तथा च गणितः कालः श्वोभूतेस भविष्यति ।
यदि सम्भावनीयंते गच्छ शीघ्रमरिन्दम ॥२५॥
सूर्योदये द्वितीयं सा भर्तारं वरयिष्यति ।
नहि स ज्ञायते वीरो नलो जीवतिवा नवा ॥२६॥

महाभारत वन पर्व अध्याय ७० श्लोक, २४, २५, २६,

स्वयम्वर का निमंत्रण देने वाले ब्राह्मण ने अयोध्या के महाराज ऋतु पर्ण से कहा कि—भीम की पुत्री दमयन्ती फिर स्वयम्वर करेगी । स्वयम्वर का दिन कल है । आप चल सकें तो अवश्य चलें । सूर्योदय के समय वह दूसरे पति को वर लेगी । क्योंकि नल का पता नहीं है कि वह जीता है या मर गया आदि । यदि उस समय दूसरा विवाह करना पाप माना जाता तो दमयन्ती ऐसा करने को किस प्रकार उद्यत होती, और क्यों कोई स्वयम्वर में आता ?

सोम, गन्धर्व और अग्नि इन देवों द्वारा पुरुष को स्त्री दी गई है । इसलिए इसका एक ही पति हो सकता है । एक बात यह भी आपने खूब कही मैं तो जानकर इस प्रमाण को छोड़ रहा था । लीजिये इस पर भी सुनिये—वेद में है—

सोमः प्रथमो विविदे गन्धर्वो विविद उत्तरः ।
तृतीयो अग्निष्टे पतिस्तुरीयस्ते मनुष्यजाः ॥४०॥
सोमो ददद्गन्धर्वाय गन्धर्वोददग्नये ।
रयिं च पुत्रांश्चादा दग्निर्मह्यमयो इमाम् ॥४१॥

ऋग्वेद मण्डल १० सूक्त ८५ मन्त्र ४०-४१

कन्या का पहला पति सोम देवता, दूसरा पति गन्धर्व देवता, तीसरा पति अग्नि देवता है । चौथा मनुष्य !

यह ऋग्वेद के मन्त्र का आपके अनुकूल अर्थ है । और इसी प्रकार अथर्व वेद में है, कहिये तो वह भी प्रमाण दूं, इस पर स्मृति कहती है कि—

पूर्वं स्त्रियः सुरैर्भुक्ता सोम गन्धर्व वाह्निभिः ॥१९१॥

आत्रि स्मृति श्लोक १९१,

रोमकाले तु सम्प्राप्ते सोमोभुंक्तेथ कन्यकाम् ।
रजोद्रष्ट्वातु गन्धर्वः कुचौ दृष्ट्वा तु पावकः ॥६५॥

सम्वर्त स्मृति अध्याय १२ श्लोक ६५,

वेद वाक्यों से अर्थ निकला है कि—एक के बाद दूसरा फिर तीसरा देव उसके पति बनते हैं । और स्मृति कहती है कि, केवल पति ही नहीं बनते, बल्कि भोगते भी हैं, कहिये एक देव की पत्नी दूसरे ने विवाह ली, और दो से विवाह होने के बाद तीसरे देव ने विवाह ली, विवाह ही नहीं बल्कि भोगी हुई के भी एक नहीं अनेक विवाह होते हैं । देवों में तो पुनर्विवाह भोगी हुई का भी हो जाय और आप मनुष्यों में अक्षत योनि का भी रोकते हैं, आपको क्या कहें ।

पण्डित कालू राम जी शास्त्री

"उदीर्ष्व नारी..................................."

यह मन्त्र तो श्री मान जी नियोग का है । आपने नियोग का विधान करने वाले मन्त्र को विवाह में लगा

दिया। इससे विधवा विवाह सिद्ध नही हो सकता, यह तो नियोग का मन्त्र है। दो मन्त्र जो आपने अथर्ववेद के कहे हैं। उन पर सायणाचार्य का भाष्य ही नहीं है। हमने सायणाचार्य के भाष्य से इंकार नहीं किया, न हम इंकार करते हैं। इन पर तो सायणाचार्य जी का भाष्य है ही नहीं। कौटिल्य के अर्थ शास्त्र का प्रमाण आपने क्यों दिया, वह हमारा धर्म शास्त्र नहीं है।

विधवा विवाह बिल्कुल सनातन धर्म के विरुद्ध है, सारे शास्त्र अनेकों प्रमाणों से भरे पड़े हैं।

मैंने अनेकों प्रमाण व्यभिचार के विरुद्ध और ब्रह्मचर्य की महिमा में दिये। और फिर आप जबर्दस्ती विषय को घसीट कर वहीं लाना चाहते हैं।

नोट:—पश्चात्त शास्त्री जी ने वही पुरानी बातें दोहराई और समय पूरा करके बैठ गये।

ठाकुर अमर सिंह जी शास्त्रार्थ केशरी

"उदीर्ष्व नारी........................"

इस मन्त्र पर पण्डित जी ने कितनी पोजीशनें बदली हैं। पहले कहा कि—इस अर्थ को कौन स्वीकार कर लेगा। जब इस के उत्तर में कहा गया कि—अर्थ तो हमारा नहीं है, आचार्य सायण जी का है, तब अर्थ के विरुद्ध तो कुछ न कह सके, पर यह कह दिया कि—यह दूसरे जन्म का वर्णन है, जब इसकी भी धज्जियाँ उड़ाई गयीं, तब इसको भी छोड़ दिया, अब कहते हैं कि यह मन्त्र तो नियोग का है।

धन्य हो महाराज! "समरथ को नहीं दोष गुसाई"

ये बेचारे श्री सनातन धर्म विधवा विवाह सहायक सभा वाले यदि विधवा विवाह मानते हैं, तो आप उनके घोर विरोधी बने हुए हैं। पर आप नियोग का विधान वेद मन्त्र में बता रहे हैं।

बधाई! आपसे ये आपकी सभा वाले पूछें या न पूछें पर मैंने यह आज नया सनातन धर्म सुना जिसमें नियोग मन्त्रोक्त माना जाता है।

फिर भी विधवा विवाह का विरोध! "गुड़ खायें गुलगुलों से परहेज करें"

पण्डित जी महाराज! सायणाचार्य जी ने तो "पुनर्विवाहेच्छोः" शब्द देकर पुनर्विवाह की इच्छा करने वाले पुरुष के साथ विवाह करने की आज्ञा इस मन्त्र में बताई है।

अथर्व वेद के जो मन्त्र मैंने प्रारम्भ में दिये थे, उन पर पहले कहा, इनका विधवा विवाह देवता नहीं। जब इस प्रश्न की धज्जियां उड़ायी गईं, तो इसे छोड़ दिया, "वित्वा" का अर्थ करते थे, "जान कर" जब मैंने "प्राप्त करके" अर्थ किया और "वित्वा" शब्द को "विद्लृलाभे" धातु से बताया, तो वह भी छोड़ दिया, अब अन्त में आप कहते हैं कि, इन पर तो सायण का अर्थ ही नहीं है।

ठीक है! मैंने इन पर सायण का अर्थ बताया ही कब है? सायणाचार्य का अर्थ इन पर नहीं है। तभी तो सनातन धर्म के प्रसिद्ध पण्डित और जीते-जागते आपके मित्र और साक्षात् आपके पास बैठे हुए कविरत्न पं० अखिलानन्द जी का अर्थ पेश किया है। यदि यह आपको स्वीकार नहीं है तो, कहिये कि—पं० अखिलानन्द जी ने गलत अर्थ किया है। जान-बूझ कर गलत अर्थ किया है, या इनको अर्थ करना आता ही नहीं।

कहिये! पर आप कदापि न कह सकेंगे।

अब तो पण्डित अखिलानन्द जी भी पूर्व पक्ष नहीं बताते हैं। क्योंकि बहुत पीछे की लिखी दूसरी पुस्तक अथर्वालोचन में भी यही अर्थ लिखा हुआ है।

कौटिल्य का अर्थ शास्त्र आपका धर्म शास्त्र तो नहीं है, ठीक है! पर आज से ढाई हजार साल की पुरानी सभ्यता का पता तो उससे लगता है, इसलिए इतिहास प्रमाण तो वह अवश्य हुआ। इस लिए प्रमाण दिया इससे तो इन्कार नहीं कर सकते हैं? और जो इसमें कहा है, इसका मूल नारदीय मनुस्मृति में है, सुनिये—

अष्टौ वर्षाण्युदीक्षंते ब्राह्मणे प्रोषितं पतिम्।
अप्रसूता तु चत्वारि परतोऽन्यं समाश्रयेत् ॥१००॥
क्षत्रिया षट् समास्तिष्ठेदप्रसूता समात्रयम्।
वैश्या प्रसूता चत्वारि द्वेसमे अप्रजा वसेत् ॥१०१॥
न शुद्राया स्मृतः कालो नच धर्म व्यतिक्रम ॥१०२॥

नारदीय मनुस्मृति श्लोक, १००, १०१, १०२,

पति परदेश चला गया हो, तो ब्राह्मणी आठ वर्ष, सन्तान न हुई हो तो चार वर्ष, क्षत्रिया छः वर्ष, सन्तान न हुई हो तो तीन वर्ष, वैश्य की स्त्री चार वर्ष, सन्तान न हुई हो तो, दो वर्ष प्रतीक्षा करे।

इसके बाद दूसरे पति को प्राप्त हो। शूद्र के लिए कोई समय नहीं है। यही कौटिल्य अर्थ शास्त्र में है। उस समय पति के मरने या सन्यासी हो जाने पर भी दूसरा विवाह हो जाये, यह कानून था। स्मृतियों के प्रमाण और लीजिये—शातातपस्मृति

वरश्चेत् कुल शीलाभ्यां न युज्येत् कथंचन।
न मंत्रा कारणं तत्र न च कन्याऽनृतं भवेत् ॥
समाच्छिद्यतु तां कन्यां बलादक्षतयोनिकाम्।
पुनर्गुणवते दद्यादिति शातातपो ऽब्रवीत् ॥
हीनास्य कुल शीलाभ्यां हरन् कन्यां न दोष भाक्।
न मंत्राकारणं तत्र न च कन्या ऽनृतं भषेत् ॥

कात्यायन स्मृति

सतु यद्यन्य जातीयः पतितः क्लीव एववा।
विकर्मस्थः सगोत्रो वा दासो दीर्घामयोऽपिवा।
ऊढ़ाऽपि देया साऽयस्मै स ह्याभरण भूषणा इति ॥

मनुस्मृति के नाम से

पत्यौ प्रव्रजितेनष्टेतेक्लीवे च पतिते पतौ।
पञ्चस्वापत्सु नारीणां पतिरन्यो विधीयते ॥

नारदीय मनुस्मृति, श्लोक, १००,१०१,१०२,

ये सब प्रमाण पाराशर स्मृति की माधव व्याख्या में लिखे हैं। देखो पृष्ठ ६०-६१, छापा बम्बई १८६८ ई०। इनमें स्पष्ट कहा है कि—वर, हीन जाति का हो, पतित हो, नपुंसक हो, विकर्मी हो, कन्या के गौत्र का हो, दास

हो, लम्बी बीमारी में हो, ला पता हो गया हो, अथवा मर गया हो, तो उसके साथ विवाही हुई भी स्त्री की दूसरा कोई योग्य वर देख कर, दूसरा विवाह करदेना चाहिये ।

मैंने चार प्रमाण वेद के दिये। सायण और पंडित अखिलानन्द जी के अर्थ दिये, तीन मनुस्मृति के एक पाराशर स्मृति का एवं नारदीय मनु सहिता के शातातप स्मृति के, कात्यायन स्मृति के, आपस्तम्ब स्मृति आदि के दिये हैं ।

पाराशरी पर आचार्य्य माधव की व्याख्या सुनाई ।

इतिहास में अग्नि पुराण, पद्म पुराण, भविष्य पुराण, महाभारत, और, कौटिल्य के अर्थ शास्त्र के प्रमाण दिये । जिनसे विधवा विवाह स्पष्ट सिद्ध हो गया । श्री पं० निबाहूराम जी की विवाह पद्धति का प्रमाण दिखाया । जिसमें विधवा का विवाह करने की, विधि लिखी है। सर्व प्रकार से विधवा विवाह सिद्ध कर दिया है, आपने मेरे एक भी प्रमाण का खण्डन नहीं किया, जो भी आपत्तियां आपने दी—मैंने सबका खण्डन कर दिया, आप उनमें से किसी भी आपत्ति को फिर नहीं दे सके ।

मैंने बार-बार प्रमाण मांगे पर आप वेद का तो एक भी प्रमाण नहीं दे सके । स्मृतियों के प्रमाण आपने ब्रह्मचर्य की महिमा पर दिये, सती होने की आज्ञा पर दिये, व्यभिचार की निन्दा में दिये और दो प्रमाण जिन पर आपका बड़ा बल था, वे मनुस्मृति के इनमें अन्य वर्णस्थ के साथ नियोग का निषेध है । विधवा विवाह के विरुद्ध आप एक भी प्रमाण नहीं दे सके, मुझे समय और देवें तो मैं वेदों, स्मृतियों, तथा इतिहास के प्रमाणों की फिर झड़ी लगा सकता हूँ । अगर शास्त्री जी महाराज सुनना है तो समय दिलवा दीजिये ।

पण्डित कालू राम जी शास्त्री

यस्याम्रियेत कन्याया: वाचा सत्ये कृते पति: ।
तामनेन विधानेन निजो बिण्देत् देवर: ।।६९।।

मनुस्मृति अध्याय ९, श्लोक ६९,

इसमें लिखा है कि, वाग्दान-सगाई-कुड़माई हो जाने पर यदि कन्या का पति मर जाय तो उस कन्या को किसी ओर को दे दे । सनातन धर्म, विधवा का विवाह नहीं मानता है । यहां पर तो पवित्र सती धर्म हैं उस सती धर्म को आप नष्ट न करें ।

सारे शास्त्रों में व्यभिचार की निन्दा लिखी हुई है । सारे शास्त्र इससे भरे हुए हैं । आप बार-बार प्रमाण मागतें हैं । शास्त्र उठा कर देख तो लीजिये ।

सारे शास्त्रों में व्यभिचार की निन्दा ही मिलेगी । हमने गीता का प्रमाण दिया ही था, जिसमें कहा है कि, स्त्रियाँ दूषित हो जायेंगी, तो वर्ण संकर सन्तान उत्पन्न होगी, आप प्रमाण दिये जायें, और मांगे जायें विधवा को विवाह नहीं करना चाहिये, मैं तो पति के संग जल जाने को पवित्र धर्म मानता हूं ।

आपने कहा कि, रण्डुआं क्यों विवाह करे, सो हम कहते हैं कि, जिस रण्डुए के एक भी सन्तान हो, उसको विवाह नहीं करना चाहिये, आदि ।

इस प्रकार यह आज का शास्त्रार्थ समाप्त होता है । सभी भाई धन्यवाद के पात्र हैं ।

नोट :—श्री ठाकुर अमर सिंह जी ने अन्त में सभा के प्रधान जी से २ मिनट लेकर कहा भाइयो ! वैसे तो मुझे अब बोलने का अधिकार नहीं है, परन्तु प्रधान जी का धन्यवाद है, उन्होंने मुझे कुछ समय दे दिया ।

मेरी प्रार्थना है कि आपने शास्त्रार्थ तो यहां सुना ही है, आप पौराणिक पं० महामान्य श्री अखिलानन्द जी कविरत्न जी कृत पुस्तक "वैध्व्य विध्वंसन चम्पू" के पृष्ठ २७ के लाइन ११ से १६, तक तथा अन्य पृष्ठों को भी अवश्य देख लें। धन्यवाद !!

विशेष:—आगे जो अखिलानन्द जी ने अपनी पुस्तक में उद्धृत किया है, उसका मूल भावार्थ सहित दिया जाता है। देखिय—

[कविरत्न पं० अखिलानन्द जी सनातनी के शब्दों में पढ़िये]

विधवा विवाह के विरोधी कौन-कौन हैं ?

१. ग्रामों के शीघ्र बोधिया पाधे।

२. दवाओं के द्वारा गर्भ गिराने वाले वैद्य।

३. कथा बांचने वाले (कथावाचक)।

४. कन्याओं के ऊपर द्रव्य लेने वाले दलाल।

५. मन्दिरों के पुजारी।

६. तीर्थों के पण्डे।

७. वैष्णव, साधु वैरागी।

८. व्यभिचारी।

९. छोटे-छोटे पण्डित।

१०. विधवाओं से खाने वाले।

वैधव्य विध्वंसन चम्पू (पृष्ठ २७ पंक्ति ११ से १६)

विधवा विवाह विरोधियों की चीख पुकार

नोट :—विष्णु मन्दिर का पुजारी (व्यभिचार दत्त) शोक से ऊंची आवाज करके कहता है—

भो भो सनातन मतानुगतायतध्वं,
सर्वत्र विस्तृतिमयं समुपैति मार्गः।
संरोधने विकसने किल यस्य सर्वा,
गुप्त क्रिया विलयमेष्यति पूजकानाम् ॥१६॥

भावार्थ:—अये ! पौराणिको ! उठो इसके रोकने का कुछ प्रयत्न करो। "यह विधवा विवाह का प्रचार सर्वत्र हुआ जाता है। यदि इसके रोकने का प्रयत्न नहीं करोगे तो मन्दिरों के पुजारियों का अब सारा भेद खुलता है।'

यासां समूह मधिगत्य वयं सुखेन।
नाना रसानुग कटाक्ष निरीक्षणानि ॥
विद्मो मिषेण तुलसी दल पाद वारां।
नाशं समेति विधवा निचयः स सर्वः ॥१७॥

भावार्थः—जिन विधवाओं के बीच में तुलसी दल और चरणामृत के बहाने से जाकर आनन्द पूर्वक आखें लड़ाया करते थे। आज वह विधवायें अपने-अपने घरों की होती हैं। अर्थात सबका विवाह होता जाता है।

शास्त्र प्रमाण निचयै विधवाजनानां,
सिद्धे पुनः परिणये ग्रह कर्मरागात्।
का शंशवे गतधवा विधवा दिनान्ते,
पूजा मिषेण सुलभास्ति परिक्रमासु ॥९८॥

भावार्थः—शास्त्रों के प्रमाण से जब विधवाओं का विवाह सिद्ध हो जायेगा, तो सब विधवायें अपने-अपने घरों के कामों में लग जायेगीं। सायंकाल के समय पूजा के बहाने से मन्दिरों की परिक्रमाओं में कोई न मिला करेगी।

नानोपवास नव पारण भोजनाना-,
मेकान्ततः प्रविलये विधवा विवाहैः।
शोषं गमिष्यति कथं न शरीरमेत्-,
हा दैवमेक पद एव विरुद्धमद्य ॥९९॥

भावार्थः—व्रतों के बाद जो विधवाएं हमको तरह-तरह के माल खिलाकर आप खाया करती थी, आज वह सब विवाह होने पर व्रत छोड़ देगी, तो हमारा शरीर भी माल न मिलने पर सूख जायेगा, हाय! विधाता यह तूने क्या किया।

या मन्दिरोदर कथा श्रवणच्छलेन,
गेहाद्गताऽऽशुपथि मे शयनं समेति।
सा नायकस्य चरणौ निशि पी यन्ती,
नायास्यतीत्यहह खेदमुपैति चेतः ॥१००॥

भावार्थः—जो विधवा मन्दिरों में होने वाली भागवत् आदि कथाओं के बहाने घर से चल कर रास्ते में आये हुए पुजारियों के घरों में आनन्द करती थी, आज विवाह होने पर वह पति के चरण दबाया करेंगी। यह सोच, मेरा जी जल रहा है।

नष्टं गतागतमनेक ग्रहांगनानां,
भ्रष्टं समीहितमनेक विधं खलानाम्।
कष्टं विनष्टमखिलं विधवा जनानां,
हृष्टं न किं वयमहो विधिनाहताः स्मः ॥१०१॥

भावार्थः—अनेक घरों की कुलांगनाओं का आज आना-जाना बन्द हो गया। अनेक प्रकार के दुष्टों का मन चीता भ्रष्ट हो गया, विधवाओं का समस्त कष्ट नष्ट हो गया, कहाँ तक कहें सभी आनन्दित हुए, परन्तु हम लोग पत्थर से मारे गये।

(कविरत्न पं. अखिलानन्द जी कृत "वैध्वंसन चम्पू")

—: ० :—

[छठा शास्त्रार्थ]
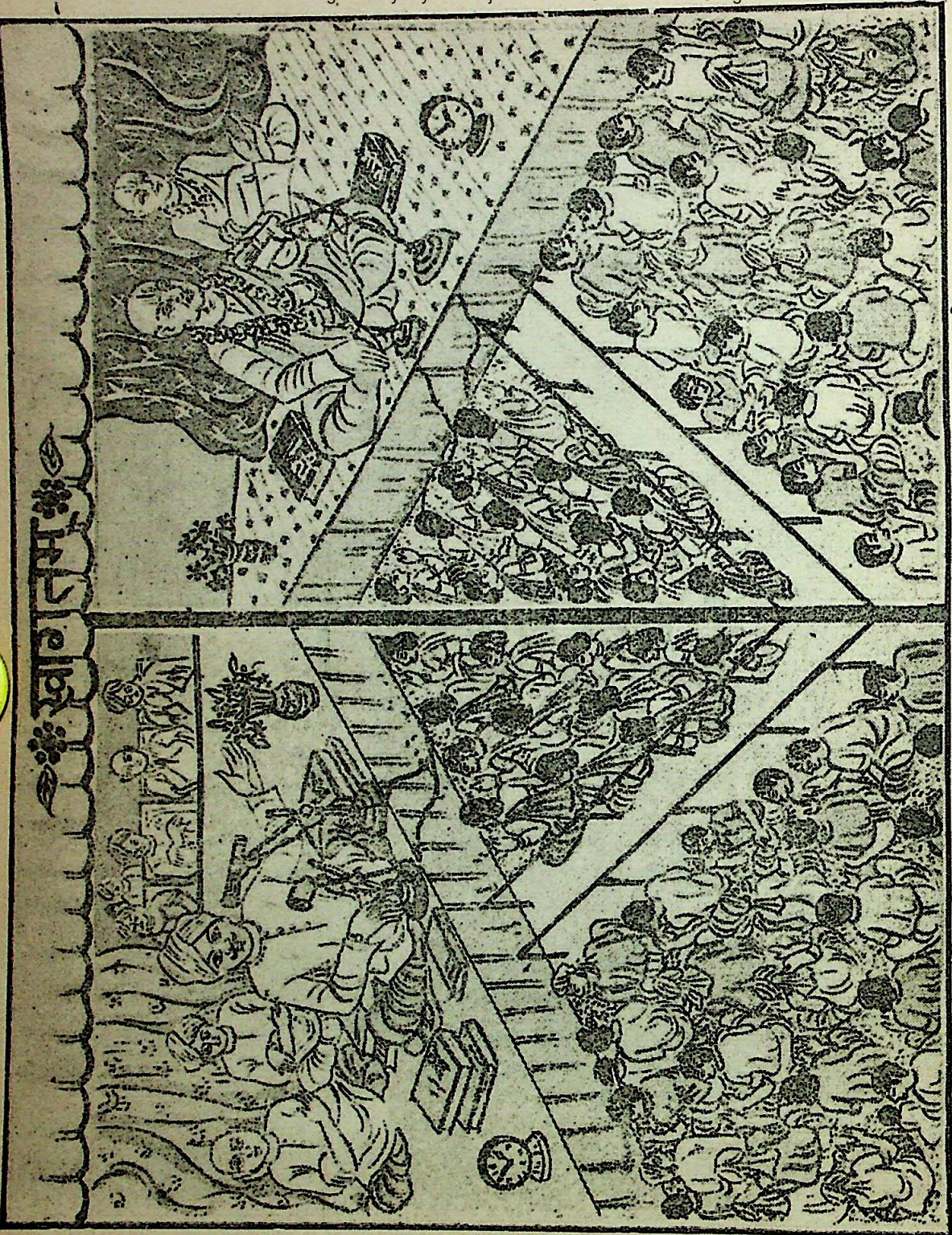
श्री ठाकुर अमरसिंह जी शास्त्रार्थ केशरी तथा पौराणिक पं० माधवाचार्य जी (शास्त्रार्थ करते हुए)।

स्थान : "हरदुआगंज" जिला अलीगढ़, उत्तर प्रदेश

विषय : क्या महर्षि दयानन्द कृत ग्रन्थ वेदानुकूल हैं ?

प्रधान : श्री बाबू प्रीतम लाल जी एम० ए०, एल० एल० बी० (एडवोकेट)

दिनांक : २७ फरवरी सन् १६५० ई०

आर्य समाज की ओर से शास्त्रार्थ कर्ता : श्री ठाकुर अमरसिंह जी शास्त्रार्थ केशरी

एवं

पौराणिकों की ओर से शास्त्रार्थ कर्ता : श्री पं० माधवाचार्य जी शास्त्रार्थ महारथी

शास्त्रार्थ से पहले

जिला आर्य महासम्मेलन उप प्रतिनिधि सभा (अलीगढ़) की ओर से २५, २६, २७, फरवरी सन् १९५० ई० को हरदुआगंज में होना नियत हुआ, यह स्थान अलीगढ़ से १०-१५ किलोमीटर की दूरी पर है। इस सम्मेलन में आर्य समाज की ओर से पौराणिकों को शास्त्रार्थ के लिए खुला चैलैन्ज भी दिया गया था।

उसको स्वीकार करते हुए पौराणिकों ने दो मागें पेश की एक तो यह कि शास्त्रार्थ का विषय!

"क्या स्वामी दयानन्द कृत ग्रन्थ वेदानुकूल हैं?" होना चाहिए!

दूसरी शर्त यह रक्खी कि "शास्त्रार्थ" सम्मेलन के अन्तिम दिन अर्थात २७ फरवरी को हो।

सम्मेलन के कार्य कर्त्ताओं ने दोनों मागें स्वीकार कर ली।

नियत समय पर श्री पं० माधवाचार्य जी दल-बल सहित गले में पुष्पों का हार डाले हुए, शंख–घड़ियाल आदि की ध्वनि से ध्वनित, जय-जयकार से गुञ्जायमान अपनी वेदी पर आ विराजे।

शास्त्रार्थ के प्रधान श्री बाबू प्रीतम लाल जी एम० ए०, एल० एल० बी० (एडवोकेट) ने श्री पं० माधवाचार्य जी को कहा कि मैंने घड़ी मिला ली है। अब आप प्रश्न करके शास्त्रार्थ आरम्भ कीजिये।

पं० माधवाचार्य जी ने कुछ देर तक तो इस बात पर झगड़ा किया कि प्रधान हमारी ओर से भी होना चाहिये।

श्री पं० भूदेव जी पहले ही यह स्वीकार कर चुके थे। कि प्रधान आर्य समाज की ही ओर से होगा।

परन्तु माधवाचार्य जी अपनी अड़ंगायुक्त नीति पर अड़े हुए थे। घड़ियों का टाइम से मिलान कर लिया गया।

समय देखने के लिए विपक्ष वालों की ओर भी व्यक्ति निश्चित्त कर दिया गया।

प्रधान जी ने फिर कहा कि, पं माधवाचार्य जी महाराज! आप शास्त्रार्थ आरम्भ क्यों नहीं करते? समय बीता जा रहा है आप शीघ्र प्रश्न आरम्भ करिये।

माधवाचार्य जी प्रश्न करने से भी घबराते थे। वह जानते थे कि सामने कौन व्यक्ति शास्त्रार्थ करने वाला बैठा हुआ है। जो उत्तर देते हुए भी बिना रगड़े नहीं छोड़ेगा।

नोट:—पं० माधवाचार्य जी पहले भी कई बार श्री पं० अमर सिंह जी शास्त्रार्थ केशरी से परास्त हो चुके थे।

इस लिए प्रश्न न करके इधर-उधर की बातों में समय नष्ट करने का यत्न अपने स्वभावानुसार करते रहे। और श्री प्रधान जी से पूछते थे कि क्या पहले शास्त्रार्थ निश्चय हुआ था? प्रधान जी ने कहा—

हमारी तरफ से तो शास्त्रार्थ का चैलैन्ज किया गया था, तथा बाद में निश्चय भी शास्त्रार्थ का ही हुआ था। परन्तु आश्चर्य है आप बिना किसी बात का पहले पता किये यहां आ विराजे। क्या आपको खुद भी नहीं पता कि आप किस लिए आये हैं, जनता में हंसी...... ....

पं० माधवाचार्य जी

अगर शास्त्रार्थ निश्चय किया गया है, तो फिर आपके विज्ञापन में शंका समाधान क्यों छपवाया गया है?

प्रधान जी—*यह प्रश्न सर्वथा अनुपयुक्त तथा अनावश्यक है।* क्योंकि शंका समाधान इस लिए लिख दिया गया है कि

विषय आपकी ओर से प्रश्नात्मक था। अर्थात शकांयें एक ओर (आपकी तरफ) से ही होनी थी। और समाधान आर्य समाज के पक्ष की ओर से होना था। यदि विषय यह होता कि—स्वामी दयानन्द जी कृत ग्रंथ वेदानुकूल हैं या पुराण? तो फिर दोनों ओर से प्रश्न होते। और दोनों ओर से उत्तर दिये जाते।

परन्तु इसमें प्रश्न एक ओर से ही होने थे तथा दूसरी ओर से उत्तर होने थे। इसी लिए शंका समाधान छपवाया गया था। परन्तु इसका अर्थ यह नहीं कि यह शास्त्रार्थ नहीं। क्योंकि शास्त्रार्थ का विषय निश्चित होता है।

अतः इसका विषय तो पहले से ही निश्चित है। एवं दूसरी बात यह है कि शास्त्रार्थ में समय का दृढ़ प्रतिबन्ध होता है। सौ इसमें वह भी हैं शंका समाधान में न विषय कोई निश्चित होता है। न समय की कोई पावन्दी ही होती है। इस लिए यह शास्त्रार्थ ही था परन्तु उभय पक्ष में प्रश्नोत्तर न होकर एक ओर से प्रश्न तथा दूसरी ओर से उत्तर होनें थे। इसलिए विज्ञापन में शकां समाधान लिखना भी अनुचित न था।

अतः योग्य प्रधान जी ने स्पष्टीकरण कर दिया कि "शास्त्रार्थ में समय का बड़ा बन्धन होता है।" सौ इसमें भी है। शास्त्रार्थ का विषय निश्चित्त होता है। ऐसा इसमें भी है तीसरी बात शास्त्रार्थ में वक्ता उभय पक्ष के होते है। इसमें भी निश्चित हैं।

इस हेतु यह शास्त्रार्थ ही है। हां! प्रश्न आपकी ओर से होनें हैं, और उत्तर आर्य समाज की ओर से इसलिए शंका समाधान लिखा गया है। अन्तर कुछ भी नहीं है। आप अपने प्रश्न आरम्भ करिये। इतने पर भी माधवाचार्य जी ने प्रश्न आरम्भ न किये, समय नष्ट करने के लिए एक उपद्रव और खड़ा कर दिया कि प्रश्न भी लिखित हों, और उत्तर भी लिखित ही दिये जावें यह बात बहुत ही हठ तथा दुराग्रह एवं मूर्खता पूर्ण थी। क्योंकि जो कुछ पांच मिनट में बोला जाता है। उसके लिखने में १०-१५ मिनट तक और जो १० मिनट में बोला जायेगा उसके लिखने में २०-३० मिनट तक लग जाते है। फिर उसको सुनाना भी होता है। इस प्रकार तीन गुणे से चार गुणे तक समय व्यर्थ लगाना हुआ। यह कौन सी बुद्धिमत्ता है। फिर प्रश्नोत्तरों का लिखा होना या छपाना आवश्यक हो तो एक पक्ष अपने प्रश्नों की पुस्तक छपा दे दुसरा पक्ष उसका उत्तर छपा देगा। लोग अपने-अपने घर बैठकर पढ़ लेगें। जनता सुनने को आई हुई है। और दोनों पक्ष के पण्डित यहां लिखने बैठ जायें जनता बैठी हुई एक दूसरे के मुंह को ही ताकती रहे।

"टुक-टुक बीदम् दम् न कशीदम्" सर्वथा बेसमझी है। श्री पं० अमर सिंह जी ने कहा कि पण्डित जी आज तो आपको छुट्टी मिल गयी हैं। कि इतने लम्वे विषय पर चाहे जो कुछ पूछें। आप अपने बहुमूल्य समय को व्यर्थ खो रहे है यदि मुझे प्रश्न करने का समय दे दिया जावे तो में एक मिनट भी व्यर्थ न जाने दूं। तत्काल प्रश्न आरम्भ कर दूं। उत्तर देना तो कठिन है आप प्रश्न करने में भी इतने घबरा रहे हैं। बड़ी कठिनाई से प्रश्न आरम्भ किये गये। और एक बार में ही सात प्रश्न कर दिये। इस पुस्तक में प्रश्नोत्तर लिखने का ढंग यह है कि एक-एक प्रश्न और उसका उत्तर पृथक-पृथक लिखा गया है। और प्रश्न व उत्तर के सम्बन्ध में दोनों ओर से पहली-दूसरी आदि किसी भी बारी में जो कुछ अधिक कहा गया है। यह नहीं किया कि,—पृथक-पृथक लिखा जाये कि अमुक बारी में अमुक ने अमुक विषय में यह कहा, इससे व्यर्थ विस्तार होता है। दोनों वक्ता जिस-जिस क्रम और प्रकार से बोलते रहे उसी क्रम और प्रकार से लिखा जाये तो बहुत विस्तार हो जाय। पुस्तक का आकार तिगुना-चौगुना हो जाये। और लाभ कुछ भी नहीं। एक बात अनेक बार लिखनी पड़े। इसलिए एक-एक प्रश्न और उसका उत्तर तथा उनके साथ सम्बन्ध रखने वाली बातें जो कुछ कही गई हैं, वह उसके साथ लिख दी गई हैं। चाहे वह बात किसी भी बारी में कही गयी हो।

प्रारम्भ

पं० माधवाचार्य जी ने अपनी पहली बारी में सात प्रश्न किये उत्तर के लिए समय १० मिनट था। प्रश्न तो पांच मिनट में पचास किये जा सकते हैं। परन्तु सात प्रश्नों का उत्तर १० मिनट में कैसे दिया जा सकता है। इसलिए एक बार में अनेक प्रश्नों का करना अनुचित था, पर उन्हें औचित्य-अनौचित्य से कोई प्रयोजन नहीं है। श्री पं० अमर सिंह जी ने अपने समय में से एक मिनट पं० माधवाचार्य जी को देकर यह पूछा कि १४-१५ फरवरी को अरनियां में मैंने प्रश्न किये थे। और आपने उत्तर दिये थे। उस समय आपने ही यह नियम बताये थे कि, एक समय में एक ही प्रश्न किया जा सकता है। दूसरे यह कि उत्तर देने के लिए समय का कोई भी प्रतिबन्ध नहीं होता। जब उत्तर पूरा हो जायेगा तभी समाप्त हो जायेगा। चाहे जितना समय लग जाये। कहिये ये दोनों बातें आपने अरनियां में कहीं थी या नहीं? आपने पूछने का जो नया ढंग हमको बतलाया है उस ढंग से में पूछता हूं। आपके पास तो वेद होगें नहीं। मेरे पास से वेद लीजिये। और सिर पर रखकर कहिये कि आपने यह अरनियां में कहा था या नहीं? माधवाचार्य जी ने इस पर स्पष्ट हाँ अथवा ना कुछ न कहके आंय-बांय-शायं द्वारा ही टाल दिया। सारी जनता को पता लग गया कि वहां ऐसा अवश्य कहा होगा। श्री ठाकुर जी ने कहा कि, आपके नियम तो गिरगिट की भांति रंग बदलते है। चलिये में उत्तर देना प्रारम्भ करता हूँ।

बीच में ही श्री माधवाचार्य जी ने कहा कि—'ठीक है! मैं क्रम से प्रश्न आरम्भ करता हूं। आप उत्तर देंगे तो जानूंगा!

शास्त्रार्थ आरम्भ

पं० माधवाचार्य जी

भाइयो! अब शान्ति से बैठो! शास्त्रार्थ आरम्भ हो रहा है, देखो, स्वामी दयानन्द जी महाराज की प्रतिज्ञा है कि हमने जो कुछ भी लिखा है, वह सब वेदानुसार ही लिखा है। उनकी लिखी सन्ध्या जिसे आर्य समाजी करते हैं, वह भी वैदिक कहलाती है। पर उसमें ओ३म वाक् वाक्! ओ३म प्राणः प्राणः आदि मन्त्र स्वामी जी के कपोल कल्पित हैं। यदि वैदिक है तो बताइये किस वेद में और कहां पर हैं?

ठाकुर अमरसिंह जी शास्त्रार्थ केशरी

सुनिये पण्डित जी महाराज! सन्ध्या के अन्दर जिस-जिस वेद का जो जो मन्त्र हैं, उस-उस के साथ उस-उस वेद का पता लिखा हुआ है। "ओ३म वाक् वाक्" आदि वेद के मन्त्र नहीं हैं। हाँ वेदानुसार अवश्य हैं। आप अपनी संध्या में भी देखिये उसमें भी है या नहीं। यदि हैं तो वहाँ किसके कपोल कल्पित हैं? और वहां वेदानुकूल है या वेद विरुद्ध?

पण्डित जी महाराज! आपकी संध्या में यह मन्त्र ज्यों के त्यों विद्यमान हैं। आपकी सन्ध्या में वही मन्त्र वेदानुकूल और वही मन्त्र हमारी सन्ध्या में वेद विरुद्ध?

धन्य हो महाराज! यह कहाँ का न्याय है?

इन मन्त्रों को कपोल कल्पित और वेद विरुद्ध कहना अपने अज्ञान को प्रकट करना है।

कृपा करके वह वेद मन्त्र बोलिये जिसके यह विरुद्ध हो, वह कौन-सा मन्त्र हैं ?

और मैं इनके वेदानुकूल होने में वेद मन्त्र बोलता हूं सुनिये—

प्राणम्मे पाह्यपानम्मे पाहि व्यानंमे पाहि चक्षुर्म उर्व्या विभाहि श्रोत्रं मे-श्लोकय ।
अप: पिन्वौषधीर्जिन्व द्विपादव चतुष्पात्पाहि दिवो वृष्टिमेरय ॥८॥
यजुर्वेद अध्याय १४ मन्त्र ८,

इस मन्त्र में कहा गया है कि, हे प्रभु मेरे प्राणों की रक्षा करो, मेरे नेत्रों को प्रकाशयुक्त करो. मेरे कानों को शास्त्र श्रवण के योग्य बनाओ ।

प्राणश्च मेऽपानश्च मे व्यानश्च मेऽसुश्च मे चित्तं च मऽआधीतं च मे ।
वाक् च में मनश्च च मे चक्षुश्च मे श्रोत्रं च मे दक्षश्च मे बलं च मे यज्ञेन कल्पन्ताम् ॥२॥
यजुर्वेद अध्याय १८ मन्त्र २,

अर्थ—मेरी वाणी मेरा मन, मेरी आंखें, मेरे कान और मेरी चतुराई धर्म के अनुष्ठान से युक्त हों ।

वाङ्म आसन्नसो: प्राणश्चक्षुरक्ष्णो: श्रोत्रं कर्णयो: ।
अपलिता: केशा अशोणादन्ता बहु बाह्वोर्बलम् ॥१॥
ऊर्वोरोजो जङ्घयोर्जव: पादयो: प्रतिष्ठा ।
अरिष्टानि मे सर्वात्मानि भृष्ट: ॥२॥
अथर्ववेद काण्ड १९ सूक्त ६ मन्त्र १ व २,

इसमें कहा गया है कि—हे परमेश्वर मेरे मुख में वाणी, दोनों नथुनों में प्राण, दोनों आँखों में दृष्टि, दोनों कानों में सुनने की शक्ति केश अनभूरे, दाँत अचलायमान और दोनों भुजाओं में बहुत बल हो ।

और मेरी दोनों पैर की जंघाओं में शक्ति हो और टाँगों में वेग हो । मेरे पैरों में दृढ़ता हो, मेरे सब अंग निर्दोष और आत्मा गिरा हुआ न होवे । अर्थात मैं स्वस्थ. प्रसन्न एवं आत्मशक्ति वाला बनूं ।

आपको महाराज जी । अपनी संध्या भी याद नहीं, उसके मंत्रों का भी पता नहीं कि आपकी संध्या में कौन-कौन से मन्त्र आते हैं ? और फिर उनको देखने व याद करने की जरूरत भी क्या हैं, जब केवल जल के छींटे और घण्टी हिलाने से काम बन जावे । महाराज जी कुछ पढ़ा करिये, मेरे पास एक दो नहीं इनकी वैदिक अनुकूलता के लिए पचासों वेद मन्त्र हैं । और आप इनके वेद विरुद्ध होने के सम्बन्ध में एक भी मन्त्र नहीं दिखा सकते हैं ।

पं० माधवाचार्य जी

ठाकुर साहब ! ऐसे चैलेञ्ज हमने बड़े सुने हैं । जब वे मन्त्र दिखलाने पड़ेंगे तो पता लगेगा । कहना और कहकर श्रोताओं के ऊपर अपने पांडित्य का रौब डालना और बात है । आप पचास की बात करते हैं, दस-पाँच ही बोल कर दिखा दें तो हम जान लें, (आवेश में आकर) भाइयों ! पूछो !! इन आर्य समाजियों से, जिन ग्रन्थों को यह वेदानुकूल सिद्ध करने चले हैं । उनमें संस्कार विधि भी है स्वामी दयानन्द ने एक मन्त्र जो संस्कार विधि में लिखा है, वह वेद में कहाँ है, वह मन्त्र इस प्रकार है जिसे बोलकर ये यज्ञोपवीत धारण करते हैं देखिये—

ओं यज्ञोपवीतं परमं पवित्रं प्रजापतेर्यत्सहजं पुरस्तात् ।
आयुष्यमग्रयं प्रतिमुञ्च शुभ्रं यज्ञोपवीतं बलमस्तु तेजः ॥१॥

इस मन्त्र को आर्य समाजी लोग जनेऊ धारण करने के लिए प्रयोग करते हैं। यदि ठाकुर साहब आप इसे वेद में दिखा दोगे तो मैं आपको १००) रुपये इनाम दूंगा।

ठाकुर अमर सिंह जी शास्त्रार्थ केशरी

आपने पंडित जी आज तक ऐसे चैलेञ्ज सुने ही हैं, देखे नहीं, आज देख भी लीजिये—प्रथम तो आप अपने घरों में टटोलिये, आप इतना कष्ट नहीं करते हो तो ध्यान देकर सुनिये—

काशी (वाराणसी) की छपी "बृहत् यजुर्वेदीयसन्ध्योपासनम्" नाम से आपकी सन्ध्या की पुस्तक हैं। उसके पृष्ठ ९ पर, वह मन्त्र इस प्रकार है।

१. ॐ वाक् वाक् २. ॐ प्राणः प्राणः ३. ॐ चक्षुः चक्षुः ४. ॐ श्रोत्रम् श्रोत्रम् ५. ॐ नाभिः ६. ॐ हृदयम् ७. ॐ बाहुभ्यां यशोबलम् १२. ॐ करतल कर पृष्ठे।

दूसरा इस प्रकार छपा है।

१. ॐ भूः पुनातु (शिरसि) २. ॐ भुवः पुनातु (नेत्रयोः) ३. ॐ स्वः पुनातु कण्ठे ४. ॐ महः पुनातु (हृदये) ५. ॐ जनः पुनातु (नाभ्यां) ६. ॐ तपः पुनातु (पादयोः) ७. ॐ सत्यं पुनातु (शिरसि) ८. ॐ खं ब्रह्म पुनातु (सर्वत्र)।

यही वाक्य इसी प्रकार कलकत्ते में छपी "यजुर्वेदीय त्रिकाल संध्या" के पृष्ठ ६-७ पर छपे हुए हैं। ये दोनों पुस्तकें मेरे पास हैं। आप अगर देखना चाहें तो देख सकते हैं। अब इनकी वेदानुकूलता के प्रमाण देखिये।

ओं वाक् वाक्

१. जिह्वा में भद्रं वाङ् महः। यजुर्वेद अध्याय २० मन्त्र ६,

मेरी जीभ कल्याणकारी भोजन करने वाली और वेदों तथा शास्त्रों का ज्ञान का विस्तार करने वाली हो।

२. वाचो में विश्व भेषजः। यजुर्वेद अध्याय २० मन्त्र ३४,

मेरी वाणी सारे विश्व के सारे रोगों और दोषों को नष्ट करने वाली सर्वोत्तम औषधि हैं, तथा हो।

३. वाचे स्वाहा। यजुर्वेद अध्याय २२ मन्त्र २३,

(अच्छी सत्य बोलने वाली) वाणी के लिए स्वाहा।

४. वाचं मे तप्पर्यत। यजुर्वेद अध्याय ६ मन्त्र ३१,

मेरी वाणी को तृप्त करिये।

५. वाचे में वर्चोदा वर्चसे पवस्व। यजुर्वेद अध्याय ७ मन्त्र २७,

मेरी वाणी में वर्चस, शक्ति, सामर्थ्य और पवित्रता दीजिये।

६. वाचं मे पिन्व। यजुर्वेद अध्याय १४ मन्त्र १७,

मेरी वाणी को अच्छी शिक्षा से युक्त कीजिये।

७. वाक् च मे............यज्ञेन कल्पन्ताम्। यजुर्वेद अध्याय १८ मन्त्र २,

मेरी वाणी को ज्ञान, गमन, प्राप्ति और दान से युक्त कीजिये।

८. वाक् यज्ञेन कल्पताम् । यजुर्वेद अध्याय १८ मन्त्र २९,
मेरी वाणी यज्ञ कार्यों में समर्थ हो ।

९. वाचं ते शुन्धामि । यजुर्वेद अध्याय ६ मन्त्र १४,
मैं तेरी वाणी को शुद्ध करता हूं ।

१०. वाक् त आप्यायताम् । यजुर्वेद अध्याय ६ मन्त्र १५,
मैं तेरी वाणी को सर्व गुणों से युक्त करता हूं ।

मैंने पंडित जी आपको इतने प्रमाण केवल ओं वाक् वाक् पर दिये । आप कम से कम विरोध में एक ही मन्त्र बोल दीजिये ।

आपने एक मन्त्र संस्कार विधि में से पढकर चैलेञ्ज किया कि, अगर इस मन्त्र को वेद में दिखा दो तो १००) रु० इनाम दोगे । आपको पण्डित जी महाराज ! किसने बता दिया, कि यह मन्त्र वेद का है, महर्षि दयानन्द जी ने कहाँ लिखा है कि यह मन्त्र वेद का है, यदि आप इसके साथ यह लिखा दिखा दो कि, यह वेद का मन्त्र है, तो मैं आपको नगद ५००) रु० इनाम दूंगा । जब ऋषि दयानन्द जी ने इसको वेद मन्त्र बताया ही नहीं, तब आपको इसे वेद में पूछने का क्या अधिकार है ?

आप यह कहिये कि यह मन्त्र वेद विरुद्ध है, तब जानें, महाराज जी आप भी तो इसी से यज्ञोपवीत (जनेऊ) पहनते और पहनाते हैं । आपको यह भी नहीं पता कि यह मन्त्र कहाँ का है ।

आप हमसे जिज्ञासु बनकर पूछिये फिर हम बतायेंगे, आगे में समय मिलने पर और भी प्रमाण दूंगा ।

पं० माधवाचार्य जी

इमं त उपस्थं मधुना सं सृजामि प्रजापतेर्मुखमेतत् द्वितीयम् ।
यह मन्त्र किस वेद का है ?

ठा० अमर सिंह जी शास्त्रार्थ केशरी

पण्डित जी महाराज आप ऐसे-ऐसे प्रश्न करके क्यों समय बर्बाद करते हो । अगर कुछ आता-जाता नहीं है तो क्यों शास्त्रार्थ करते हो, यह मन्त्र किसी भी वेद का नहीं है, कौन कहता है कि, यह वेद का मन्त्र है, किस ग्रन्थ में इसके नीचे वेद का पता दिया है । न कहीं लिखा न कोई कहता है, तो फिर आप यह पूछिये कि यह कहां का है, जब आपको पता ही नहीं है । जब न हम कहते न ऋषि दयानन्द जी ने कहीं इस मन्त्र को वेद का लिखा, तो आप वेद में पूछने वाले कौन होते हो ? जिज्ञासु बनकर पूछिये, आपको बता दिया जावेगा ।

पर ठीक है, और प्रश्न आप कर भी क्या सकते हैं, ऐसे-ऐसे प्रश्नों से ही प्रश्नों की सूची तैयार कर रक्खी है । इस सूची को बढ़ाना चाहो तो मनुस्मृति, दर्शन, ब्राह्मण ग्रन्थ और उपनिषद आदि ग्रन्थों के प्रमाण सत्यार्थ प्रकाश आदि ग्रन्थों में ऋषि दयानन्द जी ने दिये हैं, एक-एक करके सभी को वेदों में पूछिये, समय भी पूरा हो जावेगा, आपको बुलाने वाले सज्जन भी खुश हो जावेंगे, कि पं० जी ने सैकड़ों प्रश्न कर दिये, धन्य हो आपकी बुद्धि को !

आपने यह क्यों समझ लिया कि, हम आर्य लोग केवल वेद ही को प्रमाण रूप मानते हैं । दूसरे किसी ग्रन्थ को नहीं ।, ऐसा तो न हमने कभी कहा — न महर्षि दयानन्द जी ने कहीं ऐसा लिखा है । सत्यार्थ प्रकाश के मुख पृष्ठ पर ही देखिये वहां लिखा है कि

"वेदादि विविध सच्छास्त्र प्रमाण समन्वितः"

और संस्कार विधि के आरम्भ में ऋषि के बनाये अनेक श्लोकों में से यह भी है।

"वेदादि शास्त्र सिधान्तमाध्याय परमादरात्"

इनका अभिप्रायः स्पष्ट है कि, हम केवल वेद ही नहीं, वेद और वेदानुकूल सर्व सत्य शास्त्रों को मानते हैं। ब्राह्मण, आरण्यक, उपनिषद, दर्शन, मनुस्मृति, धर्म सूत्र, ग्रह्य सूत्र, रामायण, महाभारत, आदि।

इन ग्रन्थों के यदि कहीं कोई भाग वेद विरुद्ध है, तो उसे छोड़कर वेदानुकूल को हम स्वीकार करते हैं। आपका भी दावा वेदानुकूल के ही मानने का है।

"इमं त उपस्थं मधुना संसृजामि…………।"

यह मन्त्र आपकी विवाह पद्धति में भी विद्यमान है, वेद विरुद्ध मानते हो तो क्यों नहीं निकाल फेंकते, आपको अगर पता नहीं है, तो हमसे जिज्ञासु भाव से पूछिये।

नोटः—मैं अपने नये शास्त्रार्थियों के लिए इनके पते नीचे दिये देता हूं। देखें तथा शास्त्रार्थ की तैयारी किया करें।

१. ओं प्राणः प्राणः तथा ओं वाक् वाक् इनकी पूर्ण जानकारी हेतु मेरी पुस्तक "सन्ध्या के दो मन्त्रों की व्याख्या" जिसको अमर स्वामी प्रकाशन विभाग ने ही प्रकाशित किया है, मूल्य केवल पचास पैसे मंगाकर पढ़िये।

२. "ओं यज्ञोपवीतं परमं पवित्रं…………"

तथा

इमं त उपस्थं मधुना…………

पारस्कर ग्रह्य सूत्र, २।२।११,
मन्त्र ब्राह्मण १।१।३,

पं० माधवाचार्य जी

ठाकुर साहब इस प्रकार अपनी बातों को वेदानुकूल सिद्ध करेंगे तो पांच वक्त की नमाज भी सिद्ध हो जावेगी। और हमारे वेद तो ग्यारह सौ इकत्तीस हैं। हमारे सारे सिद्धान्त और सारे मन्त्र हमारे वेदों में निकल आवेंगे। आपके वेद तो केवल चार ही हैं, उनमें आप क्या-क्या निकालते फिरोगे?

ठा० अमर सिंह जी शास्त्रार्थ केशरी

पांच वक्त की नमाज वेदानुकूल आपके सम्मुख सिद्ध हो जावेगी, जो वेदों को कभी नहीं पढ़ते हो। हम तो वेदों को पढ़ते हैं। जहां कहा है कि—

उपत्वाग्ने दिवे दिवे दोषावस्तर्धिया वयम्। नमो भरन्त एमसि ॥७॥

ऋग्वेद मण्डल १, सूक्त १, मन्त्र ७,

इस मन्त्र में स्पष्ट दो काल की सन्ध्यां हैं। पांच वक्त की नमाज इसके विरुद्ध हैं, ११३१ वेदों की डींग आप बहुत मारते हैं। मैं कहता हूँ कि, ११०० तो रहने दीजिये वह तो माफ करता हूं। आप केवल ३१ वेद ही बतलाइये कि वह कहां तथा किस प्रेस में छपे हैं। और कहाँ मिलते हैं? या केवल डींग मारने को ही ११३१ बताते रहते हैं। कभी देखे-पढ़े और सुने भी हैं। मेरा दावा है कि, आपने कभी इनके नाम भी नहीं सुने, आपके वह वेद नष्ट हो गये, उनके साथ, साथ आपका सम्प्रदाय भी नष्ट हो गया, आपको भी हमारे चारो वेदों की ही शरण लेनी पड़ती हैं।

यह आश्चर्य है कि, आपको यज्ञोपवीत वाला मन्त्र वेदों का है अथवा कहां का ? यह भी पता नहीं !

महाराज जी यह वचन न तो चारों वेदों का है, तथा न ११३१ वेदों में से हैं। यह तो पारस्कर ग्रह्मसूत्र का वचन है। और "इमं त उपस्थं···" इत्यादि यह वचन मन्त्र ब्राह्मण का है, आपने व्यर्थ में इन्हें वेदों में पूछकर समय नष्ट किया ओं वाक्-वाक् आदि का आधार मैंने बता ही दिया।

पं० माधवाचार्य जी

ठाकुर साहब अगर आप इन सबको वेदानुकूल मानो तो सर्वत्र वेद वाक्य दिखाओ, और स्वामी दयानन्द जी को चाहिये था कि, सर्वत्र वेद वाक्यों को ही लिखते। अपने और अन्य ग्रन्थों के वाक्य लिखकर उन्हें वेदानुकूल कहने का क्या अर्थ है ?

ठा० अमर सिंह जी शास्त्रार्थ केशरी

वाह ! वाह !! पण्डित जी धन्य हो, अब तो भगवान ही कृपा करेंगे तो कल्याण हो सकता है। पं० जी महाराज आप यह बताइये कि अगर वेद वाक्य ही लिखते तो उनको वेदानुकूल क्यों कहते ? वह तो वेद वाक्य ही होते, वेदानुकूल क्या ? वेदानुकूल कहने का तो अभिप्राय ही यह हैं कि, वह वेद के वाक्य नहीं है वेद वाक्यों के आधार पर अन्य वेदानूकूल ग्रन्थ के वाक्य हैं।

महाराज जी !

सोच कर तो कुछ कहा करिये।

यदि मनुस्मृति में मनु जी के वाक्य न होते, और उनकी जगह पर वेद वाक्य, ही वेद वाक्य होते, तो वह वेदानुकूल मनुस्मृति क्यों होती, वह वेद ही होता, और सत्यार्थ प्रकाश में यदि ऋषि के अपने और अन्य शास्त्रों के वाक्य न होते, और वेद वाक्य ही होते तो उसका नाम सत्यार्थ प्रकाश क्यों होता ? वेद ही होता।

वेद में बीज रूप मूल विधान होता है, और शास्त्र में तदनुकूल विस्तार से विधि और व्याख्या होती है। वह ऋषियों के अपने वाक्य होते हैं, वेदानुकूल तो है ही वह जो वेद वाक्य, न हों पर वेद से अविरुद्ध हों।

पं० माधवाचार्य जी

सत्यार्थ प्रकाश में स्वामी जी ने, चोटी कटाने का उपदेश देकर ईसाइयत का प्रचार किया है, दिखाइये चोटी कटाना किस वेद में लिखा है।

ठाकुर अमर सिंह जी शास्त्रार्थ केशरी

पं० जी महाराज आर्य समाज ने लाखो मुसलमानों को और सहस्त्रों ईसाइयों को शुद्ध करके उनके शिरों पर चोटियां रखवाई है।

लाखों ही नहीं बल्कि करोड़ों हिन्दुओं को ईसाई और मुसलमान बनने से रोक कर करोड़ों चोटियों की रक्षा की, ऋषि दयानन्द जी की कृपा से करोड़ों चोटियों की रक्षा हुई, उनको ईसायत का प्रचारक बताना और चोटी कटाने का उपदेश उन्होंने दिया ऐसा कहना कृतघ्नता हैं और मिथ्या दोषारोपण हैं। किसी विशेष अवस्था में चोटी कटाना और बात है। संन्यासी चोटी भी कटा देते हैं, और यज्ञोपवीत भी उतार देते हैं। वह ईसाई अथवा मुसलमान नहीं कहलाते हैं।

फोड़े, फुन्सी, खाज या चेचक की बहुतायत में यज्ञोपवीत भी उतार दिया जाता है। और शिर में फोड़े आदि होने पर चोटी भी कटवा दी जाती है। ऐसा करने से कोई भी ईसाई नहीं बन जाता। "केशान्त संस्कार" के प्रकरण में इस प्रकार है कि, अगर शीत प्रधान देश हो तो कामाचार हैं। चाहे जितने केश रक्खे।

जो अति उष्णदेश हो तो, सब शिखा सहित छेदन करा देना चाहिये। साधारण उष्ण नहीं, उष्ण देश भी नहीं, अति उष्ण देश हो तो, यहां देश विशेष का निर्देश है। काल और पात्र भी देखना चाहिये। यह देखना चाहिये कि शिखा रखने से उष्णता अधिक होगी और बुद्धि कम हो जाने का भय हो तो सब छेदन करा देना चाहिये। सीधी सी बात है, विशेष अवस्था हो तो कटानी चाहिये, वैसे ही नहीं।

जैसे, फोड़े फुन्सी आदि जो उष्णता से होते हैं, होने सम्भव हों तो यह शर्त है, इसके लिए प्रमाण की क्या आवश्यकता है? और प्रमाण अवश्य ही चाहिये तो लीजिये, आपकी कात्यायन स्मृति में लिखा है कि—

स शिखं वपनं कार्यमास्नानांद्ब्रह्मचारिणा ॥१४॥

कात्यायन स्मृति खण्ड २५, श्लोक १४,

शिखा सहित बालों को काट देना चाहिये।

और भी देखिये तथा नोट करते जाइये।

मुण्डोवा जटिलो वा स्यादथवा स्याच्छिखा जटः ॥२१९॥

मनुस्मृति अध्याय २२ श्लोक २१९,

इस पर कुल्लूक भट्ट की टीका देखिये—

"मुण्डित मस्तक शिरा केशो जटावान्वा शिखैव वा जटा जाता यस्य"

अर्थात या तो शिखा सहित बाल कटा कर मुण्डित मस्तक हो या जटायें रखा लें। या चोटी रखा लें, यह सब ब्रह्मचारी के लिए सुविधाएं दी हैं। जिससे पढ़ने में कठिनाई न पड़े। वेद में भी अगर देखना चाहो तो लो मैं वेद का भी प्रमाण प्रस्तुत करता हूं।

"कुमारा विशिखाइव" यजुर्वेद अध्याय १७ मन्त्र १८,

इस पर उव्वट का भाष्य सुनिये—

"विगत शिखा कर्त्तं मुण्डा"।

अर्थात शिखा सहित सर्व मुण्डित,

आपके ही आचार्य महीधर का भाष्य देखिये—

"विशिखा शिखा रहिता मुण्डित मुण्डा"

अर्थात शिखा रहित शिर मुड़े हुए।

नोट—केशान्त संस्कार ब्राह्मण के बालक का १६वें वर्ष में और क्षत्रिय के बालक का बाईसवें में और वैश्य के बालक का चोबीसवें वर्ष में होता है।

पं० माधवाचार्य जी

ठाकुर जी आप कहां तक वकालत करोगे, महर्षि दयानन्द ने सत्यार्थ प्रकाश में ही लिखा है कि प्रसूता स्त्री छः दिन दूध पिलाये, पश्चात धाई पिलाया करे। यह सत्यार्थ प्रकाश में वेद विरुद्ध लिखा है। जो बालक किसी दासी आदि का दूध पी लेता था, तो उसका शिर काट दिया करते थे।

ठा० अमर सिंह जी शास्त्रार्थ केशरी

सत्यार्थ प्रकाश में यह कहीं नहीं लिखा कि, प्रसूता माता दूध पिलावेगी तो नरक में जावेगी, या पापिनी हो जायेगी, वहां तो यह लिखा है कि—प्रसूता का दूध छः दिन तक बच्चे को पिलावें। पश्चात् धाई पिलाया करे परन्तु धाई को उत्तम पदार्थों का खान-पान-माता-पिता करावें।

जो कोई दरिद्र हो धाई को न रख सके तो वे गाय वा बकरी के दूध में उत्तम औषधि जो कि बुद्धि, पराक्रम आरोग्य करने हारी हों, उनको शुद्ध जल में भिगो औटा छानकर दूध के बराबर जल मिलाके बालक को पिलावें। और जहां धाई, व गाय, बकरी आदि का दूध न मिल सके वहां जैसा उचित समझें वैसा करें।

प्रसूता क्यों न पिलावे इसका कारण लिखते हैं कि—

क्योंकि, प्रसूता स्त्री के शरीर के अंश से बालक का शरीर होता है। इसी से स्त्री प्रसव के समय निर्बल हो जाती है। इस लिए प्रसूता स्त्री दूध न पिलावे, कितनी सीधी, सच्ची बुद्धिमत्ता की बात है। इस पर भी आप आक्षेप करते हैं। बड़ा आश्चर्य है। यदि आप इसको वेद विरुद्ध कहते हैं, तो वेद का मन्त्र बोलिये, बतलाइये वेद के किस मन्त्र के विरुद्ध है। इसके विरुद्ध वेद का कौन सा मन्त्र है। आप तीन काल में भी नहीं बता सकेंगे। वेद के कोई भी मन्त्र इसके विरुद्ध नहीं है। इससे भी सिद्ध हो गया कि, यह वेदानुकूल अर्थात् वेद के अविरुद्ध है। यदि प्रमाण ही चाहिये तो सुनिये और नोट करिये—

"नक्तोषसा समनसा विरूपेधापयेते शिशुमेकं समीची" ॥२॥

यजुर्वेद अध्याय १२ मन्त्र २,

इस मन्त्र में कहा है, जैसे दो भिन्न-भिन्न रूप वाली स्त्रियां माता और धाई एक बालक को समान मन से दूध पिलाती हैं। वैसे ही रात्रि और उषा दिवस रूपी सन्तान को सुख रूप दूध पिलाकर पालती हैं। यहां धाई का दूध पिलाना स्पष्ट लिखा है। और सुनिये आपके चौबीस अवतारों में से एक अवतार धन्वन्तरि जी ने अपने शिष्य सुश्रुत को कहा है, कि बालक को दूध पिलाने वाली धाइयें हों। जिनका दूध प्रसन्नता को देने वाला हो।

"ततो यथा वर्णं धात्रीमुपेयात्"

पश्चात् समान वर्ण वाली धाई नियुक्त करे।

आगे यह भी बताया है कि—कैसी धायी का दूध न पिलाया जावे। देखो—

सुश्रुत शारीरिक स्थान अध्याय १० वचन ३८ व ३९ तथा चरक शारीरिक स्थान अध्याय ८ वाक्य १०७ व १०८,

"अथ ब्रूयात् धात्री मानयतेति" अर्थात् (कोई यह कहे कि धाई को लाओ)।

समानवर्णा यौवनस्थां.........जीविद्वत्सां पुं-वत्सां दोग्ध्रीम स्तनस्तन्यप बुपेतामिति ॥

अर्थात् समान वर्ण वाली युवती.........जिसका बालक जीता हो, और लड़के वाली हो, जिसके स्तनों में बहुत-सा दूध हो।

और सुनिये आपके पांचवे वेद गरुड़ पुराण में भी कहा है—

बिदारीकन्दस्वरसं, मूलं, कार्पासजं तथा।
धात्री स्तन्यविशुध्यर्थं मुञ्जयूषो रसाशिनी ॥१३॥

गरुड पुराण आचार कांड अध्याय १७२ श्लोक १३,

इसमें कहा है कि, बिदारी के फूलों का रस, कपास की जड़ तथा मूंग का यूष धायी के दूध को शुद्ध करने के लिए रसायन है। इसके साथ ही सत्यार्थ प्रकाश की भाँति यह भी लिखा गया है कि, यदि धाई न मिले तो बकरी या गाय का दूध बालक पिये।

"स्तन्याभावे पयश्छाग गव्यं वातद्गुणं पिबेत् ।।१५।।

कहिए यह पुराण वेदानुकूल है, तथा महर्षि व्यास रचित हैं। उनमें वही है जो सत्यार्थ प्रकाश में है, वाल्मीकीय रामायण में श्री रामचन्द्र जी की धाई का होना स्पष्ट ही लिखा हुआ है। बतलाइये इतिहास में धाई का दूध पीने वाले कौन-से बालक का शिर काटा गया, चित्तौड़ के महाराणा सांगा (संग्रामसिंह) के पुत्र उदयसिंह के लिए भी एक धाई थी, जो सारे इतिहास में "पन्ना" धाई के नाम से प्रसिद्ध है।

पं० माधवाचार्य जी

ठाकुर साहब स्वामी दयानन्द जी ने संस्कार विधि में लिखा है कि, गर्भाधान के समय स्त्री, पुरुष, नाक के सामने नाक, और मुख के सामने मुख करें। और प्रसूता (जच्चा) योनि संकोचन करें। यह स्वामी जी ने कैसे लिखा है? यह वेद विरुद्ध है।

ठा० अमर सिंह जी शास्त्रार्थ केशरी

इस पर आपको क्यों शंका हुई। यही उचित विधि है। आप क्या पीठ पीछे मुंह करना पसन्द करते हैं?

श्रोताओं में हंसी...........

स्वामी जी ने सर्व सद्ग्रन्थों में इस विषय में ऐसा ही लिखा देखा। और बुद्धि के अनुकूल देखकर आवश्यकतानुसार लिख दिया, वैसे तो प्रत्येक समझदार और भला आदमी इसी विधि को पसन्द करेगा।

इसके लिए प्रमाण की आवश्यकता नहीं, फिर भी मैं झूठे को घर तक पहुंचाता हूं। लीजिये प्रमाण सुनिये—

न च न्युब्जां पार्श्वगतां वा संसेवेत न्युब्जाया वातो बलवान् स योनिं पीडयति।
पार्श्वगताया दक्षिणे पार्श्वे श्लेष्मा संच्युतोऽपि दधाति गर्भाशयं ।।
वामे पित्तं पार्श्वे तस्यां: पीडितं विदहति रक्त शुक्रम् तस्मदुत्ताना सती बीजं ग्रहणीयात्।
तस्याहि यथा स्थानमव तिष्ठन्ते दोषा:। पर्याप्ते चैनां शीतोदकेन परिषिञ्चेत् ।।

चरक शारीरिक स्थान अध्याय ८ वाक्य ७,

अर्थ—स्त्री ओंधे लेटकर या बायें अथवा दाहिने करवट लेकर सहवास न करे, क्योंकि ओंधी होने से बलवान वायु योनि को पीड़ित करता है। दाहिने करवट लेटकर गर्भाधान करने से कफ टपककर गर्भाशय को आच्छादित कर देता है। और बाई करवट ले कर सहवास करने से पीड़ित हुआ चित्त रज और वीर्य को दूषित कर देता है। इसलिए सीधी उतान (चित्त) लेटकर स्त्री पुरुष के वीर्य को ग्रहण करे आदि।

गर्भाधान पाप कर्म नहीं है। वह परम पवित्र और पुण्य कर्म तथा यज्ञ है, पापियों की दृष्टि में इसका वर्णन अश्लील है, और अपवित्र है, परन्तु शुद्ध अन्त:करण ऋषियों की दृष्टि में वह आवश्यक वर्णनीय विषय है।

इसलिए ऋषियों ने इसका नि:संकोच वर्णन किया है। यथा—

अथ च यामिच्छेद्दधीतेति तस्यामर्थंनिष्ठाय मुखेन मुखं संधायापन्यभि प्राण्याद् इन्द्रियेण ते रेत सारेत आद्यामिति गर्भिण्येव भवति ।।११।।

वृहदारण्यक उपनिषद् अध्याय ६ ब्रह्मण ४ मन्त्र ११,

अर्थ—इसके बाद वह पुरुष जिस स्त्री के प्रति चाहे कि वह गर्भ को धारण करे। तो उस स्त्री की योनि में अपनी प्रजनन इन्द्रिय को रखकर मुख से मुख को मिलाकर प्रवेश कर उद्दीपन करे। और ऐसा कहे कि वीर्य दान देने वाली अपनी इन्द्रिय के साथ तेरे गर्भाशय में वीर्य को स्थापित करता हूं। तब वह स्त्री अवश्य गर्भवती होती है ? कहिये पण्डितजी महाराज अब और इससे स्पष्ट क्या प्रमाण चाहिये ? आप पूछते हैं लिखा क्यों है ? लिखा यों कि कामी पुरुष काम वासना के वश में होकर अनेक प्रकार की, कुचेष्टा और मैथुन में कुत्सित रीतियां बरतते हैं। धर्मात्मा पुरुष गर्भाधान के समय यह ध्यान रखें कि, हम काम वासना पूर्ण करने के लिए सहवास नहीं कर रहे हैं।

प्रत्युत हमारा उद्देश्य उत्तम सन्तान उत्पन्न करने का है। यदि इसके विपरीत करेंगे तो सन्तान कुरूप, बेढ़ंगी उत्पन्न होगी। आपको याद नहीं कि आपके एक अवतार व्यास जी ने अम्बिका के साथ नियोग करते हुए समागम किया वह भय से उनके साथ आँख न मिला सकी, इस कारण अन्धा धृतराष्ट्र पैदा हुआ।

अत: आंख के सामने आंख होनी ही चाहिए, आपके पुराणों में तो बहुत से उलटे-पुलटे गर्भाधान मौजूद हैं, देखिये तथा नोट करिये—

१. सूर्य ने संज्ञा की नाक में गर्भाधान कर दिया, तो दो अश्विनी कुमार उत्पन्न हुए।

२. शिवजी ने अग्नि के मुख में गर्भाधान कर दिया।

३. अंजना के कान में गर्भाधान हो गया।

४. युवनाश्व राजा-पुरुष को गर्भाधान हो गया।

गर्भाधान कैसे तथा कहाँ से हुआ, यह पण्डित जी आप जाने या आपके धर्मशास्त्र, उसकी कोख फाड़कर मान्धाता को निकाला गया, इसीलिए ऋषियों ने विधि लिखी कि, कहीं लोग ऐसे-ऐसे गलत गर्भाधान न करने लग जायें, आपके अवतार धन्वन्तरि ने सुश्रुत में बताया है कि, सन्तान के नपुंसक (हिजड़ा अथवा हिजड़ी) उत्पन्न होने का कारण विपरीत ढंग से गर्भाधान करना है। यथा स्त्री की भाँति पुरुष वा पुरुष की भाँति स्त्री क्रिया करके सम्भोग करें। तो सन्तान हिजड़ा या हिजड़ी पैदा होगी।

हाँ ! प्रसूता का योनि संकोचन शेष रहा सो सुनिये, प्रसूता स्त्रियों के लिए सारे संसार में अनेक प्रकार की चिकित्सा की जाती है।

जिससे बालक उत्पन्न होने से विकृत हुई योनि ठीक हो जावे। घर-घर में सभी व्यक्ति शराब आदि में मुलायम वस्त्र या रूई आदि भिगो-भिगोकर योनि में रखते हैं। डाक्टर लोग प्रसूता को शराब के अन्दर बिठाते भी हैं।

परन्तु आपको क्या प्रयोजन ?

आपको तो येन-केन प्रकारेण आर्य समाज की हंसी उड़ाना अभीष्ट है, सौ भाँति-भाँति की आकृतियों को बनाकर कुछ कुचेष्टायें करके अपने भक्तों को प्रसन्न करना है। अर्थ हो चाहे अनर्थ।

आपने योनि संकोचन का नुस्खा वेद में से पूछा है। मैं आपके घर में से ही दिखाये देता हूं। देखिये आपका पाँचवा वेद (पुराण) क्या कहता है—

शंख पुष्पी, जटामासी, सोमराजीच फल्गुकम् ।
माहिषं नवनीतं च गुरो कारणमुत्तमम् ॥६
सनतानी च पक्षाणि क्षीरेणाज्येन पेषयेत् ॥७॥
गुटिकां शोधितां कृत्वा स्त्री योन्यां प्रवेशयेत् ।
दशवार प्रसूतापि पुनः कन्या भविष्यति ॥८॥

गरुड पुराण, आचार काण्ड, अध्याय १८, श्लोक ६, ७, ८,

कहिये कितना बढ़िया नुसखा है ?

और बिना फीस के बतला रहा हूं । पं० जी महाराज !

पं० माधवाचार्य जी

मरे हुए पति की लाश पड़ी हुई है, और उसके पास बैठ के रोती हुई स्त्री के लिए स्वामी जी सत्यार्थ प्रकाश में लिखते हैं ।

हे स्त्री ! तू इस लाश के पास से उठकर और इसका आश्रय छोड़ इन खड़े हुओं में से किसी हट्टे-कट्टे को चुन ले । और उससे सन्तान उत्पन्न कर, इस लाश से कुछ न होगा, बताओ ठाकुर साहिब बताओ···? ये किस वेद में कहां पर लिखा है ?

ठाकुर अमर सिंह शास्त्रार्थ केशरी

झूठ ! झूठ !! महाझूठ !!!

सत्यार्थ प्रकाश में कहीं भी नहीं लिखा कि मरे हुए पति की लाश पड़ी हुई हो, और उसके पास बैठी हुई स्त्री को कोई नियोग के लिए कहे । झूठ पर और झूठ !

"इन खड़े हुओं में से किसी हट्टे-कट्टे को चुन ले"

क्या यह सत्यार्थ प्रकाश का लेख है ?

पंडित जी महाराज ! कहते हुए भी कुछ लज्जा नहीं आई ।

पर ! आये किसको और कहाँ से आये,

सत्यार्थ प्रकाश में वह मन्त्र दिया हुआ है, जो इस प्रकार से है ।

उदीर्ष्व नार्यभि जीवलोकं गता सुमेतमुपशेष एहि ।
हस्त ग्राभस्य दिधिषोस्तवेदं पत्युर्जनित्वमभिसंबभूव ॥८॥

ऋग्वेद, १०।१८।८,

इस मन्त्र का अर्थ वहां लिखा है

"हे विधवे ! तू इस मरे हुए पति की आशा छोड़कर बाकी पुरुषों में से जीते हुए दूसरे पति को प्राप्त हो" कहिये ! इसमें पति की लाश पड़ी हुई कहां है ? और हट्टे-कट्टे आदमी कहाँ हैं ?

मैं पूछता हूं कि आपका प्रश्न नियोग को अनुचित और पाप समझते हुए हैं या पति की लाश पड़ी हुई होने पर नियोग की आज्ञा को अनुचित समझते हुए हैं ? या हट्टों कट्टों के भय से है ?

यदि हट्टों-कट्टों के भय से है तो निश्चिन्त रहिये, ऐसा कुछ होने वाला नहीं है। आप कालूराम जी आदि से सुनकर न कहिये, खुद सत्यार्थ प्रकाश को पढ़ने का कष्ट करिये, और देखिये वहां हट्टों-कट्टों का नाम तक नहीं है।

पर वैसे मैं पूछता हूँ, कहीं पं० जी महाराज आपकी इच्छा दुर्बलों एवं नपुंसकों से तो नियोग कराने की नहीं है?

विवाह भी हृष्ट-पुष्ट और स्वस्थ पुरुषों के ही होते हैं, दुर्बल या हिजड़ों के नहीं।

यदि नियोग मात्र को पाप समझते हुए आप प्रश्न करते हैं तो यह आपकी भूल है। प्रथम तो इसी मन्त्र में "दिधिषु" शब्द को देखिये! और अपने अमर कोष को पढ़िये। जहां दिधिषु विधवा के दूसरे पति का नाम बताया गया है। आवश्यकता और समय होने पर अन्य मन्त्र भी दिये जा सकते हैं।

मनुस्मृति और अन्य स्मृतियों में भी नियोग की स्पष्ट आज्ञा है। और महाभारत आदि पर्व में अनेकों नियोग लिखे हुए हैं।

धृतराष्ट्र, पाण्डु, और विदुर नियोग से ही पैदा हुए विचित्र वीर्य की विधवा पत्नियों, अम्बिका और अम्बालिका से महर्षि व्यास ने नियोग किया। पाचों पाण्डव नियोग से हुए। वाल्मीकीय रामायण में हनुमान जी नियोग से हुए। नियोग का निषेध आप कैसे कर सकते हैं?

यदि लाश के पड़ी होने पर नियोग की आज्ञा आपको अनुचित लगती है तो लाश का वहां नाम भी नहीं है। यदि "इस" शब्द के आने से आप भ्रम में पड़ गये हैं या आप लोगों को भ्रम में डालना चाहते हैं, तो यह आपकी भारी भूल है। "इस" शब्द तो प्रत्येक उपस्थित विषय या नामादि के लिए प्रयुक्त हो सकता है। चाहे वह विषय या नाम कितना ही पुराना क्यों न हो, जब उसका प्रसंग चल रहा हो, तब उसके लिए "इस" शब्द का प्रयोग सर्वथा उचित है। प्रसिद्ध सिद्धान्त है कि—

"वर्तमानसमीपे वर्तमानवद् वा"

अर्थात वर्तमान के समीप के समय को वर्तमान की भांति ही कहा जा सकता है। फिर बहुत दुःख और आश्चर्य है कि मन्त्र पर आपने ध्यान ही नहीं दिया। क्या कहा जाये कि, आपको मन्त्रार्थ का ज्ञान नहीं या जान बूझकर धोखा दे रहे हैं?

मन्त्र में स्पष्ट शब्द है अर्थ जिसका "एतम" है इसको "गतासुम्" का अर्थ "मरे हुए को"।

पूछिये किसी विद्वान् से यही अर्थ है या कुछ और?

"लड़ने चलते हैं हाथ में हथियार भी नहीं"

शास्त्रार्थ करने का जब इतना ही शौक है तो पं० जी महाराज कुछ पढ़ा करिये, क्यों बेचारे इन सनातन धर्मियों की मिट्टी खराब कराते हो।

जब "एतम्" का अर्थ "इसको ही" है तो फिर आप स्वामी (महर्षि दयानन्द) जी पर क्यों बरस पड़े? यदि महाराज आपने इसी पर सायणाचार्य जी का भाष्य देखा होता तो ऐसा प्रश्न करने का साहस ही न होता।

देखिये यही मन्त्र तैतरीयआरण्यक में है, और वहां पर सायणाचार्य जी का भाष्य इस प्रकार है—

"हे (नारी) त्वं (गतांसु) गतप्राणं (एतं) पतिं (उपशेषः) उपेत्य शयनं करोषि (उदीर्ष्व) अस्मात् पति समीपात् उत्तिष्ठ। (जीवलोकमभि) जीवितं प्राणिसमूहमभिलक्ष्य (एहि) आगच्छ त्वं (हस्तग्रामस्य) यणि ग्राहवतः (अभिसम्बभूष)। अभिमुख्येन सम्यक् प्राप्नुहि॥

इसका भाषार्थ यह है—हे स्त्री तू इस मरे हुए पति के साथ सो रही है। इस पति के पास से उठ, और जीते हुए पुरुषों के समूह को भली भांति देख। हाथ के पकड़ने वाले पुनर्विवाह की इच्छा करने वाले पति के पतित्व

को अच्छे प्रकार से प्राप्त कर अर्थात् विधवा के साथ दूसरा विवाह करने की जो पुरुष इच्छा करे, उसकी पत्नी बन जा।

कहिये ! स्वामी जी के अर्थों पर उपहास करते और नियोग पर प्रश्न उठाते अब कुछ लज्जा, आयेगी या नहीं।

पं० माधवाचार्य जी

सज्जनों ! आप सत्यार्थ प्रकाश मेरे पास ले आना, मैं कल चिन्ह लगा दूंगा फिर आप लोग आर्य समाजियों से प्रश्न किया करना। शास्त्रार्थ के बीच में ही..................खड़े होकर ठाकुर अमर सिंह जी ने कहा—

भाइयो ! आप उन लगाये गये चिन्हों को लेकर मेरे पास आना मैं सारे प्रश्नों की धज्जियाँ उड़ा दूँगा और पुराणों पर सैंकड़ों-ऐसे-ऐसे प्रश्न लिखा दूंगा, तथा सिखा दूंगा जिनका उत्तर विश्व भर का कोई भी पौराणिक नहीं दे सकेगा। माधवाचार्य जी की तो गिनती ही क्या है ? आप लोग शान्त हो जाइये !

आज का शास्त्रार्थ यहां समाप्त हुआ। कल फिर शास्त्रार्थ होना है जिसका विषय होगा—

"क्या मूर्ति पूजा वेदानुकूल है ?"

अगर खेल देखना ही है तो कल देखना मैं पं० जी महाराज को कैसे नचाता हूँ। अब शान्ति पाठ कीजिये—

ओ३म् द्यौशान्ति, अन्तरिक्ष शान्ति............

नोटः—शास्त्रार्थ समाप्त होते ही शान्ति पाठ के बाद बड़ी भारी भीड़ को चीरते हुए श्री प्रौफेसर किशोरी लाल जी एम० ए० काव्यतीर्थ जी आकर श्री पं० अमर सिंह जी शास्त्रार्थ केशरी जी के गले से चिपट गये। और कहने लगे, आपकी विद्या अपार है परमात्मा करे आप सौ वर्ष से अधिक जियें।

मेरी प्रार्थना है ठाकुर साहब यह विद्या आप लेकर मत चले जाना, औरों को भी अवश्य दे जाना, यह विद्या केवल आप तक ही सीमित नहीं रहनी चाहिये।

और पं० माधवाचार्य जी अपनी भक्त मण्डली को साथ लेकर चुपचाप निकल गये।

अगले दिन शास्त्रार्थ के विषय में—

अगले दिन मूर्ति पूजा पर शास्त्रार्थ होना था। तो रात्रि में पौराणिक भाइयों ने बीते दिन के बारे में कहा-कि पं० जी ऐसे कैसे काम चलेगा। उनका प्रभाव आपने भी देखा ही है। आपको कल मूर्ति पूजा पर शास्त्रार्थ करना है—

कुछ ऐसा उपाय करो जिससे उनका प्रभाव समाप्त हो जावे। पं० माधवाचार्य जी ने कहा—

मैं किसी भी विषय पर शास्त्रार्थ नहीं करूँगा। बहुत कुछ कहने पर भी पं० जी नहीं माने और उन्होंने साफ मना कर दिया।

इसके पश्चात् पौराणिक भाइयों को बड़ी चिन्ता हुई। उन्होंने कहा पं० जी कुछ सोचो।

पं० जी ने कहा—मुझे कुछ नहीं सोचना है, तुम्हें मैं कह चुका हूँ कि में शास्त्रार्थ नहीं करूँगा।

नोटः—पौराणिक भाईयों ने निराश होकर अगले दिन सुबह ही कार भेज कर पं० जीवाराम जी ब्रह्मचारी पौराणिक पण्डित जो संस्कृत महाविद्यालय नरवर के संचालक थे उनको बुलाया।

उन्होंने शास्त्रार्थ नहीं किया एक जबर्दस्त व्याख्यान दिया कि —

हम लोगों को आर्य समाज के साथ शास्त्रार्थ नहीं करना चाहिये। आर्य समाज तो हमारा संरक्षक है। हिन्दुओं की चोटी व जनेऊ की रक्षा करता है। ये तो हमारे भाई हैं। भाई से भाई को नहीं लड़ना चाहिये आदि आदि.........

नोटः—राजगुरु पं० धुरेन्द्र जी शास्त्री भी शास्त्रार्थ के समय विद्यमान थे।

[सातवां शास्त्रार्थ]
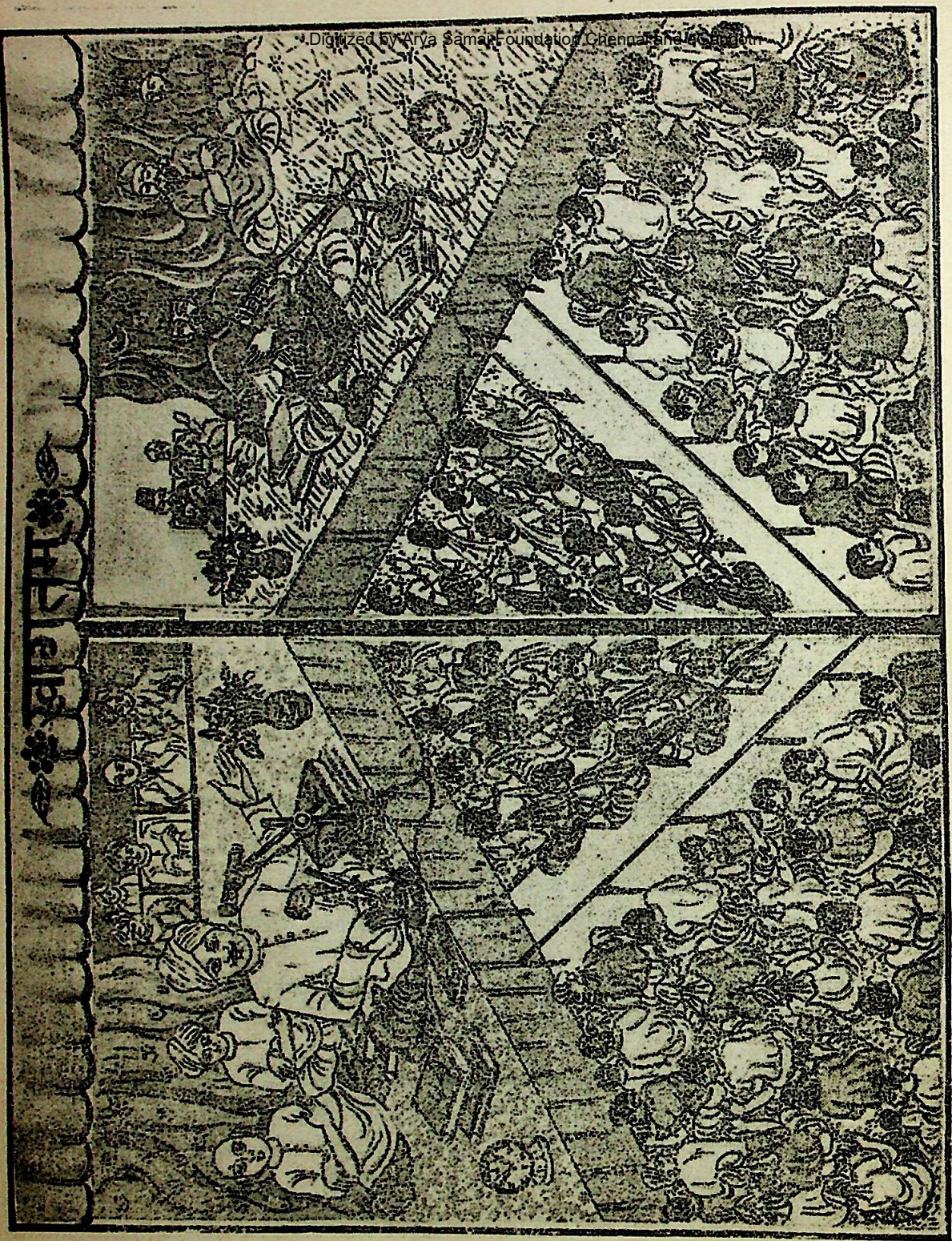
शास्त्रार्थ करते हुए
श्री ठाकुर अमरसिंह जी शास्त्रार्थ केशरी तथा श्री मौलाना-मौलवी सनाउल्ला साहिब "अमृतसरी"

स्थान : बद्दोमल्ली, जिला स्यालकोट

(वर्तमान पाकिस्तान)
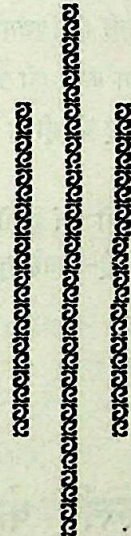
विषय : जीव और प्रकृति का अनादित्व

मज़मून : (रूह और माद्दे की क़दामत)

प्रधान : पं० श्री भगवद्दत्त जी "रिसर्च स्कालर"

दिनांक : दिसम्बर सन् १९३६ ई०

शास्त्रार्थ कर्ता इस्लाम की ओर से : मौलाना मौलवी सनाउल्ला साहिब "अमृतसरी"

शास्त्रार्थ कर्त्ता आर्य समाज की ओर से : श्री ठाकुर अमर सिंह जी शास्त्रार्थ केशरी

शास्त्रार्थ से पहले

आर्य समाज बद्दोमल्ली का वार्षिकोत्सव था, उस उत्सव में श्री पं० रामचन्द्र जी देहलवी का, मौलाना-मौलवी श्री सन्नाउल्ला साहिब के साथ "रूह और माद्दे की क़दामत" पर मुबाहिसा निश्चित था।

मुबाहिसे के समय में केवल दो घन्टे ही शेष रहे थे कि श्री पं० रामचन्द्र जी देहलवी का तार आ गया कि, मेरा गला खराब हो गया है मैं नहीं आ सकता हूं।

यह तार मिलते ही आर्य समाज के अधिकारी लोग चिन्ता में पड़ गये। उस उत्सव पर श्री पं० बुद्ध देव जी मीरपुरी और श्री पं० भगवद्दत्त जी रिसर्चस्कालर दोंनो ही विद्यमान थे।

अधिकारियों ने इन दोनों पण्डितों से मुबाहिसा करने को कहा दोंनो विद्वानों ने कहा—

मौलवी सन्नाउल्ला की टक्कर ठाकुर अमर सिंह जी ही ले सकते हैं। हम लोग मदद तो कर सकते है। मगर मुबाहिसा हम उनसे नहीं कर सकते।

तो उसके पश्चात् सभी आर्य समाज के अधिकारी एवं दोंनो पण्डितों ने ठाकुर अमर सिंह जी पर ही यह दबाव डाला कि शास्त्रार्थ (मुबाहिसा) तो आप ही को करना है—चाहे कुछ भी हो। और वह तैयार हो गये।

"लाजपत राय आर्य"

कुछ बद्दोमल्ली के विषय में

यह एक छोटा सा कस्बा था, पर मुझको यह उपनगर बहुत ही प्यारा था, जो विचित्रता इस उपनगर में थी वह किसी दूसरे बड़े नगर में भी देखने में नहीं आई, इस छोटे से कस्बे में सात निम्नलिखित संस्थाए थी।

१. आर्य समाज

२. सनातन धर्म सभा

३. सिंह सभा (सिक्खों की)

४. क्रिश्चियन एसोशियेशन

५. अहले हदीस जमाअत

नोट:—अहमदियों की दो जमाअतें थीं

६. कादियानी पार्टी

७. लाहोरी पार्टी

इनमें से छः के उत्सवों पर शास्त्रार्थ और मुबाहिसे प्रायः प्रति वर्ष होते थे।

केवल—सिंहसभा का उत्सव इनसे खाली होता था।

जब भी शास्त्रार्थ या मुबाहिसा होता था तब मुझको अवश्य जाना पड़ता था, क्योंकि में इन सभी के लिए सांझा था सभी के साथ टकराता था।

सिंह सभा के उत्सव पर एक बार सन्त इन्द्र सिंह जी निर्मला आ गये, उन्होंने अपने भाषण में यह कहा कि, "वेदों में गोवध" का विधान है, यह मैं वेदों के प्रमाणों से सिद्ध कर सकता हूं। में "अमर सिंह आर्य पथिक" नाम से वहां उपस्थित था। उस सभा में कई पौराणिक पण्डित सिंह सभा के मंच पर बैठे हुए थे। उनकी ओर संकेत करके कहा कि, इनको पूछ लीजिये, ऐसा है या नहीं? एक पण्डित ने शिर हिला कर समर्थन भी किया।

मैंने उनको शास्त्रार्थ का चैलेञ्ज कर दिया। कि—"वेदों में गोवध का विधान" नहीं है मैं यह सिद्ध करूंगा।

सन्त इन्द्र सिंह जी शास्त्रार्थ के लिए तैयार हो जायें। सभा में यह सुनते ही बड़ी खलबली मच गयी।

सिंह सभा के कार्य कर्त्ता मेरे पास आये कि—हम इन्द्र सिंह जी को अपने मंच पर अब नहीं बोलने देंगे।

आपके अब शास्त्रार्थ करने की आवश्यकता नहीं पड़ेगी। सिंह सभा के अधिकारी कोई भी इन्द्र सिंह जी के मत से सहमत नहीं है।

उसके पश्चात सिंह सभा के अधिकारियों ने सन्त इन्द्र सिंह जी को विदा कर दिया। और शास्त्रार्थ की आवश्यकता नहीं पड़ी।

बद्दोमल्ली आर्य समाज के प्रधान श्री जीवन दास जी सर्राफ़ ही रहते थे। मन्त्री श्री लाला गोपाल दास जी रहते थे। एवं कार्य कर्त्ता मन्त्री श्री मथुरा दास जी मदान रहा करते थे। भगवान की अपार दया से श्री मथुरा दास जी अभी विद्यमान है। और बहुत अच्छा प्रचार कार्य कर रहे है।

श्री पं० गंगा राम जी पुरोहित थे, वह भी कादियां में रहते हैं। विद्वान स्वाध्याय शील और कर्मठ हैं।

एक विद्वान और स्वाध्याय शील सज्जन श्री प्रताप सिंह जी एम० ए० अमृतसर में रहते हैं।

श्री जीवन दास जी सर्राफ (प्रधान) जी के पुत्र अमृतसर तथा तरनतारन में रहते हैं।

यह मैंने बद्दोमल्ली का अति संक्षिप्त वर्णन लिखा। इसको लिखे बिना में रह नहीं सकता था।

"अमर स्वामी परिव्राजक"

मौलाना सनाउल्ला साहिब

पण्डित साहिब ! मुबाहिसा शुरू करने से पहले क्या में आपसे एक-दो बातें पूछ सकता हूं ?

ठाकुर अमर सिंह जी शास्त्रार्थ केशरी

हाँ जी ! आप पूछ सकते हैं, जरूर पूछिये ।

मौलाना सनाउल्ला साहिब

पण्डित जी ! यह बताइये, जो शय क़दीम होती है, उसके औसाफ़ (गुण) भी क़दीम (नित्य) होते हैं, न ?

ठाकुर अमर सिंह जी शास्त्रार्थ केशरी

जी हां ! क़दीम शय (नित्त्य) वस्तु के औसाफ़ (गुण) भी क़दीम नित्त्य ही होते हैं ।

मौलाना सनाउल्ला साहिब

आपके ख्याल में रूह क़दीम है और उसके औसाफ़ भी क़दीम है ?

ठाकुर अमर सिंह जी शास्त्रार्थ केशरी

जी हां ! रुह क़दीम है । और उसके औसाफ़ भी कदीम हैं ।

मौलाना सनाउल्ला साहिब

जिसके औसाफ़ क़दीम नहीं वह मौसूफ़ (रूह) भी कदीम नहीं ?

ठाकुर अमर सिंह जी शास्त्रार्थ केशरी

जी हां जिसके औसाफ़ क़दीम नहीं वह मौसूफ़ (रूह) भी क़दीम नहीं ।

मौलाना सनाउल्ला साहिब

इल्म रूह की सिफत है ?

ठाकुर अमर सिंह जी शास्त्रार्थ केशरी

जी हां ! इल्म रूह की सिफ़त है । और वह क़दीम है ।

मौलाना सनाउल्ला साहिब

साहिबान ! में जब आर्य समाज के जलसे (उत्सव) में बोलता हूं तो मुझको ऐसा महसूस होता है कि, में एक यूनिवरिस्टी (विश्व विद्यालय) में बोल रहा हूं ।

क्योंकि आर्य समाजी साहिबान्-बाइल्म और बा अक्ल होते हैं ।

मैं पुराना जरनैल हूं, और मेरे सामने पण्डित जी नये रंगरूट हैं ।

मैंने इनको बांध लिया है अब मैं इनको इधर-उधर जाने नहीं दूंगा ।

आज फ़लस्फा ठाठें मारता दिखाई देगा आज आर्यसमाज की दीवारें हिल जायेंगी, और आर्यसमाजियों के दिल हिल जायेंगे ।

सुनिये साहिबान् ! अगर-इल्म रूह की क़दीम सिफ़त है तो इन्सान को इल्म हासिल करने के लिये स्कूल, कालिज, मदरसा-मकतब और गुरुकुल में क्यों जाना पड़ता है ? चूंकि इन्सान को कालिज-मकतब और गुरुकुल में इल्म हासिल करने को जाना पड़ता और इल्म को हासिल करना पड़ता है बस साबित है कि—इल्म—क़दीम सिफ़त नहीं है, और इल्म सिफ़त क़दीम नहीं है तो साबित हुआ कि—मौसूफ़ रूह भी क़दीम नहीं है।

ठाकुर अमर सिंह जी शास्त्रार्थ केशरी

मालूम होता है कि—मौलाना साहिब ने या तो फ़लसफ़ा पढ़ा ही नहीं है या पढ़ा है तो ये पुराने जरनैल हैं जईफ़ी की वजह से फ़लसफ़ा को भूल गये हैं। श्रोताओं में हंसी···

मैं नया रंगरूट हूँ इसलिये मेरा इल्म फ़लस्फ़ा ताजा है (हंसी) मैं फ़लस्फ़ा बताता हूं।

सुनिये जनाब ! इल्म दो तरह का होता है, एक ज़ाती (स्वाभाविक) दूसरा आर्ज़ी (नैमित्तिक) ज़ाती इल्म क़दीम है उसको हासिल करने की ज़रूरत नहीं है आर्ज़ी इल्म को हासिल करने के लिए कालिज वग़ैरा में जाना पड़ता है ज़ाती इल्म हमेशा साथ रहता है। (चारों ओर सन्नाटा छा गया)

मौलाना साहिब ने पूछा—ठाकुर साहिब ! ज़ाती इल्म साथ रहता है इसका क्या सुबूत है ?

ठाकुर अमर सिंह जी शास्त्रार्थ केशरी

आर्ज़ी इल्म का हासिल करना ही इसका सुबूत है कि—जाती इल्म क़दीम है और साथ ही रहता है।

मौलवी साहिब—कैसे ?

ठाकुर साहिब—मौलवी साहिब ! आपने कभी पढ़ाने का काम किया है ?

मौलवी साहिब—जरूर किया है सैकड़ों को पढ़ा दिया।

ठाकुर अमर सिंह जी शास्त्राथ केशरी

मौलाना—आपने पढ़ाकर कितनों ही को मौलवी कितनों को मौलवी आलिम और कितनों को ही मौलवी फ़ाज़िल बना दिया। मौलाना साहिब ! जिनके पास ज़ाती इल्म (स्वाभाविक ज्ञान) विद्यमान था वे सब आर्ज़ी इल्म (नैमित्तिक ज्ञान) हासिल करके चले गये और जिनके पास ज़ाती इल्म नहीं था वह—मेज, कुर्सी, किवाड़, दीवार सब वेहिसो हरकत यूं की यूंही वेइल्म रह गई।

मौलाना साहिब ! यह फ़लसफ़ा है जिससे साबित हो गया कि—इल्म सिफ़त क़दीम है और उसकी मौसूफ़ रूह क़दीम है। अबकी बारी में—मैं मौलाना साहिब को फ़लसफ़े में ऐसा बाधूंगा जो किसी तरह भी निकल न सकेंगे।

नोट—श्री ठाकुर साहिब के इस जवाब का हजारों सुनने वालों पर इतना बड़ा असर पड़ा कि—चारों ओर से वाह-वाह की आवाजें आने लगीं। और इतने जोर की तालियां बजीं कि—उनको बड़ी ही मुश्किल से रोका जा सका।

मौलाना सन्नाउल्ला साहिब

रात थोड़ी है आरजू हैं बहुत सी लेकिन। सुबह होने को है किस तौर तमन्ना निकले ॥

मुबाहिसे का वक्त थोड़ा है बातें बहुत है—

रूह को खुदा ने पैदा किया है अगर बक़ौल आर्यों के रूह माद्दा और खुदा तीनों क़दीम है तो तीनों हम उम्र हुए फिर खुदा इन पर हाक़िम कैसे हो सकता है ? साबित है कि—खुदा ने रूह और माद्दे को पैदा किया है इसीलिये उसको इनपर हुकूमत करने का हक़ है।

दूसरी कोई वजह हाकिम होने की नहीं है। अल्ला ताला ने मेरा वजूद मैंनू दित्ताऐ मेरा वजूद वाजिबुल् वजूद (स्वतन्त्र सत्ता) नहीं है मेरा वजूद बिलवास्ता (नैमित्तिक) है।

ठाकुर अमर सिंह जी शास्त्रार्थ केशरी

कदम सूए मरकद नज़र सूए दुनियाँ।
किधर जा रहे हो किधर देखते हो ?॥

मौलाना साहिब ! आपकी बातें कमाल की है। जिसकी उम्र बड़ी हो वही हाकिम होता है। यह भी आपका ठाठें मारने वाला फ़लसफ़ा ही होगा। जनाब मौलाना साहिब ! फौक़ियत (महत्ता) उम्र से नहीं औसाफ़ (गुणों) से होती है।

हज़रत मुहम्मद साहिब उम्र में उम्मुल मोमिनीन खदीजा से बहुत छोटे थे फिर वह उनके मालिक कैसे थे ?

बादशाह जार्ज पंजुम आपसे उम्र में छोटे हैं फिर आपके बादशाह क्यों हैं ?

हाकिम और महकूम होने के लिये वजह उम्र नहीं है लियाक़त और ताक़त ही किसी को हाकिम और किसी को महकूम बनाती है।

खुदा कादिरेमुतलक (सर्वशक्तिमान) है और रूह इल्म और कुव्वत में महदूद है माद्दा बेइल्म है इसलिये हम उम्र होते हुए भी ला महदूद इल्म और ला महदूद ताकत वाला होने से खुदा हाकिम है।

रही वजूद बिल वास्ता (नैमित्तिक अस्तित्व) की बात तो देखिये मेरा फ़लसफ़ा !

वजूद आपको दिया गया तो मैं पूछता हूं कि जब वजूद आपको दिया गया तब आप मौजूद थे कि—नहीं ?

नोटः—(मौलाना नहीं बोले),

नहीं बोले न बोलिये ! मैं कहता हूं अगर आप कहें कि—मैं उस वक्त मौजूद था—तो मैं पूछता हूं कि बिना वजूद के आप कैसे मौजूद थे ? क्या आपके ठाठें मारने वाले फ़लसफ़े में बिना वजूद के भी मौजूदगी होती है ? अगर आप कहें कि—जब वजूद दिया गया था तब मैं मौजुद नहीं था, तो फिर मैं पूछूंगा कि—जब आप मौजूद नहीं थे तो वजूद आपका किस को दिया गया था ?

मौलाना साहिब ! यह है नये रंगरूट का फ़लसफ़ा।

क्या इसका जवाब कोई हो सकता है ? मेरा दावा है कि—अब आप ऐसे फंसे हैं कि—अब निकल नहीं सकते। इसको कहते हैं कि—

"खुद आप अपने दाव में सय्याद फंस गया।"

मौलाना साहिब की भी अजीब दशा हो गयी,

मुसीबत में पड़ा है सीने वाला सीमे दामां का।
जो यह टांका तो वह उधड़ा, जो वह टांका तो यह उधड़ा॥

मौलाना सनाउल्ला साहिब

"शर्म तेरा हो बुरा दोनों का अर्मा रह गया"

पंडित साहब ! आप मुझको बहुत ही प्यारे लगते हैं। मैं आपके ऊपर हथियार तो चला नहीं सकता। आप नाजुक हैं मुझको डर लगता है कि—आपको चोट न लग जाय।

तीर पर तीर चलाओ यह सर किसका है।
दिल यह किसका है मेरी जां यह जिगर किसका है॥

एक सवाल और करता हूं और वह ऐसा है कि—उसका कोई जवाब नहीं। वह माद्दे के मुताल्लिक है—

पण्डित साहिब ! माद्दे (प्रकृति) के अजज़ा (परमाणु) होते हैं आप यह मानते हैं कि—वह अजज़ा ला तजज़ी (न टूटने वाले) होते हैं पर जनाव ! आप सोचिये ! एक परमाणु के साथ दो परमाणु एक सीध में एक लायन में रक्खे जावें। ००० इस तरह और तीन अजज़ा को मिलाकर रक्खें तो—पहिली सूरत में भी तीनों का एक २ हिस्सा दूसरे से मिलेगा और दूसरी सूरत में भी तीनों के हिस्से तीनों के साथ मिलेंगे, बस वह अजज़ा टूटने वाले हो गये और जो टूटने वाले हैं वह क़दीम नहीं हो सकते।

जनाव पण्डित साहिब ! इसका कोई जवाब नहीं है।

ठाकुर अमर सिंह जी शास्त्रार्थ केशरी

बड़ा शोर सुनते थे पहलू में दिलका।
जो चीरा तो एक कतरा खूं न निकला॥

मौलाना साहिब ! शअर पर शअर भी सुनते जाइये !

मैं नाज़ुक हूं पर— नाज़ुक कलाइयां मेरी तोड़ें उदू का सर।
मैं वह बला हूं शीशे से पत्थर को तोड़ दूं॥

इस सवाल का जवाब—आपके पास नहीं है, मेरे पास तो है।

सुनिये, जनाब ! यह तक़सीम असली नहीं है ख़याली है।

जो अजज़ा ला तजज़ी (जो परमाणु न टूटने वाले) हैं उनको खयाल से आपने मिलाकर रख लिया तो वह मुनक़सिम होने वाले (बंटने वाले) हो गये। यूं तो खुदा भी टुकड़े-टुकड़े होने वाला हो जायगा।

आपके खयाल में रूह पैदा शुदा है और खुदा क़ायमबिज्ज़ात (स्वयं स्थित रहने वाला) है तो रूह और खुदा एक दूसरे से मिलते हैं तब खुदा के भी हिस्से हो जायेंगे। कुछ आपके साथ मिलेगा कुछ मेरे साथ मिलेगा कुछ इन सबके साथ मिलेगा उसके तो लाखों टुकड़े हो जायेंगे।

दूसरी बात और है—

खुद ही फंस जाय न इस दाम में सय्याद कहीं।
पैर तक बढ़ती हुई ज़ुल्फ़ दो ता आती है॥

मौलाना साहिब ! क़ुरान शरीफ में तो कहा गया है कि—जो दोज़खी हैं वह हमेशा दोज़ख में रहेंगे और जो बहिश्ती हैं वह हमेशा बहिश्त में रहेंगे दोज़ख और बहिश्त भी हमेशा रहेंगे तो कहिये दोज़ख की आग और, बहिश्त की नहरें, दूध, शहद, शराब, कपड़े, प्याले, लोड़ों के पहनने के कंगन, दरख्त और मेवे, हूरें और ग़िलमान् यह उन्हीं अजज़ा से बने नहीं होंगे ? फिर वह अजज़ा टूटते २ यह सब कैसे क़ायम रहेंगे अल्ला मियां का तख्त जो पानियों पर बिछा है वह तख्त कैसे कायम रहेगा ?

क्यों जनाब ! हमारी मानी हुई इल्लत माद्दी (उपादान कारण) भी नेस्तो नाबूद (नष्ट होने) वाली हो जाय और आपका मालूल जो इल्लत से बना है वह मखलूक़ जो खालिक़ ने बनाई है वह भी अबदी (नित्य) रहे यह कोनसा फ़लसफ़ा है।

अजज़ा तो मिटने वाले और अजज़ा से बनी दोज़ख और बहिश्त हमेशा दायम व क़ायम रहने वाली, दोज़ख और बहिश्ती और बहिश्त के सब सामान हमेशा रहने वाले हैं। वाह !!

क्या खूब !

जो बात की खुदा की कसम लाजवाब की ।
पापोश में लगाई किरन आफ़ताब की ।।

मौलाना साहिब ! ये भी आपका कमाल है कि—

जो तुम चाहो वह हो जाये यह है अल्लाह की कुदरत ।
जो मैं चाहूं तो फरमाओ कि—ऐसा हो नहीं सकता ।।

मौलवी साहिब ! खुदा क़दीम मालिक है और सही माद्दा उसकी क़दीम मिल्कियत है खुदा हमेशा से है और हमेशा रहेगा । उसकी मिल्कियत सही माद्दा भी क़दीम हैं हमेशा से हैं और हमेशा रहेंगे ।

बक़ौल आपके अगर रूह और माद्दा खुदा ने बनाये हैं बनाने से पहिले यह नहीं थे तो फरमाइये कि—वह आपका खुदा इनके पैदा होने से पहिले क्या अपने सर का मालिक था । श्रोताओं में जोर की हंसी……।
काहे का मालिक ? क्या अपने आपका ?

मौलवी साहिब ! मालिक को क़दीम साबित करने के लिये मिल्कियत का क़दीम होना भी मानना जरूरी है मिल्कियत के क़दीम माने बिना मालिक का क़दीम साबित होना मन्तिक़ और फ़लसफ़े की रूह से नामुम्किन है ।

रूह माद्दा और खुदा, तीनों क़दीम हैं अज़ली और अबदी (अनादि और अनन्त) हैं ।

इल्म, मालूम और आलिम तीनों का मानना जरूरी है । अगर इल्म नहीं तो कोई आलिम नहीं अगर मालूम (ज्ञेय) नहीं तो इल्म नहीं क्योंकि—इल्म किसी चीज का होगा अगर चीज ही नहीं है तो इल्म काहे का ? इल्म के बिना आलिम नहीं और मालूम के बिना इल्म नहीं, मालूम और मालूम का इल्म और इल्म का आलिम यह तीनों लाज़िम और मलज़ूम (अनिवार्य) हैं ।

हमारी भाषा में इनको ज्ञाता, ज्ञान और ज्ञेय कहते हैं ज्ञेय का ज्ञान जिसको होता है उसका नाम ज्ञाता है । मुबाहिसा खत्म हो गया ।

नोट—इस मुबाहिसे का इतना बढ़िया असर हुआ कि—सैकड़ों मुसलमान भी ठाकुर साहिब की बार २ तारीफ करते और बार २ वाह वाह करते हुए यह कहते गये कि—मौलाना को ठाकुर साहिब ने मार दिया ।

मौलाना सनाउल्ला साहिब भी बड़ी मुहब्बत के साथ छाती मिलाकर गले मिले ।
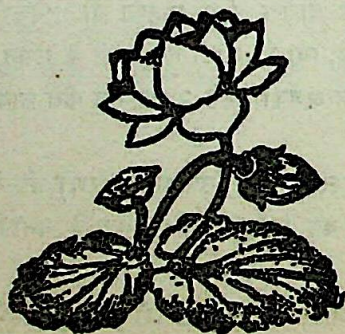
[आठवां शास्त्रार्थ]
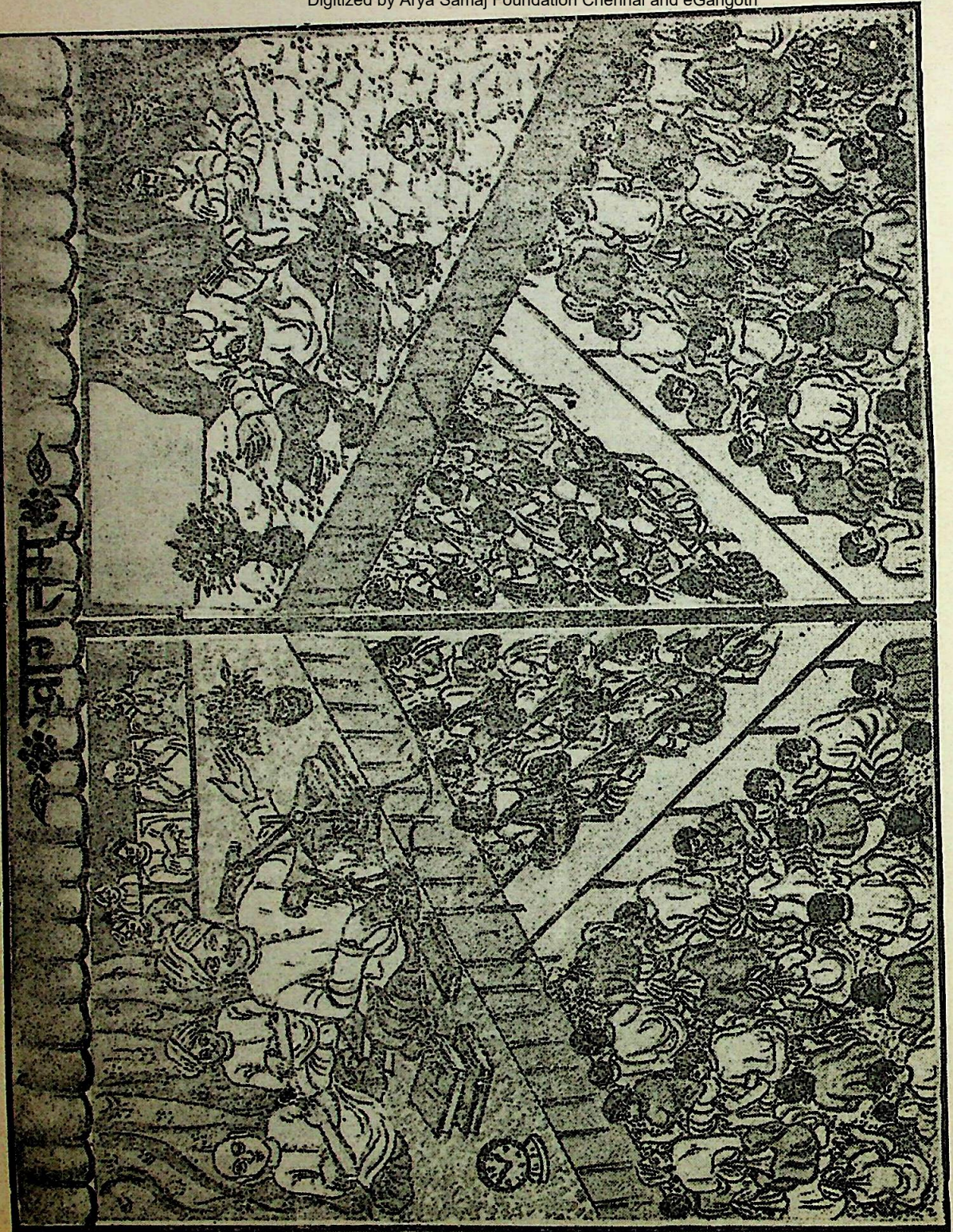
(शास्त्रार्थ करते हुए)

"श्री ठाकुर अमर सिंह जी शास्त्रार्थ केशरी तथा श्री पादरी अब्दुल हक़ साहिब"

स्थान : चुहड़पुर (विकास नगर) जि० देहरादून-उ० प्र०

विषय : क्या ईसाई मत की शिक्षा मानव मात्र के लिए हितकर है ?

दिनांक : २८ अप्रैल सन् १९५४ ई० (दिन के आठ बजे)

शास्त्रार्थ कर्त्ता आर्य समाज की ओर से : श्री ठाकुर अमरसिंह जी शास्त्रार्थ केशरी

शास्त्रार्थ कर्त्ता ईसाई मत की ओर से : श्री पादरी अब्दुल हक़ साहिब

आर्य समाज की ओर से प्रधान : श्री पं अमरनाथ जी वैद्य वाचस्पति

ईसाई मत की ओर से प्रधान : श्री पादरी रफी साहिब

शास्त्रार्थ आरम्भ

ठाकुर अमर सिंह जी शास्त्रार्थ केशरी

सत्यासत्य की खोज करने वाले सज्जन पुरुषो ! आज के शास्त्रार्थ से आपको पता लगेगा कि- ईसाई मत की शिक्षा मनुष्य मात्र के लिए कल्याण का मार्ग दिखलाती है या मनुष्य मात्र को पथ भ्रष्ट करके उसका सर्व नाश करती है। आज ईसाई मत के मशहूर मुनाज़िर पादरी अब्दुल हक़ साहिब जी मेरे सामने हैं। में उनके सामने ईसाई मत और उसकी मानी हुई इलहामी किताब बाइबिल की शिक्षा के कुछ नमूने रखता हूं। आप लोग देखेंगे कि— पादरी साहब उनकी क्या व्याख्या करते हैं।

१. बाइबिल की पहिली शिक्षा यह है कि, बाप अपनी बेटी के साथ शादी कर ले।

देखिये—बाइबिल में तौरेत की प्रथम पुस्तक उत्पत्ति पर्व २ वचन २१ से २४ तक।

परमेश्वर ने आदम को बड़ी नींद में डाल कर उसकी पसलियों में से एक पसली निकाली। और उसके स्थान में मांस भर दिया और उस पसली से एक नारी बनाई और उसको आदम की पत्नी बना दिया। आयत (वचन) २३ में आदम का वचन है—वह तो मेरी हड्डियों में की हड्डी है। और मेरे मांस में का मांस है। वह नारी कहलाने लगी क्योंकि—वह नर से निकाली गई।

आयत (वचन) २४ में है इस लिए मनुष्य अपने माता-पिता को छोड़ेगा। और अपनी पत्नी से मिला रहेगा। और वे मांस में के होंगे।

यहाँ ईसाई मत से दो शिक्षाये मिलती है। एक यह कि बाप अपनी बेटी से शादी किया करें। और दूसरी यह कि अपने माता पिता को छोड़ दिया करे। दूसरा प्रमाण इसी प्रकार इसी उत्पत्ति पुस्तक के पर्व १९ में आयत ३१ से ३८ तक यह है कि—हज़रत लूत की दो बेटियाँ अपने बाप लूत से ही गर्भवती हुई, बड़ी ने अपने बाप लूत से गर्भवती होकर एक लड़का पैदा किया।

कहो ! ईसाइयो ! आपको ईसाई मत की तालीम पसन्द है ? अगर पसन्द है तो क्या आप लोग इस पर अमल करते हो या नहीं ? नहीं करते हो तो क्यों आपने इस अपने अधिकार को छोड़ दिया ? पादरी अब्दुल हक़ साहब बताने की कृपा करे कि वह इस शिक्षा का प्रचार ईसाइयों में करते हैं या नहीं, अगर नहीं करते तो क्यों नहीं करते ?

यह साफ ज़ाहिर है कि यह तालीम ऐसी है। जिसको कोई भी भला और समझदार व शर्मदार इन्सान नहीं मानेगा। और किसी ईसाई ने भी इसको नहीं माना है।

यह सही है कि—यह तालीम इन्सान को और उसके इखलाक को तबाह और बर्बाद कर देने वाली हैं। फिर मैं पूछता हूँ कि ऐसी तालीम देने वाली किताब बाइबिल और इस मजहब को जो इस किताब को मानता है क्यों न छोड़ दिया जावे अथवा क्यों न मिटा दिया जावे।

पादरी अब्दुल हक़ साहिब

साहिबान् ! मैं आज कहाँ किस के सामने फंस गया। मैं चाहता था कि कोई मन्तक और फ़लसफे की बहस होगी और मज़ा आयेगा।

अगर पं० रामचन्द्र जी देहलवी होते तो मज़ा रहता। मुझको आज एक ऐसे शख्स से पाला पड़ गया है। जो न मन्तक जानता है न फ़लसफ़ा, मैं पूछता हूँ कि—माँ हव्वा-हज़रत आदम की बेटी कैसे हुई?

उसको तो आदम ने नहीं पैदा किया था।

खुदा ने उसको बनाया था। वह आदम की बेटी कैसे हुई? क्या बहस करूं? न इस बहस में मन्तक है और न फ़लसफ़ा है बहस करने वाले साहिब को यह ही पता नहीं कि—हव्वा आदम की बेटी नहीं थी। उससे क्या बहस होगी।

वह आदम और हव्वा की शादी खुदा के हुक्म से हुई थी। मेरे सामने ये सवाल कभी किसी ने नहीं किये थे।

नोटः—पादरी साहिब इतना कह कर बैठ गये।

ठाकुर अमर सिंह जी शास्त्रार्थ केशरी

पादरी अब्दुल हक़ साहिब मेरे सवालों का जवाब नहीं दे सके और कभी नहीं दे सकेंगे। मेरे सवालों से बचकर भागने के लिए मन्तक और फ़लसफ़े का रोना रोने लगे।

मैं दावे से कहता हूँ कि—आपको न मन्तक आता है और न फलसफा। और आप ईसाइयों का मन्तक और फलसफे से कुछ ताल्लुक है। थोड़ी सी मुसलमानों की झूठन इकट्ठी कर ली। और दो चार इस्तलाहात मन्तक की याद कर ली, "और बन गये मन्तकी"! एक हल्दी की गांठ हाथ आ गयी, तो पंसारी बन गये।

मुझको मन्तक और फलसफा आता है। मैंने बाकायदा पढ़ा है। आपको अगर कुछ आता है तो मन्तक और फलसफे से ही मेरे सवालों के जवाब देने में उनकी मदद लीजिये। रोक किसने रक्खा है। आप कहते हैं कि, मेरे सामने ये सवाल किसी ने नहीं किये थे।

इब्तदाये इश्क है, रोता है क्या?।
आगे-आगे देखना, होता है क्या?॥

अभी तो ऐसे ही और बहुत सवाल करूंगा। सुनिये नोट करिये और जवाब दीजिये। ईसाई मत की आगे तालीम यह है कि बहन-भाई की भी शादी हुआ करे।

तौरेत उत्पत्ति की पुस्तक पर्व १२ आयत १० से १३ तक में है कि—मिश्र देश में अब्राहम ने अपनी पत्नी "सारा" को अपनी बहिन बताया। और इसी उत्पत्ति की पुस्तक पर्व २० में आयत में है। कि—देश जिरार में भी अब्राहम ने अपनी पत्नी सारा को अपनी बहिन बताया।

इसी पर्व २० की आयत १२ में उसने कहा कि "निश्चय (यह) मेरी बहिन भी है, वह मेरे पिता की पुत्री है। परन्तु मेरी माता की पुत्री नहीं। सो मेरी पत्नी हो गयी।

इसी तरह अब्राहिम के बेटे इसहाक ने भी अपनी पत्नी रिब्का को बहिन बताया।

उत्पत्ति पर्व २६ आयत ६-७।

इसाई मत की अन्य यह तालीम है कि अपनी पत्नी को दूसरों के घर में रखकर फायदा उठा सकें तो खूब उठाया जावे।

उत्पत्ति पर्व १२ आयत १५-१६ में "फिरऊन के अध्यक्षों ने उसे (सारा को) देखा और फिरऊन के आगे उसकी सराहना किया सो उस स्त्री को फिरऊन के घर में ले गये। और उसने उसके कारण अब्राहम का उपकार

किया। और भेड़ बकरी और बैल गदहे और दास व दासी और गदहियां और ऊंट उसको मिले,,।

उत्पति पर्व २० आयत—२।

"जिरार के राजा अबिमलक ने अपने नोकर भेज के सारा को अपने घर में ले लिया"।

मिश्र देश में राजा फिरऊन के घर में अब्राहम की स्त्री रही और जिरार के राजा अबिमलक के घर में ले जाई गई।

हव्वा आदम की बेटी नहीं थी। यह आपका कहना है। आप कहते हैं कि, उसको खुदा ने पैदा किया था। इस लिए आदम की बेटी नहीं थी।

भाई! पादरी साहिब पैदा तो आपको भी खुदा ने ही किया है। पर आप अपनी माँ के बेटे कहलाते हैं या कि खुदा के? मां के ही कहलाते है ना, और हैं भी माँ-बाप के ही, क्योंकि उनके जिस्म से पैदा हुए हैं। हव्वा को मैं आदम की बेटी कहता हूँ। —क्योंकि वह आदम के जिस्म से पैदा हुई थी। वह स्त्री थी इसलिए मैंने उसे बेटी कहा। यदि वह पुरुष होता तो मैं उसे आदम का बेटा कहता। आदम ने खुद कहा है कि—

"वह तो मेरी हड्डियों में की हड्डी और मेरे मांस में का मांस है"।

उत्पत्ति पर्व २ आयत २३,

जो जिसकी हड्डियों में की हड्डी और मांस में का मांस है वह उसकी बेटी नहीं तो और क्या है? लूत की बेटियां लूत से हामिला हुई, इसका जवाब कुछ नहीं। उसको तो आप दाखरस की तरह ही पी गये बाइबिल उत्पत्ति पर्व–१९–आयत ३२-३३-३४ में दाखरस "अंगूरी शराब" का नाम है।

"लूत ने अपनी दोनों बेटियां दुराचारियों को दुराचार के लिए पेश की"

उत्पत्ति पर्व १९ आयत ८॥

आयत एक से पांच तक है, कि—लूत के घर में दो पुरुष ठहरे। सदूम नगर के लोगों ने घर को चारो तरफ से घेर लिया। वह सब लोग उन दोनों के साथ बदफेली करना चाहते थे। तब लूत ने कहा—"हे भाइयो ऐसी दुष्टता मत करना" देखो मेरी दो बेटियां हैं। जो पुरुष से अज्ञान है। कहो तो मैं उन्हें तुम्हारे पास बाहर लाऊँ। और जो तुम्हारी दृष्टि में भला लगे सो उनसे करो। केवल उन मनुष्यों से कुछ मत करो। "आयत ८" बाइबिल की यह भी तालीम है कि "अपनी नोकरानियों (दासियों) से सम्भोग करें।"

अबिरहाम ने अपनी पत्नी सारा की लोंड़ी हाजिरा से सम्भोग किया और वह गर्भिणी हुई।"

"उत्पत्ति पर्व १६ आयत ४"

उत्पत्ति पर्व–३० आयत–४–५ में याकूब ने अपनी दासी "बिलहा" और आयत ९ व १० में याकूब ने अपनी ही दासी "जिलफ़ा" से औलाद पैदा की।

आपने कहा कि, आदम और हव्वा की शादी खुदा के हुक्म से हुई थी। मतलब तो मेरा यही कहने का है कि—ईसाइयों का खुदा बाप को बेटी से शादी करने का हुक्म देता है। इसलिए ईसाई मजहब में बाप का बेटी के साथ शादी और औलाद पैदा करना जायज है।

पादरी अब्दुल हक़ साहिब

नोट—पादरी साहब ने पं० अमर सिंह जी को कुछ अपशब्द कहें तथा गुस्से से लाल हो गये। इस पर बहुत कोलाहल मचा तो ठाकुर साहब ने सबको बड़ी मुश्किल से शान्त किया।

ठाकुर अमर सिंह जी शास्त्रार्थ केशरी

पादरी साहब को गुस्सा बहुत आता है। सो कमजोर और हारे हुए को गुस्सा आया ही करता है। वैसे यह है कि, पादरी अब्दुल हक़ साहिब के गले से नीचे सारे जिस्म में इस्लाम है। गले से ऊपर-ऊपर ईसाइयत है। सो कभी २ बेचारी ईसाइयत नीचे दब जाती है और इस्लाम ऊपर आ जाता है। बस यही गुस्सा है और कुछ भी नहीं॥

पादरी अब्दुल हक़ साहिब

फ़ज़ूल भौंकने से क्या होता है। लूत ने जिस गांव में अपनी बेटियों से औलाद पैदा की थी, उस गांव को खुदा ने गन्धक और आग बरसा कर जला दिया था।

ठाकुर अमर सिंह जी शास्त्रार्थ केशरी

ठीक है सारे गांव को जला दिया, ऐसा लिखा है, पर वह भी लिखा है कि, लूत—उसकी पत्नी, और लूत की उन दोनो लड़कियों को बचा दिया। क्योंकि खुदा लूत को प्यार करता था।

खुदा ने उनको नहीं मारा। साबित है कि खुदा बेटियों से औलाद पैदा करने को अच्छा मानता था। तथा बाइबिल की एक तालीम और कि—

"नूह खेती बाड़ी करने लगा और उसने एक दाख की वाटिका लगाई। और उसने उसका रस (अंगूरी शराब) को पिया। और उसे अमल (नशा) हुआ और अपने तम्बू में नंगा रहा, और कनआन के पिता हाम ने अपने पिता का नंगापन देखा। और बाहर अपने भाइयों को जनाया। तब सिम और याफ़त ने एक ओढ़ना लिया। और अपने दोनों कन्धों पर धरा। और पीठ के बल जाकर अपने पिता का नंगापन ढांपा। और उनके मुंह पीछे थे सो उन्होंने अपने पिता का नंगापन न देखा"। देखिए— उत्पत्ति पर्व ६, आयत २० से २३ तक।

उत्पत्ति-पर्व ६ आयत—६ में है कि "नूह अपने समय में धर्मी और सिद्ध पुरुष हुआ था" साफ साबित है कि—शराब पीना भी ईसाई मत की तालीम में शामिल है। लूत भी शराब पीता था! खुदा—शराब पीने वालों को प्यार करता था।

नोट—पादरी साहब ने चिल्ला कर कहा—मैं ऐसे किसी सवाल का जवाब नहीं दूंगा, यह सब शरारत हो रही है। श्री पं० अमर सिंह जी की तरफ इशारा करके कहा कि यह महा शरारती है। इस पर बड़ी अशान्ति हुई और चारो ओर से आवाजें आने लगी की पादरी क्षमा मांगे।

ठाकुर अमर सिंह जी शास्त्रार्थ केशरी

पं० जी ने लोगों को समझाया कि—पादरी अब्दुल हक़ मेरे सवालों का जवाब देने में असमर्थ है। वह चाहते हैं गालियां देकर मुबाहिसा (शास्त्रार्थ) खत्म करा दे। जिससे बाइबिल, ईसाई मत और पादरी तीनों के झूठों की पोल न खुले। पर मैं चाहता हूं कि गालियां देकर भी वह मुबाहिसा बन्द न करा सकें तथा पोल और भी खुले। वह मुआफी मांगे न मांगे आप उनको मुआफ कर दीजिये।

वह कहते हैं कि—ये सवाल मेरे सामने इससे पहले कभी नहीं आये थे। वह बेचारे यह ठीक कहते हैं। असलियत यही है कि, मन्तक और फलसफे के नाम पर खेल खेले जाते रहे। मुबाहिसे का उन्होंने मुंह ही आज देखा है।

पादरी अब्दुल हक़ साहिब

ये ऐतराज पुराने अहदनामे पर किये जा रहे हैं। हमारा सीधा ताल्लुक पुराने अहदनामें से नहीं बल्कि नये अहदनामें से यानी इंजीलों से है।

पुराने अहदनामें (OLD TESTAMENT) को यहूदी भी मानते हैं। मुसलमान भी मानते हैं। उसकी बातों को लेकर ईसाई मजहब को बदनाम करना शरारत ही है। शरारत नहीं तो और क्या है?

ठाकुर अमर सिंह जी शास्त्रार्थ केशरी

पादरी जी ने मेरी बातों का जवाब देने की कोशिश की, बहुतेरे मुगालते दिये, पर—

मुसीबत में पड़ा है, सीने वाला, सीमे दामां का।
जो यह टांका तो वह उधड़ा, जो वह टांका तो यह उधड़ा॥

पादरी जी ने अपनी इज्जत बचाने के लिए कितना बड़ा झूठ बोल दिया कि—हमारा ताल्लुक नये अहदनामे यानी इन्जीलों ही से है।

झूठ की हद हो गई, भाइयो! आपने कभी कहीं मुसलमानों की छपाई हुई बाइबिल देखी है? अथवा कभी सुनी है? मेरे पास ये तीन बाइबिलें हैं—

एक अंग्रेजी की–यह इसाईयों की बाइबिल सोसाइटी की छपी हुई है।

यह दूसरी हिन्दी की है। यह मिशन प्रेस बाइबिल सोसायटी इलाहाबाद की छपी हुई है।

तीसरी बाइबिल उर्दू की है, यह भी इसाईयों की बाइबिल सोसायटी की छपी है।

इसी में ओल्ड टेस्टामेन्ट यानी पुराना अहदनामा है। और इसी में न्यूटेस्टामैन्ट यानी नया अहदनामा है। दोनों को मिलाकर इसका नाम बाइबिल है। पादरी अब्दुल हक साहिब चाहते हैं कि—एक मुर्गी को काटकर दो टुकड़े कर लें, आधी खाई जाये और आधी को अण्डे देने के लिए रख लें।

मैं झूठे को घर तक पहुंचाये बिना नहीं छोड़ूंगा। दुनिया का कोई भी ईसाई यह नहीं कहेगा कि "हमारा पुराने अहदनामे से कोई ताल्लुक नहीं है"। इन्होंने यह कहकर अपनी कमजोरी जाहिर की है। चलो! मैं कहता हूं। यह लिखकर दे दो कि हम पुराने अहदनामे को नहीं मानते हैं।

हमारा पुराने अहदनामे से कोई ताल्लुक नहीं है। करो हिम्मत। जो कुछ कहते हो वह लिखकर दे दो। मैं फिर पुराने अहदनामे पर ऐतराज नहीं करूंगा। फिर नये की धज्जियां उखेड़ूंगा। (हंसी·········)

पादरी जी लिख दें अथवा प्रेजिडेन्ट साहब (प्रधान) जी लिख दें।

नोट—बार-बार लिखने को कहा गया पर किसी ने वह लिखकर नहीं दिया। इस रगड़े में लगभग आधा घण्टा लग गया।

ठाकुर अमर सिंह जी शास्त्रार्थ केशरी

सज्जनों! अहदनामा पुराना या नया दोनों बाइबिल के हिस्से हैं। पादरी अब्दुल हक ने पुराने अहदनामे को मानने से इन्कार कर दिया, ईसाई मत की आधी हार तो हो गई। पादरी जी की तनख्वाह भी आधी हो जानी चाहिये! (हंसी···········) लीजिये मैं अब नये अहदनामे को पकड़ता हूं।

अब उसको पादरी साहब बचावे।

करन्थियों को पत्र ?

यहां भी वह बात लिखी है कि—"बाप बेटी के साथ शादी कर ले"—पता लिखिये पादरी साहब और नोट करिये।

करन्थियों को पत्र पर्व ७ आयत ३६ ॥

"परन्तु यदि कोई समझे कि मैं अपनी कन्या से अशुभ काम करता हूं, जो वह स्यानी हो और ऐसा होना अवश्य है। तो वह जो चाहता है सो करे। उसे पाप नहीं है, वे विवाह करें"।

तथा

सन १९७९ ई० की छपी होली बाइबिल इलाहाबाद बाइबिल सोसायटी मिशन प्रेस।

सन् १८७९ की छपी पृष्ठ ७५९ पंक्ति १४ से इसको १९३५ ई० की छपी बाइबिल (धर्मशास्त्र) ब्रिटिश एण्ड फारेन बाईबिल सोसायटी इलाहाबाद ने इस प्रकार बदला है।

यथा—"और यदि कोई यह समझे कि—मैं अपनी उस कुआंरी का हक मार रहा हूं। जिसकी जवानी ढल चली है। और ये प्रयोजन भी होय तो जैसा चाहे वैसा करें। इसमें पाप नहीं वह उसका ब्याह होने दें ॥३॥

नीचे टिप्पणी (३) यू० वे ब्याहे जावें ॥

उसमें "वे ब्याहे जावें" इसको बदल कर यह कर दिया गया है कि "उसका ब्याह होने दें"।

(उर्दू बाईबिल–पंजाब बाईबिल सोसाइटी अनारकली लाहौर सन् १८९५ सफा ३२९ लाईन ६ से आरम्भ– "यदि कोई अपनी कुआँरी लड़की के हक में जवानी से ढल जाना मुनासिब जाने, और यही जरूर समझे तो जो चाहे सो कर ले, कि–वह गुनाह नहीं करता, "वे ब्याह करें"। इन सब प्रमाणों से यह साफ है, कि "बाप बेटी के साथ शादी कर ले" इसमें कुछ गुनाह नहीं।

दूसरी शिक्षा यह है कि अगर किसी कुआंरी लड़की को गर्भ रह जाये तो वह मान लेना चाहिए कि यह–हमल खुदा की ओर से हुआ। कुआँरी से अगर बेटा पैदा हो जाये तो उसको खुदा का बेटा कहा जाये।

पादरी अब्दुल हक़ साहिब

पादरी साहब ने गुस्से में भरकर कहा कि, आर्य समाज ने कैसे दुष्ट को बुला लिया है ? मैं इसकी किसी भी बात का जवाब नहीं दूंगा। और इसके साथ कभी भी मुबाहिसा नहीं करूंगा। मेरे साथ मुबाहिसा कराने के लिए श्री पं० रामचन्द्र देहलवी जैसे आदमी को बुलाया करें।

नोट—आर्य समाज चूहड़पुर (विकास नगर) के प्रधान श्री बाबू आनन्दकुमार जी ने जोर के साथ गर्ज कर घोषणा की—पादरी अब्दुल हक़ साहिब ! हमने तो इस मुबाहिसे को सुनकर यह निश्चय कर लिया है कि आगे जब भी मुबाहिसा होगा तब इन्हीं को बुलाया करेंगे। दूसरे किसी को कभी नहीं बुलायेंगे।

ठाकुर अमर सिंह जी शास्त्रार्थ केशरी

सज्जन पुरुषों ! आपने आज देख लिया कि ईसाई मजहब और उसकी मानी हुई ईश्वरीय किताब बाइबिल की तालीम क्या है। जिसको कोई भी समझदार इन्सान कभी भी मानने को तैयार नहीं होगा। इस मुबाहिसे से यह भी जाहिर

हो गया कि पादरी अब्दुल हक़ भी इस तालीम को मानने क्या सुनने को भी तैयार नहीं हैं। तनख्वाह बन्द होने के डर से इस तालीम को गन्दी और गलत नहीं कह सकते, पर इस तालीम पर होने वाले ऐतराज का जवाब उनसे दिया जाना ना मुमकिन है। यह आप सब पर जाहिर हो गया।

आगे इस मजबून पर यह भूलकर भी मुबाहिसा (शास्त्रार्थ) नहीं करेंगे। यह मेरी भविष्य वाणी है।

श्री पं० अमरनाथ जी वैद्य वाचस्पति

सज्जनो! मुझको केवल समय देखने का अधिकार था, हार-जीत का निर्णय देने का अधिकार नहीं है।

पर इस मुबाहिसे में हार-जीत का फैसला देने की कुछ भी आवश्यकता नहीं है। आप सबने तो सब कुछ समझ ही लिया। इसाइयों ने भी आज साफ-साफ समझ लिया। ऐसा साफ मुबाहिसा आज तक नहीं सुना था। मैं आप सबको धन्यवाद देता हुआ आज की सभा को समाप्त करता हूं।

दूसरा मुबाहिसा (मसलए तनासुख) अर्थात आवागमन (पुनंजन्म) पर होना था।

परन्तु पादरी अब्दुल हक जी हमारे शास्त्रार्थ केशरी ठाकुर अमरसिंह जी से किसी भी प्रकार मुबाहिसा करने को तैयार नहीं है। इस कारण २९ अप्रैल को होने वाला मुबाहिसा न होने पर भी आर्य समाज की अद्भुत विजय का सब हिन्दू-मुसलमान तथा ईसाइयों पर भी प्रभाव है।

ईसाई लोग भी जितने उपस्थित हैं वे सब पादरी अब्दुल हक साहिब को हारा हुआ मानते हैं।

आनन्द कुमार
प्रधान आर्य समाज चुहड़पुर (विकास नगर)
देहरादून—२८-४-१९५४ ई०
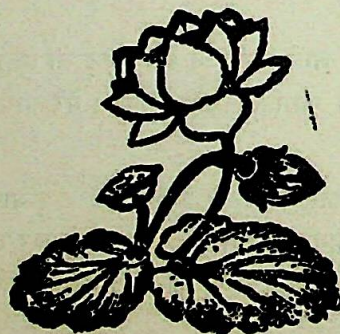
[नवां शास्त्रार्थ]
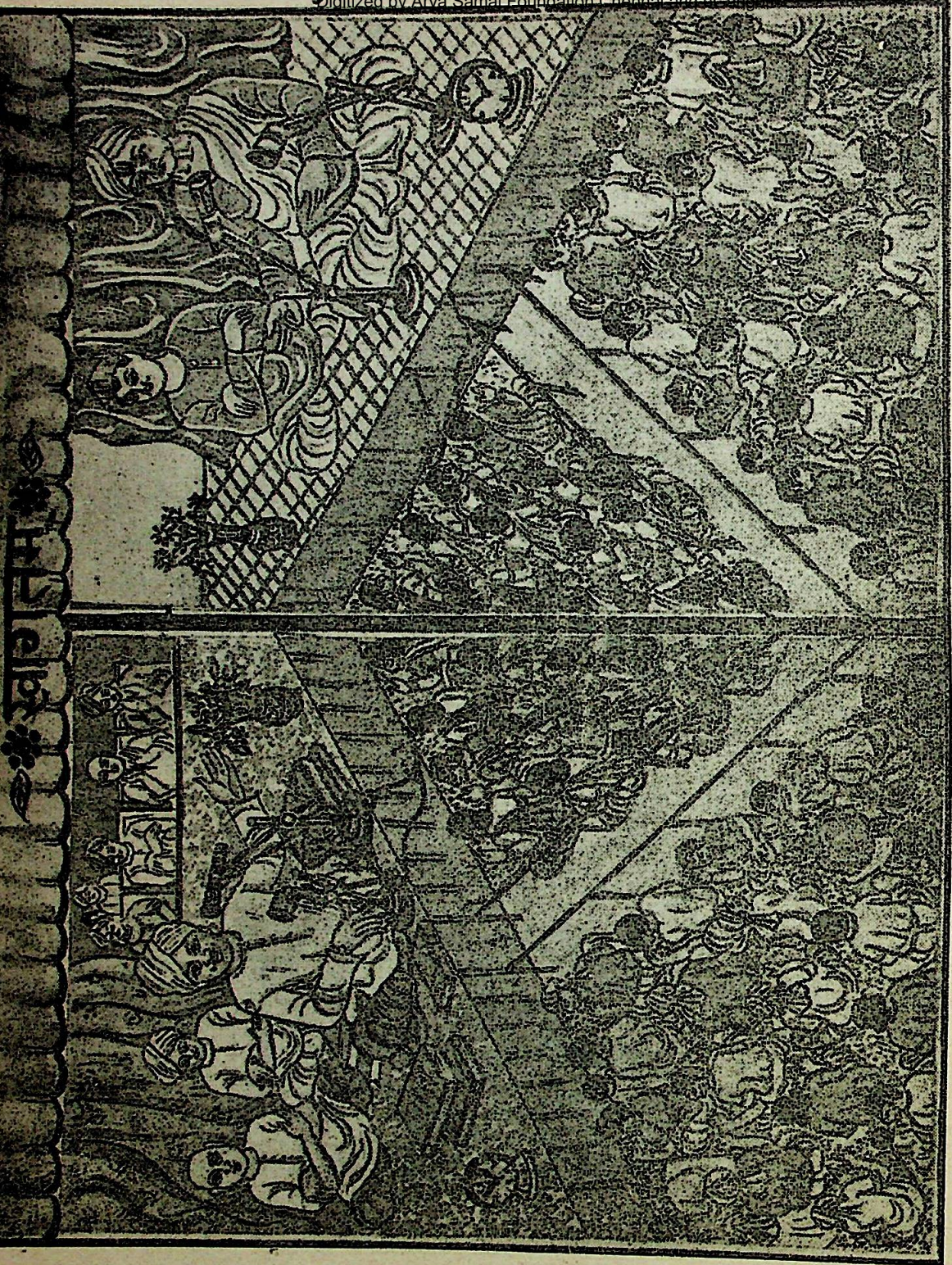
(शास्त्रार्थ करते हुए)

"श्री ठाकुर अमर सिंह जी शास्त्रार्थ केशरी तथा पौराणिक पं० माधवाचार्य जी"

स्थान : "राजधनवार" जिला हजारी बाग (बिहार)
(प्रांगन श्री राजा महेश्वरी प्रसाद नारायण देव जी के राजमहल में)
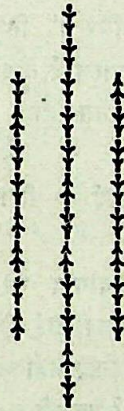
विषय : क्या भागवतादि पुराण वेदानुकूल हैं ?

दिनांक : ६ अप्रैल सन् १९५३ ई० (दिन सोमवार, सुबह आठ बजे)

आर्य समाज की ओर से शास्त्रार्थ कर्ता : श्री ठाकुर अमरसिंह जी शास्त्रार्थ केशरी

पौराणिक पक्ष की ओर से शास्त्रार्थ कर्त्ता : शास्त्रार्थ महारथी श्री पं० माधवाचार्य जी

आर्य समाज की ओर से प्रधान : श्री पं० महादेवशरण जी, अधिष्ठाता गुरुकुल देवघर,

पौराणिक पक्ष की ओर से प्रधान : श्री पं० अखिलानन्द जी "कविरत्न"

नोट:—इस शास्त्रार्थ में उपस्थित : १- स्व० स्वामी अभेदानन्द जी सरस्वती २- आचार्य श्री पं० रामानन्द जी शास्त्री ३- व्याकरणाचार्य श्री पं० गंगाधर जी शास्त्री, ४- अयोध्या प्रसाद जी रिसर्चस्कोलर कलकत्ते वाले ।

शास्त्रार्थ कराने वाले : राजा महेश्वरी प्रसाद नारायण देव राजधनवार (बिहार)

राजधनवार वाले शास्त्रार्थ के विषय में

राज धनवार ज़िला हजारी बाग (बिहार) में "सत्यमेव जयते नानृतम्" वाला वाक्य अक्षरशः सत्य सिद्ध हुआ।

जब शुद्ध वैशाख कृष्णा ७ सप्तमी सोमवार सं० २०१० वि० अप्रैल मास की ६ तारीख सन् १९५३ ई० को आर्य समाज और सनातन धर्म के बीच दो शास्त्रार्थ एक ही दिन में हुए।

पौराणिक पक्ष की ओर से शास्त्रार्थ कर्त्ता पहले दिन श्री पं० माधवाचार्य जी दिल्ली वाले नियुक्त किये गये।

एवं दूसरे दिन श्री पं० अखिलानन्द जी "कविरत्न" नियुक्त किये गये। मगर आर्य समाज की ओर से दोनों पण्डितों से एक ही पण्डित श्री ठाकुर अमर सिंह जी शास्त्रार्थ केशरी ने शास्त्रार्थ किये।

दोनों पण्डितों को पछाड़ कर "सत्य की ही विजय होती है झूठ की नहीं" वाली कहावत को सत्य करके दिखा दिया।

और दिखा दिया कि पुराणों को संसार का कोई भी पौराणिक पण्डित वेदानुकूल, सत्य और प्रामाणिक सिद्ध नहीं कर सकता है।

साथ ही यह भी सिद्ध कर दिया कि-महर्षि दयानन्द जी महाराज की पुस्तकों में अक्षर-अक्षर सत्य, वेदानुकूल और सर्व शास्त्र अनुमोदित और अखण्डनीय है संसार का कोई पौराणिक ही क्या कोई भी विधर्मी और विपक्षी ऋषि दयानन्द के बताये सिद्धांतों और ग्रन्थों को वेद विरुद्ध सिद्ध नहीं कर सकता है।

राजधनवार (बिहार) में शास्त्रार्थ क्यों हुआ ? यह भी एक प्रश्न पैदा होता है।

आर्य समाज के साथ पौराणिक मत, जैन मत, ईसाई मत, मुहम्मदी मत और अहमदी मत, आदि अनेक सम्प्रदायों से असंख्य शास्त्रार्थ हो चुके और असंख्य होंगे।

जब सिद्धान्तों में भेद होता है तो उभय पक्ष के प्रामाणिक ग्रन्थों के आधार पर खण्डन और मन्डन किया जाता है। दोनों पक्षों के पोषक दो पण्डित जब शास्त्रों के प्रमाणों का परस्पर आदान-प्रदान करते और शास्त्रों (प्रामाणिक ग्रन्थों) के प्रमाणों का अर्थ अपने-अपने ढंग से करते हैं इसी का नाम शास्त्रार्थ होता है। ऐसे शास्त्रार्थ असंख्य हुए और होते हैं और असंख्य ही होते रहेंगे। इसी लिए राज धनवार में भी हुआ।

आर्य समाज और सनातन धर्म में शास्त्रार्थ का विशेष कारण—

दोनों के प्रामाणिक ग्रन्थ वेद, ब्राह्मण, आरण्यक, उपनिषद, दर्शन, स्मृति और इतिहास एक है जिनको आर्य समाज मानता है उनको सनातन धर्म भी मानता है बहुत से ग्रन्थ ऐसे भी है जिनको सनातन धर्म मानता है आर्य समाज नहीं मानता है ऐसा कोई ग्रन्थ नहीं है जिसको केवल आर्य समाज मानता हो और सनातन धर्म न मानता हो।

जिन सिद्धान्तों को आर्य समाज मानता है प्रायः उन सब को सनातन धर्म भी मानता है कुछ ऐसे सिद्धान्त हैं जिनको सनातन धर्म ही मानता है आर्य समाज नहीं मानता है।

जिन ग्रन्थों के सिद्धांतों को आर्य समाज नहीं मानता है उनका खण्डन करता है इससे पौराणिकों को चिढ़ होती है एक यह कारण शास्त्रार्थ का हुआ तथा सर्वत्र होता है।

इन शास्त्रार्थों के करने से पौराणिकों को आर्थिक हानी भी होती है—

पौराणिक पक्ष आर्य समाज के विरुद्ध कितना ही खण्डन करे उससे आर्य समाजियों को आर्थिक हानि कुछ भी नहीं होती है पर आर्य समाज के प्रचार और उसकी वृद्धि से सनातन धर्मियों की अपार आय के साधनों, मूर्ति पूजा, तीर्थ

मृतक श्राद्ध और फलित ज्योतिष आदि का खण्डन होने से उसकी अपार आय की अपार हानि होती है यह शास्त्रार्थ का मुख्य कारण है इन्ही कारणों से सर्वत्र शास्त्रार्थ होते हैं इन्हीं कारणों से राज धनवार में भी हुआ।

पौराणिकों ने शास्त्रार्थ होने के अपने छपाये झूंठे शास्त्रार्थ में जो कारण बताये हैं वह जहां झूठे और मूर्खता पूर्ण हैं वहां उपहासास्पद भी है।

(१) किसी अशिष्टता और असभ्यता करने वाले लड़के को आर्य समाज की सभा से निकाला जाना।

(२) अपने दुर्गुणों के कारण आर्य समाज से निकाले हुए किसी उपदेश का आर्य समाज के विरुद्ध अनर्गल प्रलाप, यह कोई शास्त्रार्थ के कारण नहीं हैं न हो सकते हैं दो कारण उक्त झूंठे शास्त्रार्थ में यह लिखे हैं कि—

(१) स्कूलों के छात्रों ने "नमस्ते" का परित्याग कर दिया था।

(२) आर्य समाज का अस्तित्व खतरे में पड़ गया था।

दोनों ही बातें मिथ्या हैं और मूर्खता पूर्ण हैं। सारे देश के स्कूलों और कालिजों के विद्यार्थी प्रायः परस्पर नमस्ते ही अधिक करते हैं पठित वर्ग में इस समय जितना "नमस्ते" का प्रयोग होता है उतना अभिवादन की जगह दूसरे किसी भी शब्द का नहीं होता है। आर्य समाजी तो सर्वत्र नमस्ते करते ही हैं अपने आप को आर्य समाजी न कहने वाले करोड़ों मनुष्य भी नमस्ते करते हैं।

देश में आर्य समाजियों की संख्या प्रति दश वर्ष में शत प्रतिशत अर्थात दो गुणी बढ़ जाती है यह प्रति जनगणना के समय पता लगता है।

अगर आर्य समाज के सिद्धांत सत्य न होते तो यह वृद्धि क्यों होती, अतः अपनी आय को कायम रखने तथा व्यापार चलाने के लिए पौराणिक लोग शास्त्रार्थ का बहाना लेकर अपने पक्ष की लीपा पोती करते हैं। परन्तु उनको यह नहीं पता कि आजकल विज्ञान का युग है हर व्यक्ति झूंठ व सच को समझता तथा "मछली पेड पर चढ़ गयी" "सत्य वचन महाराज" वाला युग नहीं रहा।

क्या राजा महेश्वरी प्रसाद नारायण देव जी शास्त्रार्थ के उभय पक्ष सम्मत प्रधान थे ?

पौराणिकों ने अपनी पोल और पराजय पर पर्दा डालने के लिये एक झूठा और अधूरा "शास्त्रार्थ राज धनवार" नाम से छपवाया उसके अन्त में उपरोक्त नाम वाले स्थानीय जमींदार से अपने लिये विजय पत्र प्रकाशित किया है और उक्त रईस साहिब को दोनों पक्षों द्वारा माना गया शास्त्रार्थ का प्रधान बताया है जो सर्वथा असत्य है। उक्त सज्जन सनातन धर्म का उत्सव कराने वाले मुख्य थे उन्हीं के सामान से उन्हीं के मकान के सामने सनातन धर्म का पिन्डाल बना था। उन्हीं के मकान में पौराणिक पण्डित ठहरे हुए थे उन्होंने शास्त्रार्थ की बात करने को गये हुए पं० गंगाधर जी शास्त्री आदि के साथ अनुचित व्यवहार करते हुए आर्यों के लिये अपशब्द कहे थे जिस पर पं० गंगाधर जी शास्त्री तथा अन्य आर्य सज्जन अपना और समस्त आर्यों का अपमान समझते हुए उठकर चले आये थे। आर्य समाज उक्त सजन को प्रधान कैसे मान लेता ? आर्य समाज की ओर से दोनों शास्त्रार्थों में श्री पं० महादेवशरण जी अधिष्ठाता गुरुकुल देवघर ही थे उक्त सज्जन नहीं।

पौराणिक पक्ष की ओर से भी वह प्रधान थे कि—नहीं ? प्रत्यक्ष में प्रथम शास्त्रार्थ के प्रधान का कार्य पं० अखिलानन्द जी ने किया और दूसरे में पं० माधवाचार्य जी ने।

यदि उनसे मोटी दक्षिणा लेने के लिये उनके कान में कह दिया हो कि—आप प्रधान हैं महादेवादि की मूर्ति सदृश चुपचाप बैठे रहिये पुजारियों की भांति सारी क्रियायें उक्त दोनों पण्डित करेंगे तो पता नहीं, हां ! इतना पता अवश्य है कि— प्रत्यक्ष तो वह प्रधान थे नहीं।

दूसरे पौराणिकों ने अपनी पोल और पराजय पर पर्दा डालने के लिये राजा महेश्वरी प्रसाद नारायण देव जी, के नाम से अपने लिये एक विजय पत्र छपवाया है। वह प्रधान नहीं थे यदि प्रधान होते तो भी हमारी विजय किसी के विजय पत्र के कारण नहीं। हमारी विजय तो हमारे सत्य सिद्धान्तों, पुष्ट प्रमाणों और अकाट्य युक्तियों के कारण हैं। अतः हमारे लिये ऐसे पत्रों का कुछ भी मूल्य नहीं पौराणिकों के लिये यह डूबते को तिनके का सहारा, हो सकता हो तो हो।

यही सब कुछ इस शास्त्रार्थ के विषय में लिखना अत्यावश्यक था।

इस शास्त्रार्थ का क्या प्रभाव पड़ा यह आप खुद ही इन शास्त्रार्थों के अन्त में पढ़िये ! धन्यवाद !!

"लाजपतराय आर्य"
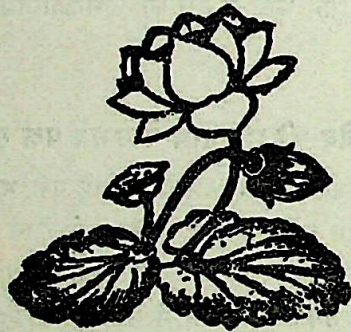
शास्त्रार्थ आरम्भ

ठाकुर अमर सिंह जी शास्त्रार्थ केशरी

धर्मानुरागी सज्जनों! भगवान का धन्यवाद है कि आज हम भाई-भाई आपस में प्रेम पूर्वक कुछ विचार विनिमय करने के लिए एकत्रित हुए हैं। यह विचार विनिमय प्रेम और शान्ति के साथ समाप्त हो यह मेरी हार्दिक कामना है। अपने देश और धर्म के गौरव को सुरक्षित रखने और उसको और भी ऊँचा करने के लिए अत्यन्त आवश्यक है, कि हमारे साहित्य में जो दोष आ गये हैं, उनका संशोधन करें। जिससे किसी विदेशी, विधर्मी और विपक्षी को हमारे पूर्वजों और हम पर आक्षेप करने का अवसर न मिले। जब हम पुराणों को देखते हैं, तो उनमें ऐसी असत्य कथाऐं, लिखी मिलती हैं। जिनको देखकर विरोधी लोग हमारे पूर्वजों की निन्दा करते हैं।

हम आर्य समाजियों का यह पूर्ण विश्वास है कि हमारे ऋषि, मुनि, राजे महाराजे ऐसे कदापि नहीं थे। और उन्होंने ऐसे धर्म विरुद्ध कार्य कभी नहीं किये थे, जैसे पुराणों में उन पर दोषारोपण किये गये हैं। आज देश के सम्मुख गोरक्षा अत्यावश्यक प्रश्न हैं। परन्तु गो रक्षा के मार्ग में एक बड़ी भारी रूकावट यह है कि, गोरक्षा विरोधी लोग पुराणों के आधार पर यह कहते तथा लिखते हैं कि गोवध सदा होता था, और भारत के राजे-महाराजे तथा ऋषि महर्षि तक गौ मांस भक्षण करते थे।

मैं कहता हूँ कि हमारे देश में मुसलमानों से पूर्व गोवध कभी नहीं होता था। पुराणों में जो लिखा है वह वेद विरुद्ध हैं। सर्वथा मिलाया हुआ असत्य है। और हमारे विरोधियों ने हमारे पूर्वजों पर कलंक लगाकर अपना उल्लू सीधा करने के लिये लिखा है।

परन्तु मेरे सनातन धर्मी भाई उसे अपने गले मढ़े बैठे हैं। उदाहरण के लिए मैं कुछ कथाएं उपस्थित करता हूँ—

"ब्राह्मणानां त्रिकोटीश्च, भोजयामास नित्यशः ॥४८॥
पंच लक्ष गवां मांसैः सुपक्वै घृत संस्कृतैः ॥४९॥

ब्रह्मवैवर्त पुराण प्रकृति खण्ड ३ अध्याय ५४ श्लोक ४८, ४९,
(वेंङ्कटेश्वर प्रेस द्वारा प्रकाशित)

स्वायम्भु मनु जो आदि आर्य सम्राट और मनुस्मृति जैसे धर्म शास्त्र के प्रणेता थे, उन्होंने गोमेध यज्ञ किये, और तीन करोड़ ब्राह्मणों को पांच लाख गौओ का मांस जो भली भांति घी से छोंका गया था, खिलाया!

कितना बड़ा अनर्थ है। कितना बड़ा लांछन है। क्या इस समय कोई पापी से पापी बादशाह भी ऐसा है, जिसके यहां लाखों क्या हजारों गौवें दावत के लिए मारी जाती हों। क्या स्वायम्भु मनु ऐसा पाप करते होगें? मैं कहता हूँ कदापि न करते होगें। और भी देखिये:—

सत्य व्रतस्तु तद्भत्वया कृपया च प्रतिज्ञया।
विश्वामित्र कलत्रं च पोषयामास वै तदा ॥१॥
हत्वा मृगान्वराहांश्च महिषांश्च वने चरान् ॥२॥
अविद्य माने मांसे तु वसिष्ठस्य महात्मनः ॥६॥
सर्वं कामदुहां दोग्ध्रीं ददर्शच नृपात्मजः ॥१०॥

दाश धर्मं गतो राजा, तां जघान् स वै मुने।
सतं मासं स्वयं चैव विश्वामित्रस्य त्वात्मजम् ॥११॥
भोजयामास तच्छुत्वा वशिष्ठो ह्यस्य चुकुहो ॥१२॥

शिव पुराण उमा संहिता अध्याय ३८ श्लोक १ व २ तथा ६ से १२ ॥
(श्याम काशी प्रेस मथुरा द्वारा प्रकाशित)

मनु के वशंज चक्रवर्ती महाराजा मान्धाता के पौत्र सत्यव्रत ने ऋषि विश्वामित्र के परिवार का उस समय पालन किया, जिस समय ऋषि विश्वामित्र घोर तपस्या में लगे हुए थे। और उनकी पत्नी अपने पुत्र गालव को वेचने लगी थी। —उस समय उसने अनेक प्रकार के मांसों से उस परिवार का पालन किया, एक दिन वशिष्ठ ऋषि की कामधेनु गऊ को मारकर उसका मांस स्वयं भी खाया। और विश्वामित्र के पुत्रो को भी खिलाया।

और देखिये—

एवमेषा च गौ धर्मं प्राप्स्यते नात्र संशयः।
पितृनभ्यर्च्य धर्मेण नाधर्मो नो भविष्यति ॥१८॥
एवमुक्ताश्च ते सर्वे प्रोक्षयित्वा च गां तदा।
पितृभ्यः कल्पयित्वा तु ह्यु पायुंज्जत भारत ॥१९॥
उपयुज्य च गां सर्वे गुरोस्तस्य न्यवेदयन्।
शार्दूलेन हता धेनुर्वत्सा वै गृह्यतामिति ॥२०॥

शिव पुराण उमा संहिता अध्याय ४१ श्लोक १८, १९, २० पृष्ठ, १२५७ ॥
(श्यामकाशी प्रेस मथुरा द्वारा प्रकाशित)

कौशिक (विश्वामित्र) के पुत्र गर्ग ऋषि के शिष्य बन गये। और उनकी गौ को मार कर उसके मांस से श्राद्ध करके उसके बछड़े को गर्ग ऋषि के पास ले गये और कह दिया कि—गौ तो शेर ने खा ली, बछड़ा आप ले लीजिये।

सब ने यह विचार किया कि यदि इस गौ के मांस को वैसे ही खायेंगे। तो पाप लगेगा यदि पितरो का श्राद्ध इसके द्वारा करके पीछे खायेंगे, तो हमको पाप नहीं लगेगा। और गौ-धर्म कार्य में लग जायेगी।

यह कहानी पुराणों में कई जगह तो बहुत स्पष्ट शब्दों में मिलती है।

गवां लक्षछेदनं च हरिणानां द्विलक्षकम् ॥१६॥

ब्रह्मवैवर्त पुराण श्री कृष्ण जन्म खण्ड अध्याय १०५।
पृष्ठ १०८६, श्लोक ६० से ६३ ॥
(कलकत्ता मोर संस्करण द्वारा प्रकाशित)

अर्थात एक लाख गौ मारी जायें और दो लाख हरिण इसी प्रकार और भी लाखों जीव मारने की व्यवस्था थी। तथा रुक्मणी के विवाह के लिये वहुत पशु मारे जाने का विचार किया गया था, जिसमें एक लाख गौ मारे जाने का निश्चय था।

आगे देखियेः—

पंच कोटि गवां मांसं सं-पूपं स्वान्नमेव च ॥९८॥
एतेषां च नदी राशी भुञ्जते ब्राह्मणाः मुने ॥९९॥

ब्रह्मवैवर्त पुराण प्रकृति खण्ड २ अध्याय ६१ श्लोक ९८, ९९,
(वेंकटेश्वर प्रेस बम्बई द्वारा प्रकाशित)

चन्द्र के पौत्र और बुद्ध के पुत्र चैत्र के यहां पांच करोड़ गौओं का मांस ब्राह्मणों को खिलाया गया।

'कहिये पांच करोड़ गऊऐं एक-एक दिन में ब्राह्मणों के भोजनार्थ मारी जायें' कितने बड़े भयंकर पाप का एक क्षत्रिय राजा पर आरोप है। क्या इस समय गौ भक्षक ईसाई और मुसलमानों में भी कोई रईस नवाब एवं बादशाह ऐसा सुना है, जिसके यहां दावत के लिए हजार दो हजार गायों का वध किया जाता हो?

इसके अतिरिक्त दूसरा आरोप पुराणों में हमारे पूर्वजों पर व्यभिचार अर्थात् पर स्त्री गमन का लगाया हुआ है। इसके उदाहरण भी देखिये। गीता में श्रीकृष्ण चन्द्र जी कहते हैं:—

"यद्यदाचरति श्रेष्ठस्तत्तदेवेतरो जनः।
स यत् प्रमाणं कुरुते लोकस्तदनु वर्तते॥"

श्री मद्भगवद्गीता अध्याय ३ श्लोक २१,

अर्थात्—श्रेष्ठ पुरुष जैसा-जैसा आचरण करते हैं। छोटे मनुष्य भी वैसा-वैसा ही करने लगते हैं। अभिप्राय यह है कि श्रेष्ठ पुरुष को सदा श्रेष्ठ कार्य ही करने चाहिये। जिसे देख-देखकर उनके अनुगामी श्रेष्ठ कर्म ही करें।

श्री कृष्ण जी महाराज युधिष्ठर जी से कहते हैं कि—हे पाण्डव! मेरी १६ हजार स्त्रियां हैं।

देखिये प्रमाण नोट करियेः—

"मम् पत्नी सहस्राणि सन्ति पांडव षोडशः"॥

भविष्य पुराण उत्तर पर्व ४ अध्याय १११ श्लोक ३ पृष्ठ ४७२,
(वेंक्टेश्वर प्रेस बम्बई द्वारा प्रकाशित)

हमारा यह प्रश्न है कि, यदि ऐसा सत्य हैं तो श्री कृष्ण जी ने ऐसा क्यों किया? क्या यह धर्म हैं? क्या इस लिए किया कि मेरे अनुगामी ऐसा ही किया करें? उनकी भी हजारों स्त्रियां हुआ करें? एक नहीं आप जितने चाहें उतने प्रमाण लो—यथाः—

तं द्रष्ट्वा सुन्दरं साम्बं सर्वाश्चुक्षुभिरे स्त्रियः॥२५॥
स्वाभावतोल्प सत्वानां जघनानि विसुस्रुवुः॥२७॥
ब्रह्मचर्येऽपि वर्तन्त्याः साध्व्या ह्यपि च श्रूयते।
हृद्यं हि पुरुषं दृष्ट्वा योनिः संक्लिद्यते स्त्रियाः॥२८॥

भविष्य पुराण ब्राह्म पर्व अध्याय ७३ पृष्ठ ७७, श्लोक २५, २७, २८,
(वेंक्टेश्वर प्रेस बम्बई द्वारा प्रकाशित)

श्री कृष्ण जी की वह पत्नियां श्री कृष्ण जी के ही पुत्र साम्ब पर काम के वश होकर आसक्त हो गयी यह देवर्षि श्री नारद जी तथा श्री कृष्ण चन्द्र जी दोनों ने देखीं। और कहा है किः—

चौरैरपहृताः सर्वा वेश्यात्वं समवाप्स्यथ॥१८॥
एवं नारद शापेन मच्छापेन च साम्प्रतम्॥१९॥
वेश्याधर्मेण वर्तध्व मधुना नृप मन्दिरे॥२२॥
न चैकस्मिन्रतिः कार्या पुरुषे धन वर्जिते॥२५॥
सुरूपो वा विरूपो वा द्रव्यं तत्र प्रयोजनम्॥२६॥

भविष्य पुराण उत्तर पर्व अध्याय १११ पृष्ठ ४७३,
(वेंक्टेश्वर प्रेस बम्बई द्वारा प्रकाशित)

अर्थात फिर दोनों ने शाप दिया कि तुम सब वेश्या हो जाओ। वेश्या धर्म में तुम वर्तो, धन रहित मनुष्यों से तुम रति क्रिया मत करना मनुष्य सुरूप हो या कुरूप वहां धन से ही प्रयोजन है। तथा फिर उनके उद्धार के लिए उपाय यह बताया कि, रविवार के दिन किसी वेदपारगामी ब्राह्मण को बुला कर उसके साथ बिना फीस समागम करें। तो उद्धार हो जावेगा पता नोट करिये तथा यह पुस्तक है देख लीजिये मैं बोलता हूँ।

यदा सूर्यदिने प्राप्ते पुष्यो वा स पुर्नवसुः ॥
भवेत्सर्वोषधिस्नानं सम्यङ्नारी समाचरेत् ॥३३॥
तदा पञ्चशरस्यापि संनिधानात्त्वमेष्यति।
अर्चयेत्पुण्डरीकाक्षमनङ्गस्यापि कीर्तनम् ॥३४॥
कामाय पादौ सं पूज्य जंघे वै मोह कारिणे।
मेढ्रं कंदर्पनिधये कटिं प्रीतियुजे नमः ॥३५॥
नाभिं सौख्य समुद्राय वामनाय तथोदरम्।
हृदयं हृदयेशाय स्तनावाह्लादकारिणे ॥३६॥
उत्कण्ठायेति वै कंठमास्यमानन्दजाय च।
वामांसं पुष्प चापाय पुष्पबाणाय दक्षिणम् ॥३७॥
नमोऽनन्ताय वै मौलिं विलोलायेति च ध्वजम्।
सर्वात्मने शिरस्त द्वद्देवदेवस्य पूजयेत् ॥३८॥
नमः श्रीं पतये तार्क्ष्य ध्वजांकुश धराय च।
गदिने पीतवस्त्राय शंखिने चक्रिणे नमः,
नमो नारायणायेति कामदेवात्मने नमः ॥३९॥
नमः शांत्ये नमः प्रीत्यै नमो रत्यै नमःश्रिये।
नमः पुष्टयै नमस्तुष्टयै नमः सर्वार्थदाय च ॥४०॥
एवं संपूज्य गोविन्द मनंगात्मकमीश्वरम्।
गंधैर्माल्यैस्तथा धूपैर्नैवेद्यै श्चैव भामिनी ॥४१॥
अत्र चाहूय धर्मज्ञं ब्राह्मणं वेदपारगम्।
अव्यंगावयवं पूज्य गंध पुष्पादि भिस्तथा ॥४२॥
शालेयतंडुल प्रस्थं घृतपात्रेण संयुतम्।
तस्मै विप्राय सा दद्यान्माधवः प्रयितामिति ॥४३॥
यथेष्टाहारभुक्तं च तमेव द्विजसत्तमम्।
रत्यर्थं काम देवोऽयमिति चित्तेऽवधार्य च ॥४४॥
यद्यदिच्छति विप्रेन्द्रस्तत्तत्कुर्याद्विलासिनी।
सर्वभावेन चात्मान मर्पयेत्सिमतभाषिणी ॥४५॥
एवमादित्यवारेण सदा तद्व्रतमाचरेत्।
तंडुल प्रस्थदानं च यावन्मासांस्तु द्वादश ॥४६॥

भविष्य पुराण उत्तर पर्व अध्याय १११ श्लोक ३३, ४१, ४२, ४३-४४, ४५, ४६,

नोटः—"रविवार" ३३ और ४६ नम्बर वाले श्लोकों में है। अच्छी तरह से देख लीजिये ॥

जब श्री कृष्ण जी महाराज और उनके परिवार का यह चरित्र बताया गया तो उनके भक्तों का क्या हाल होगा ? और लीजिये:—

"विष्णु ने जालन्धर की पत्नी वृन्दा से व्यभिचार किया" यह पद्म पुराण में लिखा है। मैं बोलता हूँ आप ध्यान से सुनिये तथा देखिये:—

नोट—स्वामी जी ने केवल आवश्यक वाक्य को ही बोला था, यहां पुराणों से पूरा उदाहरण मूल का दिया जाता है, ताकी पाठकगण अच्छी तरह देख सकें।

पतिर्धर्मस्य यो नित्यं परदाररतः कथम्। ईश्वरोऽपि कृतं भुङ्क्ते कर्मेत्याहुर्मनीषिणः ।५३॥

वृन्दा का शाप—

अहं मोहं यथा नीता त्वया माया तपस्विना।
तथा तव वधूं मायातपस्वीकोऽपि नेष्यति ॥५४॥

इति शप्तस्तथा विष्णुर्जगामादृश्यतां क्षणात्।
सा चित्रशाला पर्यङ्कः स च तेऽथ प्लवङ्गमाः ॥५५॥

नष्टं सर्वं हरौ याते वनं शून्यं विलोक्य सा।
वृन्दा प्राह सखीं पश्य जिह्मं तद्विष्णुना कृतम् ॥५६॥

त्यक्तं पुरं गतं राज्यं कान्तः संदेहतां गतः। अहं वने विविक्तैतत्क्व यामि विधिनिर्मिता ॥५७॥

मनोरथानां विषयमभून्मे प्रियदर्शनम्। प्राह निःश्वस्य चैवोष्णंराज्ञी वृन्दातिदुःखिता ॥५८॥

मम प्राप्तं हि मरणं त्वया हि स्मरदूतिके।
इत्युक्ता सा तया प्राह मम त्वं प्राणरूपिणी ॥५९॥

तस्यास्तथोक्तमाकर्ण्य इति कर्त्तव्यतां ततः।
वने निश्चत्य सा वृन्दा गत्वा तत्र महत्सरः ॥६०॥

विहाय दुःखमकरोद्गात्रक्षालनमम्बुना। तीरे पद्मासनं बद्ध्वा कृत्वा निर्विषयं मनः ॥६१॥

शोषयामास देहं स्वं विष्णुसङ्गेन दूषितम्।
तपश्चचार साऽत्युग्रं निराहारा सखी समम् ॥६२॥

गन्धर्वलोकतो वृन्दामथागत्याप्सरोगणः।
प्राह याहीति कल्याणि! स्वर्गं मा त्यज विग्रहम् ॥६३॥

गान्धर्वं शस्त्रमेतत्त्रिभुवनविजयि श्रीपतिस्तोषमग्रयं नीतो येनेह वृन्दे! त्यजसि कथमिदं तद्वपुः प्राप्तकामम्।
कान्तं ते विद्धि शूलीप्रवरशहतं पुण्यलभ्यस्य भूषा स्वर्गस्य त्वं भवाद्य द्रुतममखनं चण्डि! भद्रे! भज स्वम् ॥६४॥

श्रुत्वा शास्त्रं वधूनां जलधिजदयिता वाक्यमाह प्रहस्य स्वर्गादाहृत्य मुक्ता त्रिदशपतिवधूश्चातिवीरेण पत्या।
आदौ पात्रं मुखानामहमरजिता प्रेयसी तद्वियुक्ता निर्दुष्टा तद्यतिष्ये प्रियममृतगतं प्राप्नुयां येन चैव ॥६५॥

इत्युक्त्वा ससखी वृन्दा विससर्जाप्सरोगणान्।
तत्प्रीतिपाशबद्धास्ता नित्यमायान्ति यान्ति च ॥६६॥

योगाभ्यासेन वृन्दाऽथ दग्ध्वा ज्ञानाग्निना गुणान् ।
विषयेभ्यः समाहृत्य मनः प्राप ततः परम् ।।६७।।

दृष्ट्वा वृन्दारिकां तत्र महान्तश्चाप्सरोगणाः । तुष्टुवुर्नभसस्तुष्टा ववृषुः पुष्पवृष्टिभिः ।।६८।।

शुष्ककाष्ठचयं कृत्वा तत्र वृन्दाकलेवरम् । निधायाग्नि च प्रज्वाल्य स्मरद्दूतीविवेशतम् ।।६९।।

दग्धवृन्दाङ्गरजसाबिम्बतद्गोलकात्मकम् ।
कृत्वा तद्भस्मनः शेषं मन्दाकिन्यां विचिक्षिपुः ।।७०।।

यत्र वृन्दा परित्यज्य देहं ब्रह्मपथं गता । आसीद्वृन्दावनं तत्र गोवर्धनसमीपतः ।।७१।।

देव्योऽथ स्वर्गमेत्य त्रिदशपतिवधूसत्वसंपत्तिमाहुर्देवीभ्यस्तन्निशम्य प्रमुदितमनसो निर्जराद्याश्च सर्वे ।
शत्रोर्दैत्यस्य हित्वा प्रबलतरभयं भीममेरी निजघ्नुः श्रुत्वा तत्रासनस्थः परिजननिवहोऽवाप शोभां शुभस्य ।।७२।।

पद्म पुराण उत्तर खण्ड अध्याय १६ श्लोक ५३ से ७२ तक,
(आनन्द आश्रम प्रेस पूना तथा कलकत्ता मोर संस्करण द्वारा प्रकाशित)

तथा

पद्म पुराण में ही और देखिये—

नारद उवाच

विष्णुर्जालन्धरं गत्वा तद्दैत्यपुटभेदनम् । पतिव्रत्यस्य भङ्गाय वृन्दयाश्चाकरोन्मतिम् ।।१।।

अथ वृन्दारका देवी स्वप्नमध्ये ददर्शह । भर्तारं महिषारूढं तैलाभ्यक्तं दिगम्बरम् ।।२।।

कृष्ण प्रसूनभूषाढ्यं क्रव्यादगणसेवितम् । दक्षिणाशांगतं मुण्डं तमसा व्यावृतं तदा ।।३।।

स्वपुरं सागरे मग्नं सहसैवात्मना सह । ततःप्रबुद्धा सा बाला स्वस्वप्नं प्रविचिन्वती ।।४।।

ददर्शोदितमादित्यं सच्छिद्रं निश्चलं मुहुः ।
तदनिष्टमिति ज्ञात्वा रुदती भयविह्वला ।।५।।

कुत्रचिन्नालभच्छर्म गोपुराट्टालभूमिषु ।
ततःसखीद्वययुता नगरोद्यानमागमत् ।।६।।

तत्रापि सा गता बाला नालभत्कुत्रचित्सुखम् । वनाद्वनान्तरं याता नैव वेदात्मनस्तदा ।।७।।

ततो भ्रमन्ती सा बाला ददर्शातीविभीषणौ । राक्षसौ सिंहवदनौ दंष्ट्रानयनभीषणौ ।।८।।

तौ दृष्ट्वा विह्वलातीव पलायनपरा तदा ।
ददर्श तापसं शान्तं सशिष्यं मौनमास्थितम् ।।९।।

ततस्तत्कण्ठ आसज्य निजां बाहुलतां भयात् । मुने मां रक्ष शरणमागतामित्यभाषत ।।१०।।

मुनिस्तां विह्वलां दृष्ट्वा राक्षसानुगतां तदा ।
हुंकारेणैव तौ घोरौ चकार विमुखौ तदा ।।११।।

तद्धुंकारभयत्रस्तौ दृष्ट्वा तौ गगनं गतौ । प्रणम्य दण्डवद्भूमौ वृन्दावचनमब्रवीत् ।।१३।।

वृन्दोवाच

रक्षिताहं त्वया घोराद्भयात्तस्मात्कृपानिधे । किंचिद्विज्ञप्तुमिच्छामि कृपयातन्निशामय ।।१४।।

जलन्धरो हि मे भर्ता रुद्रं योद्धुं गतः प्रभो ! ।
स तत्रास्ति कथं युद्धे तन्मे कथय सुव्रत ।।१४।।

नारद उवाच

मुनिस्तद्वाक्यमाकर्ण्य कृपयोर्ध्वमवैक्षत । तावत्कपीशावायातौ तं प्रणम्याग्रतः स्थितौ ।।१५।।

ततस्तद्भ्रूलतासंज्ञानियुक्तौ गगनं गतौ ।
गत्वा क्षणार्धादागत्य वानरावग्रतःस्थितौ ।।१६।।

शिरःकबन्धहस्तौ तौ दृष्ट्वाब्धितनयस्य सा । पपात मूर्छिता भूमौभ र्तृव्यसनदुःखिता ।।१७।।

कमण्डलुजलैः सिक्ता मुनिनाऽऽश्वासिता तदा ।
स्वभर्तृभाले सा भालं कृत्वा खिन्ना रुरोद ह ।।१८।।

वृन्दोवाच

यःपुरा सुखसंवादैर्विनोदयसि मां विभो । स कथं न वदस्यद्य वल्लभां मामनागसम् ।।१६।।

येन देवाः सगन्धर्वा निर्जिता हरिणा सह ।
स कथं तापसेन त्वं त्रैलोक्यविजयी हतः ।।२०।।

नारद उवाच

रुदित्वेति तदा वृन्दा तं मुनि वाक्यमब्रवीत् ।।२१।।

वृन्दोवाच

कृपानिधे मुनिश्रेष्ठ जीवनं मेऽस्य सुप्रियम् । त्वमेवास्य पुनःशक्तो जीवनाय मतो मम ।।२२।।

अथ तद्वाक्यमाकर्ण्य प्रहस्य मुनिरब्रवीत् ।।२३।।

मुनिरुवाच

नायं जीवयितुं शक्यो रुद्रेण निहतो युधि । तथापि त्वत्कृपाविष्ट एनं संजीवयाम्यहम् ।।

नारद उवाच

इत्युक्त्वान्तर्दधे यावत्तावत्सागरनन्दनः । वृन्दामालिङ्ग्य तद्वक्त्रं चुचुम्बे प्रीतिमानसः ।।२५।।

अथ वृन्दापि भर्तारं दृष्ट्वा हर्षितमानसा । रेमे तद्वनमध्यस्था तद्युक्ता बहुवासरम् ।।

कदाचित्सुरतस्यान्ते दृष्ट्वा विष्णुं तमेव हि ।
निर्भर्त्स्य क्रोधसंयुक्ता वृन्दा वचनमब्रवीत् ।।२७।।

वृन्दोवाच

धिक्तवेदं हरेशीलं परदाराभिगामिनः । ज्ञातोऽसि त्वं मया सम्यंक मायाप्रत्यक्षतापसः ॥२८॥
यौ त्वया मायया द्वाःस्थौ स्वीकीयौ दर्शितौ मम ।
तावेव राक्षसौ भूत्वा भार्या तव हरिष्यतः ॥२९॥
त्वं चापि भार्यादुःखार्तो वने कपिसहायवान् । भ्रम सर्पेश्वरेणायं यस्तेशिष्यत्वमागतः ॥३०॥
पद्म पुराण उत्तर खण्ड ६ अध्याय, १०५ श्लोक १ से ३०,

तथा चन्द्र ने अपने गुरु बृहस्पति की पत्नी तारा को हरण करके उसके साथा व्यभिचार किया। मनु जी महाराज अपनी स्मृति में गुरु पत्नी गमन को महापातक बताते हैं। लीजिये प्रमाणः—

यथा—

ऋषय ऊचुः

कोऽसौ पुरूरवा राजा ? कोर्वशी देवकन्यका ? । कथं कष्टं च सम्प्राप्तं तेन राज्ञा महात्मना ? ॥१॥ सर्वं कथानकं ब्रूहि लोमहर्षणजाऽधुना । श्रोतुकामा वयं सर्वे त्वन्मुखाब्जच्युतं रसम् ॥२॥ अमृतादपि मिष्टा ते वाणी सूत ! रसात्मिका । तृप्यामो वयं सर्वे सुधया च यथाऽमरा: ॥

सूत उवाच

शृणुध्वं मुनयः ! सर्वे कथां दिव्यां मनोरमाम् ॥ वक्ष्याम्यहं यथाबुध्या श्रुतां व्यासवरोत्तमात् ॥४॥ गुरोस्तु दयिता भार्या तारा नामेति विश्रुता । रूपयौवन युक्ता सा चार्वङ्गी मदविह्वला ॥५॥ गतैकदा विधोर्धाम यजमानस्य भामिनी । दृष्टा च शशिनाऽत्यर्थं रूपयौवनशालिनी ॥६॥ कामातुरस्तदा जातः शशी शशिमुखीं प्रति ॥ साऽपि वीक्ष्य विधुं कामं जाता मदनपीडिता ॥७॥ तावन्योन्यं प्रेमयुक्तौ स्मरार्तौ बभूवतुः । ताराःशशी मदोन्मत्तौ कामबाणप्रपीड़ितौ ॥८॥ रेमाते मदमत्तौ तौ परस्परस्पृहान्वितौ । दिनानि कतिचित्तत्र जातानि रममाणयोः ॥९॥ ब्रहस्पतिस्तु दुःखार्त्तस्तारामानयितुं गृहम् । प्रेषयामास शिष्यं तु नाऽऽयाता सा वशीकृता ॥१०॥ पुनः पुनर्यदा शिष्यं परावर्तत चन्द्रमा । बृहस्पतिस्तदा क्रुद्धो जगाम स्वयमेव हि ॥११॥ गत्वा सोमगृहं तत्र वाचस्पतिरुदारधीः । उवाच शशिनं क्रुद्धः स्मयमानं मदान्वितम् १२॥ किं कृतं किल शीतांशो ! कर्मधर्मविगर्हितम् । रक्षिता भार्येयं सुन्दरी केन हेतुना ? ॥१३॥ तव देव ! गुरुश्चाऽहं यजमानोऽसि सर्वथा । गुरुभार्या कथं मूढ़ ! भुक्ता किं रक्षिताऽथवा ? ॥१४॥ ब्रह्महा हेमहारी च सुरापो गुरुतल्पगः । महापातकिनो ह्येते तत्संसर्गी च पञ्चमः ॥१५॥ महापातकयुक्तस्त्वं दुराचारोऽतिगर्हितः । न देवसदनार्होऽसि यदि भुक्तेयमङ्गना ॥१६॥ मुञ्चेमामसितापाङ्गीं नयामि सदनं मम । नोचेद्वक्ष्यामि दुष्टात्मन् ! गुरुदारापहारिणम् ॥१७॥ इत्येवं भाषमाणं तमुवाच रोहिणीपतिः । गुरुं क्रोधसमायुक्तं कान्ताविरहदुःखितम् ॥१८॥

इन्दुरुवाच

क्रोधार्त्ते तु दुराराध्या ब्राह्मणाः क्रोधवर्जिताः । पूजार्हा धर्मशास्त्रज्ञा वर्जनीयास्ततोऽन्यथा ॥१९॥ आगमिष्यति सा कामं गृहं ते वरवर्णिनी । अत्रैव संस्थिता बाला का ते हानिरिहाऽनघ ! ॥२०॥ इच्छया संस्थिता चाऽत्र सुखकामार्थिनी हि सा । दिनानि कतिचित्स्थित्वा स्वेच्छया चाऽऽगमिष्यति ॥२१॥ त्वयैवोदाहृतं पूर्वं धर्मशास्त्रमतं तथा । न स्त्री दुष्यति चारेण न विप्रो वेदकर्मणा ॥२२॥ इत्युक्तः शशिना तत्र गुरुरत्यन्तदुःखितः ॥ जगाम स्वगृहं तूर्णं चिन्ताविष्टः स्मरातुरः ॥२३॥ दिनानि कतिचित्तत्र स्थित्वा चिन्तातुरो गुरुः । ययावथ गृहं तस्य त्वरितश्चौषधीपतेः ॥२४॥

स्थितः क्षत्रा निषिद्धोऽसौ द्वारदेशे रुषाऽन्वितः । नाऽऽजगाम शशी तत्र चुकोपाऽति बृहस्पतिः ॥२५॥ अयं अयं मे शिष्यतां यातो गुरुपत्नीं तु मातरम् । जग्राह बलतोऽधर्मी शिक्षणीयो मयाऽधुना ॥२६॥ उवाच वाचं कोपात्तु द्वारदेशस्थितो बहिः । किं शेषे भवने मन्द ! पापाचार ! सुराधम ! ॥२७॥ देहि मे कामिनीं शीघ्रं नोचेच्छापं ददाम्यहम् । करोमि भस्मसान्नूनं न ददासि प्रियां मम ॥२८॥ सूत उवाच ! क्रूराणि चैवमादीनि भाषणानि बृहस्हतेः । श्रुत्वा द्विजपतिः शीघ्रं निर्गतः सदनाद्बहिः ॥२९॥ तमुवाच हसन् सोमः किमिदं बहु भाषसे ? । न ते योग्याऽसिताङ्गी सर्वलक्षणसंयुक्ता ॥३०॥ कुरूपां च स्वसदृशीं गृहाणाऽन्यां स्त्रियं द्विज ! । भिक्षुकस्य गृहे योग्या नेदृशी वरवर्णिनी ॥३१॥ रतिः स्वसदृशे कान्ते नार्याः किल निगद्यते । त्वं न जानासि मन्दात्मन् ! कामशास्त्र ? विनिर्णयम् ॥३२॥ यथेष्टं गच्छ दुर्बुद्धे ! नाऽहं दास्यामि कामिनीम् । यच्छक्यं कुरु तत्कामं न देया वरवर्णिनी ॥३३॥ कामार्त्तस्य च ते शापो न मां बाधितुमर्हति । नाऽहं ददे गुरो ! कान्तां यथेच्छसि तथा कुरु ॥३४॥

सूत उवाच

इत्युक्तः शशिना चेज्यश्चिन्तामाप रुषान्वितः । जगाम तरसा सद्म क्रोधयुक्तः शचीपतेः ॥३५॥ दृष्ट्वा शतक्रतुस्तत्र गुरुं दुःखातुरं स्थितम् । पाद्यार्घ्याचमनीयाद्यैः पूजयित्वा सुसंस्थितः ॥३६॥ पप्रच्छ परमोदारस्तं तथाऽवस्थितं गुरुम् । का चिन्ता ते महाभाग ! शोकार्त्तोऽसि महामुने ! ? ॥३७॥ केनाऽपमानितोऽसि त्वं ? मम राज्ये गुरुश्च मे । त्वदधीनमिदं सर्वं सैन्यं लोकाधिपैः सह ॥३८॥ ब्रह्मा विष्णुस्तथा शम्भुर्ये चाऽन्ये देवसत्तमाः । करिष्यन्ति च साहाय्यं का चिन्ता वद साम्प्रतम् ॥३९॥

गुरुरुवाच

शशिनाऽपहृता भार्या तारा मम सुलोचना । न ददाति स दुष्टात्मा प्रार्थितोऽपि पुनः पुनः ॥४०॥ किं करोमि सुरेशान ! त्वमेव शरणं मम। साहाय्यं कुरु देवेश ! दुःखितोऽस्मि शतक्रतो ! ॥४१॥

इन्द्र उवाच

मा शोकं कुरु धर्मज्ञ ! दासोऽस्मि तव सुव्रत ! ॥ आनयिष्याम्यहं नूनं भार्यां तव महामते ! ॥४२॥ प्रेषिते चेन्मया दूते न दास्यति मदाकुलः । ततो युद्धं करिष्यामि देवसैन्यैः समावृतः ॥४३॥ इत्याश्वास्य गुरुं शक्रो दूतं वक्तुं विचक्षणम् । प्रेषयामास सोमाय वार्ताशंसिनमद्भुतम् ॥४४॥ स गत्वा शशिलोकं तु त्वरितं सुविचक्षणः । उवाच वचनेनैव वचनं रोहिणीपतिम् ॥४५॥ प्रेषितोऽहं महाभाग ! शक्रेण ! त्वां विवक्षया । कथितं प्रभुणा यच्च तद्ब्रवीमि महामते ! ॥४६॥ धर्मज्ञोऽसि महाभाग ! नीतिं जानासि सुव्रत ! । अत्रिः पिता ते धर्मात्मा न निन्द्यं कर्तुमर्हसि ॥४७॥ भार्या रक्ष्या सर्वभूतैर्यथाशक्ति ह्यतन्द्रितैः । तदर्थे कलहः कामं भविता नाऽत्र संशयः ॥४८॥ यथा तव तथा तस्य यत्नः स्याद्दाररक्षणे । आत्मवत्सर्वभूतानि चिन्तय त्वं सुधानिधे ॥४९॥ अष्टाविंशतिसङ्ख्यास्ते कामिन्यो दक्षजाः शुभाः । गुरुपत्नीं कथं भोक्तुं त्वमिच्छसि सुधानिधे ! ॥५०॥ स्वर्गे सदा वसन्त्येता मेनकाद्या मनोरमा. ॥ भुङ्क्ष्व ताः स्वेच्छया कामं मुञ्च पत्नीं गुरोरपि ॥५१॥ ईश्वरा यदि कुर्वन्ति जुगुप्सितमहन्तया । अज्ञास्तदनुवर्तन्ते तदा धर्मक्षयो भवेत ॥५२॥ तस्मान्मुञ्च महाभाग ! गुरोः पत्नीं मनोरमाम् । कलहस्त्वन्निमित्तोऽद्य सुराणां न भवेद्यथा ॥५३॥

सूत उवाच

सोमः शक्रवचः श्रुत्वा किञ्चित्क्रोधसमाकुलः । भङ्ग्या प्रतिवचः प्राह शक्रदूतं तदा शशी ॥५४॥

इन्दुरुवाच

धर्मज्ञोऽसि महाबाहो ! देवानामधिपः स्वयम् । पुरोधाऽपि च ते तादृग्युवयोः सदृशी मतिः ।।५५।। परोपदेशे कुशला भवन्ति बहवो जनाः । दुर्लभस्तु स्वयं कर्ता प्राप्ते कर्मणि सर्वदा ।।५६।। बार्हस्पत्यप्रणीतं च शास्त्रं गृह्णन्ति मानवाः । को विरोधोऽत्र देवेश ! कामयानां भजन् स्त्रियम् ।।५७।। स्वकीयं बलिनां सर्वं दुर्बलानां न किञ्चन । स्वीया च परकीया च भ्रमोऽयं मन्दचेतसाम् ।।५८।। तारा मय्यनुरक्ता च यथा न तु तथा गुरौ । अनुरक्ता कथं त्याज्या धर्मतो न्यायतस्तथा ।।५९।। गृहारम्भस्तु रक्तायां विरक्तायां कथं भवेत् ?। विरक्तेयं तदा जाता चकमेऽनुजकामिनीम् ।।६०।। न दास्येऽहं वरारोहां गच्छ दूत ! वद स्वयम् । ईश्वरोऽसि सहस्राक्ष ! यदिच्छसि कुरुष्व तत् ।।६१।।

सूत उवाच

इत्युक्तः शशिना दूतः प्रययौ शक्रसन्निधिम् । इन्द्रायाऽऽचष्ट तत्सर्वं यदुक्तं शीतरश्मिना ।।६२।। तुराषाडपि तच्छ्रुत्वा क्रोधयुक्तो बभूव ह । सेनोद्योगं तथा चक्रे साहाय्यार्थं गुरोर्विभुः ।।६३।। शुक्रस्तु विग्रहं श्रुत्वा गुरुद्वेषात्ततो ययौ । मा ददस्वेति तं वाक्यमुवाच शशिनं प्रति ।।६४।। साहाय्यं ते करिष्यामि मन्त्रशक्त्या महामते !। भविता यदि यदि सङ्ग्रामस्तव चेन्द्रेण मारिष ! ।।६५।। शङ्करस्तु तदाकर्ण्य गुरुदाराभिमर्शनम् । गुरुशत्रुं भृगुं मत्वा साहाय्यमकरोत्तदा ।।६६।। सङ्ग्रामस्तु तदा वृत्तो देवदानवयोर्द्रुतम् । बहूनि तत्र वर्षाणि तारकासुरवत्किल ।।६७।। देवासुरकृतं युद्धं दृष्ट्वा तत्र पितामहः । हंसारूढो जगामाऽऽशु तं देशं क्लेशशान्तये ।।६८।। राकापतिं तदा प्राह मुञ्च भार्यां गुरोरितिनो चेद्विष्णुं समाहूय करिष्यामि तु संक्षयम् ।।६९।। भृगुं निवारयामास ब्रह्मा लोकपितामहः । किमन्यायमतिर्जाता सङ्गदोषान्महामते ! ।।७०।। निषेधयामास ततो भृगुस्तं चौषधीपतिम् । मुञ्च भार्यां गुरोरद्य पित्राऽहं प्रेषितस्तव ।।७१।।

सूत उवाच

द्विजराजस्तु तच्छ्रुत्वा भृगोर्वचनमद्भुतम् । ददावथ प्रियां भार्यां गुरोर्गर्भवतीं शुभाम् ।।७२।। प्राप्य कान्तां गुरुर्हृष्टः स्वगृहं मुदितो ययौ । ततो देवास्तथा दैत्या ययुः स्वान् स्वान् गृहान् प्रति ।।७३।। ब्रह्मा स्वसदनं प्राप्तः कैलासं चाऽपि शङ्करः । बृहस्पतिस्तु सन्तुष्टः प्राप्य भार्यां मनोरमाम् ।।७४।। ततः कालेन कियता ताराऽसूत सुतं शुभम् । सुदिने शुभनक्षत्रे तारापतिसमं गुणैः ।।७५।। दृष्ट्वा पुत्रं गुरुर्जातं चकार विधिपूर्वकम् । जातकर्मादिकं सर्वं प्रहृष्टेनाऽन्तरात्मना ।।७६।। श्रुतं चन्द्रमसा जन्म पुत्रस्य मुनिसत्तमाः ! । दूतं च प्रेषयामास गुरुं प्रति महामतिः ।।७७।। न चाऽयं तव पुत्रोऽस्तिमम वीर्यं समुद्भव । कथं त्वं कृतवान् कामं जातकर्मादिकं विधिम् ? ।।७८।। तच्छ्रुत्वा वचनं तस्य दूतस्य च बृहस्पतिः । उवाच मम पुत्रो मे सदृशो नाऽत्र संशयः ।।७९।। पुनर्विवादः सञ्जातो मिलिता देवदानवाः । युद्धार्थमागतास्तेषां समाजः समजायत ।।८०।। तत्राऽऽगतः स्वयं ब्रह्मा शान्तिकामः प्रजापतिः ।। निवारयामास मुखे संस्थितान् युद्धदुर्मदान् ।। ८१।। तारां पप्रच्छ धर्मात्मा कस्याऽयं तनयः शुभे ! ? । सत्यं वद वरारोहे ! यथा क्लेशः प्रशाम्यति ।।८२।। तमुवाचाऽसितापाङ्गी लज्जमानाऽप्यधोमुखी । चन्द्रस्येति शनैरन्तर्जगाम वरवर्णिनी ।।८३।। जग्राह तं सुतं सोमः प्रहृष्टेनाऽन्तरात्मना । नाम चक्रे बुध इति जगाम स्वगृहं पुनः ।।८४।। ययौ ब्रह्मा स्वकं धाम सर्वे देवाः सवासवाः । यथाऽऽगतं गतं सर्वैः सर्वशः प्रेक्षकैर्जनैः ।।८५।। कथितेयं बुधोत्पत्तिर्गुरुक्षेत्रे च सोमतः । यथा श्रुता मया पूर्वं व्यासात् सत्यवतीसुतात् ।।८६।।

देवी भागवत पुराण स्कन्द—१ अध्याय ११,

भाषार्थ

ऋषियों ने प्रश्न किया—

ये राजा पुरूरवा कौन थे ? और देवकन्या उर्वशी कौन थी ? उस महामना राजा को दुःख कैसे भोगना पड़ा ? ॥१॥ हे लोमहर्षण के पुत्र ! इस कथा को अच्छी तरह कहिए । क्योंकि आपके मुखकमल से निकलती हुई रसमयी वाणी को सुनने की हमें अभिलाषा है ॥२॥ हे सूतजी ! आपकी वाणी अमृत से भी बढ़कर मीठी और रसदार होती है । जिसका सेवन कर हम उसी तरह अघाते नहीं, जैसे देवताओं को अमृत से तृप्ति नहीं होती ॥३॥

सूत जी ने कहा—

हे मुनि लोग ! आप दिव्य, मनोहर कथा को सुनिए। मैं उत्तम व्यास राज से, अपनी बुद्धि के अनुसार सुनी हुई कथा को कहता हूँ ॥४॥ देवगुरु बृहस्पति की प्राणप्रिया स्त्री का नाम तारा था । वह सुन्दरी, युवती थी । उसके अंग-प्रत्यंग से सुन्दरता टपकती थी, वह कामपीड़िता रहती थी ॥५॥ एक समय की बात है कि वह भामिनी अपने यजमान चन्द्रमा के महल में गयी । उसे अत्यन्त रूपवती एवं तरुणी देखकर, ॥३॥ उस चन्द्रमुखी के ऊपर चन्द्र मोहित हो गये । वह भी चन्द्रमा को देखकर भली-भाँति कामविह्वला हो गयी ॥७॥ परस्पर सनेह में भरकर दोनों काम से व्याकुल हो गये । तारा और चन्द्रमा काम वाण से घायल होकर मद से उन्मत्त हो गये ॥८॥ वे दोनों मदमत्त परस्पर अभिलाषा की पूर्ति के निमित्त रमण करने लगे । वहाँ उन दोनों के विहार करते हुए कई दिन बीत गये ॥९॥ बड़े दुःखित हो बृहस्पति ने तारा को अपने घर वापस बुलाने के लिए, अपने शिष्य को भेजा, लेकिन वह चन्दमा के ऊपर आसक्त होने से नहीं आयी ॥१०॥ वे वार-बार शिष्य को भेजते रहे और चन्द्रमा ने हर बार उनके शिष्य को लौटा दिया। तब क्रोधित होकर स्वयं बृहस्पति जी गये ॥११॥ वहां सोम के महल में जाकर, उदार बुद्धि वाले बृहस्पति ने मुस्कराते हुए, मद से भरे हुए चन्द्रमा पर कुपित होकर कहा—॥१२॥ हे चन्द्रमा ! आपने ऐसे निन्द्य कर्म और निन्दनीय धर्म को कैसे अंगीकार किया ? आपने मेरी इस सुन्दरी भार्या को किस मतलब से रख लिया है ? ॥१३॥ मैं आपका देव ! गुरु हूँ और आप सब तरह मेरे यजमान हैं । हे बुद्धिविहीन क्या समझकर गुरु की स्त्री का उपभोग किया ? या रख लिया ? ॥१४॥ ब्रह्महत्या करने वाला, सोना चुराने वाला, शराब पीने वाला, गुरुपत्नी से भोग करने वाला, और इनसे संसर्ग रखने वाला—ये पाँच महा-पातकी कहे गये हैं ॥१५॥ आप महापापी हैं, दुराचारी हैं, अत्यन्त नीच हैं । यदि आपने इस स्त्री का उपयोग किया है तो आप देवलोक में रहने लायक नहीं हैं ॥१६॥ इस श्यामनयनी को दे दीजिए, मैं अपने घर ले जाऊँगा । नहीं तो हे दुरात्मा ! गुरु की स्त्री को रोक रखने वाले आपको शाप दूँगा ॥१७॥ कोप में भरे हुए, प्रियतमा के वियोग से पीड़ित होने वाले गुरु के इस तरह कहने पर उनसे रोहिणी-पति चन्द्र ने कहा ॥१८॥

चन्द्रमा ने कहा—

जो ब्राह्मण क्रोध करते हैं उनकी अप्रतिष्ठा होती है क्यों कि ब्राह्मणों को क्रोधहीन होना चाहिए । क्रोधहीन और धर्मशास्त्र के जानने वाले ब्राह्मण पूजनीय होते हैं । ऐसे गुणों से जो हीन हों वे पूजाकर्म में वर्जित हैं ॥१९॥ वह स्त्री रूपवती अपनी इच्छा से आपके घर चली जायगी । हे पापहीन ! यदि वह युवती यहीं रहना चाहती है तो आपकी कौन सी हानि होती है ? ॥२०॥ वह अपनी इच्छा से यहाँ रहती है क्योंकि उसे सुखोपभोग की कामना है । अतः कुछ दिनों तक रहकर, अपनी रुचि से लौट जायगी ॥२१॥ आपने पहले अपने बार्हस्पत्य मत का प्रतिपादन धर्मशास्त्र में किया है कि (पापाचरण करने पर) स्त्री रजोदर्शन के कारण और ब्राह्मण वैदिक कर्म के कारण दूषित नहीं गिने जाते ॥२२॥

जब चन्द्रमा ने ऐसा कहा तो गुरु बृहस्पति बहुत दुःखित हो, काम पीड़ा से व्यथित हो, चिन्ता करते हुए तुरन्त अपने घर को लौट गये ॥२३॥ वहाँ गुरु चिन्ता में व्याकुल रहकर, कुछ दिन बिताने के बाद औषधिपति चन्द्र के महल में तुरन्त पहुंचे ॥२४॥ यहां द्वारपाल ने भीतर घुसने से रोक दिया तब वे क्रोध में भरकर फाटक पर ही रुक गये। जब चन्द्रमा ने भेंट नहीं किया तब बृहस्पति बड़े कुपित हुए ॥२५॥ यह मेरा शिष्य है और माता के समान गुरु की स्त्री को बलात्कार से अपहरण कर लिया है, अतः इस अधर्मी को शिक्षा देनी चाहिए ॥२६॥ उन्होंने बाहर फाटक के पास खड़े होकर गुस्से में पुकारा—हे नीच! पाप परायण! देवताओं में अधम! महल के भीतर क्यों सो रहे हो? ॥२७॥ मेरी स्त्री को शीघ्र भेज दो, नहीं तो मैं शाप दे दूंगा। समझ लो, अगर मेरी प्राणप्यारी को न दिया तो मैं भस्म कर दूंगा ॥२८॥

सूतजी ने कहा—

बृहस्पति की इस तरह की कठोर बात सुनकर द्विजराज चन्द्रमा तुरन्त अपने महल में से बाहर निकल आये ॥२९॥ और उनसे हंसते हुए चन्द्रमा ने कहा—इस तरह क्या बढ़-बढ़कर बातें करते हैं? वह सुलक्षणा, सांवली चितवन वाली, कामिनी आपके योग्य नहीं है ॥३०॥ हे ब्राह्मण देवता! अपनी तरह किसी दूसरी कुरूप स्त्री के साथ विवाह कर लीजिए। भिक्षुक के घर में ऐसी सुन्दर स्त्री शोभा नहीं देती ॥३१॥ यह कहा जाता है कि अपने समान (रूप शील सम्पन्न) पति पर स्त्रियों को अनुराग होता है। हे मन्द हृदय! क्या आप कामशास्त्र के इस निश्चित सिद्धान्त को नहीं जानते ॥३२॥ आप अपनी इच्छा से लौट जा सकते हैं। हे दुर्बुद्धि! मैं इस स्त्री को नहीं लौटाऊँगा। जो आप से करते बने कर लीजिएगा, इस महिला को मैं हर्गिज नहीं लौटा सकता ॥३३॥ आपके जैसे कामी पुरुषों का शाप मेरा बाल बाँका तक नहीं कर सकता। हे गुरुजी! आपकी प्रिया को मैं नहीं दूंगा, अब आपके जी में जैसा आवे वैसा कीजिए ॥३४॥

सूतजी ने कहा—

चन्द्रमा के इस तरह कहने पर, देवगुरु बृहस्पति बड़े चक्कर में पड़ गये और रह-रहकर उन्हें गुस्सा आने लगा। वे लाल-पीले होते हुए तुरन्त इन्द्र के महल में गये ॥३५॥ इन्द्र ने देखा कि गुरु बृहस्पति दुःख में व्याकुल हो आकर खड़े हो गये हैं तो उन्होंने पाद्य (पाँव धोने के लिए पानी), अर्घ्य (दूध, दही, पिघला घी, चावल, जौ, सरसों, दूध, जल पदार्थ) और आचमनीय (मुंह धोने, कुल्ला करने के लिए पानी) आदि से अच्छी तरह पूजा की ॥३६॥ उसके बाद परम उदार इन्द्र ने गुरु से उनकी तबियत का हाल पूछा—हे महाभाग! आपको कौन-सी चिन्ता सता रही है। हे महा-मुनि! आप शोकाकुल क्यों हो रहे हैं? ॥३७॥ मेरे राज्य में और मेरे गुरु का अपमान किसने किया है? लोकपालों (अग्नि, वरुण, वायु, कुबेर, ईश, नैऋत, यम) के साथ यह सब देवसेना आपके आधीन है ॥३८॥ ब्रह्मा, विष्णु शिव और दूसरे सभी देवता आपकी सहायता करेंगे। आप अपनी चिन्ता तो इस समय बताइए ॥३९॥

बृहस्पति ने कहा—

चन्द्रमा ने सुनयनी तारा नामकी मेरी स्त्री का अपहरण कर लिया है। बार बार प्रार्थना करने पर भी वे दुरात्मा नहीं दे रहे हैं ॥४०॥ हे देवेश! मैं कौन-सा उपाय करूँ? आप ही मेरे रक्षक हैं। हे सुरराज! आप मेरी सहायता कीजिए। हे शतक्रतु! मैं दुःखी हूँ ॥४१॥

इन्द्र ने कहा—

हे धर्म के ज्ञाता! शोक करना छोड़ दीजिए। हे सुव्रत! मैं आपका आज्ञाकारी सेवक हूं। हे महाबुद्धिमान! मैं आपकी स्त्री को अवश्य ही वापस ले लूंगा ॥४२॥ मेरे दूत भेजने पर वह मद में चूर चन्द्रमा यदि न वापस करेंगे

तो देवसेनाओं के साथ उनसे लड़ाई छेड़ दूंगा ॥४३॥ गुरुजी को इस तरह ढाढस बंधाकर, एक चलता पुर्जा बातचीत करने में हाजिर जवाब, विचित्र दूत को चन्द्रमा के पास भेजा ॥४४॥ वह होशियार दूत तुरन्त चन्द्रलोक में जाकर रोहिणीपति से इस तरह की बात कहने लगा—॥४५॥ हे महाभाग ! मुझे इन्द्र ने आपके पास यह कहने के लिए भेजा है । जो हमारे स्वामी ने कहा है, हे महाबुद्धिमान ! उसी बात को दुहरा रहा हूं ॥४६॥ हे महाभाग ! आप धर्म के जानने वाले हैं । हे सुव्रत ! आप नीति भी जानते हैं । आपके पिता धर्मात्मा अत्रि हैं, भला ऐसा निन्दनीय कर्म करना आपको उचित है ? ॥४७॥ अपनी शक्ति के अनुसार, निरालस होकर, सब प्राणियों को चाहिए कि अपनी स्त्री की रक्षा करें । उसके निमित्त भली-भांति झगड़ा-टन्टा बढ़ेगा, इसमें सन्देह नहीं ॥४८॥ जिस तरह आपको अपनी स्त्री की रक्षा करने में प्रयत्न करना आवश्यक है, उसी तरह इनका भी कर्त्तव्य है । हे सुधाकर ! आपको अपनी ही तरह सब प्राणियों को समझना चाहिए ॥४६॥ दक्षप्रजापति की शुभलक्षण से युक्त २८ कन्याएं (नक्षत्र) तो आपकी कामिनी हैं ही, फिर हे सुधांशु ! आप गुरुपत्नी को उपभोग करने के लिए क्यों इच्छा कर रहे हैं ? ॥५०॥ स्वर्ग लोक में मेनका आदि बहुत-सी लावण्यशालिनी अप्सराएं रहती हैं, इनके साथ खूब मनमाना मौज उड़ाइये और गुरु की स्त्री को लौटा दीजिए ॥५१॥ अगर बड़े आदमी, अहंकार के वशीभूत हो, नीच कर्म करने पर उतर आवें तो नासमझ लोग उन्हीं के रास्ते पर चलने लग जायेंगे । इसका परिणाम यह होगा कि धर्म की हानि होगी ॥५२॥ इसलिए हे महाभाग ! आप गुरु की सुन्दर स्त्री को दे दीजिए, जिससे इस समय आप और देवताओं के बीच इस बारे में किसी तरह का कलह न हो ॥५३॥

सूतजी ने कहा—

इन्द्र का सन्देश सुनकर, चन्द्रमा कुछ कुपित हुए और उन्होंने तब इन्द्र के दूत को, घुमाव-फिराव (साफ-साफ न कहकर ताना मारते हुए लपेट) की बातें करते हुए प्रत्युत्तर दिया—॥५४॥

हे महाबाहु । आप बड़े धर्मात्मा हैं और साथ ही स्वयं देवताओं के राजा भी हैं । उसी तरह आपके पुरोहित भी हैं । आप दोनों की बुद्धि भी एक सी है ॥५५॥ दूसरों को उपदेश देने में बहुत से लोग होशियार होते हैं लेकिन जब सिर पर आ पड़ती तो सब भूल जाता है (अर्थात् ऐसा कौन है अहल्या-गमन की बात न जानता हो ?) ॥५६॥ सब प्राणी बृहस्पति के बनाए हुए धर्मशास्त्र को अंगीकार करते हैं, जहां लिखा है कि काम की अभिलाषा से आयी हुई कामिनी के उपभोग करने में कोई पाप नहीं लगता, तो हे देवराज ! बताइए, इस धर्मशास्त्र से कोई विरोध हुआ ? ॥५७॥ जिसके हाथ में ताकत रहती है वह अपना (भला या बुरा) किया हुआ कर्म सब ठीक समझता है, कमजोर की कोई गिनती नहीं । उसका भला कर्म भी बुरा गिना जाता है, (ऐसी लोक मर्यादा है) और अपनी एवं परायी का भेदभाव तो तुच्छ बुद्धिवालों में होता है ॥५८॥ तारा जितना मेरे ऊपर आसक्त है उतना गुरु के ऊपर नहीं । अब बताइए कि धर्मशास्त्र और नीतिशास्त्र के अनुसार ऐसी अनुरक्त स्त्री का कैसे परित्याग कर सकता हूं ?॥५९॥ गार्हस्थ्य जीवन अनुराग वाली स्त्री के साथ व्यतीत होता है, जो अपने से मुहब्बत न करे,—उसके साथ नहीं हो सकता । जब से बृहस्पति महाराज अपने छोटे भाई संवर्त की स्त्री पर अनुरक्त हुए (यह कथा पद्म पुराण में है) (या छोटे भाई के होते हुए भी बृहस्पति ने अपने बड़े भाई उतथ्य की ममता नामक स्त्री पर आसक्त हुए) (यह कथा महाभारत में है) तभी से इस तारा ने उनसे प्रेम करना छोड़ दिया ॥६०॥ इसलिए ऐसी वरांगना को मैं नहीं दे सकता । हे दूत ! तुम स्वयं जाकर ऐसी बात कह दो कि हे (पर-स्त्री के कारण) हजार आँख पाने वाले आप शक्तिशाली राजा हैं, जो आपकी इच्छा में आवे कर लीजिए ॥६१॥

सूतजी ने कहा—

चन्द्रमा के इस तरह कहने पर, दूत इन्द्र के पास गया और उसने चन्द्रमा से कही हुई सब बातें इन्द्र से कह दीं ॥६२॥ यह बात सुनकर इन्द्र को बड़ा गुस्सा आया और प्रभु इन्द्र ने गुरु बृहस्पति की सहायता करने के लिए सेना

को सजाया ॥६३॥ जब शुकाचार्य को इस कलह का हाल मालूम हुआ तो बृहस्पति से डाह रखने के कारण से चन्द्रमा के पास गये और उनसे यह वचन कहा कि आप हरगिज मत दीजिएगा ॥६४॥ हे महाप्राज्ञ ! यदि आपके और इन्द्र के बीच समर छिड़ जाए तो हे आर्य ! मैं मन्त्रशक्ति के बल से आपकी सहायता करूँगा ॥६५॥ चन्द्रमा के गुरुपत्नी के साथ व्यभिचार करने की बात सुनकर और शुक्र को गुरु का विरोधी मानकर. शंकरजी ने (मन्त्रबल से) गुरु की सहायता की ॥६६॥ तब बहुत जल्द देवताओं और दानवों में संग्राम छिड़ गया। तारक असुर के साथ जैसे लड़ाई हुई थी उसी तरह लड़ते-लड़ते बहुत वर्ष बीत गये ॥६७॥ तब देवताओं और असुरों की लड़ाई को देखकर, ब्रह्माजी हंस पर चढ़कर उस जगह टंटा मिटाने के लिए गये ॥६८॥ तब उन्होंने पूर्णिमा-पति चन्द्र से कहा कि बृहस्पति की स्त्री को लौटा दीजिए। नहीं तो विष्णु भगवान को बुलाकर आपका नाश कर दूंगा ॥६९॥ लोक पितामह ब्रह्मा ने शुक्र को मना किया कि हे महामति ! क्या दानवों के सम्पर्क के दोष से आपकी बुद्धि अनीति में लग गयी ! ॥७०॥ तब भृगु ने औषधियों के राजा चन्द्र को मना किया कि गुरु की स्त्री को आज ही लौटा दीजिए, मैं आपके पिता अत्रि का भेजा हुआ आया हूं ॥७१॥

सूतजी ने कहा—

द्विजराज चन्द्र ने भृगु की इस पेंचीली बात को सुनकर, गुरु की सुलक्षणी गर्भवती और प्रियतमा स्त्री को लौटा दिया ॥७२॥ अपनी स्त्री को पाकर. बृहस्पति हर्षित हो अपने घर मुदित मन से लौट गये। तब देवता और दैत्य अपने-अपने घर को लौट गये ॥७३॥ ब्रह्माजी ब्रह्म लोक में गये, शिवजी कैलाश पर्वत पर गये और अपनी मनोहारिणी पत्नी को पाकर बृहस्पति भी अपने घर में सन्तुष्ट हो रहने लगे ॥७४॥ तब कुछ समय के बाद, तारा ने अच्छे दिन और अच्छे नक्षत्र में, तारापति चन्द्र के समान गुण से युक्त एक शुभ पुत्र को प्रसव किया ॥७५॥ तब गुरु ने जन्मे हुए पुत्र को देख कर, प्रसन्न चित्त हो, विधि के साथ जातकर्म आदि संस्कार किया ॥७६॥ जब चन्द्रमा ने पुत्र को जन्मा हुआ सुना तो हे ऋषियों ! उन महामति ने गुरु के पास एक दूत भेजकर कहलवाया कि ॥७७॥ यह आपका पुत्र नहीं है, यह मेरे वीर्य से पैदा हुआ है। आपने अपने मन से क्यों जातकर्म आदि विधान किया ? ॥७८॥ उस दूत की यह बात सुनकर, बृहस्पति ने जवाब दिया कि मेरा पुत्र मेरे समान है, इसमें सन्देह करने की कोई गुंजाइश नहीं है ॥७९॥ फिर विवाद खड़ा हुआ और देवता एवं दानव इकट्ठे हुए, युद्ध करने के लिए उनका समाज जुटने लगा ॥८०॥ तब शान्ति की कामना से स्वयं प्रजापति ब्रह्माजी वहाँ आये और लड़ाई करने के लिए तत्पर मोर्चे पर खड़े हुए लोगों को मना किया ॥८१॥ धर्मात्मा ब्रह्माजी ने तारा से पूछा—हे कल्याणी ! यह किसका लड़का है ? हे रमणी ! सच-सच बतला दीजिए जिससे क्लेश दूर हो ॥८२॥ तब उनसे श्याम-नयनी, लजाती हुई, नीचे की ओर नजर किये हुए वरांगना तारा 'चन्द्रमा का है' यह धीरे से कहते हुए भीतर घर में चली गयी ॥८३॥ तब प्रसन्नचित्त हो चन्द्रमा ने उस पुत्र को ले लिया और वे अपने घर लौट गये वहाँ उस लड़के का नामकरण संस्कार करके 'बुध' नाम रखा ॥८४॥ ब्रह्मा अपने लोक को गये। इन्द्र आदि सब देवता अपने-अपने भवनों में लौट गये और सब दर्शक लोग जहाँ से आये थे वहीं लौट गये ॥८५॥ बृहस्पति के क्षेत्र में चन्द्र के वीर्य से उत्पन्न बुध की उत्पत्ति का वर्णन—जैसा मैंने पहले सत्यवतीतनय व्यास जी से सुना था वैसा आपको सुना दिया ॥८६॥

नोटः—यही कहानी कुछ अन्तर से श्री मद्भागवत पुराण के स्कन्द ९ अध्याय १४ में भी कही गयी है। यहां विस्तृत जानकारी के लिए पूर्ण मूल सहित दिया जाता है। जिससे पाठक गण पुराणों की असलियत को अच्छी तरह समझ लें। (शास्त्रार्थ में केवल आवश्यक बात ही कही गयी थी)

श्रीशुक उवाच ।। अथातः श्रुयतां राजन्वंशः सोमस्यपावनः । यस्मिन्नैलादयोभूपाः कीर्त्यन्तेपुण्यकीर्त्तयः ।।१।। सहस्र-शिरसःपुंसो नाभिह्रदसरोरुहात् । जातस्यासीत्सुतो श्रातुरत्रिः पितृसमोगुणैः ।।२।। तस्यदृग्भयोऽभवत्पुत्रःसोमोऽमृतमयःकिल । विप्रौषध्युडुगुणानांब्रह्मणःकल्पितःपतिः ।।३।। सोऽयजद्राजसूयेनविजित्यभुवनत्रयम् । पत्नींबृहस्पतेर्दर्पात्तारां नामाहरद्व-लात् ।।४।। यदा स देवगुरुणायाचितोऽभीक्ष्णशोमदात् । नात्यजत्तत्कृतेजज्ञे सुरदानवविग्रहः ।।५।। शुक्रोबृहस्पतेर्द्वेषादग्रहीत्सा-सुरोडुपम् । हरो गुरुसुतंस्नेहात्सर्वभूतगणावृतः ।।६।। सर्वदेवगणोपेतो महेन्द्रोगुरुमन्वयात् । सुरासुरविनाशोऽभूत्समरस्तार-कामयः ।। ७।। निवेदितोऽथांगिरसासोमंनिर्भर्त्स्यविश्वकृत् । तारांस्वभर्त्रेप्रायच्छदन्तर्वत्नीमवैत्पतिः ।।८।। त्यजत्यजाशुदुष्प्रज्ञे-मत्क्षेत्रादाहितं परैः । नाहंत्वांभस्मसात्कुर्यां स्त्रियंसांतानिकः सति ।।९।। तत्याजव्रीडितातारा कुमारंकनकप्रभम् । स्पृहामां-गिरसश्चक्रेकुमारे सोम एव च ।।१०।। ममायंनतवेत्युच्चैस्तस्मिन्विवदमानयोः । पप्रच्छुऋर्षयोदेवा नैवोचेव्रीडितातुसा ।।११।। कुमारोमातरंप्राहकुपितोऽलीकलज्जया । किंनावोचस्यसद्वृत्ते आत्मावद्यं वदाऽशुमे ।।१२।। ब्रह्मातां रहआहुय समप्राक्षीच्च सान-त्वयन् । सोमस्येत्याह शनकैःसोमस्तं तावद्ग्रहीत् ।।१३।। तस्यात्मयोनिरकृत तवुधइत्यभिधां नृप । बुद्धया गम्भीरया येन पुत्रेणा-पोडुराण्मुदम् ।।१४।। ततःपुरूरवाजज्ञेइलायांयउदाहृतः । तस्यरूपगुणौदार्यशीलद्रविणविक्रमान् ।।१५।। श्रुत्वोर्वशीन्द्रभवने गीयमानान्सुरर्षिणाम् । तदन्तिकमुपेयायं देवीस्मरशरार्दिता ।।१६।। मित्रावरुणयोः शापादापन्नानरलोकताम् । निशम्यपुरुष-श्रेष्ठं कन्दर्पमिवरूपिणम् ।।१७।। धृतिं विष्टम्यललना उपतस्थेतदन्तिके । सतांविलोक्य नृपतिर्हर्षेणोत्फुल्ललोचनः उवाच-श्लक्ष्णयावाचा देवींहृष्टतनूरुहः ।।१८।। राजोवाच । स्वागतं तेवरारोहे आस्यतांकरवामकिम् । संरमस्वमयासाकं रतिनौंशा-श्वतीःसभाः ।।१९।। उर्वश्युवाच । कस्यात्स्वयि न सज्जेत मनोदृष्टिश्चसुन्दर । यदंगान्तरमासाद्य च्यवतेहरिरंस्या ।।२०।। एतावुरणकौराजन् न्यासोरक्षस्वमानद । संरंस्येभवतासाकं श्लाघ्यः स्त्रीणांवरःस्मृतः ।।२१।। घृतंमेवीरभक्ष्यं स्यान्नेक्षेत्वा-ऽन्यत्रमैथुनात् । विवाससंतत्तथेति प्रतिपेदेमहामनाः ।।२२।। अहोरूपमहोभावो नरलोकविमोहनम् । को न सेवेत मनुजो देवीं त्वां स्वयमागताम् ।।२३।। तयासपुरुश्रेष्ठो रमयन्त्यायथाऽर्हतः । रेमेसुरविहारेषु कामंचैत्ररथादिषु ।।२४।। रममाणस्तयादेव्या पद्माकिञ्जल्क गन्धया । तन्मुखामोदमुषितो मुमुदेऽहर्गणान्बहून् ।।२५।। अपश्यन्नुर्वशीमिद्रो गन्धर्वान्समनोदयत् । उर्वशी-रहितं मह्यमास्थानं मातिशोभते ।।२६।। त उपेत्य महारात्रे तमसि प्रत्यु पस्थिते । उर्वश्याउरणौ जहून्र्यस्तोराजनिजा-यया ।।२७।। निशम्याक्रन्दितंदेवी पुत्रयोर्नीयमानयोः । हताऽस्म्यहं कुनाथेन न पुंसा वीर मानिना ।।२८।। यद्विश्रम्भादहंनष्ठा हृतापत्या च दस्युभिः । यः शेते निशि संत्रस्तो यथानारी दिवा पुमान् ।।२९।। इतिवाक्सायकैर्विद्धः प्रतोत्रैरिव कुञ्जरः । निशि-निस्त्रिंशमादाय विवस्त्रोऽभ्यद्रवद्रुषा ।।३०।। ते विसृज्योरणौ तत्र व्यद्योतन्त स्म विद्युतः । आदायमेषावायांतंनग्नमैक्षत-सापतिम् ।।३१।। ऐलोऽपिशयनेजायामपश्यन्विमनाइव । तच्चित्तोविह्वलः शोचन्बभ्रामोन्मत्तवन्महीम् ।।३२।। स तां वीक्ष्य-कुरुक्षेत्रे सरस्वत्यां चतत्सखीः । पञ्चप्रहृष्टवदनाःप्राहसूक्तंपुरूरवाः ।।३३।। अहोजायेतिष्ठ तिष्ठ घोरे न त्यक्तु मर्हसि । मां त्व-मद्याप्यनिर्वृत्य वचांसि कृणवावहै ।।३४।। सुदेहोऽयं पतत्यत्रदेविदूरंहृतस्त्वया । खादन्त्येनं वृका गृध्रास्त्व त्सादस्य नास्प-दम् ।।३५।। उर्वश्युवाच ।। मामृथाःपुरुषोऽसि त्वं मास्मत्वाऽद्युर्वृकाइमे । क्वापि सख्यं न वै स्त्रीणां वृकाणांहृदयं यथा ।।३६।। स्त्रियोह्यकरुणाःक्रूरादुर्मर्षाःप्रियसाहसाः घनन्त्यल्पार्थेऽपिविश्रब्धंपतिंभ्रातरमप्युत ।।३७।। विधायालीकविश्रम्भमज्ञेषु त्यक्त-—सौहृदाः । नवं नवमभीप्सन्त्यःपुंश्चल्यः स्वैरवृत्तयः ।।३८।। संवत्सरांते हिभवानेकरात्रं मयेश्वर । वत्स्यत्यपत्यानिच ते भवि-ष्यंत्य पराणि भोः ।।३९।। अन्तर्वत्नीमुपालक्ष्यदेवींसप्रययौ पुरम् । पुनस्तत्रगतोऽब्दांतेउर्वशींवीरमातरम् ।।४०।। उपलभ्य-मुदायुक्त.समुवासतयानिशाम् । अथैनमुर्वशीप्राहकृपणंविरहातुरम् ।।४१।। गंधर्वानुपधावेमांस्तुभ्यं दास्यन्ति मामिति । तस्य-संस्तुवतस्तुष्टाअग्निस्थालीं ददुर्नृप । उर्वशीं मन्यमानस्तां सोबुध्यतचरन्वने ।।४२।। स्थालीन्यस्यवनेगत्वागृहानाध्यायतोनिशि । त्रेतायांसंप्रवृत्तायांमनसित्रय्यवर्तत ।।४३।। स्थालीस्थानंगतोऽश्वत्थं शमी गर्भं विलक्ष्य सः । तेनद्वे अरणीकृत्वाउर्वशीलोक-काम्यया ।।४४।। उर्वशींमन्त्रंतोध्यायन्न धरारणिमुत्तराम् । आत्मानमुभयोर्मध्येयत्तत्प्रजननंप्रभुः ।।४५।। तस्यनिर्मन्थनाज्जा-तोजातवेदाविभावसुः । त्रय्यासविद्ययाराज्ञापुत्रत्वेकल्पितस्त्रिवृत् ।।४६।। तेना यजतयज्ञेशंभगवंतमधोऽक्षजम् । उर्वशीलोक-मन्विच्छन्सर्वदेवमयंहरिम् ।।४७।। एकएवपुरावेदःप्रणवः सर्ववाङ्मयः । देवोनारायणोनान्यएकोऽग्निर्वर्णएवच ।।४८।। पुरूरवस एवासीत्त्रयीत्रेतामुखेनृप । अग्निनाप्रजयाराजालोकंगांधर्वमेयिवान् ।।४९।।

श्री मद्भागवत पुराण स्कन्द ९ अध्याय १४ ।।

भाषार्थ

श्री शुकदेवजी बोले कि—हे राजन् ! अब पवित्र करने वाले सोमवंश का वर्णन करता हूं–सुनो ? इस वंश में ही पुरूरवाआदि राजा उत्पन्न हुए थे ॥१॥ हे महाराज ! सहस्रशीर्षा परमपुरुष भगवान के नाभिकमल से ब्रह्मा उत्पन्न हुए; उनके पुत्र अत्रि हुए। वह गुणों में पिता ही के तुल्य थे ॥२॥ उन अत्रि नेत्र से अमृतमय सोम नामक पुत्र उत्पन्न हुआ। भगवान ब्रह्मा ने उस सोम को विप्र, औषधि, और नक्षत्र सबका आधिपत्य दिया ॥३॥ उसने त्रिभुवन को जीतकर राजसूय यज्ञ किया। एक समय उस सोम ने अहंकारपूर्वक बलात्कार से बृहस्पति की पत्नी तारा को हरण कर लिया था ॥४॥ देव गुरु बृहस्पतिजी ने अनेक बार सोम से अपनी पत्नी के पाने की प्रार्थना की किंतु मद से मतवाले सोम ने गुरु पत्नी को परित्याग करने की इच्छा न की। उससे सुर और असुरों में महाभयानक युद्ध उपस्थित हो गया ॥५। बृहस्पतिजी के ऊपर शुक्राचार्य का द्वेष भाव था, इस कारण वह अपने शिष्य असुरों समेत चन्द्रमा के पक्ष में हुए। इस ओर भगवान महादेव जी अपने पार्षदों समेत निजगुरुपुत्र बृहस्पति की ओर हुए ॥६॥ इन्द्र भी अपने सब देवताओं समेत अपने गुरु बृहस्पति जी के पक्ष में हुए। इसके पश्चात् तारा के निमित्त सुर असुर विनाशक महा युद्ध हुआ ॥७॥ हे राजन् ! कुछ दिनों के उपरांत अंगिरा ने यह सब वृत्तांत ब्रह्माजी से कहा। इससे ब्रह्मा ने आकर चन्द्रमा का बहुत तिरस्कार किया। ब्रह्माजी के कहने से चंद्र माने बृहस्पतिजी को तारा दे दी ॥८॥ बृहस्पतिजी ने अपनी स्त्री को गर्भवती जानकर कहा कि—रे दुर्बुद्ध ! तूने मेरे क्षेत्र में दूसरे का वीर्य धारण किया है, शीघ्र इसका त्यागकर। अरे असति ! तू स्त्री जाति और मैं संतान की कामना वाला हूं इस से मैं तुझे भस्म न करूंगा ॥९॥ पति की इस बात के सुनते ही तारा ने लज्जित हो तत्काल ही गर्भ से सुवर्णकीसी कांति वाले कुमार का परित्याग कर दिया। हे राजन् ! अत्यन्त सुन्दर कुमार को देखते ही उस पर बृहस्पति और चन्द्रमा दोनों ही का चित्तचलायमान हुआ ॥१०॥ दोनों में परस्पर इस बात का विवाद होने लगा कि, यह बालक मेरा है तेरा नहीं, इस विवाद को देखकर ऋषियों और देवताओं ने तारा से पूछा कि 'यह किसका पुत्र है ? परन्तु तारा ने लज्जित होकर कुछ भी उत्तर न दिया ॥११॥ अनन्तर उस बालक ने कुपित होकर माता से कहा कि अरे दुष्टा ! तू क्यों नहीं बोलती; शीघ्र मुझ से अपने दोष को कह ॥१२॥ अनन्तर ब्रह्माजी ने तारा को एकांत में बुलाया सांत्वना देकर पूछा तब तारा ने धीरे २ कहा कि 'सोम का है'। तब चंद्रमा उस पुत्र को ले गये ॥१३॥ लोककर्ता ब्रह्माजी ने उस बालक की गंभीर बुद्धि को देखकर उसका नाम 'बुध' रक्खा। हे राजन् ! नक्षत्रपतिचन्द्रमा को उस पुत्र से अतिआनन्द प्राप्त हुआ ॥१४॥ पहिले ही कह आये हैं कि इसी बुध के वीर्य से "इला" के गर्भ में पुरूरवा का जन्म हुआ। वह अत्यन्त ही विख्यात था देवर्षि नारद ने स्वर्ग में उसके रूप, गुण, उदारता, शीलता, धन और पराक्रम का गान किया कि जिससे उर्वशी यह सुनकर काम पीड़ित हो उस राजा के निकट आई ॥१५॥१६॥ मित्रावरुण के शाप से उर्वशी मनुष्य भाव को प्राप्त हुई थी तब उस पुरुश्रेष्ठ पुरुरवा को कामदेव समान रूपवान सुनकर अधीर भाव से उसके निकट स्वयं ही आ उपस्थित हुई ॥१७॥ हे राजन् ! उर्वशी को देखते ही पुरुरवा के भी नेत्र आनंद से खिल उठे राजा ने पुलकित होकर मधुर वचनों से कहा। ॥१८॥ कि हे वरारोहे ! आने में कोई कलेश तो नहीं हुआ ? बैठो, बतलाओं मैं क्या करूं मेरे साथ विहार करो मैं चाहता हूं कि हमारे तुम्हारे बीच में बहुत दिनों तक सुख से विहार होवे ॥१९॥ उर्वशी ने कहा कि हे सुंदर ! तुम्हारे ऊपर किसका मन व नेत्र आसक्त न होवे क्योंकि ऐसा नहीं है कि जो आपको देखकर विहार की इच्छा किसी की बलवती न हो ॥२०॥ हे मानंद ! जब आप इन दोनों भेड़ी के बच्चों की भली भांति रक्षा करोगे तो मैं तुम्हारे साथ विहार करूंगी जो उत्तम पुरुष है वही स्त्रियों को प्रिय होता है ॥२१॥ हे वीर ! मैं केवल घृत का भक्षण करूंगी और मैथुन काल के अतिरिक्त तुम्हें वस्त्ररहित नहीं देखूंगी यह यदि तुमको स्वीकार हो तो मैं तुम्हारे साथ विहार करूं पुरुरवा उसकी सुंदरता, मधुरता से मोहित हो गया था अतएव उसने जो २ कुछ कहा उस सबको अंगीकार करके उसने कहा ॥२२॥ कि हे सुंदरि ! तुम्हारे आश्चर्य रूप

और अद्भुत भाव को देखकर मनुष्य मोहित हो जाते हैं तुम स्वर्गगामिनी देवी होकर भी स्वयं ही आई हो, कौन मनुष्य तुम्हारी सेवा न करेगा ॥२३॥ यह कहकर श्रेष्ठ पुरुष पुरुरवा उर्वशी के साथ देवताओं के क्रीड़ास्थल चैत्ररथ आदि स्थानों में विहार करने लगा ॥२४॥ कमल केसर सी सुगंधिवाली उस अप्सरा के संग विहार करता हुआ वह राजा उसके मुख की सुगंधि से ऐसा लोभित हो गया कि उसको आमोद प्रमोद में बहुत से दिन बीत गए ॥२५॥ इधर देवराज इंद्र ने उर्वशी को न देख मेरी सभा उर्वशी बिना शोभा को नहीं प्राप्त होती यह कहकर उर्वशी को लाने के निमित्त गन्धर्वों को भेजा ॥२६॥ आधी रात्रि के समय जब घोर अन्धकार से सम्पूर्ण जगत में अंधेरा हो रहा था तब वह गंधर्व मृत्युलोक में आए और पुरूरवा के निकट उर्वशी ने जो दो मेंड़ के बच्चे धरोहर के रूप से रक्खे थे उनको हर लिया ॥२७॥ उर्वशी उन दोनों भेड़ों को पुत्र रूप से जानती थी, गन्धर्वगण जब उनको ले जाने लगे तब वह बड़े करुणस्वर से चिल्लाने लगे उर्वशी उसको सुनकर कहने लगी कि—हाय ! मैं इस दुष्ट स्वामी के हाथ में पड़कर मर गई। यह नपुंसक अपने आपको वीर कहकर अभिमान करता है ॥२८॥ इस पर विश्वास करके मैं नष्ट हो गई, मेरी संतानों को चोरों ने हर लिया। अहो ! यह तो दिन को पुरुष रहता है, परन्तु रात्रि को स्त्री की समान भयभीत होकर सो रहा ॥२९॥ जैसे हाथी अंकुश से विद्ध होता है वैसे ही राज उर्वशी के ऐसे बाक्स शरों से विद्ध हो नग्न ही हाथ में खड्ग से गन्धर्वों के पीछे दौड़ा ॥३०॥ उस को देखते ही गन्धर्वों ने तत्काल ही उन दोनों भेड़ों को छोड़ दिया और वह बिजली रूप हो चमकने लगे। राजा भेंड़ के बच्चों को लेकर लौटा आता था, किन्तु उस समय राजा को नंगा देखकर प्रतिज्ञा भंग होने से उर्वशी में आसक्त था। कातर होकर शोकातुर हो उन्मत्त की तरह पृथ्वी पर भ्रमण करने लगा ॥३२॥ कुछ दिनके उपरांत कुरुक्षेत्र में सरस्वती के तटपर उस अप्सरा को उसकी पांच सखियों समेत देख पाया पुरूरवा ने प्रसन्नचित हो सुन्दरी से कहा, ॥३३॥ हे प्यारी ! खड़ी हो, खड़ी हो ! अहो निर्दय स्त्री मुझे सुख दिए बिना छोड़ देना तुझे उचित नहीं है। आओ यहां पर बैठकर मुझसे बातें करो ॥३४॥ हे देवि ! मेरे इस सुंदर शरीर को तूने खींचकर बाहर कर दिया, देखो—यह इस स्थान में गिरता है और बिना तेरी कृपा के इस देह को गीध और भेड़िये खा जायेंगे ॥३५॥ उर्वशी ने कहा कि—हे राजन् ! मरे मत जाओ। तुम पुरुष हो धैर्य को धारण करो इन्द्रियों को वस में रक्खो। हे राजन् ! कहीं स्त्रियों की मित्रता नहीं निभती, क्योंकि उनका स्वभाव भेड़िये के समान होता है ॥३६॥ स्त्रीयें स्वभाव से ही आकरुण क्रोधित और असहनशील होती हैं प्यार के निमित्त अधर्मादि का साहस करती रहती हैं और थोड़े से विषय में भी अपने विश्वास योग्य पति अथवा भाई को मार डालती हैं ॥३७॥ जो व्यभिचारिणी और अपने इच्छानुसार कार्य करने वाली स्त्री होती है वह सुहृदता को एक बार ही छोड़ देती हैं केवल नवीन ही नवीन पतियों पर उनकी अभिलाषा रहती है ॥३८॥ हे स्वामिन् ! साल के अन्त में केवल एक दिन को ही मुझसे क्रीड़ा कर सकोगे उससे ही तुम्हारे कई एक संतानें उत्पन्न होंगी ॥३९॥ हे राजन् ! यह कहकर वह सगर्भा स्त्री अपने नगर में चली गई। एक वर्ष के उपरांत वह फिर उसी स्थान पर आई। पुरुरवा वीर प्रसविनी उर्वशी को देखकर परम आनंदित हुआ और उस के साथ एक रात्रि वास किया जाते समय उर्वशी ने राजा को विरहातुर देखकर कहा कि ॥४०॥४१॥ हे राजन् ! गन्धर्वों को प्रसन्न करो तो वह मुझको तुम्हें दे देंगे। हे महाराज ! उर्वशी की इस बात को सुनकर पुरूरवा ने गन्धर्वों की स्तुति की। इससे उन्होंने सन्तुष्ट होकर राजा को एक अग्निस्थाली दी। कामान्धराजा अग्निस्थाली को ही उर्वशी जानकर वन में भ्रमण करने लगा। फिर जान लिया कि यह उर्वशी नहीं है ॥४२॥ तब उस स्थाली को बनमें रखकर घर चला गया, और वहां भी रात को नित्य ही उसकी चिन्ता किया करता; इससे त्रेतायुग के आरम्भ में उसके हृदय से कर्मबोधक वेदत्रयी उत्पन्न हुई ॥४३॥ फिर वह उस स्थान पर कि जहां स्थाली रक्खी थी आया, वहां पर आकर उसने देखा कि—शमीवृक्ष के गर्भ से एक पीपल का वृक्ष उत्पन्न हुआ है। अतएव इस के बीच में अग्नि है—यह विचार कर उर्वशी के लोक प्राप्त की कामना से राजा ने पीपल की दो अरणी बनाई, और अग्नि मथने लगा ॥४४॥ मन्त्रानुसार राजा नीचे की अरणी को उर्वशी और ऊपर की अरणी को अपना स्वरूपजान, इन दोनों के बीच में जो काष्ठ खंण्ड या उसको पुत्ररूप से ध्यान करने

लगा ॥४५॥ पुरूरवा के अरणि मन्थन द्वारा जातवेद अग्नि उत्पन्न हुआ। इस अग्नि को कि जो वेदोक्त संस्कार से आहवनीय, गार्हपत्य और दक्षिणाग्निरूप उत्पन्न हुआ उसे पुरूरवा ने अपना पुत्रस्थिर किया ॥४६॥ और उर्वशी के लोक की कामना करके उससे सर्वदेवमय यज्ञेश्वर भगवान हरि का यज्ञ किया ॥४७॥ हे राजन् ! पहिले सत्ययुग में सर्ववाणी का बीजरूप एक ओंकार ही वेदरूप था; नारायण ही एकमात्र देवता; अग्नि भी एक ही और वर्ण भी एक ही था ॥४८॥ हे राजन् ! त्रेतायुग के प्रथम में पुरूरवा से तीन वेद उत्पन्न हुए। वह राजा अग्निरूप प्रजा द्वारा गन्धर्वलोक को प्राप्त हुआ ॥४९॥

पण्डित जी महाराज यह थी पुराणों की कथा—जिसमें गुरुपत्नी का हरण व उसके साथ व्यभिचार साफ लिखा है।

और मनु जी महाराज भी अपनी स्मृति में गुरु पत्नी गमन को महापातक बताते हैं। और कहते हैं कि—संसार में चार महापातक है। प्रथम तो ब्रह्म हत्या (अर्थात किसी विद्वान ब्राह्मण को मारना) दूसरे शराब पीना तीसरे चोरी करना चौथे अपनी गुरु पत्नी से व्यभिचार करना, परन्तु एक पांचवा महापाप है कि जो लो लोग इन लोगों के साथ मोल-जोल (सम्पर्क) रखते हैं वह भी महापापी कहे गये हैं यथा:—

ब्रह्महत्या, सुरापानं, स्वेयं, गुरु वंगनागम्: ।
महान्ति पातिकाण्याहू संसर्गश्चापि तै सहः ॥

मनुस्मृति अध्याय ११ श्लोक ५४,

चन्द्र से तारा गर्भवती हो गई, उससे बुध नाम का पुत्र उत्पन्न हुआ। देवों ने तारा बृहस्पति को दिलादी और पुत्र-बुध-चन्द्र को। आदि।

इस प्रकार की पूर्वजों को कलंक लगाने वाली सहस्त्रो कथाऐं पुराणों में भरी हुई हैं। इसलिए आर्य समाज का यह अपने भाई सनातन धर्मियों को परामर्श है कि वह शीघ्र यह घोषणा करदें कि पुराण वेद विरुद्ध है और अप्रमाणिक तथा अमान्य हैं।

पण्डित माधवाचार्य जी

सज्जनों महाशय जी ने जो प्रश्न किये हैं। और जिन कथाओं को न समझने के कारण आपको भ्रम हुआ है। यदि वे सब बाते विधर्मियों की होती तो हम बिना किसी झिझक के उनको पुराणों से निकाल देते। या पुराणों को छोड़ने की घोषणा कर देते। परन्तु आपने पुराणों से जो सुनाई है। यह सब ज्यों की त्यी वेदों में भी विद्यमान हैं। महाशय जी जो आक्षेप आज पुराणों पर लगा रहे हैं। वही सब बौद्ध काल में वेदों पर लगाये जाते थे। बौद्धों की वह डिमडिम घोषणा प्रसिद्ध हैं:—

"त्रयो वेदस्य कर्त्तारो भाण्ड धूर्त निशाचराः"।

अर्थात वेदों के बनाने वाले भाण्ड, धूर्त, निशाचर हो सकते हैं। क्योंकि उनमें अश्लील, धूर्तता पूर्ण और दुराचार की बातें लिखी हैं। ऐसी दशा में पुराणों को छोड़ने से काम न चलेगा। किन्तु वेदो तथा अन्यान्य सभी आर्य ग्रन्थों को छोड़ कर विधर्मी ही बनना पड़ेगा। किसी अन्य धर्मावलम्बी ने ऐसी बाते मिला दी हों। यह कल्पना निराधार और अविश्वसनीय है। क्योंकि कन्या कुमारी से लेकर हिमालय तक उपलब्ध पुस्तकों में ताड़ पत्र पर लिखे हुए अद्यावधि सुरक्षित कई पुस्तकालयों में प्राप्त पुराण ग्रन्थों में सर्वत्र कोई मिलावट करने में समर्थ हो। यह सर्वथा असम्भव है। इस लिए महाशय जी की भ्रान्ति का एक मात्र यही कारण है कि इन्होंने गुरुमुख से पुराणों का स्वाध्याय नहीं किया। जो व्यक्ति गुरु मुख से वेद, पुराणों को पढ़ेगा उसे भ्रम हो ही नहीं सकता।

गौ माता सनातन धर्मियों की प्राण है हमारे अगणित पुरूखाओं ने गाय के लिए अपने प्राण न्यौछावर कर दिये हैं। आज भी एक सच्चा हिन्दू अवसर पड़ने पर गाय के लिए प्राण देने में आनाकानी नहीं करेगा।

अभी इसी युग में श्री स्वामी करपात्री जी महाराज के साथ गौ रक्षा आन्दोलन में २५ हजार सनातनी जेल यात्रा कर चुके हैं। जिनमें एक यह सेवक भी था, तीन महात्मा जेल यातना से अपने प्राण भी दे चुके हैं। अब भी स्वामी कर पात्री जी इसी आन्दोलन में जेल यातना भोग रहे हैं। यदि यह शास्त्रार्थ का आवश्यक पुरोगम न होता तो यह सेवक भी शायद जेल में होता। ऐसी दशा में सनातनियों के किसी ग्रन्थ में पूज्य गौ माता के विरुद्ध एक शब्द भी नहीं हो सकता। शतपथ ब्राह्मण ३।३।३। में लिखा है। कि, "महांस्त्वेव गोर्महिमा' गाय का महत्व बहुत बड़ा है। अब अपने प्रश्नों का उत्तर सुनियेः—

१. स्वायम्भुव मनु ने अनेक गो मेध यज्ञ किये। "संगमे" धातु से मेध शब्द बनता है। जिसका अर्थ है, गाय का सत्कार किंवा पूजा। सर्वे देवास्थिता देहे। बृहत पाराशरस्मृति ३।३।३। प्रमाणानुसार गाय के शरीर में तेतीस कोटि देवताओं का निवास है। अतः जिस यज्ञ में गाय का विशेष रीति से पूजन सतकार हो। ऐसे यज्ञ को "गो मेध" कहते हैं। सो हमारे सभी पूर्वज गो भक्ति के अनेक अनुष्ठान किया करते थे। क्योंकि हमारे ग्रन्थों में "गावो विश्वस्य मातरः" अर्थात गाय विश्व की माता है। ऐसी घोषणा की गई है। मांस शब्द का अर्थ केवल लोक प्रसिद्ध पशु आदि का रक्त के वाद बनने वाला—"रसादरक्तं ततोमासंम्" दूसरा धातु अर्थात गोश्त ही नहीं है। अपितु कन्दों और फलों का गूदा एवं दूध आदि तरल पदार्थों का सार-भाग-रबड़ी, खीर, खोआ आदि भी इसके अनेक अर्थ हैं। इस लिए भोजन प्रसंग में भी जहां "गो मांस" शब्द आया है। वहां गौ से उत्पन्न होने वाले दुग्ध, दधि, मक्खनादि गव्य से अभिप्राय है। या गव्य निर्मित सार भूत पायस, खीर, रबड़ी-खोआ आदि से मतलब है।

संस्कृत साहित्य में वृक्ष फल आदि के उपरी भाग, मध्य भाग और कठिन भाग को क्रमशः त्वचा गूदे को मांस और गुट्ठल को अस्थि नाम से ही स्मरण किया जाता है। हरड़ के विषय में—शालीग्राम निघन्टु पृ० ११-५२॥ में लिखा है, कि—"सूक्ष्मास्थिमांसला पथ्या" अर्थात जिसमें अस्थि गुट्ठल सूक्ष्म् हो। और मांस गूदा अधिक हो वह श्रेष्ठ होती है अतः स्वायम्भुव मनु नित्य गो पूजन करते थे। पांच लाख दुधार गौओं के गव्य से निर्मित भोजन द्वारा ब्राह्मणों को तृप्त करते थे। मूल में गो मांस शब्द के विशेषणों से भी हमारे अर्थ की पुष्टि होती है।

जैसे कि "सापूपं" माल पूये साथ होते थे, तथा उस गव्य में अन्न चावलों को रान्धा जाता था, जिसका सीधा तात्पर्य है कि गो दुग्ध निर्मित खीर और मालपूओं से भोजन होता था। वेद में स्पष्ट लिखा है कि :—

(क) एतद्‌हवै देवानां परमं अन्नाद्यं यन्मासम्। शतपथ ब्राह्मण ११।७।
(ख) परमनन्नं तु पायसम् (अमर कोष)

अर्थात देवताओं को दिये जाने वाले मांस को "परमान्न" कहते हैं।

(ग)—खीर का अन्यतम नाम परमान्न है। आशा है कि महाशय जी अब केवल मांस शब्द देख कर भ्रम में न पड़ेंगे। आयुर्वेद में वर्णन आता हैं, कि अमुक औषधि में "प्रस्थं कुमारिका मांसम" अर्थात एक सेर भर कुमारी घी कुमारी का मांस गूदा ड़ाला जाये। अब यदि कोई आप जैसा समझदार ! कुमारी लड़की का सेर भर मांस=गोश्त डालने की व्यवस्था करें तो अनर्थ हो जाय।

(२) सत्यव्रत नामक जिस व्यक्ति की कथा कहकर यहां. आक्षेप किया जा रहा है। वास्तव में वह वैसा ही दुराचारी था जो विकृतांग करके हिन्दु धर्म से सर्वथा बहिष्कृत कर दिया गया था। यह हरिवंश पुराण में स्पष्ट लिखा

है। एक ही कश्यप ऋषि की सन्तान- कोई देवता तो कोई दानव। एक ही पुलस्त्य के नाती रावण और विभीषण। इसी प्रकार सत्यव्रत, ऋषि सन्तान होते हुए भी दुर्भाग्यवश पथ भ्रष्ट राक्षस हो गया था। पुराण में देव, दानव,मानव, सभी के सुचरित और दुश्चरित वर्णित है जिसमें मनुष्य धर्म अधर्म का परिणाम जानकर पाप से पराङ्मुख हो, अतः जैसे रावण के दुराचारी होने से राम भक्तों पर कोई आक्षेप नहीं हो सकता। इसी प्रकार सत्यव्रत के दुराचार का उसको उग्र दण्ड देने वाले सनातन धर्मियों पर कोई आक्षेप करना व्यर्थ ही है। क्योंकि हम तो "रामादिवतप्रवर्तितव्यं, न रावणादिवत्" के अनुसार रामादि का अनुकरण करने वाले है रावण आदि का नहीं।

(३) रुक्मणी के विवाह की तैयारी में गौ आदि पशुओं को वध करने के लिये जुटाने का आक्षेप है। वह भी निर्मूल है क्योंकि प्रकृति प्रसंग यह है कि—ब्रह्मवैवर्त पुराण में लिखा है कि-कुडनपुर का राजा भीष्मक एक धार्मिक राजा था। परन्तु उसका कुपुत्र रुक्मीकंस शिशुपालादि की टोली का अन्यतम सदस्य था। एक बार सभा में रुक्मणी के विवाहार्थ जब परामर्श चला तो शतानन्द पुरोहित ने श्री कृष्ण को रुक्मिणी के योग्यवर बतलाया, और माखन मिश्री आदि से अनेक सत्कार की बात कही। परन्तु दुष्ट रुक्मी ने पुरोहित, अपने पिता श्री कृष्ण तीनों को अपशब्द कहते हुए अपनी बहन को शिशुपाल से विवाहने का अपना दढ़ निश्चय व्यक्त किया और शिशुपालादि के लिए नाना विधि मद्य और अनेक जानवरो के मांसादि का प्रबन्ध करने की घोषणा की "तू-तू मैं-मैं" में सभा समाप्त हो गई। रुक्मिणी ने माता पिता की सम्मति से गुप्त रीति से भगवान कृष्ण के पास एक ब्राह्मण भेजकर अपने उद्धार की सब व्यवस्था ठीक कर ली।

समय पर शिशुपाल की बारात आई। परन्तु भगवान कृष्ण ने सबके देखते-देखते रुक्मिणी का हरण किया। घोर घमासान युद्ध हुआ। रुक्मी के सब साथी मारे गये। शिशुपाल ने भागकर जान बचाई, और स्वयं रुक्मिणी हस्ताक्षेप न करती तो श्री कृष्ण के हाथो मारा जाता। अन्त में शिर मूंड़ कर काला मुंह करके उसे अपमान पूर्वक छोड़ दिया गया, इस तरह रुक्मी के विचारानुसार न रुक्मिणी का विवाह शिशुपाल के साथ हो पाया। और नाही किसी जीव के मारने का अवसर आया। अतः रुक्मिणी के विवाह में गौ वध तो क्या मक्खी तक का भी वध नहीं हुआ। (ग्राम उच्च शरीफ़ बहावल पुर स्टेट) में समाज के भजनीक म० सन्तराम द्वारा उपर्युक्त बात करने पर ड़ेरा नवाब कोर्ट में मुकद्मा चला। पांच आर्य समाजियों के वारण्ट निकले, अन्त में लिखित क्षमा मांगने पर और कहे शब्द वापिस ले लेने पर पिंण्ड छूट पाया। क्या महाशय अमर सिंह जी आप भी सफेद झूंठ बोलकर हमें वैसी व्यवस्था करने के लिए बाध्य कर रहे हैं?

(४) जैसे पौलस्य ऋषि के अगणित पुत्र पौत्रों के गौ भक्षक और नर भक्षक राक्षस हो जाने से सनातन धर्म पर कोई आक्षेप नहीं हो सकता इसी प्रकार विश्वामित्र के सात किंवा न्यूनाधिक पुत्रों के विधर्मी हो जाने से हम पर कोई आक्षेप नहीं हो सकता।

आपने जो गौ वध का प्रसंग उठाया इससे ईसाई-मुसलमान व्यर्थ लाभ उठायेंगे। इसको आप न उठाते तो अच्छा था। मुसलमानों के, आने से पूर्व गौ वध नहीं होता था, यह सर्वथा असत्य है। और एक सम्प्रदाय की व्यर्थ निन्दा है। किसी सम्प्रदाय का इस प्रकार अपमान उचित नहीं है।

नोट—ऐसी-ऐसी बातें कहकर माधवाचार्य जी ने मुसलमानों को भडकाने का प्रयत्न किया, पर सफल न हुए।

(५) पुराण साहित्य में दो कृष्णों का वर्णन आता है। एक कंस आदि दुष्टों का नाशक, गीता का उपदेष्टा सदाचारी, सनातन धर्मियों के गोपाल कृष्ण भगवान, दूसरा करुष देश का राजा पौण्ड्रिक जो यन्त्र संचालित नकली भुजाएँ लगाकर वैसा ही बहुरूप बनाकर कृष्ण के नाम से विख्यात होने की दुश्चेष्टा में प्रयत्न शील, दुराचारी, दम्भी, नकली, कृष्ण था।

जो अन्त में भगवान कृष्ण के ही हाथों मारा गया। महाशय जी आप जो दुश्चेष्टायें यहां प्रकट कर रहे है वह उसी नकली कृष्ण से सम्बन्धित है। इस ईर्ष्यालु दुष्ट ने वाहन स्वांग तो सब भगवान कृष्ण जैसा बना लिया था। परन्तु सदाचार में तादृश घटनायें घटी। श्री मद् भागवत पुराण के दशम् स्कन्द में और पुराणान्तर में भी इस नकली कृष्ण पौण्ड्रिक की ऐसी उपहासास्पद कथायें विद्यमान है।

(६) श्री कृष्ण जी की १६ सहस्त्र स्त्रियां जो आपने बताई। वह साम वेद की ऋचाये हैं। वही भगवान की पत्नियां है।

नोट—इस पर नीच ही में ठाकुर अमर सिंह जी बोल उठे।

ठाकुर अमर सिंह जी शास्त्रार्थ केशरी

श्री पं. माधवाचार्य जी महाराज ! आपको वद्दो मल्ली जि० स्यालकोट [वर्तमान पाकिस्तान] के शास्त्रार्थ की बात याद होगी अपने इसी उत्तर में कहा था कि:—श्री कृष्ण जी को इतनी सामर्थ्य थी कि वह इतनी स्त्रियां विवाह सके। और साथ ही यह भी कहा था कि नरकासुर के यहां १६ हजार कन्यायें कैद थी। उनका उद्धार इसी प्रकार हो सकता था। उसको मार कर उन्हें छीन लायें थे। और अपने यहां आश्रय दिया था। अब सामवेद की ऋचाएं बताते हो।

पं० माधवाचार्य जी

नोट:—पं० जी ने उपरोक्त बात का कोई उत्तर न देते हुए कहा कि—

इन्होंने जालन्धर शब्द का अर्थ ही जल को धारण करने वाला मेघ हैं। मेघान्तरवर्ती विद्युत ही वृन्दा हैं जो एक पतिव्रता की भाँति तदनुगामिनी बतलाई गई हैं। वायु रूप विष्णु जब तक विद्युत रूप वृन्दा से संयुक्त नहीं हो पाता तब तक वर्षा नहीं होती। यही वृष्टी विज्ञान इस कथा का वाच्यार्थ हैं। जो हमने पुराण दिग्दर्शन ग्रन्थ में विस्तार पूर्वक लिखा है।

नोट-बीच में ही ठाकुर साहब ने खड़े होकर कहा।

ठाकुर अमर सिंह जी शास्त्रार्थ केशरी

पण्डित जी महाराज ! वृन्दा की कथा पर जिला स्यालकोट के शास्त्रार्थ में आपने कहा था, कि जालन्धर दुराचारी था, वह परस्त्रियों से दुराचार करता था। उसको यही दण्ड देना उचित था। दूसरे यह कहा था-कि वृन्दा के पतिव्रता रहने से वह मर नहीं सकता था। इस लिए भी उसका पतिवृत धर्म नष्ट करना आवश्यक था।

नोट:—ठाकुर साहब की इस बात को कोई उत्तर न दे देते हुए कहा—

आकाशस्थ बृहस्पति नामक ग्रह की कक्षा में परिभ्रमण करने वाला एक उपग्रह ही तारा नाम से विख्यात है। वह एक बार चन्द्रमा के आकर्षण से चन्द्र कक्षा में चला गया तो आकर्षण विकर्षण का तारतम्य विश्रंखलित हो जाने पर सभी ग्रह नक्षत्रों में हल-चल मच गई। अन्त में प्रजापति=सूर्य के विशिष्ट आकर्षण ये वह तारा चन्द्र कक्षा को छोड़ कर पुन: बृहस्पति कक्षा में पूर्व वत् सम्बद्ध हो गया। परन्तु इस खींचातानी में चन्द्रमा और तारा का भाग बहुत सा टूट कर एक अन्य स्वतन्त्र ग्रह का प्रादुर्भाव हो गया। जिसे आज भी 'बुध' ही कहते है। यह बुध ग्रह की वैज्ञानिक उत्पत्ति की खगौलिक कथा है। मैंने ठाकुर साहिब के सब प्रश्नों का उत्तर दे दिया। अच्छा तो यह था कि ठाकुर जी सामान्य विषय पुराण पर विचार करते। पुराण वेदोक्त हैं। क्योंकि अथर्व वेद ११।७।२४ में—"ऋच: सामानि छदांसि पुरांण मजुषा सह।" आदि में पुराण नाम आता हैं। आप पुराण नाम को छोड़ कर पुराणों की कथाओं को ले बैठे। आप ठकुराई करते हैं या शास्त्रार्थ ?

नोट:—इस पर जनता में हलचल मच गई तथा चारों तरफ से "शब्द वापिस लो" की आवाज गूंजने लगी।

ठाकुर अमर सिंह जी शास्त्रार्थ केशरी

पं० जी ने खड़े होकर जनता को शांत किया, और कहा कि मेरे प्रति कहे गये शब्दों से आप बुरा न मानीये, में कुछ भी बुरा नहीं मानता हूं। यह तो चाहते ही यह हैं। कि किसी प्रकार आप रुष्ट हो जायें और शास्त्रार्थ से इनका पीछा छूटे। आप इनके भडकाने से बिल्कुल न भडकिये। और शान्ति पूर्वक शास्त्रार्थ को चलने दीजिये।

पं० माधवाचार्य जी

महाशय जी ने पुराणों का अपरेशन होना चाहिये तथा विष्णु जी ने व्रन्दा से व्यभिचार किया कठोर शब्द बोले हैं।

ठाकुर अमर सिंह जी शास्त्रार्थ केशरी

सामान्य पुराण शब्द पर हमारा कुछ भी विवाद नहीं हैं। इस पर प्रमाण देना और उस और शास्त्रार्थ को खींचने का प्रयत्न करना, प्रस्तुत विषय से भागना हैं।

गो शब्द के अर्थ गौ पशु के अतिरिक्त और भी हैं। और मांस शब्द आयुर्वेद में अर्थात आयुर्वेद के ग्रन्थों में गूदे के लिए भी आता है। मांस के लिए भी मैंने आयुर्वेद विधि पूर्वक गुरुमुख से पढ़ा हैं। और में वैद्य भी हैं।

अत: "प्रस्थम् कुमारिका मांसम्" का अर्थ मेरे जैसा तो "लड़की का एक सेर मांस" नहीं करेगा, परन्तु आप जैसा समझदार किसी वैध से सुनकर कि कुमारी "घी कुमार को कहते हैं" सर्वत्र कुमारी का अर्थ घीकुमार ही करेगा। या थोड़े व्याकरण के अभिमान में आयुर्वेद में आई "कन्टकारी" औषधि का अर्थ, कांटे की शत्रु जूती करेगी तो अवश्य हास्यास्पद बनेगा, जैसा कि गौमांस का अर्थ आप घी, दूध, मक्खन, रबड़ी, घी और खोया करके विद्वानों में हास्यास्पद बन रहे हैं। क्या आप ऐसा किसी कोष या किसी प्रामाणिक ग्रन्थ का प्रमाण दे सकते हैं ? कि—गौ मांस या मांस का अर्थ खोया आदि होता हो ? कदापि न दे सकेंगे।

मांस का अर्थ गूदा होता है। जहां आम का मांस—केले, अमरूद अंगूर या सेव का मांस लिखा हो, और जहां गाय-बकरी-भेड़ हिरण-खरहा आदि का मांस लिखा हो। वहां आम का गूदा वा केले का गूदा अर्थ नहीं होगा। कुछ सोचिये वहां मांस तो क्या यदि गूदा भी लिखा होगा तो उसका अर्थ मांस ही होगा, जैसे हिरण का गूदा, खरहे का गूदा बकरे का गूदा यहां गूदा का अर्थ भी मांस ही होगा। जो मांस का अर्थ गाय का खोया है। तो हिरण मांस का अर्थ हिरण का खोवा कच्छप मांस का अर्थ कछुवे का खोवा होगा ? जनता में हंसी......।"

सुनिये गौ का अर्थ भूमि, बाणी, सूर्य, किरण आदि होता है। और मांस का अर्थ गूदा इन सुनी सुनाई बातों से यहां काम नहीं चलेगा। और सैकड़ों प्रमाण भी आप दे दें तो भी कुछ नहीं बनेगा, प्रश्न तो यह है कि जो कथाएं मैंने उपस्थित की है। उनमें उन शब्दों का अर्थ यह घटता भी है कि नहीं, मेरी कही किसी भी कथा में गौ मांस का अर्थ गूदा लगाकर बताइये, अभी परीक्षा हुई जाती है। पर आप कदापि न लगा सकेंगे। पुराणों को छोड़े बिना कदापि काम न चलेगा। देखिए मैंने गौ मांस पर पुराणों की पांच कथाएं उपस्थित की हैं। उनमें से चार में आप भी गौ मांस का अर्थ रक्त से बना मांस धातु ही करते है।

१—राजा सत्यव्रत ने गौ मांस खाया और विश्वामित्र की पत्नी और पुत्र को खिलाया। यहां गौमांस का अर्थ आप खोआ नहीं करते। "मांस" रक्तोद्भव ही मानते हैं।

२—विश्वामित्र ऋषि के सात पुत्रों ने गर्ग ऋषि की कपिला गाय मारकर अपने पितरों की तृप्ति के लिए श्राद्ध

करके ब्राह्मणों को मांस खिलाया। ब्राह्मणों ने खाया। यहां भी आप खोआ आदि अर्थ नहीं करते। रक्तजमांस ही मानते हैं।

३—चन्द्र के वंशज चैत्र ने गौ मांस ब्राह्मणों को खिलाया वहां भी आप खोआ अर्थ नहीं करते।

४—रुकमणी के विवाह में भी आप मानते हैं। कि रुक्मिणी के भाई रुकमी का प्रस्ताव एक लाख गायें मारने का था। इस प्रस्ताव में भी आप खोआ अर्थ नहीं करते। गायें मारने का प्रस्ताव मानते हैं। "एक मक्खी भी नहीं मारी गई" यह आपने विना प्रमाण ही बोल दिया। आप ही कहते हैं कि—शतानन्द पुरोहित का प्रस्ताव-कृष्ण वर और भोजन मक्खन आदि का था। और रुकमी का वर शिशुपाल और भोजन—गौ मांस आदि का था। आप ही कहते हैं कि—बारात शिशुपाल की ही आई। रुक्मिणी ने गुप्त पत्र से श्री कृष्ण जी को बुलाया। स्पष्ट है कि—रुकमी का प्रस्ताव पास हुआ। शतानन्द पुरोहित का नहीं, फिर भी आप कहते हैं कि—"जीव एक भी नहीं मारा गया" एक मक्खी भी नहीं मारी गई, मारने का अवसर ही नहीं आया। कैसा उपहास जनक आपका कथन है।

यह किसकी समझ में आ जायेगा। कि जिस बारात के लिए एक लाख गायें मारी जानी थी। और लाखों पशु कटने थे। वह बारात बुलाई हुई आ गई, और बुलाने वालों ने उनके भोजन का कुछ भी प्रबन्ध नहीं किया। यह आपके सिवा किसी की समझ में नहीं आयेगा। बारात वह आई जो रुकमी चाहता था तो भोजन भी वही बना होगा जो वह चाहता था।

पांच प्रकरणों में से केवल एक प्रकरण में आप "गौ मांस" का अर्थ खीर-खोआ आदि करते हैं। अन्य चार में क्यों नहीं करते ? वहां गौ के साथ अन्य हिरण, मेंढे, खरहे, कछुवे आदि के भी नाम हैं। इसलिए वहां गौ मांस का अर्थ गूदा खोआ नहीं। गौ का मांस ही रहा। हां ! खिलाने वालों को पापी और दुराचारी कह दिया पर मनु के प्रसंग में अन्य पशुओं के नाम नहीं। वहां केवल "गौ मांस" है। अतः वहां मनमाना अर्थ—"गाय का खोआ" कर लिया। बस हो गयी शास्त्रार्थ में विजय ! श्रीमान जी वहां :—

"पंच लक्ष गवां मांसैः सुपक्वैः घृत संस्कृतैः" ॥

ब्रह्मवैवर्त पुराण प्रकृति खण्ड २ अध्याय ५४ श्लोक ४६,

(वैंकटेश्वर प्रैस बम्बई द्वारा प्रकाशित)

ऐसा पाठ है। जिसका अर्थ है। घी से छोंके हुए पांच लाख गौओं के भली प्रकार रांधे-पकाये हुए मांस से" ब्राह्मणों को भोजन कराया। पुराणों में गोवध और गौमांस भक्षण इतना स्पष्ट है कि—उस पर किसी प्रकार की लीपा-पोती नहीं हो सकती, वेदों में जिस प्रकार यौगिक शैली से अर्थ किए जाते हैं। यदि इसी प्रकार पुराणों और इतिहासों में भी किए जायें तो सारा इतिहास ही नष्ट हो जाए। न राम ही रहे न दशरथ न युधिष्ठिरादि ही रहें न कृष्ण, "पुराणों के रहते गोवध और मांस भक्षण का कलंक नहीं छुट सकता।

हठ योग प्रदीपिका का आपने प्रमाण दिया। हमारे लिए वह कुछ भी मान्य नहीं "जैसे उदई वैसे भान उनके चोटी न उनके कान" हमारे लिये जैसे पुराण अप्रामाणिक वैसे ही हठयोग प्रदीपिका। पर आपका भी इसमें क्या दोष है प्रमाण लायें कहां से ? यह आपने कमाल की बात कही कि—आपकी बात से ईसाई-मुसलमान लाभ उठायेंगे। वाह ! वाह !! मैं कहता हूं कि—गौवध और गौमांस भक्षण भारत में मुसलमानों से पहले कभी भी नहीं होता था। मेरी बात से कैसे लाभ उठायेंगे ? वह तो आपकी बात से लाभ उठायेंगे। क्योंकि आप कहते हैं कि—"गोवध और गौमांस भक्षण सदा होता था।

मैं फिर कहता हूं कि—मुसलमानों से पहले गोवध कभी नहीं होता था। आप मुसलमानों को चाहे कितना भी भड़कायें मैं इससे नहीं घबराता। न उसमें मुसलमानों का कुछ अपमान ही है। श्रीकृष्ण जी की सोलह सहस्र स्त्रियां सामवेद की ऋचायें हैं, यह आपने खूब कहा। किसी वेद पढ़ने वाले से ही पूछ लिया होता कि—सामवेद में सोलह सहस्र ऋचायें हैं भी कि नहीं। सामवेद में तो पूरी दो सहस्र ऋचायें भी नहीं हैं फिर सामवेद की ऋचाएं वेश्या कैसे बन गई। पण्डित जी महाराज!

नकली कृष्ण कोई था कि नहीं इस पर मुझको कुछ नहीं कहना है।

स्त्रियां साम्ब (कृष्णजी का पुत्र) पर मोहित हो गई और वे शाप वश वेश्याएं बनी, जिनके उद्धार का उपाय रविवार के दिन ब्राह्मण के साथ बिना फीस सम्भोग बताया। यह कथा नकली कृष्ण के घर की है। यह आप तीन काल में भी सिद्ध नहीं कर सकते हैं कृष्ण जी स्वयं ही महाराजा युधिष्ठिर को अपने घर का हाल सुना रहे हैं। वहीं उन्होंने सोलह सहस्र पत्नियां बताई हैं। वहीं आगे उनके विषय में स्वयं कहा है कि—'वे सब साम्ब (कृष्ण जी का पुत्र) पर मोहित हुई इस पर मैंने और नारद जी ने उनको वेश्या बनने का शाप दिया, वेश्या बनीं। और रविवार को ब्राह्मणों के साथ बिना फीस "सनातन धर्म" (व्यभिचार) करने से उनका उद्धार बतलाया। यह कथा नकली कृष्ण की कदापि नहीं है मैंने यह कहा कि—"विष्णु ने वृन्दा से व्यभिचार किया" इस पर आप चिढ़ गये और कहा कि—यह कठोर शब्द है। सुनिये मेरे शब्द कठोर है। या वृन्दा ने जो वचन कहें वो कठोर है। वृन्दा कहती है—ओ मायावी तपस्वी! परदार लम्पट, तुझको धिक्कार है।

जालन्धर बादल है। वृन्दा विजली है। वायु विष्णु है। आदि आपका विज्ञान पुराण में नहीं चलेगा वहां स्पष्ट है कि—वृन्दा ने शाप भी दिया आदि।

बृहस्पति, तारा, चन्द्र, बुद्ध यह ग्रह नक्षत्र है, ऐसा कहना भी आपका पुराणों के विरुद्ध है। देवी भागवत में स्पष्ट लिखा है। कि-चन्द्र राजर्षि अत्रि का पुत्र था। बृहस्पति देवों का और चन्द्र का भी गुरु था। चन्द्र ने गुरुपत्नि से जो पुत्र उत्पन्न किया, उसका नाम बुद्ध है। उसका मनु की पुत्री इला के साथ विवाह हुआ और उससे चैत्र नामक पुत्र उत्पन्न हुआ। यह चन्द्र आकाश का चन्द्र नहीं क्षत्रियों के चन्द्रवंश का आदि पुरुष अत्रि-पुत्र चन्द्र है। आप पुराणों को कभी पढ़ते नहीं है, यह मुसीबत तो हमारे गले ही पड़ी हुई है।

श्रोताओं में हंसी?...........

में निश्चय पूर्वक कहता हूं कि—यदि आप पुराणों को पढ़ लेगें तो अवश्य ही आर्य समाजी हो जावेंगे।

तालियों की गड़गड़ाहट के साथ जबंदस्त हंसी...........?

तथा फिर उन्होंने एक सौने का रत्न जटित ककंण उसको दिखाया उसने उसे पसन्द किया। तो सौदागर रूपी शिव ने कहा—

"मौल्यमस्य ददासि किम्"? अर्थात तू इसका मूल्य क्या देगी? वेश्या ने अपना काम बताया। शपथें उठाने के पश्चात तीन रात्री के लिए वेश्या से सोदागर की पत्नी बनने का निश्चय (सौदा) हो गया। और दोनों मिलकर नरम तकियों और गद्दों पर सो गये। कहिये! शिवजी महाराज पर वेश्या गमन का कैसा घृणित लांछन है।

में निश्चय ओर भी कथा पुराणों में से सुनाता हूं, सुनिये। और उत्तर दीजीये! शिव पुराण में है कि—

"एक बार शिव जी सोदागर का रूप बनाकर महानन्दा वेश्या के घर गये"

नोट—यहाँ पर उस कहानी का भाषार्थ पूरा दिया जाता है। जिससे पाठकगण अच्छी तरह जान सकें। शास्त्रार्थ में केवल आवश्यक बात ही कही गयी थी।

शिव पुराण शतरुद्र संहिता अध्याय २६ श्लोक १३ से ३० तक पृष्ठ ८६५-८६६—श्याम काशी प्रेस मथुरा विक्रमी १९९७,

महानन्दा बोली—

यह रत्नजटित कंकड़ जो आपके हाथ में शोभित है दिव्य स्त्रियों के लिए उचित है और मेरे मन को हरण करता है ॥१८॥

नन्दीश्वर बोले—

इस प्रकार नवीन रत्नों से युक्त करभूषण उस कंकड़ में उसकी स्पृहा को देख वह वैश्य उदार बुद्धि से उससे हँस कर बोला ॥१९॥

वैश्यनाथ बोला—

यदि इस दिव्य श्रेष्ठ रत्न में तेरा मन है तो तुमही इसको प्रसन्नता से धारण करो परन्तु यह कहो कि इसका मूल्य क्या दोगी ॥२०॥

वेश्या बोली—

हम व्यभिचारिणी वेश्या हैं पतिव्रता नहीं हैं, व्यभिचारी ही हमारे कुल का परम धर्म है इसमें कुछ संशय नहीं है ॥२१॥ यदि इस मनोहर कंकड़ को आप मुझे दोगे तो मैं तीन दिन और तीन रात आपकी स्त्री रहूँगी ॥२२॥

वैश्यनाथ बोला—

हे वीरवल्लभे ! "तथास्तु" यदि तेरा वचन सत्य है तो मैं इस रत्न कंकड़को देता हूँ तुम तीन रात मेरी स्त्री रहो ॥२३॥ इस व्यवहार में चन्द्रमा और सूर्य प्रमाण हैं । हे प्रिये ! तुम तीन बार "सत्य है" यह कह कर मेरे हृदय का स्पर्श करो ॥२४॥

वेश्या बोली—

हे प्रभो ! मैं तीन दिन अहोरात्र तुम्हारी पत्नी होकर सहधर्म का पालन करूँगी यह सत्य है इसमें संशय नहीं ॥२५॥

नन्दीश्वर बोले—

महानन्दा ने इस प्रकार कह कर और चन्द्रमा तथा सूर्य को साक्षी कर प्रीतिपूर्वक उनके हृदय का तीन बार स्पर्श किया ॥२६॥ वह वैश्य भी उसको कंकड़ प्रदानकर रत्नमय लिंग को हाथ में देकर यह बोला ॥२७॥

वैश्यनाथ बोला—

हे कान्ते ! यह रत्नजटित शिवजी का लिंग मेरे प्राणों से भी अधिक प्यारा है तुम इसकी रक्षा करो और यत्न पूर्वक छिपा रक्खो ॥२८॥

नंदीश्वर बोले—

वह महानन्दा "ऐसाही होगा" यह कह कर और उस रत्नमय लिंग को लेकर नाटक के मण्डप में रख कर गृह में प्रवेश कर गई ॥२९॥ तब वह वेश्या उस जार धर्म वाले वैश्य के साथ रात्रि में संगत हो कोमल गद्दे और तकियों से शोभायमान पलंग पर सुख पूर्वक सो गई ॥३०॥

पं० माधवाचार्य जी

पं० जी ने एक-एक पुस्तक हाथ में लेकर आयुर्वेद के प्रमाणों को दुहराया, जिसमें छाल को त्वचा, गुठली को अस्थि, मीग को मज्जा, गुदे को मांस बताया। इसी में बड़ा समय लगाया। और बड़ा बल इसी बात पर दिया कि "गौमांस" शब्द का अर्थ मांस नहीं करना चाहिये। और बलपूर्वक कहाकि-गोवध सदा होता है और गौ मांस भक्षण सदा किया जाता था। यह कहना असत्य है कि—मुसलमानों से पहले गोवध नहीं होता था। होता अवश्य था। किन्तु पापी और दुराचारी ही करते थे। वह चाहे राजा था या राजपुत्र या ऋषि तथा ऋषि पुत्र, कोई भी हो, दुराचारी सभी में हो सकते हैं। पुलस्त्य और विश्वश्रवा ऋषि की सन्तान रावण दुराचारी हो गया। राक्षस कहलाया। इससे सनातन धर्म पर कुछ भी दोष नहीं आता। कंस, जरासन्ध, दुर्योधनादि बहुतेरे पापी हुए। धर्मात्मा राजा और ऋषि सदा से गो रक्षा और गौ पूजनादि करते आए हैं।

हमारे धर्म में गो रक्षकों की महिमा है। गो भक्षकों की तथा गौ घातकों की निन्दा है। इतिहास का काम बुरों की बुराई और भलों की भलाई प्रकट करना दोनों है।

वृन्दा ने शाप दिया और विष्णु शालिग्राम बने, वृन्दातुलसी बनी गण्ड की नदी का सुवर्ण घटित पाषाण और त्रिदोष नाशक दिव्य शक्ति सम्पन्न तुलसी क्षुप की पत्ती वर्तमान अनुसन्धान करने वालों की दृष्टि में जल मिश्रित करके पान करने पर 'मकर ध्वज' औषध से भी अधिक गुणकारी माने गये हैं। इसमें 'चरणामृत' विज्ञान को प्रकट किया गया है। आप कहते हैं कि—महाराज युधिष्ठिर से श्रीकृष्ण जी की बातें हो रही थीं, उसमें उन्होंने अपने घर की बात बतलाई आप उसको असली मानते हैं तो माने। हम तो नकली ही मानेंगे। वह नकली कृष्ण युधिष्ठर जी के पास गया होगा, वह तो श्रीकृष्ण जी के घर तक गया था, देश की अनेक जटिल समस्याओं में वेश्याओं की भी एक समस्या है। उसका यही समाधान हो सकता है कि वेश्यायें अपनी नारकीय जीवन को समाप्त करके प्रायश्चितार्थ रविवार को व्रतोपवास द्वारा तपस्विनी बनकर शेष जीवन बितायें। कोई भी तपस्वी जितेंद्रिय उदार पण्डित उनको पुत्री की भांति आश्रय प्रदान करें। शिवजी और महानन्दा की कथा का समाधान हमने पुराण दिग्दर्शन नाम की पुस्तक में किया है। महानन्दा व्यभिचारिणी नहीं थी। उसकी परीक्षा लेने शिवजी गये थे। वह शिव की भक्ति करती थी। शिवजी उसके घर में सोये थे! तभी उसके घर में आग लग गई थी। गो मांस के सम्बन्ध में इतना नया कहा कि—हठ योग प्रदीपिका में कहा है कि—

"गोमांसंभक्षयेन्नित्यम्" परन्तु वहां "गो शब्देनोदिताजिह्वा तत्प्रवेशस्तु तालुनि" गो शब्द का अर्थ जिह्वा है। यह गो मांस नित्य खाना चाहिये। योगी लोग खेचरी आदि मुद्रा करते हैं। जीभ को तालु में चढ़ाते हैं। यही उनका नित्य गो मांस भक्षण हैं।

ठाकुर अमर सिंह जी शास्त्रार्थ केशरी

जब तक आप पुराणों की एक भी कथा में मांस का अर्थ फलों का गूदा या खोआ घटा कर न दिखायेंगे, तब तक

आयुर्वेद के इन प्रमाणों का यहां कुछ भी मूल्य नहीं है, मांस का अर्थ "खोआ" है। इसका कोई प्रमाण न दे सके और ना ही दे सकेंगे।

पुराणों में सामान्य बोल चाल की संस्कृत है। उसका वेदों की भांति यौगिक ही अर्थ करेंगे, तो वह अर्थ नहीं अनर्थ हो जावेगा। और इतिहास सर्वथा नष्ट हो जायेगा। पुराणों का अर्थ पुराणों और इतिहासों की भांति ही किया जायेगा और किया जाता है। लीजिये मैं प्रसिद्ध सनातन धर्मी शास्त्रार्थ महारथी विद्या वारिधि पं० ज्वाला प्रसाद जी मिश्र मुरादाबादी की टीका सुनाता हूँ। उन्होंने सर्वत्र "गौ मांस" का यही अर्थ "गौ का मांस" किया है। खोआ नहीं किया।

श्रोताओं में हंसी...... ....

नोट—श्री ठाकुर साहब जी ने पं० ज्वाला प्रसाद जी की टीका पुराण पर पढ़कर सुनाई। सुनकर पण्डित माधवा चार्य जी और कविरत्न अखिलानन्द सन्न रह गये। दोनों के मुख मण्डल मुरझा गये।

श्री पण्डित रामस्वरूप जी ऋषि कुमार प्रसिद्ध पण्डित भीमसेन जी इटावा वाले सभी मांस का अर्थ मांस और पशु वध मानते हैं। और आप दूर क्यों जाते हो ! अपने बराबर में बैठे पण्डित श्री अखिलानन्द जी से पूछिये, इन्होंने अपने ग्रन्थों में जो लिखा है वह बोलता हूँ, वह सत्य है कि नहीं ? श्री पं० अखिलानन्द जी अपनी पुस्तकों में मांस का अर्थ खोआ नहीं करते, "मांस" ही करते हैं। और यज्ञ में पशु वध भी मानते हैं।

इनकी पुस्तक वेदत्रयी समालोचन में स्पष्ट है। इनकी ही पुस्तक अथर्ववेदालोचन में ब्रह्मगवी सूक्त का अर्थ दिया है। वहां गौ का अर्थ गाय ही किया है। और लिखा है।

"हे राजन ब्राह्मण की गौ को मत खा" अर्थापत्ति प्रमाण से सीधा अर्थ है कि अन्य वर्णों की गौ खाई जा सकती है।

नोट:—(यह सुनकर दोनों के चेहरे फक़ हो गये, इस पर सारी जनता ने पण्डित माधवाचार्य जी और पण्डित अखिलानन्द जी दोनों की विवशता स्पष्ट देखी)

आगे पण्डित शास्त्रार्थ केशरी अमर सिंह जी ने कहा

कि आप जो यह कहते हैं कि—गोवध करने वालों को पुराणों में पापी-महापापी और दुष्ट दुराचारी बतलाया है, यह कहना आपका पुराणों के नितांत विरुद्ध। देखिये—

"पंचलक्षगवां मांसैः सुपक्वैः घृतसंस्कृतैः" ब्रह्मवैवर्त पुराण अध्याय प्रकृति खण्ड २ अध्याय ५४ श्लोक ४९७ में पांचलक्ष गायों के मांस को घी में छोंक और भली भांति पकवा कर ब्राह्मणों को खिलाने वाले स्वायम्भुव मनु की आप के ब्रह्मवैर्वत पुराण में उसी स्थल पर प्रशंसा लिखी है। यथा—

"धर्मिष्ठानां वरिष्ठश्च गरिष्ठो मनुषुप्रभुः ॥४५॥
स्वायम्भुवः शम्भुशिष्योविष्णु-व्रत-परायणः ॥
जीवन् मुक्तो महाज्ञानी भवतः प्रपितामहः ॥४६॥

ब्रह्मवैर्वत पुराण प्रकृति खण्ड २ अध्याय ५४ श्लोक ४५, ४६,

धर्मात्माओं में श्रेष्ठ मनुओं में प्रमुख, शम्भु शिष्य, विष्णु व्रतपरायण जीवन मुक्त और महाज्ञानी बताया है।

कहां महापापी कहा है ?

चैत्र ने पांच करोड़ गौओं का मांस ब्राह्मणों को खिलाया, उनको कहां पापी कहा है ? न खाने वालों को कहीं पापी कहा गया है, न खिलाने वालों को।

मनु के यज्ञ में तीन करोड़ ब्राह्मणों ने गो मांस खाया, कहां उनको पापी लिखा है ?

"ब्राह्मणानां त्रिकोटीश्च" ॥४८॥

ब्रह्म वैवर्त पुराण प्रकृति खण्ड अध्याय ५४ श्लोक४८,

विश्वामित्र के सात पुत्रों ने गो मार कर श्राद्ध किया अर्थात् ब्राह्मणों को उनके मांस का भोजन कराया, गो मांस खाने को ब्राह्मण आये, कि नहीं आये ? नहीं आये तो श्राद्ध कैसे हुआ ? वहां स्पष्ट लिखा है कि—विधिवत् श्राद्ध कैसे हुआ ? वहां स्पष्ट लिखा है कि—विधिवत् श्राद्ध किया उन गो मांस खाने वाले ब्राह्मणों को राक्षस पापी कहाँ कहा है ? विश्वामित्र के पुत्र भी पुराणों के अनुसार पापी नहीं कहे जा सकते थे, क्योंकि उन्होंने पौराणिक धर्म के अनुकूल कार्य किया, जैसा कि कहा है।

शास्त्र की विधि से हिंसा होती है। वह तो अहिंसा ही कही जाती है। और भी सुनिये भविष्य पुराण में कहा है—

प्राणात्यये प्रोक्षितं च श्राद्धे च द्विजकाम्यया।
पितॄन् देवान्चार्पयित्वा भुंजन् मांसं न दोषभाक्॥२९॥

भविष्य पुराण ब्रह्म पर्व अध्याय १८६ श्लोक २९
पृष्ठ १६५, वेंकटेश्वर प्रेस—बम्बई द्वारा प्रकाशित,

प्राण संकट में हो, यज्ञ में, श्राद्ध में और ब्राह्मणों की इच्छा से पितरों और देवों को अर्पण करके मांस खाने वाला दोष का भागी नहीं होता है।

और सुनिये महाभारत के वन पर्व में कहा है—

अत्रापि विधिरुक्तश्च मुनिभिर्मांस-भक्षणे ॥१३॥
देवतानां च पितॄणां च भुङ्क्ते दत्वापि यः सदा।
यथाविधि यथा च श्राद्धं न प्रदुष्यति भक्षणात् ॥१४॥

"महाभारत वन पर्व अध्याय २०७ श्लोक १३, १४,

यहां भी मुनियों द्वारा मांस भक्षण की विधि कही गई है। देवों और पितरों को देकर जो खाता है, और जो विधि से श्राद्ध आदि में खिला कर खाता है, वह मांस खाने से दूषित नहीं होता है।

राजा रन्ति देव—

महाभारत शान्ति पर्व में है कि रन्ति देव के घर जिस दिन अतिथि बसे उस दिन बीस लाख गौएं मारी गई, फिर भी कुन्डल पहिने हुए रसोइये चिल्लाते थे, कि दाल बहुत है खाओ, मांस पहले के बराबर नहीं है।

सांकृते रन्तिदेवस्य यां रात्रिमवसन् गृहे ॥१२७॥
आलभ्यन्त शतं गावः सहस्राणि च विंशति।

तत्रस्थ सूदाः क्रोशन्ति सुमृष्टमणि कुण्डलाः।
सूपं भूयिष्ठमश्नीध्वं नाद्यमांसं यथापुरा ॥१२८॥

"महाभारत शान्ति पर्व अध्याय २९ श्लोक १२७, १२८,

इसी अध्याय में है रन्ति देव के यहां इतने पशु मारे जाते थे कि उनके रुधिरादि के बहने से एक नदी बन गई। और चर्मण्वती नाम से विख्यात हुई। टीकाकार ने लिखा है कि "चम्बल इति प्रसिद्धा" चम्बल नाम से प्रसिद्ध है। महाभारत के इसी पर्व में लिखा है कि—

महानदी चर्मराशेरुत्क्लेदात्सुस्रुवे यतः।
ततश्चर्मण्वतीत्येवं विख्याता सा महानदी ॥१२३॥

"महाभारत शान्ति पर्व अध्याय २९ श्लोक १२३,

महाभारत के वन पर्व में ही उपरोक्त श्लोकों में इसी रन्ति देव के लिए कहा गया है कि दो हजार गौ उसके भोजनालय के लिए नित्य मारी जाती थीं।

राज्ञो महानसेपूर्वं रन्तिदेवस्य वैद्विज।
द्वे सहस्त्रे तु वध्येते पशूनामन्वहं तदा ॥८॥
अहन्यहनि वध्येते द्वे सहस्त्रे गवां तदा।
समांसं ददतोह्यन्नं रन्तिदेवस्य नित्यशः ॥९॥
अतुला कीर्तिरभवन्नृपस्य द्विज सत्तम।
चातुर्मास्ये च पशवो वध्यन्तइति नित्यशः ॥१०॥

महाभारत वन पर्व अध्याय २०७, कलकत्ता संस्करण श्लोक ८, ९, १०,

इतनी गौ हत्या जिस रन्ति देव के होती थी, उसको महाभारत में क्या पापी दुराचारी राक्षस कहा है ? कदापि नहीं। इसके विरुद्ध उसको यह कहा है कि 'उसकी अतुल कीर्ति हुई, उसको महात्मा और यशस्वी कहा है। देखिये—

रन्तिदेवं च सांकृत्यं मृतं शुश्रुम संजय।
सम्यगाराध्य यः शक्राद्वरं लेभे महातपाः ॥१२०॥
उपातिष्ठन्त पशवः स्वयंतं संशितव्रतम्।
ग्राम्यारण्या महात्मानं रन्तिदेवं यशस्विनम् ॥१२२॥
महानदी चर्मराशेरुत्क्लेदात् सुस्रुवेयत।
ततश्चर्मण्वतीत्येवं, विख्याता सा महानदी ॥१२३॥
साकृते रन्ति देवस्य यां रात्रिमवसन् गृहे।
आलभ्यन्त शतं गावः, सहस्त्राणि च विंशतिः ॥१२७॥
तत्रस्थ सूदाः क्रोशन्ति सुमृष्टमणिकुण्डलाः।
सूपं भूयिष्ठमश्नीध्वं नाद्य मांसं यथा पुरा ॥१२८॥

महाभारत शान्ति पर्व अध्याय २९ श्लोक १२०, १२२, १२३, १२७, १२८,

यह आपका कथन सर्वथा मिथ्या है कि-गौ हत्या करने वाले पापी और राक्षस थें यां कहलाते थे।

(क) नकली कृष्ण के घर का यह हाल है जो भविष्य पुराण में है, इसे आप तीन काल में भी सिद्ध नहीं कर सकेंगे। महाराजा युधिष्ठर बड़ी श्रद्धा से श्री कृष्ण महाराज को पूछ रहे है—"पण्यस्त्रीणां समाचारंश्रोतुमिच्छामि तत्वतः" मैं वेश्याओं के विषय में कुछ तत्व की बातें सुनना चाहता हूँ। श्री कृष्ण जी उत्तर में अपनी १६००० (सोलह हजार) स्त्रियां बताते है आगे उन्हीं के वेश्या बनने और उद्धार का वर्णन करते हैं। कितना अन्धेर है कि आप आधी बात तो असली कृष्ण की मानते हैं और आधी नकली की। महाराजा युधिष्ठिर असली कृष्ण से बातें कर रहे है। आधी बात में वही असली रहते हैं और आधी बात में नकली बन जाते हैं। और युधिष्ठिर जी को पता ही नहीं लगा। पता आज माधवाचार्य जी को लग रहा है कि वह नकली था। "किमाश्चर्यमतः परम्"।

उपातिष्ठन्त पशवः स्वयंतं संशितव्रतम्।
ग्राम्यारण्या महात्मानं रन्तिदेवं यशस्विनम् ॥१२२॥

(ख) वृन्दा की कथा को वर्षा विज्ञान कहना सर्वथा पुराण विरुद्ध है। तुलसी के पत्तों का मकरध्वज आपके ही यहां माना जाता है। मैंने बारम्बार निवेदन किया है, कि आप पुराणों को पढ़ लीजिये। आप सारे ही उत्तर-पुराणों के बिना पढ़े, अटकल पच्चू से देते हैं। आगे पीछे के, प्रसंग को भी नहीं देखते हैं। अपनी पुस्तक 'पुराण दिग्दर्शन' का विज्ञापन हर बार-करते रहिये। ऐसा ही समाधान उसमें किया होगा। जैसा यहां कह रहे हैं। शाप का नाम सुनते ही तुलसी और शालिग्राम तथा चरणामृत ले बैठे। समय टालना है, जैसे भी टले। शाप यह है महाराज जी जो वृन्दा ने दिया था—

अहं मोहं यथा नीता त्वया माया तपस्विना।
तथा तव वधूं माया तपस्वी कोऽपि नेष्यति ॥५५॥

पद्म पुराण उत्तर खण्ड अध्याय १६ श्लोक ५५,

अर्थात् जैसे तुझ मायावी तपस्वी ने मुझको छला है, ऐसे ही कोई कपट मुनि तेरी स्त्री को ले जायेगा।

वृन्दा ने इस शाप से विष्णु को रामावतार धारण करना पड़ा। और इसी शाप से सीता को रावण ने हरण किया। आप वर्षा विज्ञान लेकर बैठ गये तो अवतारवाद का गढ़ ढ़ह जायेगा। निश्चय है कि इस पर आप कुछ भी कहने योग्य नहीं रहेंगे,

(ग) बृहस्पति की पत्नी चन्द्र द्वारा हरणादि भी अब आकाश में नहीं उड़ाया जा सकेगा।

(घ) महानन्दा व्यभिचारिणी नहीं थी, यह आपका कहना है। वह कहती है कि मैं व्यभिचारिणी हूँ "मुद्दई सुस्त गवाह चुस्त" सुनिये—

वयं हि स्वैरचारिण्यो वेश्यास्तु न पतिव्रताः।
अस्मत् कुलोचितो धर्मो व्यभिचारो न संशयः ॥२१॥

शिव पुराण शतरुद्र संहिता अध्याय २६ श्लोक २१,

अर्थात् हम व्यभिचारिणी वेश्या हैं, पतिव्रता नहीं, हमारे कुल का धर्म ही व्यभिचार है।

वेश्या के घर में आग लग गई तो इससे शिव का लांछन कैसे दूर हो गया, लग गई होगी। व्यभिचार से पहले लगी कि पीछे, यह तो आपने देखा होगा, पर शिव पुराण में यह स्पष्ट लिखा है कि-व्यभिचार का सौदा कंकण के बदले हो गया था। और व्यभिचार के लिए दोनों नर्म तकियों और गद्दों पर सोये। लाख लीपा-पोती करिये, पुराण वेद विरुद्ध अमान्य सिद्ध हुए रखे हैं।

पं० माधवाचार्य जी

पं० जी ने केवल कुछ पुरानी बातों को दुहराया और एक भी नई बात नहीं कही। यही उनके अपने छपाये हुए शास्त्रार्थ से स्पष्ट है।

नई बात केवल यह कही—वेदों में जिन पुराणों का नाम आता है, यह पुराण कौन से हैं? वह हमारे यही अठारह पुराण हैं। इन्हीं को मान लीजिये।

पंडित अमरसिंह शास्त्रार्थ केशरी ने कहा—

इसका उत्तर---वेद में पुराण विद्या विशेष का नाम है।

वह ब्राह्मण ग्रन्थों में है। अन्य बहुत ग्रन्थों में है। कुछ ग्रन्थ है, कुछ लुप्त हो गये, बहुत से इतिहास लुप्त ही हो गये।

भागवतादि अठारह पुराण तो इनके अपने कथनानुसार भी महाभारत के पीछे बने हैं। इनका प्रमाण वेदों में ढूंढ़ना या दिखलाना आप जैसे बुद्धिमानों का ही काम है।

पुराणविद्या जिन २ ग्रन्थों में हो, वे ग्रन्थ वेदों के ही अनुकूल होने चाहिये। जिन ग्रन्थों को आप पुराण मान रहे हैं। वे सर्वथा वेद विरुद्ध सिद्ध हो रहे हैं। इनके कारण आपको भी नित्य शास्त्रार्थ का संकट सहना पड़ता है। पीछा छुड़ाना कठिन हो जाता है। इन भागवतादि को पुराण कहना ऐसा ही है। जैसे अन्धे का नाम नैन सुख।

वेश्याओं के उद्धार के लिए रविवार का व्रतादि जो माधवाचार्य जी ने बतलाया उस पर आचार्य अमर सिंह जी ने कहा— कि मुझको बड़ा भारी आश्चर्य होता है कि आप पुराणों पर होने वाले प्रश्नों का ऐसा अद्‌भुत उत्तर देते हैं।

वह श्रोताओं को प्यारा तो अवश्य लगता है। पर उसमें सत्य का अंश नाम को भी नहीं होता है, मैं यह कहूँ कि आप असत्य बोलते हैं। तो मेरा हृदय ऐसा कहते हुए दुःख मानता है। अतः मैं यही कहकर संतोष करता हूँ कि—आपने पुराण पढ़े नहीं हैं। न गुरु मुख से न स्वयं। इस लिए आपको किसी कथा के आगे-पीछे के प्रसंग का कुछ पता नहीं है। न वहां वेश्याओं को नारकीय जीवन के त्याग का उपदेश है। न किसी ब्राह्मण को यह उपदेश है कि वेश्याओं को पुत्री के समान समझे। प्रत्युत इसके विपरीत यह है—कि जिस प्रकार का नारकीय जीवन वेश्या बिताती हैं। वैसा रविवार के दिन ब्राह्मण के लिए रक्खे, और "उस ब्राह्मण को मैथुन के लिए कामदेव ही जाने—

यथेष्टाहारभुक्तं च तमेव द्विज सत्तमम।
"रत्यर्थं कामदेवोऽयमिति चित्ते ऽवधार्य च ॥४४॥

यद्यदिच्छति विप्रेन्द्रस्तत्तत्कुर्याद्विलासिनी ।
सर्वभावेन चात्मानमर्पयेस्स्मितभाषिणी ॥४५॥

भविष्य पुराण उत्तर पर्व (४) अध्याय १११ श्लोक ४४, ४५,

आप बड़ा बल देते हैं कि—"बिना फीस कहीं नहीं लिखा है" सो भी यही सिद्ध करता है, कि आपने पुराण देखे ही नहीं हैं, वहां फीस क्या ?

यह लिखा है कि—ब्राह्मण को चावल घृतादि देवे और "यथेष्टाहारभुक्तम्" इच्छानुकूल भोजन किये हुए को कामदेव समान समझे, अर्थात् यथेष्ट भोजन भी दे। दान भी दे। "बिस्तर सहित पलंग भी दे' भला यहां फीस का क्या काम—?

श्रोताओं में हंसी...............

मैं फिर कहता हूं कि—पुराणों को पढ़ते ही आप उनको तिलांजलि दे देंगे। और आर्य समाजी बन जावेंगे।
श्रोताओं में चारों तरफ तालियों की गडगडाहट में वातावरण गूंज गया............

बोलो वैदिक धर्म की=जय
महर्षि दयानन्द की=जय
ठाकुर अमर सिंह शास्त्रार्थ महारथी की=जय
आर्य समाज=अमर रहे,
वेद की ज्योति=जलती रहे,
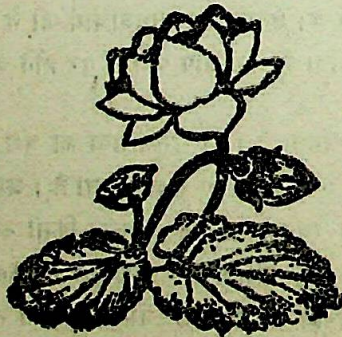
[दसवां शास्त्रार्थ]
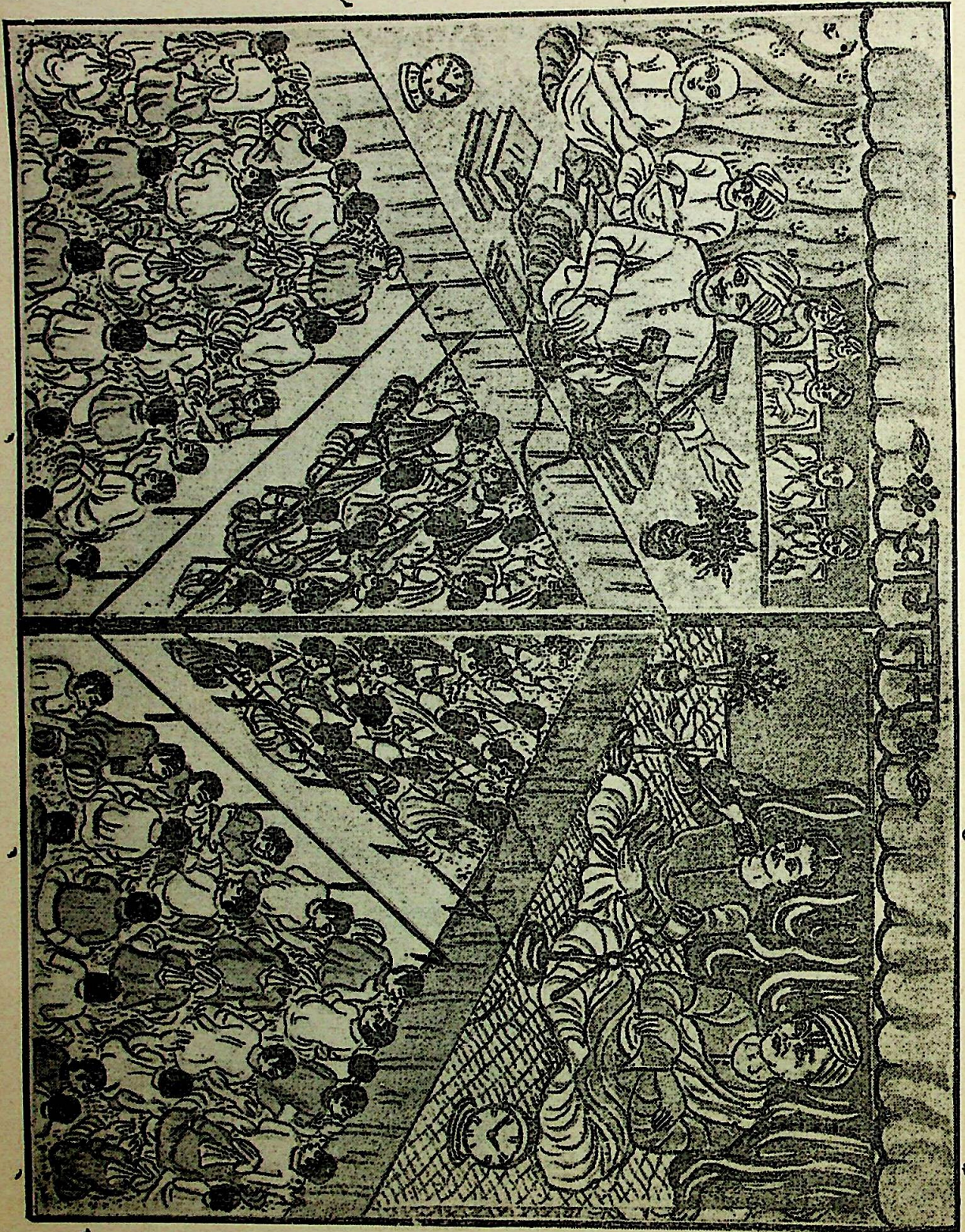
(शास्त्रार्थ करते हुए)
श्री ठाकुर अमरसिंह जी शास्त्रार्थ केशरी तथा श्री पं० अखिलानन्द जी "कविरत्न"

स्थान : राज धनवार (बिहार) (प्रांगण-आर्य समाज)

विषय : क्या महर्षि दयानन्द जी कृत ग्रन्थ वेद विरुद्ध हैं ?

आर्य समाज की ओर से प्रधान : श्री पं० महादेव शरण जी, अधिष्ठाता, गुरुकुल देवघर ।

पौराणिक पक्ष की ओर से प्रधान : श्री पं० माधवाचार्य जी शास्त्रार्थ महारथी

दिनांक : ६ अप्रैल सन् १९५३ (दिन सोमवार सायं २ बजे)

आर्य समाज की ओर से शास्त्रार्थ कर्त्ता : श्री ठाकुर अमर सिंह जी शास्त्रार्थ केशरी

पौराणिक पक्ष की ओर से शास्त्रार्थ कर्त्ता : श्री पं० अखिलानन्द जी कविरत्न

नोट :—इस शास्त्रार्थ में उपस्थित : १. स्व० श्री स्वामी अभेदानन्द जी सरस्वती

२. आचार्य श्री पं० रामानन्द जी शास्त्री (बिहार)

३. श्री पं गंगाधर जी शास्त्री व्याकरणाचार्य

४. श्री पं० अयोध्या प्रसाद जी रिसर्च स्कोलर कलकत्ते वाले

शास्त्रार्थ कराने वाले—राजा महेश्वरी प्रसाद नारायण देव, राजधनवार (बिहार)

पहले शास्त्रार्थ का प्रभाव

प्रथम शास्त्रार्थ पौराणिकों के पिण्डाल में हुआ था, पौराणिकों की ओर से शास्त्रार्थ कर्त्ता पं० माधवाचार्य जी थे, और आर्य समाज की ओर से आचार्य ठाकुर अमर सिंह जी शास्त्रार्थ केशरी थे।

इस शास्त्रार्थ में पौराणिकों ने अपने शास्त्रार्थ कर्त्ता को बदल दिया, परन्तु आर्य समाज की ओर से वही रहे।

यह इस लिए हुआ था कि यह सर्वविदित हो चुका था कि पौराणिक पं० हार गया तो उन्होंने तब यह चाल चली। और माधवाचार्य जी को हटा कर उनकी जगह पं० अखिलानन्द जी कविरत्न से शास्त्रार्थ कराना उपयुक्त समझा परन्तु आर्य समाज की ओर ऐसा पण्डित था, जो ऐसे-२ दश-२ विद्वानों को भी पानी पिला दे। जिसके केवल नाम मात्र से ही विपक्षी शास्त्रार्थ करते हुए घबराते तथा थर्राते थे। "क्या स्वामी दयानन्द कृत ग्रंथ वेद विरुद्ध हैं।" जिसके पूर्व पक्ष में पं० अखिलानन्द जी कविरत्न तथा उत्तर पक्ष में ठाकुर अमर सिंह जी शास्त्रार्थ केशरी थे। पहले शास्त्रार्थ का यह प्रभाव पड़ा कि श्री राजा साहिब ने स्वयं पौराणिक पण्डितों को झाड़ा कि—आप लोग चार पण्डित हैं, (२ बिहार के थे) आर्य समाज का एक ही पण्डित है। और वह धड़ाधड़ प्रमाण पर प्रमाण दिये जाता है, और आप चार मिलकर भी प्रामाग नहीं निकाल पाते हो। अगर यही स्थिति थी तो शास्त्रार्थ क्यों स्वीकार किया था। "क्यों हमारी मिट्टी प्लीद करवाई।" आर्य विद्वान की वाक् शैली तथा प्रमाणों की झड़ी का सभी श्रोताओं पर प्रभाव है। यह आप भी प्रत्यक्ष देख रहे होंगे।

दूसरे दिन के शास्त्रार्थ में आर्य समाज की ओर से वही विजयी शास्त्रार्थ केशरी ठाकुर अमर सिंह जी शास्त्रार्थ केशरी ही रहे। और अगले शास्त्रार्थ में पौराणिकों की क्या गत बनी, पढ़िये इसी अगले शास्त्रार्थ में।

"सम्पादक"

शास्त्रार्थ आरम्भ

पं० अखिलानन्द जी कविरत्न

(१) सज्जनों ! आर्य समाज वेदों का नाम लेता है। पर दयानन्द कृत सत्यार्थ प्रकाश को वेदों से अधिक मानता है।

दयानन्द ने सर्वथा वेदों का असत्य अर्थ किया है। प्रत्येक वेद मन्त्र के चार चरण होते हैं। दयानन्द ने प्रायः अपनी पुस्तकों में एक-एक चरण लिख दिया तीन-तीन चरण की चोरी की है।

वेद की चोरी पाप है। मनु भगवान कहते हैं कि जिसने वाणी की चोरी की उसने सर्व प्रकार की चोरी की।

(२) ऋग्वेद का एक मन्त्र है—

आधाता गच्छानुत्तरा युगानि यत्र जामयः कृण्वन्नजामि ।
उपबर्बृहि वृषभाय बाहुमन्यमिच्छस्वसुभगे पतिंमत् ॥१०॥

ऋग्वेद यम-यमी सूक्त मण्डल १० सूक्त १० मन्त्र १०,

यम भाई था, यमी बहिन थी, दोनों जुडवां पैदा हुए थे। यमी कहती थी कि--तुम मेरे पति बन जाओ। और यम ने इस मन्त्र में कहा कि—आगे चलकर ऐसे युग आवेंगे। जब बहिन और भाई अनुचित कर्म करेंगे पर बहिन ! तू मेरे सिवा दूसरे पति की इच्छा कर दयानन्द ने इस मन्त्र के तीन चरणों को चुरा लिया। और चौथा पद लिख दिया—सुनिये

"अन्यमिच्छस्व सुभगे पतिंमत्"

अर्थ बदलकर बहिन—भाई के सम्वाद को पति पत्नी का सम्वाद बना डाला, दयानन्द के किये अर्थ में पति अपनी पत्नी से कहता है कि—"तू मेरे सिवा किसी दूसरे पति की इच्छा कर"। कैसा अनर्थ है। यह अर्थ वेद विरुद्ध हैं। देवता विरुद्ध है। इतिहास विरुद्ध हैं। और लोक विरुद्ध है।

(३) सत्यार्थ प्रकाश में अनेकों ऐसे ही अनर्थ भरे पड़े हैं, (उदीर्ष्व नारि…) पति मर गया है। उसकी लाश पड़ी हुई है। उठाने वाले खड़े हैं, और दयानन्द कहते हैं कि "हे स्त्री ! तू इस मरे हुए पति की आशा छोड़कर इन जीवितों में से किसी को पकड़ ले, उसकी स्त्री बन जा। उससे सन्तान उत्पन्न कर ले। कैसे दुःख की बात है।

(४) प्रसूता (जच्चा) अपने बच्चे को दूध न पिलाये, धायी दूध पिलाये तो प्रसूता स्त्री फिर शीघ्र युवती हो जायेगी। दयानन्द बाल ब्रह्मचारी को यह अनुभव कैसे हुआ ? ऐसा वेद का प्रमाण दीजिये। नहीं तो यह वेद विरुद्ध है।

धाई से दूध पिलवाना यह अंग्रेजों की प्रथा है। दयानन्द जी वेदों का नाम लेकर हिन्दुओं को ईसाई बनाना चाहते थे।

(क) धनवान तो अपने बच्चे धायी को दे देंगे, धाई किसको देगी।

(ख) धायी का दूध दो बच्चों को कैसे उतरेगा ?

(ग) दूध की कमी से बच्चे भूखे मर जावेंगे, और धाई भी टी० बी० की मरीज बन जावेगी।

स्वामी जी का यह लेख सर्वथा वेद विरुद्ध हैं।

(५) सत्यार्थ प्रकाश चतुर्थ समुल्लास में लिखा है कि गर्भाधान के समय मुख के सामने मुख करे आदि।

हमारा प्रश्न है कि यह अश्लील वर्णन स्वामी जी ने किसी वेद मन्त्र के आधार पर लिखा है कि अपने अश्लील बातें कहीं अनुभव के आधार पर "स्त्री कितनी नीची रहे तथा स्त्री कितनी-कितनी ऊपर" एवं..............आदि।

नोट—जनता में चारो ओर कोलाहल व क्षोभपूर्ण वातावरण के साथ, शर्म करो २, तथा मारो-मारो एवं पण्डित के मुंह में मिट्टी आदि की आवाजें आयी। इस पर ठाकुर साहब ने खड़े होकर बड़ी मुश्किल से शान्ति का वातावरण बनाया।

यह प्रश्न बहुत गन्दे ढंग पर किया और बहुत घृणित चेष्टायें की। तथा हाव-भाव बड़े ही गन्दी तरह के किये, जो हम यहां उद्धृत नहीं कर सकते।

(६) सत्यार्थ प्रकाश में लिखा है कि—स्तन के छिद्र पर ऐसी औषधि का लेप कर दे। जिससे दूध स्रवित न हो स्त्री योनि संकोचन करे। स्वामी दयानन्द ने यह सब अपने ही अनुभव से लिखा है, दयानन्द ने कोई बदमाशी की बात बाकी नहीं छोड़ी।

नोट—पूर्व की भाँति इस पर जनता में घोर कोलाहल और क्षोभ हुआ, चारों ओर से मारो-मारो की आवाजें सुनाई दी! बड़ी कठिनाई से शान्ति का वातावरण फिर से बनाया जा सका!

ठाकुर अमर सिंह जी शास्त्रार्थ केशरी

सज्जनों!

मैं तो आशा करता था कि—पं० अखिलानन्द जी शास्त्रीय ढंग पर गम्भीर और आवश्यक प्रश्न उठायेंगे। जिससे सिद्धान्तों पर विद्वत्तापूर्ण विचार चलेगा क्योंकि—पं० जी वयोवृद्ध विद्वान हैं। परन्तु आपने तो वही पुरानी सौ-२ बार की रटी रटाई बातें कहीं, जिनके सैंकड़ों बार युक्ति प्रमाण पूर्वक उत्तर दिये जा चुके हैं। प्रश्न भी पं० जी ने इस आपत्ति जनक ढंग पर किये हैं जो किसी भी विद्वान को कभी भी शोभा नहीं देता है।

आर्य समाज को अपने वैदिक सिद्धान्तों पर आज भी गर्व हैं। और सदा रहेगा। पं० जी स्वयं 'दयानन्द दिग्विजय' आदि पुस्तकें लिखकर आर्य समाज और ऋषि दयानन्द के गुण-गान कर चुके हैं।

पं० जी कहते हैं कि—वेद मन्त्र के चार चरण होते हैं। यह आपके अज्ञान का नहीं घबराहट और आपकी रटी हुई बातों का नमूना है। अन्यथा आपको भी पता है कि—गायत्री मन्त्र के तीन चरण और अन्यों के पांच तथा छः भी होते हैं। (१) मन्त्र का एक चरण लिखना यदि चोरी है। और पाप है तो पं० अखिलानन्द जी ने अपनी पुस्तक में अथर्ववेदालोचन पृष्ठ ८ पर इस चोरी और इस पाप की भरमार कर रखी है।

सुनिये और पण्डित जी महाराज आप नोट करिये—

[१] मर्त्योऽयममृतत्वमेति — अथर्व काण्ड १८, सूक्त ४, मन्त्र ३७,

[२] मृताः पितृषु संभवन्तुः — ,, काण्ड १८, सूक्त ४, मन्त्र ३९,

[३] यमराज्ञः पितृन् गच्छ — ,, काण्ड १८, सूक्त २, मन्त्र ४६,

[४] अपरे पितरश्च ये ,, काण्ड १८, सूक्त ३, मन्त्र ७२,

[५] सांगाः स्वर्गे पितरो मादयध्वम् ,, काण्ड १८, सूक्त ४, मन्त्र ६४,

"मृताः पितृषु सम्भवन्तुः" में तो और भी कमाल आपने कर रक्खा है। 'अमृताः' का अकार उड़ाकर 'अमृताः' को 'मृताः, ही बना रखा है। इसको चोरी कहें, डाका कहें, ब्रह्म हत्या-वेद हत्या कहें जो भी कहें यह है महापाप। ऐसे अनेकों उदाहरण उनकी अथर्ववेदालोचन और वेदत्रयी समालोचन आदि पुस्तकों में हैं। इस लिए आप चोरी और पाप के भागी हुए। पर बात यह है कि—न यह चोरी है, न पाप, आपको तो प्रश्नों की संख्या बढ़ाना है, तो यह भी एक प्रश्न कर दिया, लेखक को मन्त्र या जितने मन्त्रांशकी अपने लेख में आवश्यकता होती है, उतने ही को वह लिखता है। और उतना ही उसको लिखना चाहिये। आपको वास्तविकता से क्या प्रयोजन है। प्रश्न करना था सो कर दिया।

(२) "अन्यमिच्छस्व सुभगे पतिमत्"—यह यम-यमी सूक्त (१०।१०।१०) के मन्त्र का ही चतुर्थ भाग है। इसका जो अर्थ स्वामी जी ने किया है। वही वेदानुकूल है। वही शास्त्र और लोक के अनुकूल है। वही देवतानुकूल है। वेद में तो इतिहास है नहीं। जो हमारा इतिहास है, उसके भी यहीं अर्थ अनुकूल हैं। बहिन-भाई का ऐसा सम्वाद सर्वथा अयुक्त हैं। क्या यह वेद शास्त्र, स्मृति, इतिहास और लोक के अनुकूल है कि बहिन-भाई से कहे कि—तुम मेरे पति बन जाओ। नहीं! नहीं!! कदापि नहीं!!!

बहिन अपने भाई से ऐसा कहती है। ऐसा कहना अनर्थ और घोर अनर्थ है। वैदिक धर्म में ऐसा युग न कभी आया न आयेगा। मुसलमानों में चचेरी, ममेरी फुफेरी, बहिनों से विवाह हो जाता है। सगी बहिन तो उनके यहां भी बचाई जाती है। और आप वेद तथा अपने मन्तव्यानुसार वैदिक इतिहास में यह बताते हैं कि बहिन-भाई से कहे कि—तुम मेरे पति बन जाओ। और भाई कहे कि—आगे ऐसे युग आयेंगे, जब बहिनें भाईयों की पत्नियां बना करेंगी, वेद में ऐसा भयंकर अनर्थ भरी भविष्य वाणी हो कि—

ऐसा समय आयेगा, जब ऐसा हुआ करेगा, ऐसा वेद का जानने और मानने वाला कभी नहीं कह सकता।

आप लोगों के द्वारा वेदों पर ऐसे लांछन लगाये जाने के कारण ही असंख्य मनुष्य आजकल नास्तिक होते जा रहे हैं। कम्युनिस्ट और घोर नास्तिक भी ऐसी बातें नहीं कहते हैं और आप वेद में यह बताते है—

"किमाश्चर्यमतः परम्।" 'अन्यमिच्छस्वसुभगे पतिमत्'—इस मंन्त्रांश में स्पष्ट है कि 'हे सुभगे! तू मेरे सिवा दूसरे पति की इच्छा कर' इसमें अन्य, दूसरा पति यह शब्द विचारणीय है। जब वह स्वयं पति नहीं है। अर्थात् पहिला ही पति नहीं है। तो दूसरा पति किस प्रकार कहा जा सकता है? जो मनुष्य अपने आपको पति मानता है। वही यह कह सकता है, कि—मुझसे दूसरे पति की इच्छा कर। जब पहिला ही पति नहीं तो दूसरा पति कैसा? एक डाक्टर या वैद्य कह सकता है, मेरे सिवा दूसरा डाक्टर या वैद्य या एक वकील ही कह सकता है, मेरे सिवा दूसरा वकील ले लो। भाई कह सकता है मेरे सिवा दूसरा भाई और पति कह सकता है, कि 'मेरे सिवा दूसरा पति'।

यम की स्त्री यमी, नर की नारी, पति की पत्नी, ब्राह्मण की ब्राह्मणी पण्डित की पंडितानी, क्षत्रिय की क्षत्राणी, ठाकुर की ठकुरानी की भाँति यम की पत्नी ही यमी ठीक हो सकती है। यम की बहिन यमी नहीं। स्वामी जी ने पति पत्नी ठीक लिखा है।

वेद में पत्यन्तर विधान (दूसरे पति की आज्ञा) वाले अनेकों मन्त्र है। यथा—

(क) "या पूर्वं पतिं वित्वा अथान्यं विन्दते परम्" (अथर्व वेद)

पहिले पति के प्राप्त होने पर (पूर्वं पतिं वित्वा) अन्यं पतिं विन्दते,—दूसरे पति को प्राप्त होती है। इसमें पुनर्विवाह-विधवा विवाह स्पष्ट है। आपने स्वयं यह मन्त्र अपने 'अर्थववेदालोचन' में इसी अर्थ में दिया है। और नीचे

अपनी सम्मति लिखी हैं कि-अक्षत योनि विधवा के पुनर्लग्न से तो हम भी सहमत है। "वैधव्यविध्वंसनचम्पू" तो इस विषय पर आपकी प्रसिद्ध पुस्तक है ही स्मृति और इतिहास में भी देखिये, यथा—

(ख) पंचस्वापत्सु नारीणां पतिरन्यो विधीयते ॥

"पाराशर स्मृति"

पांच आपत्तियों में स्त्री को दूसरे पति की आज्ञा है।

आघाता गच्छानुत्तरा युगानि यत्र जामयः कृण्वन्नजामि।
उपबर्वृहि वृषभाय बाहुमन्यमिच्छावसुभगे पतिमत् ॥१०॥ (ऋग्वेद)
उत्तमाद्देवरात्पुंसः कांक्षन्ते पुत्रमापदि,

महाभारत आदि पर्व अध्याय १२० श्लोक ३४,

पति अभाव में स्त्री देवर को पति बना लेती है।

(घ) पुनः संस्कारमर्हति: (मनुस्मृति)

दूसरा विवाह करना योग्य है। आदि असंख्य प्रमाण हैं। "दूसरे पति की इच्छाकर" ऐसा पतियों ने कहा भी है। ऐसा इतिहास से सिद्ध है यथा—महाराजा पाण्डु अपनी पत्नी कुन्ती से कहते हैं—

"भर्ता भार्यां राजपुत्रि! धर्म्यं वाधर्म्यमेववा।
यद्ब्रूयात्तथा कार्यमिति वेदविदोविदु: ॥२७॥
विशेषतः पुत्रगृद्धी हीनः प्रजननात्स्वयम्।
यथाहमनवद्यांगि पुत्रदर्शनलालसः ॥२८॥

महाभारत आदि पर्व अध्याय १२२ श्लोक २७,२८,

हे राजपुत्री! वेद जानने वाले महात्मा कहते है कि-अपना पति धर्म की बात कहे चाहे अधर्म की स्त्रियों को वैसा ही करना चाहिये। उसमें भी यदि विशेष कर पुत्र की इच्छा वाला होय और अपने आप पुत्र उत्पन्न करने की शक्ति से हीन हो गया हो, तो तब तो उसका वचन अवश्य ही मानना चाहिये। हे सुन्दरांगि! मैं भी वैसा ही हूँ! और पुत्र का मुख देखने की मुझे बड़ी लालसा है। जैसा कि महाभारत आदि पर्व में लिखा है—

"मन्नियोगात् सकेशान्ते द्विजातेस्तपसाधिकात्।
पुत्रान् गुण समायुक्तान्नुत्पादयितुमर्हसि ॥ ३० ॥

महाभारत आदि पर्व अध्याय १२२ श्लोक ३०,

हे सुन्दर केशों वाली, मेरी आज्ञा से अधिक तप वाले ब्राह्मण का संग करके तुझे गुणवान पुत्र उत्पन्न करने चाहिये। इसी प्रसंग में पाण्डु ने यह भी कहा है कि यदि स्त्री पति की आज्ञा न माने और इस प्रकार दूसरे पुरुष से पुत्र उत्पन्न न करे तो गर्भ हत्या के समान पाप उस स्त्री को लगता है। साथ ही महाराजा ने यह भी बतलाया कि सौदास राजा की पत्नी मदयन्ती ने वसिष्ठ से सन्तान उत्पन्न की थी। कलमाषपाद की स्त्री ने भी अपने पति के प्रिय के लिए नियोग से सन्तान उत्पन्न की थी, और कुरुवंश की वृद्धि के लिए व्यास मुनि से हमारा भी जन्म इसी प्रकार हुआ है। अब लीजिये—'उदीर्ष्व नारि० मन्त्र को" कि—"मरे हुए की लाश पड़ी हुई है, और लाश उठाने वाले खड़े हुए है। ऐसा सत्यार्थ प्रकाश में कहीं भी नहीं लिखा है। आपने यह असत्य कहा है। यदि कुछ साहस और लज्जा है तो सत्यार्थ प्रकाश में ऐसा लिखा दिखाइये।

हाँ पति मरा हुआ पड़ा है और उसी समय स्त्री को दूसरे पति की आज्ञा इसी मन्त्र के भाष्य में सायणाचार्य जी देते है सुनियेः—

"हे नारी ! त्वं इतासुं गत प्राणं एतं पतिं उपशेषे उपेत्य शयनं करोषि। उदीर्ष्व अस्मात् पति समीपात् उत्तिष्ठ जीवलोकमभि जीवन्तम् प्राणि समूहमभिलक्ष्य एहि आगच्छ। त्वं हस्त ग्राभस्य शणिग्राह्यतः दिधिषोः पुर्नविवाहेच्छोः पत्युः ऐतत् जनित्वं जाया त्वं अभि सम्बभूव अभि मुख्येन् प्राप्नुहि ॥

"तैत्तीरियारण्यक सायण भाष्य"

हे नारि ! तू इस गत प्राण (मरे हुए) पति को लिपट कर सो रही है। इस पति के पास से उठ और जीवितों को देखकर पुर्नविवाह की इच्छा वाले पति की पत्नि बन जा।

इस अर्थ में मरे हुए पति की लाश भी पड़ी है। और जीवितों में से किसी को कर लेने की भी आज्ञा है।

सत्यार्थ प्रकाश में न लाश पड़ी हुई लिखी है न उठाने वाले लिखे हैं। इतना स्पष्ट झूंठ भी आप ही बोल सकते है।

(४) धायी का दूध पिलाना ईसाई पन है। यह आपके ज्ञान का नमूना है। आपको भी सर्वत्र ईसाई पन ही दिखाई देता है या इस्लाम्। वैदिक धर्म तो सूझता नहीं सूझे भी कैसे ? न इसके ग्रन्थों को आप पढ़ते हैं, न विचारते है।

स्वामी जी ने न तो कहीं लिखा कि—माता यदि बच्चे को दूध पिलायेगी तो उसको ब्रह्महत्या का पाप लगेगा और घोर नरक में जावेगी। न कहीं यह लिखा है कि-धायी दूध न पिलायेगी। मुक्ति न होगी तो उसको दुर्बलता शीघ्र दूर हो जायेगी। घोड़ा आदि पशुओं का पालन करने वाले भी इस सामान्य नियम को जानते है। और घोड़ी के बच्चे को गाय या बकरी का दूध पिलाते हैं। इसमें वेद के प्रमाण की क्या बात, स्वयं कहते हैं। 'दो बच्चों को दूध पिलाने से धायी को टी० बी० हो जायेगी। अर्थात् आपने यह सिद्धांत तो स्वीकार कर लिया कि—दूध पिलाने से स्त्री को दुर्बलता अवश्य आयेगी। दो को पिलाने से अधिक दुर्बलता आयेगी, एक को पिलाने से उसकी आधी आयेगी पर आवेगी अवश्य यदि सर्वथा न पिलायेगी, तो दुर्बलता दूर होकर प्रसूता फिर शीघ्र स्वस्थ हो जायेगी, इसमें संदेह ही क्या हैं ?

आपके प्रश्न कैसे भोलेपन के हैं कि धनवान तो बच्चा धायी को दे देगें पर धायी किस को देगी ? यह प्रश्न भी किसी ने किया है कि धनवान तो अपना काम निधनों से करावेंगे फिर निधन अपने काम किससे करावेंगे ?

धायी अपना बच्चा आपको दे देगी आप उसको अपना दूध पिलाया करना जैसे इन्द्र ने मान्धाता को पिलाया आपके पुराणों में लिखा है, कि महाराजा मान्धाता के पिता ही को गर्भ रह गया था, इसलिए मान्धाता अपनी माता के गर्भ से नहीं पिता के ही पेट से जन्मे थे, फिर इन्द्र ने उनको अपनी अगुंली में से अपना दूध पिलाया था। यह विष्णु पुराण की कथा है।

एक प्रश्न है कि—धायी को इतना दूध कहां से उतरेगा। कि दो बच्चों को पिला सकें ? महाराज जी ! उतरेगा तो वहीं से जहां से उतरा करता है। पर कैसे उतरेगा ? यह तो आप किसी भी वैद्य या समझदार आदमी से पूछ लेते तो वह आपको बता देता कि दूध बढ़ाया भी जा सकता है' या नहीं ?

आयुर्वेद के ग्रन्थों मैं जहां यह लिखा है। कि धायी दूध पिलाये वहीं यह भी लिखा है। कि पुत्र वाला धनवान् धायी को कैसा भोजन कराये।

जब एक निर्धन स्त्री सारा दिन मजदूरी आदि करके रूखी-सूखी रोटी खाकर अपने बच्चे का पेट अपने दूध से भरती है। तब यदि धनवान व्यक्ति उसको उत्तम स्वास्थय प्रद और अधिक दूध उतरने के लिए उत्तमोत्तम भोजन

अपने पुत्र के हित से देगा तो दूध निस्सन्देह इतना उतरेगा कि दोनों बच्चे पेट भर कर पिया करें। और अधिक आवश्यकता हो तो आप जैसे बूढ़े को भी पिलाया जा सके।

जनता में हंसी..................

धनवान के बच्चे को दूध पिलाने के कारण निर्धन स्त्री को उत्तम से उत्तमभोजन मिलेगा। उससे उसका शरीर भी पुष्ट होगा। और दूध भी उत्तम गुणों से युक्त उतरेगा उसी में से उसके अपने बच्चे को भी प्राप्त होगा अतः उसको भी वैसा ही लाभ पहुंचेगा। इसके अतिरिक्त जो वेतन मिलेगा, उससे धायी के निर्धन परिवार का पालन होगा। निंधनों और बेकारों के लिए एक अच्छा कार्य मिल जावेगा, निंघनों का पालन होगा। स्वामी जी ने सत्यार्थ प्रकाश में भी लिखा है "धायी दूध पिलाया करे परन्तु धायी को उत्तम पदार्थों का खान-पान माता पिता कराया करें।"

आपका कर्त्तव्य है कि आप जिस भी बात को वेद विरुद्ध सिद्ध करना चाहें उसके विरूद्ध वेद का प्रमाण दें। फिर कहें अमुक विषय वेद के अमुक मन्त्र के विरूद्ध है। आपकी प्रतिज्ञा है कि स्वामी जी कृत ग्रन्थ वेद विरूद्ध हैं।

वेद विरुद्ध का लक्षण क्या है?

जिसका पोषक प्रमाण वेद में न दिखाया जा सके क्या वह वेद विरुद्ध होता है? कदापि नहीं।

वेद विरूद्ध वह होता है। जिसके विरूद्ध वेद का प्रमाण दिखाया जा सके। जिस विषय के विरुद्ध वेद का प्रमाण न मिले, यदि उसके पक्ष में भी न मिले तो भी वह वेद के अनुकूल ही है। यह ही वेद विरूद्ध और वेदानुकूल का लक्षण अपनी त्रयी वेदालोचन में जैमिनी ऋषि के मीमांसा दर्शन का सूत्र—

जिस पर यही बात वेदानुमत है! देखिये—

"विरोधे त्वनपेक्ष्यं स्यावसति ह्यनुमानम्"

वेदत्रयी समालोचन पृष्ठ ७२ पक्ति १५ व १६,

देकर आपने स्वयं लिखा है। विरोध में प्रमाण बिना दिखाये किसी बात को वेद विरूद्ध कहते लज्जा आनी चाहिए।

हमारा काम झूंठे को घर तक पहुंचाना है, इसलिए लीजिये प्रमाण भी देते है—

नक्तोषासा समनसा विरूपे धापयेते शिशुमेकं समीची।"

यजुर्वेद अध्याय १२ मन्त्र २,

उषा और रात्री के उदाहरण से मन्त्र में कैसा सुन्दर कहा है कि—एक मन से दो रूपों वाली दो स्त्रीयां एक बालक को दूध पिलाती है। "धापयेते" द्वि वचन दो स्त्रीयों के दूध पिलाने का स्पष्ट है। और "शिशुमेकं" एक बालक को यह स्पष्ट है। दो स्त्रीयां माता और धायी ही है। और कोई नहीं।

चरक में—"धात्री परीक्षामुप देक्ष्यामः" धायी की परीक्षा का वर्णन करते हैं। "धात्री मानयेती" धायी को लाओ।

आदि इसी प्रकार "सुश्रुत में भी है। दोनों ग्रन्थों में जहां धायी का विधान और परीक्षा है। कि धायी कैसी?

और कैसे गुण कर्म स्वभाव वाली होनी चाहिए यह बताया है वहीं आगे यह भी लिखा है कि धायी को क्या खिलाया जावे। जो लोग धायी न रख सकें उनके लिए स्वामी जी ने लिखा है सत्यार्थ प्रकाश में—

"जो कोई दरिद्र हो धायी को न रख सकें तो वे गाय या बकरी के दूध में उत्तम औषध डालकर पिलायें।'

सत्यार्थ प्रकाश समुल्लास-२,

वेद शास्त्र तो आप पढ़ते ही नहीं यदि पुराणों को भी पढ़ लिया करें तो भी ऋषि दयानन्द जी के लेखों पर संदेह या शंका करने का साहस न हो, देखो गरूड़ पुराण में लिखा है।—

"विदारी कन्द स्वरसं मूलं कार्पासजं तथा।
धात्री स्तन्य विशुध्यर्थं मुद्ग युष्वरसाशिनी ॥१३॥
स्तन्याभावे पयश्छाग गव्यंवा तद्गुणं पिबेत ॥१५॥

गरुड पुराण पूर्व खण्ड, आचार काण्ड अध्याय १७२ श्लोक १३, १५,

अर्थात धायी का दूध शुद्ध (रोग रहित करने के लिए विदारी कन्द का स्वरस और कपास की जड़ आदि १५, औषधियां हैं। और कहा है कि—

धायी के स्तन का दूध निर्धनता आदि के कारण न प्राप्त किया जा सके। तो गाय वा बकरी का दूध (बालक) पिये। देखिये आपके पुराण ऋषि दयानन्द जी के लिखे एक-एक अक्षर की साक्षी दे रहे है।

बाल्मीकीय रामायण में भी श्री राम जी की धायी का वर्णन है। सैंकड़ों प्रमाण हैं।

(५) गर्भाधान की विधि पर आपने बहुत गन्दे ढ़ंग से प्रश्न किया है। ऐसा न किसी विद्वान के लिए उचित है। न किसी सभ्य और शिष्ट पुरुष को। इससे न कुछ सत्यार्थ प्रकाश का गौरव घटता है। न ऋषि दयानन्द जी का आपका अपना ओछापन ही प्रकट होता है।

कैसे आश्चर्य की बात है कि—गर्भाधान के समय मुख के सामने मुख करने पर भी आपको शंका है। यदि मुख के सामने मुख करना आपको पसन्द नहीं तो क्या पीठ की ओर मुख करके आप गर्भाधान करना-कराना पसन्द करते है? (जनता में हंसी)में तो समझता हूं सत्यार्थ प्रकाश में लिखी विधि को ही संसार भर के मनुष्य पसन्द करेंगे। और इसी प्रकार मनुष्य मात्र गर्भाधान करता है पशु अवश्य इसके विपरीत अर्थात् पीठ की ओर मुख करके करते हैं। आपको वह पसंद है। तो आप वही करिये, और उसी का प्रचार करिये। आपका ऐसा ही अनुभव होगा पर मनुष्य सब सत्यार्थ प्रकाश की ही विधि को स्वीकार करते है।

जनता में तालियों कीगडगडाहट के साथ हँसी में वातावरण गुंज गया..............................

आप ऋषि दयानन्द जी के अनुभव का नाम ले-लेकर उनका अपमान करना चाहते है। सिधांत पर शंका नहीं बनती है। तो ऋषि के व्यक्तित्व की ओर दुलत्ती झाडते है। पर ध्यान रहे सूर्य की ओर थूका हुआ आपके मुंह पर ही गिरेगा।

क्या सब कुछ अनुभव करके ही लिखा जाता है? विषों (जहर) से मनुष्य को मारने की शक्ति है अमुक-अमुक विष खाने से मनुष्य मर जाता है क्या ऋषियों ने आयुर्वेद के ग्रन्थों में सब विष खाकर और मर-मर कर लिखा है। या मनुष्यों को विष खिला-खिला कर और मार-मार कर लिखा है।

दिण्ड विधान लिखने वाले अपराध कर-कर के और दण्ड भोग-भोग कर दण्ड विधान लिखते हैं? ऋषि वात्स्यायन ने काम सूत्र व्यभिचार कर. कर के लिखा है? वाह री! बुद्धि!

ऋषि गण निर्लेप रहते हुए योगाभ्यास-स्वाध्याय, विचार और लोकाचार देख-देख कर सर्व वर्णों और सर्व आश्रमों को उन-उन के कर्त्तव्य कर्मों का उन-उन को उपदेश देते हैं। इनमें निज अनुभव का क्या प्रश्न हैं?

प्रमाण मांगते हो तो लीजिये—

यजुर्वेद अध्याय १६ मन्त्र ८८,

(१) मुखं सदस्य शिर इत्............

(२) सान: पूषा शिवतमामैरयसा न उरु उशती विहर।
यस्यामुशन्त: प्रहराम शेफं यस्यामुकामा बहवो निविष्ठ्यै: ॥

ऋग्वेद १०।८५।४,

(३) विष्णुर्योनिं कल्पयतु०। ऋग्वेद १०।१८४

(४) रेतो मूत्रं विजहाति योनिं प्रविश वीन्द्रियम्।

क्या इन वेद मन्त्रों में गर्भाधान की विधि नहीं है? यदि है तो परमेश्वर ने गर्भाधान कर-कर के अनुभव के बाद बताई है क्या? उपनिषद में कहा है कि—

अथ यामिच्छेद्दधीतेति तस्यामर्थं निष्ठाय,
मुखेन मुखं संधायापान्याभि प्राण्यादिन्द्रियेण।
तेरेतसा आदधामीति गर्भिण्येव भवति ॥

बृहदारण्यक उपनिषद १४।६।४।१०,

अर्थ—पुरुष यदि चाहे कि स्त्री को गर्भ रहे, तो उस स्त्री में अपनी प्रजननेन्द्रिय को रखकर मुख से मुख को मिलाकर मैथुन करे तो उसको अवश्य गर्भ रहेगा।

नोट—इसके साथ का वाक्य आपने त्रयीवेदालोचन पृष्ठ १२५ पर लिखा है उसमें भी "मुखेन मुखं संधाय" यह पाठ है। आप इस पर शकां किस मुह से करते हो?

अब कहिए उपनिषद में यह गर्भाधान की विधि है कि-नहीं? और ठीक वही है कि—नहीं, जो सत्यार्थ प्रकाश में स्वामी जी ने लिखी है उपनिषदों का प्रवचन ब्रह्मवेत्ता ऋषियों ने किया है कि नहीं? उन ऋषियों को ब्रह्मज्ञान और योगाभ्यास की विधियों के साथ-साथ गर्भाधान की विधि बताने की आवश्यकता हुई कि नहीं?

और अन्य ग्रन्थ में नहीं उसी उपनिषद में बताई की नहीं? पण्डित जी! गर्भाधान परम पवित्र और परमावश्यक कर्म है यज्ञ है उसकी विधि वेद शास्त्र और पवित्रात्मा ऋषि नहीं बतायेंगे, तो क्या विषयासक्त लम्पट पापी और दुराचारी बतायेंगे? में आपके प्रश्न को सुनकर बड़ा आश्चर्य करता हूं कि आप जैसे सज्जन भी होते हैं, जिन्होंने स्वयं भी वही लिखा है जिस पर प्रश्न कर रहे है वेदत्रयी समालोचन में आपने ही लिखा है।

'मुखेन मुखं, संधाय अभिप्राण्य अपान्यात्'

शतपथ ब्राह्मण १४।६।४।१०,

के पते से लिखा है क्या यह मैथुन की विधि नहीं है। कुछ और है? लिखकर भूल भी गये। कि गर्भाधान के समय मुख के सामने मुख करना है या पीठ के पीछे।

पुस्तक लिखने के पीछे विपरीत रति या उलटे गर्भाधान की रीति का अनुभव आपको हुआ होगा। पर आपने यह अनुभव लिखा नहीं। आपके पुराणों में किसी की नाक में गर्भाधान किसी का कान में किसी का मुख में किसी का कहीं और किसी का कहीं करना लिखा और आप जैसे उस विधि को लिखकर भी भूल जाने वाले कहीं इधर-उधर और उल्टा-पुल्टा न करने लग जावे। और जगन्नाथपुरी के मन्दिर पर मैथुन करने के आसनों के जो चित्र बने हुए हैं उनसे बचाने के लिए सर्व हितैषी ऋषिमहर्षियों की ठीक विधि लिखी देखकर दुःखी होना स्वाभाविक ही हैं।

(६) 'स्त्री योनि संकोचन करे, इस पर आपने 'बदमाशी' का असभ्यता युक्त शब्द प्रयोग किया। आप चाहते हैं कि-आपके अपशब्दों को सुनकर आर्यजन क्रोध में आ जायें, झगड़ा हो जाये शास्त्रार्थ बन्द हो जाये, और आपकी पोल खुलने से रह जाये। पर हमको शास्त्रार्थ करना और आपकी पोल खोलनी अवश्य है। इसलिए आपकी इस (हंसी) "बदमाशी" को भी सहन करते हैं। आपको तो लज्जा आई नहीं।

योनि सकोंचन की चिन्ता ऋषि दयानन्द को नहीं आपके दादा गुरु, 'पुराण कर्त्ता' को हुई थी, जिसने महर्षि वेद व्यास का पवित्र नाम उन पुराणों पर लिखकर उनके प्रति उज्जवल यश और गुण-गौरव को कलंक लगाने का कलुषित प्रयत्न किया हैं।

देखिये गरुड़ पुराण में क्या लिखा है—शंख पुष्पी.........आदि की गोलियां बनाकर......

शंख पुष्पीजटांमासी सोमराजी च फल्गुकम्।
माहिष नव नीतं च, त्वेकी कृत्य भिषग्वरः ॥६॥
'गुटिकां शोधितां कृत्वा नारी योन्यां प्रवेशयेत्।
दशवार प्रसूतापि पुनः कन्या भविष्यति ॥७॥
समुलानि स पत्राणि क्षीरेणाज्येनपेषयेत् ॥८॥

गरुड पुराण पूर्व खण्ड आचार काण्ड अध्याय १७९ श्लोक ६,७,८,

अर्थात शंख-पुष्पी आदि की गोली बनाकर स्त्री की योनि के भीतर रख दे तो जिसको दश बार भी बच्चे हो चुके हों वह भी फिर से कन्या हो जाती है।

कहिये योनि को संकुचित करने की कैसी अद्भुत और अनुपम औषधि आपके गुरु 'पुराण कर्त्ता' ने ढूढ़ निकाली। और भी सुनियेः—

कर्पूर मदनफल मधुकैः पूरितः शिवः।
योनिः शुभास्यात् वृद्धायाः युवत्याः किं पुनर्हर ॥१६॥

गरुड पुराण पूर्व खण्ड आचार काण्ड अध्याय २०२ श्लोक १६,

अर्थात—कपूर और मदनफल शहद के साथ योनि में भर दो तो बूढ़ी स्त्री की भी योनि अच्छी हो जाय। फिर युवति की क्या बात ? हे शिव। इससे तो आप जैसे बूढ़े भी अपना-अपना सुधार कर लेगें। कहिये ! कुछ लज्जा आती हैं कि—नहीं ? कांच के घर में बैठ कर फौलादी किले पर गोली चलाना अत्यन्त महंगा सौदा है।

आपके सारे प्रश्नों के उत्तर मेंने युक्ति प्रमाण पूर्वक दे दिये। आगे जो भी प्रश्न आप करेंगे उनके भी उत्तर इसी प्रकार दिये जायेंगे। और उत्तर देते समय में इस नीति का भी ध्यान रखूंगा कि—

यस्मिन् यथा वर्तते, यो मनुष्यस्तस्मिन् तथा वर्तितव्यं सधर्मः ॥७॥

विदुर नीति अध्याय ५ श्लोक ७,

पं० माधवाचार्य जी के साथ जैसी सभ्यता और शिष्टता से शास्त्रार्थ हो गया, वैसा आपने-अपने स्वभाव से न होने दिया। अब जैसी कहिये। वैसी सुनते चलिये।

शेष प्रश्नोत्तर—

नोट—पं० अखिलानन्द जी ने नया प्रश्न एक भी न करके अपने सारे प्रश्नों को फिर से दुहरा दिया और प्रश्नों को इस प्रकार दुहराया जैसे उत्तर इन्होंने सर्वथा सुने ही नहीं है। अपने प्रश्नों ही को याद करने में लगे रहे हों।

विशेष यह कहा—(१) में आर्य समाज में रहकर मैथुन की विधियों का ही अनुभव करता रहा,

(२) मैंने बार-बार गर्भाधान किया मेरे १२ सन्तान है।

जनता में हंसी............

ठाकुर अमर सिंह जी शास्त्रार्थ केशरी

(१) आर्य समाज जैसी पवित्र संस्था में रहकर भी आपने कोई भली बात न सीखी। और बुराइयां ही सीखते रहे यह आपका दुर्भाग्य है।

"रुधिर पिये पय ना पिये लगी पयोधर जोक"

भले गुण सीखते और बुराईयां न करते तो समाज से क्यों निकाले जाते?

श्रोताओं में हंसी...............

(२) "बारह सन्तान हैं" आपके सभी काम वेद विरुद्ध है। वेद में आज्ञा हैं। अधिक से अधिक दश सन्तान की "दशास्यां पुत्रानांधेहि" आपके बारह है। आपको काम ही क्या है। वेद पढ़ने न शास्त्र, स्वाध्याय न योगाभ्यास, बस! रात और दिन किये गये सन्तान पर सन्तान।

श्रोताओं में फिर हंसी...............

ध्यान रहे वेद में कहा गया है। "बहुप्रजा निरृतिमाविवेश" बहुत सन्तान वाला दरिद्रता को प्राप्त होता है। उसे धन कमाने के लिए अनेक रूप बनाने पड़ते हैं लाखों झूंठ बोलने और असंख्य पाप करने पड़ते है। "बुभुक्षितः किन्न: करोति पापम्"? (अर्थात् भूखा क्या पाप नहीं कर लेता)

शेष सभी प्रश्नोत्तरों को प्रथम-प्रथम बारी में न लिखकर एक-एक प्रश्न और उसका उत्तर साथ-साथ लिख दिया है जिससे पढ़ने और समझने में सुविधा हो सके।

प० अखिलानन्द जी कविरत्न

मेरा काम आर्य समाज की छीछालेदर करना है। पर आर्य समाज की न होकर छीछालेदर उलटी हो रही है आपकी! क्योंकि—जो सूर्य पर थूकने का यत्न करता है, उसके अपने ही मुंह पर पड़ता है।

नर की स्त्री, नारी की भांति यम की पत्नी यमी बनाओगे तो पुत्र की स्त्री पुत्री बन जायेगी।

ठाकुर अमरसिंह जी शास्त्रार्थ केशरी

भला नर-नारी के सदृश यम की पत्नी यमी अर्थ करने में पुत्र-पुत्री शब्द किस प्रकार बाधक है?

क्या आपकी सामर्थ्य है, जो आप यह सिद्ध कर सकें? नर और नारी अपने-अपने एक दूसरे के सम्बन्ध से नर-नारी कहलाते हैं। नर के सम्बन्ध से नारी और नारी के सम्बन्ध से नर परन्तु पुत्र और पुत्री दोनों अपने एक दूसरे के सम्बन्ध से पुत्र-पुत्री नहीं है। प्रत्युत दोनों ही माता-पिता के सम्बन्ध से पुत्र-पुत्री हैं।

जैसे नर की पत्नी नारी होती है। और नारी का पति नर होता है। ऐसे पुत्र की पत्नी पुत्री नहीं है। और

पुत्री का पति पुत्र नहीं है। यह ठीक है पर थोड़ा नशे से ऊपर उठकर यह भी सोचिये कि पुत्री-पुत्र की पुत्री होने से नहीं, माता-पिता की पुत्री होने से पुत्री कहलाती हैं। इसी प्रकार पुत्र, पुत्री का पुत्र नहीं है, माता-पिता का पुत्र है। आपने सर्वथा विषम दृष्टान्त दिया है। जो थोड़ा सा भी यहां नहीं घटता है। अव्याप्ति दोष से दूषित और हेतू न बन कर हेत्वाभास बन रहा है। आपने न्याय पढ़ा होता तो मैं आपको बताता कि आप किस प्रकार निग्रह स्थान में आ पड़े हैं।

पुत्र जैसे किसी और का पुत्र है। पुत्री का नहीं और पुत्री किसी और की पुत्री है। पुत्र की नहीं ऐसे ही यम किसी और के सम्बन्ध से यम है। और यमी किसी और के सम्बन्ध से यमी है। ऐसा कोई प्रमाण आपके पास है ? यदि है तो दीजिये पर तीन काल में ऐसा प्रमाण आप नहीं दे सकेंगे।

जैसे पुत्र-पुत्री परस्पर बहिन-भाई होते हैं। ऐसे ही यम-यमी भी बहिन-भाई है इसका नियामक प्रमाण क्या है ? और जैसे पुत्र पुत्री के अनुसार यम-यमी का अर्थ बहिन-भाई लगते हों। ऐसे नर-नारी पति-पत्नी, ब्राह्मण-ब्राह्मणी, पंडित-पंडितानी, क्षत्रिय-क्षत्राणी और ठाकुर-ठकुरानी सब परस्पर बहिन भाई न हो जायेंगे क्या ? इनको किस नियम से रोकोगे ? अनर्थ न करिये यम-यमी, नर-नारी की भांति ही पति-पत्नी हैं। बहन भाई नहीं।

पण्डित अखिलानन्द जी कविरत्न

यम के मन्त्र में 'जामयः कृण्वन्नजामि' शब्द पड़े हैं। जिनका अर्थ यही होता है कि—'बहिनें अबहिनों के काम करेंगी' जामि का अर्थ स्त्री कैसे करोगे ?

ठाकुर अमर सिंह जी शास्त्रार्थ केशरी

'जामयः कृण्वन्नजामि' में मैं जामि का अर्थ पत्नी करता हूं। आपके पास मेरे अर्थ को अशुद्ध सिद्ध करने का कोई प्रमाण नहीं है।—भगवान मनु नारी के अर्थ में ही 'जामि' शब्द का प्रयोग करते हैं। देखिये—

'शोचन्ति जामयो यत्र विनस्यत्याशु तत्कुलम् ॥५७॥

मनुस्मृति अध्याय ३, श्लोक ५७,

अर्थात्—जिस घर में स्त्रियां शोक करती हैं, वह कुल शीघ्र नष्ट हो जाता है। यहां यह अर्थ नहीं है, कि जिस घर में बहिनें शोक करती हैं। और देखिये—

जामयो योनि गेहानि शपन्त्यप्रति पूजिताः।
तानी कृत्या हतानीव विनश्यंति समन्ततः ॥ ५८ ॥

मनुस्मृति अध्याय ३, श्लोक ५८,

नारियां जिस घर में अपूजित अपमानित होकर शाप देती हैं। वह घर नष्ट हो जाता है।

"जाया" और "जामि" एकार्थ वाचक है, ऐसा भाव सिद्ध नहीं कर सकते हैं कि—निरुक्त में भी "जामि" शब्द का अर्थ पत्नी नहीं है।

पण्डित अखिलानन्द जी कविरत्न

मेरे प्रत्येक प्रश्न के उत्तर में वेद मन्त्र ही का प्रमाण देना चाहिये। पुराणादि का नहीं। वेद से भिन्न शास्त्र उपनिषदादि का भी नहीं, मैं वेद का ही प्रमाण मांगता हूं। आर्य समाज केवल वेद को ही प्रमाण मानता है। वेद के प्रमाण विना सब वेद विरुद्ध हैं।

ठाकुर अमर सिंह जी शास्त्रार्थ केशरी

(क) आप वेद ही का प्रमाण क्यों मांगते हैं। क्या आप पुराणादि को नहीं मानते हैं ? यदि नहीं मानते तो आप लिखकर दीजिये, कि—मैं इन-इन पुस्तकों को नहीं मानता हूं" मैं उन-उनके प्रमाण कदापि न दूंगा। जिन-जिन ग्रंथों को आप प्रमाण मानते हैं। उन-उन का प्रमाण आपके लिए देने का मैं अधिकार रखता हूं। अतः दे सकता हूं और अवश्य दूंगा। आप चाहे जितने घबराइये, इनसे पीछा तभी छूटेगा, जब हमारी भांति साहस करके कह देंगे कि मैं इन पुराण आदि को नहीं मानता हूं। मैं फिर उनके प्रमाण न दूंगा।

(ख) वेद में आपकी श्रद्धा ही नहीं, आप वेद का प्रमाण क्यों मांगते हैं ? आपने अपनी पुस्तकों में वेदों का उपहास किया है, देखिये—

"वेदत्रयी समालोचन पृष्ठ १५ में पंक्ति १२ व १३, यजुर्वेद अध्याय ३२ मन्त्र ३ के लिए लिखा है। "मन्त्र क्या है भानमती का कुनबा है"। प्रसिद्ध लोकोक्ति है कि—कहीं की ईंट कहीं का रोड़ा। भानमती ने कुनबा जोड़ा॥

आप वेद और वेद मन्त्रों को कहीं की ईंट कहीं का रोड़ा की भांति भानमती का कुनबा कहकर अपमानित करते हैं।

इसी के पृष्ठ १ पंक्ति ८, ९ में देखिए यजुर्वेद अध्याय ३२, मन्त्र ४७, के लिए लिखा है। "मन्त्र क्या हैं पूरा तमाशा है।" इसी के लिए पृष्ठ १७ में लिखा है। "असली वेद का पता लगाना बड़ा कठिन पड़ेगा" यदि इनको ही असली मान लिया जावे तो प्रत्यक्ष में विरोध पड़ता है। जो मनुष्य वेद को "भानमती का कुनबा कहे" उसको "पूरा तमाशा बतावें" और वर्तमान वेदों को असली न माने, वह वेद ही का प्रमाण मांगे यह वास्तव में पूरा तमाशा है।

वेदानुकूल और वेद विरुद्ध का लक्षण—

(ग) आप कहते हैं कि—जिसके लिए वेद का प्रमाण नहीं है। वह वेद विरुद्ध ही है। और "वेदत्रयी समालोचन" पृष्ठ ७२ पंक्ति १४, १५, १६ में आपने लिखा है कि—वेद में इसका विरोध नहीं है। इसलिए—

विरोधेत्वन पेक्षस्यादसति ह्यनुमानम्"

महर्षि जैमिनी कृत मिमांसा दर्शन सूत्र

इस जैमिनी सूत्र में यह बात वेदानुकूल हैं। फिर इसी प्रकार इसी पुस्तक के पृष्ठ १११ पंक्ति ७, ८, :वेद में भी इसका विरोध नहीं है। इसलिए वेदानुमत है।

आपके लेख से स्पष्ट है कि—वेद ने जिस बात का स्पष्ट निषेध और विरोध किया है। वह वेद विरुद्ध है। जिसका वेद में विरोध न हो उसकी आज्ञा चाहे हो चाहे न हो वह वेद विरुद्ध नहीं, वेदानुमत वेदानुकूल ही है।

सत्य भी यही है, जैसा कि ऋषि कृत मीमांसा के इस सूत्र का भी यही अभिप्राय है।

तमाशा यह है कि—आज पौराणिकों को प्रसन्न करने के लिए आप कह रहे हैं कि, "जिसके लिए वेद का प्रमाण न हो वह भी वेद विरुद्ध ही है। जिस विषय को वेद विरुद्ध सिद्ध करना हो उसके विरुद्ध वेद का प्रमाण न होने पर उसको वेदानुकूल ही मानना चाहिए।

आपके पास ऐसा प्रमाण एक भी है नहीं, जिससे ऋषि दयानन्द जी के किसी भी लेख को वेद विरुद्ध सिद्ध कर सकें। इसलिए अपनी दुर्बलता अपने भक्तों से छुपाने के लिए अपने असत्य अनर्थ युक्त और अपने मन्तव्य तथा शास्त्र के विरुद्ध यह कहना प्रारम्भ कर दिया कि—"जिसके लिए वेद का प्रमाण नहीं है वह वेद विरुद्ध है।" यदि आप में

सत्य है और साहस है तो ऋषि दयानन्द जी के किसी भी लेख के विरुद्ध कोई वेद का प्रमाण दीजिए, अन्यथा उससे वेद विरुद्ध कहने का दृढ़, दुराग्रह और बहुरूपियापन छोड़िये।

(घ) यह भी आपने अपनी मनमानी ही कह डाली कि आर्य समाज केवल वेद को ही प्रमाण मानता है"। आप को यह किसने कहा है?

सत्यार्थ प्रकाश के मुख पृष्ठ पर ही लिखा हुआ है...

"वेदादि विविध सच्छास्त्र प्रमाण समन्वितः" वेद और अन्य सत्य शास्त्रों के प्रमाणों से युक्त है, सत्यार्थ प्रकाश! किसने कहा कि केवल वेद ही प्रमाण है?

संस्कार विधि के आरम्भ में ही ऋषि दयानन्द जी कृत श्लोक है, उसमें देखिये—

"वेदादि शास्त्र सिधान्तमाध्याय परमादरात्।
आर्य्यैतिह्यं पुरस्कृत्य शरीरात्म विशुद्धये ॥ ३ ॥
(संस्कार विधि)

ऋषि दयानन्द जी तो वेद और वेदानुकूल सर्व शास्त्रों और इतिहासों तक को प्रमाण मानते हैं। ऐसा ही आर्य समाज मानता है। आपका यह कहना है कि—"आर्य समाज केवल वेद ही को प्रमाण मानता है" अज्ञान है या जान मान कर कहा हुआ झूठ!

आप जिन-जिन ग्रन्थों को प्रमाण मानते हैं, उन सबके प्रमाण आपके लिए "उष्ट्रलष्टिका" नाम से दिये जाते हैं। और दिये जायेंगे, वेद के प्रमाण भी बराबर दिये जायेंगे।

नोट—"उष्ट्रलष्टिका" न्याय यह है कि—एक ऊंट पर बहुत सी लाठियां लदी जा रही थी। हांकने वाले ने एक इनमें से निकालकर ऊंट को मारी, फिर उसी पर रख दी, ऐसे ही आपके ग्रन्थों के प्रमाणों का प्रहार आप पर किया, फिर आप पर लदे ग्रन्थों ही में आप पर उनको छोड़ दिया।

इसलिए वेद के प्रमाण भी बराबर दिये जाते हैं।

पण्डित अखिलानन्द जी कविरत्न

आप बार-बार पूछते हैं कि "लाश पड़ी है" ऐसा कहां लिखा है? लीजिये "गता सुमेतम्" शब्द मन्त्र में ही विद्यमान है। जिसका अर्थ है "प्राण निकले हुये को" यह है लाश पड़ी हुई।

ठाकुर अमरसिंह जी शास्त्रार्थ केशरी

प्रश्न करते हुए आपने सत्यार्थ प्रकाश में लिखा बताया था कि—"लाश पड़ी हुई है, उठाने वाले खड़े हुए हैं" और दूसरा पति करने की आज्ञा दी गई है। मैंने आपके असत्य को जानकर आपसे बार-बार पूछा कि—बताओ और दिखाओ कि—सत्यार्थ प्रकाश में यह कहां लिखा है?

आप नहीं बता सके और न बता सकते हैं। अब आप कहते हैं कि "वेद मन्त्र में है" बलिहारी जाऊं! श्रीमान जी की बुद्धि पर! सत्यार्थ प्रकाश में लिखा होता तो उसका उत्तरदायित्व हमारे ऊपर था। आप प्रश्न करते, हम उत्तर देते, पर यदि वेद में हैं, तो वेद हमको और आपको दोनों को प्रमाण है। उसका उत्तरदायित्व दोनों पर समान हैं। "लाश पडी है" चाहे जल रही हो। यदि आप कहें कि—हम वेद को नहीं मानते। तो हम आपको इसका उत्तर देंगे। सत्यार्थ प्रकाश में जो बताते थे सो आप न दिखा सके यह आपकी पराजय है।

पण्डित अखिलानन्द जी कविरत्न

वेदों में गर्भाधानादि के मन्त्र है। तो क्या वद में कर्म-उपासना ज्ञान छोड़कर ऐसी अश्लील बातें ही भरी पड़ी है।

ठाकुर अमरसिंह जी शास्त्रार्थ केशरी

यह प्रश्न आपका बहुत ही विलक्षण हैं, हम से पूछिए तो ऋषि दयानन्द जी के निर्माण किये हुए जो नियम हैं। उनमें "वेद सब सत्य विद्याओं का पुस्तक है" वेद में ज्ञान-कर्म उपासना और विज्ञान भरे हुए हैं। और अश्लीलता की गन्ध भी नहीं है, गर्भाधान एक परम पवित्र (पुत्रेष्टि) यज्ञ है। इसमें जिसे अश्लीलता दीखती है, उसको अपने मस्तिष्क की चिकित्सा करानी चाहिये।

हां यह तो बताइए कि आपको वेद में ज्ञान-कर्म उपासना कब से दीखने लगी ? आपने वेद में क्या-क्या बताया है सो याद नहीं रहा तो सुनिये। वेदत्रयी समालोचन पृष्ठ ४०, पंक्ति १६, "कोई स्त्री अपने पास आये तो उसकी रमणेच्छा पूरी कर दें" आगे देखिये-वेदत्रयी समालोचन व पृष्ठ ५१, पंक्ति ९ से १२ तक "इत्यादि मन्त्रों के दृष्टांत देकर पुरुष का अन्य स्त्री के पास जाना दिखाया गया है" वृषभ (बैल) अपनी गौवों में शब्द करता है। और दूसरे झुंड की गौओं में जाकर वीर्य देता है। यह लोक में प्रत्यक्ष है। और देखिये—अथर्व वेदालोचन में पृष्ठ १६१ पंक्ति १० "हे वैद्यराज आज इसका······धनुष जैसा तान दे।"

"पारस्वत्" हस्ती, खर और अश्व का जितना होता है, उतना ही······आपका बढ़े। उसी में पृष्ठ १६२ पंक्ति १४ "जिससे तेरा····· बढ़े और उससे स्त्रियों को परास्त कर" तथा पृष्ठ १६५ पंक्ति ४ में लिखा है—हे कुमारी ! तेरे किरण अर्थात दोनों स्तन प्रकट हो गये हैं। पुरुष उनका पेषण करता है।

फिर इसी पृष्ठ पर पंक्ति १० में—हे कुमारि ! बिना पुरुष के योग के ही तेरी माता के दोनों किरण (स्तन) गिर गये थे।

·········बुढ़ापे में तेरी माता का उपभोग हुआ है।······कन्ये ! क्या तू अपने दो कान खिचवा कर इस कार्य में प्रवृत्त होगी ? यदि तेरी इच्छा हो तो, उत्तान अथवा शयनावस्था में या फिर बैठे ही इस कार्य में प्रवृत्त हो।

नोट—"इस कार्य" इसके स्थान पर ठाकुर अमर सिंह शास्त्रार्थ केशरी जी ने "सनातन धर्म शब्द कहा, पं० माधवाचार्य जी ने कहा 'सनातन धर्म' नहीं "आर्य समाज"। दोनों ओर की सुनने वाली जनता में बड़े जोरों से अट्टहास हुआ,

ठाकुर अमर सिंह जी शास्त्रार्थ केशरी—

महाराज जी ! मैं अपनी तरफ से नहीं कर रहा हूं, आप ही के पांचवें वेद "महाभारत" में व्यभिचार को "सनातन धर्म" कहा है, इसलिए मैंने "सनातन धर्म" कहा है।

जनता में तालियों की गडगड़ाहट के साथ हंसी······

पृष्ठ १६५ पंक्ति २० में—

उसी में पृष्ठ १६२ पंक्ति ४, ५, में देखिये—एक नंगी स्त्री ओखली के पास जाकर कहती हैं कि—"जिस प्रकार वनस्पति उत्पन्न मुशल तेरे लिए है। इसी प्रकार मेरे लिए भी ········है।

वेदत्रयी समालोचन पृष्ठ १६६, पंक्ति ७ एक नंगी स्त्री नंगे भागते हुए पुरुष को पकड़ कर कहती है कि—"मेरे साथ गमन (सनातन धर्म) कर, और ओदन (भात) खा यह ज्ञान-कर्म-उपासना आपको वेदों में मिली, धन्य हो ! धन्य हो ! वेद पाठी जी ! ! धन्य हो ! !!

महर्षि दयानन्द जी को वेदों में यह विद्याएं नहीं मिली थीं। यह आपकी ही खोज है। इस खोज पर तो आपको (नोबिल प्राइज) गवर्मेन्ट से पुरस्कार मिलना चाहिए था।

श्रोताओं में जबर्दस्त हंसी.........

नोट—अखिलानन्द जी की जो पक्तियां ऊपर लिखी हैं। यह सब वेदमन्त्रों के अर्थों में उन्होंने लिखी है। ऐसा वेदमन्त्रों में हैं, यह उन्होंने प्रकट किया है। वेदों में शारीरिक, आत्मिक, ऐहिक और पारलौकिक सर्व प्रकार की उन्नतियों के उपाय हैं देखने के लिए आंखें चाहियें।

पण्डित अखिलानन्द जी कविरत्न—धृतराष्ट्र और पाण्डु आदि नियोग से नहीं व्यास जी के वरदान से उत्पन्न हुए।

ठाकुर अमर सिंह जी शास्त्रार्थ केशरी—

(६) धृतराष्ट्र-पाण्डु और विदुर जी की उत्पत्ति व्यास जी के वरदान से नहीं हुई। नियोग से ही हुई, महाभारत को पढ़ने का कष्ट करियें, सत्यवती ने भीष्म जी से कहा था कि अपनी भाभियों से सन्तान उन्पन्न करो। वह दोनों विधवा सन्तान रहित हैं। भीष्म जी ने यह कहकर इन्कार कर दिया कि मरणपर्यन्त ब्रह्मचारी रहने का प्रण कर चुका हूं। अब उसको नहीं तोड़ सकता हूं। चाहे सूर्य पश्चिम से उगने लगे, यहां यह प्रश्न उठता है कि सत्यवती ने भीष्म को वरदान द्वारा सन्तान उत्पन्न करने को कहा था, या गर्भाधान और मैथुन द्वारा ? यदि कहो कि वरदान द्वारा उत्पन्न करने को कहा था, तो प्रश्न होगा कि वरदान से भीष्म जी का ब्रह्मचर्य भला कैसे टूटता और छूटता था ?

पता लगता है कि निश्चय ही नियोग के लिए कहा था। वरदान के लिए नहीं, साथ ही भीष्म जी ने अनेक उदाहरण देकर नियोग की ही पुष्टि की, और वेद का भी प्रमाण देकर नियोग को वेदानुकूल बताया, देखिये—

पाणिग्राहस्य तनयः इति वेदेषु निश्चितम्" ॥६॥

महाभारत आदि पर्व अध्याय १०४, श्लोक ६,

सत्यवती ने अपनी पुत्र वधू से भी कहा कि—

'कोशल्ये देवरस्तेऽस्ति निशीथे ह्यागामिष्यति" ॥२॥

महाभारत आदि पर्व अध्याय १०६, श्लोक २,

"तेरा देवर (व्यास) आधी रात को आवेगा" कहिये आधी रात को वरदान देने का कौन सा समय हैं ? आप कहीं आधी रात को किसी के घर में वरदान देने के लिए जाकर देखिये ? कैसी पूजा हो।

श्रोताओं में हंसी.........

गर्भाधान नियोग के लिए तो आधी रात्रि को जाना उचित ही था, क्योंकि दिन में गर्भाधान निषिद्ध है। और उसका समय अर्ध रात्रि ही सर्वोत्तम हैं। आधी रात्रि में जाना नियोग ही सिद्ध करता है न कि वरदान।

दूसरे व्यास जी को अम्बालिका और आम्बिका का देवर बताना भी नियोग ही सिद्ध करता हैं। क्योंकि-देवर का निर्वचन प्रसिद्ध है। देखिये—

"देवरः कस्माद्वितियो वर उच्यते"

निरुक्त नैघण्टुक काण्ड अध्याय ३,पाद ३ खण्ड १५,

देवर दूसरे पति को कहते हैं। आम्बिका के लिए लिखा है। "शयनाशयने शुभे" "शुभ शैया पर सोती हुई" वरदान लेने के लिए शैय्या पर सोना आप ही की शुभ समझ में आ सकती है। पं० रामस्वरूप जी ऋषि कुमार सम्पादक सनाधर्म पता का महाभारत की टीका में लिखते हैं। "व्यास जी ने आम्बिका के साथ समागम किया" धृतराष्ट्र और

पाण्डु के जन्मोपरान्त तीसरा नियोग बड़ी विधवा से ही होना था, पर वह स्वयं न आई, और शृंगार कराके अपनी दासी को भेज दिया। "कामोपभोगेन रहस्तस्यां तुष्टिमगाद्दृषिः" उसके साथ कामोपभोग से ऋषि व्यास बहुत संतुष्ट हुए। उससे विदुर जी उत्पन्न हुए। कहिये ! कामोपभोग वरदान का नाम है कि नहीं ?

इसके अतिरिक्त देवी भागवत में स्पष्ट ही हैं—

"व्यास वीर्यात्तु संजातो धृतराष्ट्रो ऽन्ध ऐव च: ॥२।

देवी भागवत स्कन्द २, अध्याय ६ श्लोक २,

अर्थात् व्यास के वीर्य से धृतराष्ट्र अन्धे उत्पन्न हुए ? आपके कोष में वीर्य का अर्थ वरदान ही है क्या ?

पण्डित अखिलानन्द जी कविरत्न

उदीर्ष्व नारि······का यह मन्त्र है। आप भाष्य सायनाचार्य जी का सुना रहे थे। तैत्तिरीयारण्यक में से। कैसा तलाशा हैं ? प्रमाण रामायण का अर्थ महाभारत का, प्रमाण ज़ाब्ता फौजदारी का अर्थ दीवानी की पुस्तक में, यह कैसे माना जा सकता है ?

ठाकुर अमरसिंह जी शास्त्रार्थ केशरी

"उदीर्ष्व नारी" यह मन्त्र ऋग्वेद का है, और भाष्य तैत्तिरीयारण्यक में दिखा रहा हूं। ठीक है पर अर्थ उसी मन्त्र का है या नहीं ? यदि यह अर्थ जो मैं सुना रहा हूं उसी मन्त्र का न हो किसी और मन्त्र का हो, या आचार्य सायण का किया हुआ न हो। तो आप कहिये जब वही मन्त्र और उसी का भाष्य और श्री सायन का ही किया हुआ है। तो फिर आपको इसमें आपत्ति क्या है ? श्लोक रामायण या मनुस्मृति का ही हो, और अर्थ महाभारत में उसी का हो तो इसमें अनर्थ क्या हो गया ? वेद का मन्त्र यदि ब्राह्मण ग्रन्थ, आरण्यक या उपनिषदादि में उद्धृत होगा तो वह मन्त्र ही न रहेगा ? और न उसका अन्यत्र किया हुआ भाष्य-भाष्य ही रहेगा, वाह, वाह ! यह दोषापत्ति आपकी सर्वथा अनूठी और अछूती है, ऐसी सूझ आपके सिवाय किसको सूझ सकती है।

पण्डित अखिलानन्द जी कविरत्न

यम-यमी सूक्त में बहिन-भाई का सम्वाद ही है। सब भाष्यकारों ने ऐसा ही माना है, पति-पत्नी का सम्वाद तो सिवा दयानन्द के किसी ने भी नहीं माना।

ठाकुर अमरसिंह जी शास्त्रार्थ केशरी

निरुक्त के प्रसिद्ध और प्राचीन भाष्यकार श्री स्कन्द स्वामी यम-यमी सूक्त में पति-पत्नी का ही सम्वाद मानते हैं। यम पति है और यमी पत्नी स्कन्द स्वामी लिखते हैं कि—काचिद् ब्राह्मणी पत्यौप्रव्रजिते कामार्त्ता प्रब्रवीति" ॥

अर्थात् कोई ब्राह्मणी अपने पति के संन्यास लेते समय काम के वश में होकर कहती है। इस प्रकार कैसी सुन्दर संगति लगती है कि—'यमी—ब्राह्मणी अपने संन्यास लेने वाले पति "यम" को कहती है। कि तुम मेरे साथ समागम करो। कामार्त्ता हो वा पुत्र चाहने वाली हो, उसको विरक्त हुआ पति कहता है कि—क्या ऐसे युग भी कभी आयेंगे जब पत्नियां अपत्नियों के से कार्य करेंगी, अर्थात पति की अत्यावश्यक आज्ञाओं का भी उलंघन किया करेंगी हे देवी तुम मेरी आज्ञा मानो, और "अन्यमिच्छस्वसुभगेपतिंमत्" मुझ पति से भिन्न अन्य दूसरे पति की इच्छा करो, जो नियोग द्वारा तुमको पुत्र प्रदान कर सके।

पंडित अखिलानन्द जी कविरत्न

"उदीर्ष्व नारी"···इस मन्त्र में नियोग और पुनर्विवाह का नाम भी नहीं है। इस मन्त्र को किसी ने भी पत्यन्तर (नियोग या विधवा विवाह) विधान का नहीं माना है। न वेद में दूसरे पति का विधान है।

ठाकुर अमरसिंह जी शास्त्रार्थ केशरी

"उदीर्ष्व नारी"......इस मन्त्र में नियोग और विधवा विवाह दोनों हैं। और बड़-बड़े विद्वान ऐसा ही मानते हैं। आपने ग्रन्थ नही पढ़े तो यह आपका दोष है। (क) प्रसिद्ध वेदज्ञ, विद्वान मन्त्र–विनियोग–कर्त्ता–शौनक अपने प्रसिद्ध ग्रंथ ऋग्विधान में इस मन्त्र का विनियोग-नियोग में करते हैं। देखिये—

भ्रातुर्भार्यामपुत्रस्य सन्तानार्थं मृते पतौ। देवरोऽन्वारूरूक्षन्तीमुदीर्ष्वेति निवर्त्तयते॥
ऋतुकाले तु सम्प्राप्ते घृताभ्यक्तोऽथवाग्यतः। एक मुत्पादयेत् पुत्रं न द्वितीयं कथंचन॥

ऋग्विधान (मोतीलाल बनारसी दास द्वारा लाहोर से प्रकाशित)

अर्थात्—भाई की सन्तान हीन पत्नी को पति के मर जाने पर देवर अपनी भाभी को रोने से उदीर्ष्व नारी··· इस मन्त्र को बोलकर रोके और उससे एक पुत्र उत्पन्न करे। दूसरा न करे।

(ख)—(शास्त्रीय–नियोग–विध्यवनुरोधेन) पाणिगृहीष्वेति तामुपदिशति। उदीर्ष्व नारि···(गुह्णवेति)

वैदिक साहित्य चरित्रम् (मद्रास में प्रकाशित)

मद्रास के छपे प्रसिद्ध ग्रन्थ वैदिक साहित्य चरित्रम् का ही यह वचन है। इसमें भी इस मन्त्र का विनियोग 'पति की चिता जलते समय सती होने से रोककर नियोग की सम्मति देने ही में है।

अर्थात्—शास्त्र की नियोग विधि के अनुरोध से "देवर या पुरोहित विधवा को कहता है, कि रोओ मत दूसरे पति से सन्तान उत्पन्न कर लो "उदीर्ष्व नारि···" इसके द्वारा दूसरे पति की सम्मति देता है।

(ग) भीष्म पितामह नियोग को सनातन धर्म स्वीकार करते हुऐ इसी मन्त्र की ओर संकेत करते हुए कहते हैं कि—

"पाणिग्राहस्य तनयः इति वेदेषु निश्चितम्"॥ ६॥

महाभारत आदि पर्व अध्याय १०४, श्लोक ६,

"उदीर्ष्व नारि···" इस मन्त्र में "हस्तग्राभ्यस्य" पाठ है।

उसी को भीष्म जी ने "पाणिग्रहस्य" कह कर नियोग का वेद में प्रमाण माना है।

पण्डित अखिलानन्द जी कविरत्न

"उदीर्ष्व नारी" इस मन्त्र में वह कौन से शब्द है। जिससे पुनर्विवाह की इच्छा करने वाला वा "नियोग करने वाला" ऐसा अर्थ निकलता है।

ठाकुर अमरसिंह जी शास्त्रार्थ केशरी

इस मन्त्र में वह शब्द "दिधिषु" है। जिसका अर्थ नियोग या विधवा विवाह करने वाला पति है।

पंडित अखिलानन्द जी कविरत्न

"दिधिषु का यह अर्थ किसने किया वा माना है?

ठाकुर अमरसिंह जी शास्त्रार्थ केशरी

आचार्य सायण जी ने उदीर्ष्वनारि···इसी मन्त्र में आये "दिधिषु" शब्द का अर्थ पुनर्विवाह की इच्छा करने वाला किया है।

"दिधिषु" पुर्नविवाहेच्छोः (पुर्नविवाह की इच्छा करने वालों का)

भ्रातुर्मृतस्य भार्यायांपाडेनुरज्वेत कामतः । धर्मेणापि नियुक्तायां स क्षेयोदिधिषुः पतिः ॥१७३॥

मनुस्मृति अध्याय ३, श्लोक १७३,

अर्थात्—मरे हुए भाई की पत्नी के साथ काम के वश या धर्मानुकूल नियोग से भी जो रति करता है। वह "दिधिषु" पति जानना चाहिये।

मनु जी ने स्त्री के दूसरे पति का नाम "दिधिषु" बताया है। चाहे नियोग से चाहे पुर्नविवाह से, धर्म से चाहे अधर्म से स्त्री के दूसरे पति का नाम "दिधिषु" है।

(३) और देखिये अमर कोष में कहा है।

"पुनर्भूः दिधिषुः रूढ़ा द्विस्तथा "दिधिषु पतिः" ॥२३॥

अमरकोष काण्ड २, मनुष्य वर्ग श्लोक २३,

इस पर अमर विवेक टीका भी देखने योग्य है। वहां पर और भी स्पष्ट किया गया गया है। देखिये—

पण्डित अखिलानन्द जी कविरत्न

नोट—पण्डित जी ने आर्य समाज की वेदी की ओर हाथ करके कहा "इस घर में आग लग गई" अपनी ओर हाथ का संकेत करते हुए बोले "इस घर के चिराग से"।

अपने आपको आर्य समाज के घर का चिराग बताया, जिससे आर्य समाज को आग लग गई।

"इस घर को आग लग गई इस घर के चिराग से।" इसके उत्तर में :—

ठाकुर अमरसिंह जी शास्त्रार्थ केशरी ने कहा

कि सर्वथा सत्य है यह मिट्टी के तेल का चिराग हमारे घर में जलता था, हमारे घर की दीवारें काली करता था, हमारे घर में दुर्गन्ध फैलाता था, हमारे घर में इससे आग लग जाने की भी सम्भावना थी।

हमने यह सब अनुभव किया, और इस चिराग को बुझा दिया और घर से बाहर निकालकर फेंक दिया।

हमारे घर में इसकी जगह गैस, लैम्प और बिजली के बल्ब जगमगाते हैं। जिनके घर में घुप अन्धेरा था उन्होंने इस चिराग को अपने घर में जला लिया।

अब यह उसी घर में बैठा टिमटिमा रहा है।

जनता में बड़े जोर की हंसी चारों ओर तालियों की गडगड़ाहट से आकाश गूंज उठा……

"आर्य समाज की छीछालेदर करने वाले की अपनी छीछालेदर हो रही है। सूर्य पर थूकने की कुचेष्टा करने वाले के अपने मुंह पर अपना थूक गिर रहा है।"

॥ इति ॥

[ग्यारहवां शास्त्रार्थ]
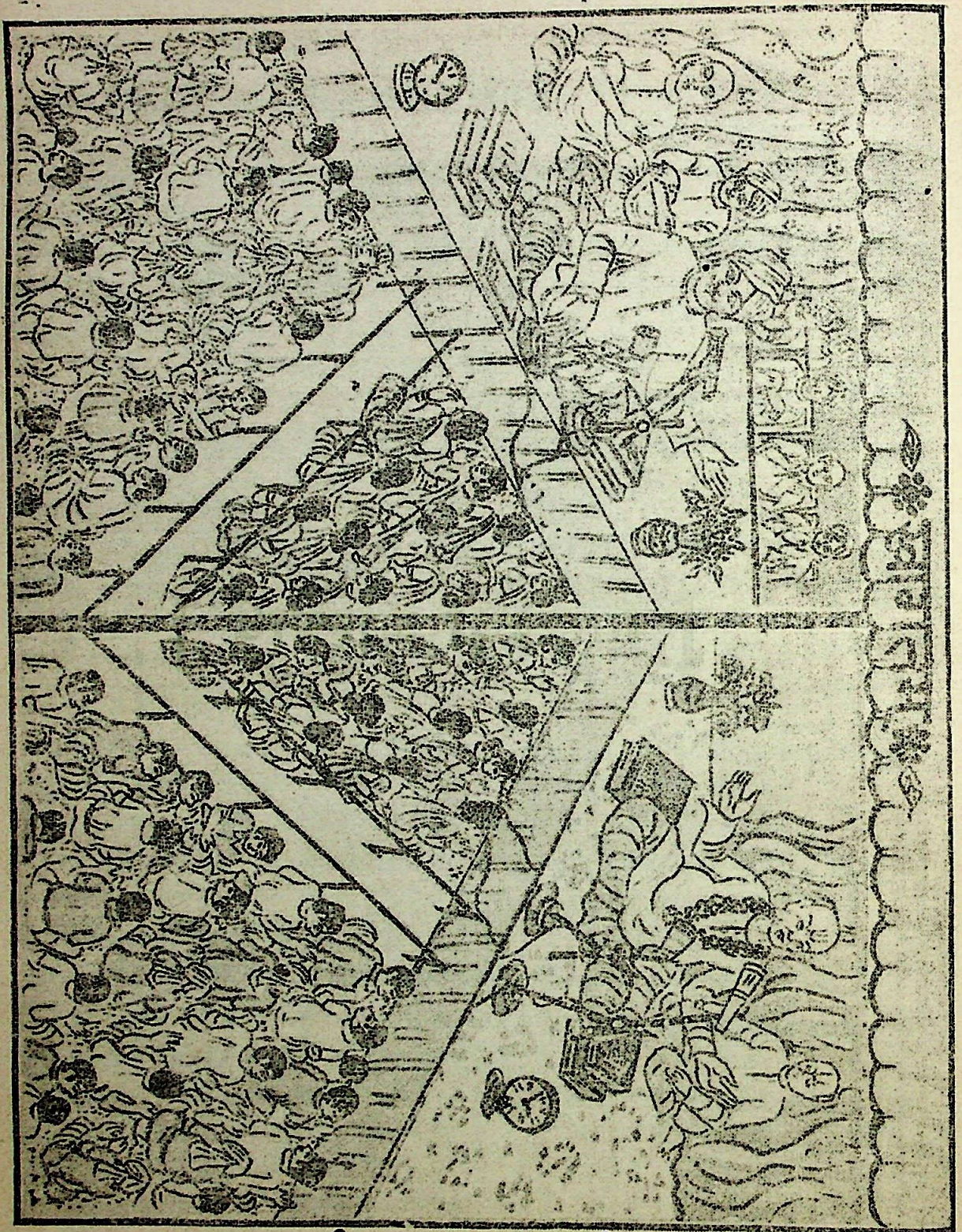
(शास्त्रार्थ करते हुए)

"श्री ठाकुर अमर सिंह जी शास्त्रार्थ केशरी तथा श्री पं० माधवाचार्य जी शास्त्री"

स्थान : फर्रूखाबाद (उत्तर प्रदेश)

विषय : क्या महर्षि दयानन्द कृत ग्रन्थ "सत्यार्थ प्रकाश" वेद विरुद्ध है ?

दिनाक : १० व ११ जौलाई सन् १९५५ ई०

शास्त्रार्थ कर्त्ता पौराणिकों की ओर से : श्री पं० माधवाचार्य जी शास्त्री

श्री पं० माधवाचार्य जी शास्त्री के साथी : श्री पं० अखिलानन्द जी "कविरत्न"

शास्त्रार्थ कर्त्ता आर्य समाज की ओर से : श्री पं० ठाकुर अमरसिंह जी शास्त्रार्थ केशरी

श्री ठाकुर अमर सिंह—
शास्त्रार्थ केशरी जी के साथी : श्री पं० बिहारीलाल जी शास्त्री "काव्यतीर्थ" (बरेली)

नोट—श्री पं० बुद्धदेव जी विद्यालंकार और श्री पं० लोकनाथ जी शास्त्री (तर्क वाचस्पति) भी शास्त्रार्थ के समय विद्यमान थे।

शास्त्रार्थ से पहले की कुछ आवश्यक बातें

आर्य कुमार सभा और सनातन धर्म मण्डल के सदस्यों के बीच १० व ११ जौलाई सन् १९५५ को फर्रुखाबाद में दो शास्त्रार्थ हुए।

कुछ दिनों पूर्व पौराणिक पं० माधवाचार्य जी ने आर्य समाज के विरुद्ध बहुत भद्दा प्रचार किया। उसको सुनकर सभ्यता भी लजाती थी। आर्य लोग उनको सुनते और सहन करते रहे। पर असभ्यता और अशिष्टता का आर्यों ने कुछ उत्तर न देना चाहा।

आर्यों की इस सहनशीलता का पौराणिकों ने अनुचित लाभ उठाया तथा आर्य समाजियों को शास्त्रार्थ से डरा हुआ बताना आरम्भ कर दिया। महात्मा विदुर जी ने कहा है कि—

एकः क्षमावतां दोषो द्वितियो नोपपद्यते।
यदेनं क्षमया युक्तं अशक्तं मन्यते जनः॥

विदुर नीति

अर्थात् क्षमा शीलों में एक ही दोष है, दूसरा नहीं। वह दोष यह है कि, क्षमा करने वाले को लोग अशक्त अर्थात् दुर्बल मानने लगते हैं।

पौराणिकों के चैलेञ्ज

आर्यों की सहन शीलता का लाभ उठाकर पौराणिकों ने एक के पीछे एक इस प्रकार दो चैलेञ्ज आर्य समाज के विरुद्ध शास्त्रार्थ के लिए छपवा कर बंटवा दिये।

तब आर्य वीर (शेर) भी तैयार हो गये। और आर्य कुमार सभा फर्रुखावाद ने चैलेञ्ज स्वीकार कर लिया आर्य कुमार सभा ने शास्त्रार्थ के लिए नीचे लिखे विषय बताये।

१. ईश्वर साकार है या निराकार?
२. ईश्वर जन्म लेता है या नहीं?
३. मूर्ति पूजा वैदिक है या अवैदिक?
४. श्राद्ध मृतकों का होना चाहिये या जीवितों का?
५. वर्ण व्यवस्था जन्म से है या गुण, कर्म, स्वभाव से?
६. नियोग तथा विधवा विवाह वैदिक हैं या अवैदिक?

पौराणिक मण्डल इनमें से एक विषय पर भीशास्त्रार्थ करने को तैयार नहीं हुआ। उन्होंने केवल एक ही विषय पर शास्त्रार्थ करना स्वीकार किया कि—

"सत्यार्थ प्रकाश वैदिक है या अवैदिक" ?

तथा आर्य समाज को विषय दिया गया कि—

"पद्म पुराण वैदिक है या अवैदिक" ?

पौराणिकों ने इन मौलिक विवादास्पद विषयों पर शास्त्रार्थ करना सर्वथा त्याग दिया है। इसका कारण यह है कि, इन विषयों पर पौराणिक पक्ष सर्वथा अयुक्ति युक्त तथा प्रमाण शून्य है।

हृदय से तो उन्होंने पराजय स्वीकार कर ली है पर मुख से स्वीकार करने में घबराते हैं।

दूसरा कारण यह भी है कि, पौराणिकों में एक भी ऐसा पण्डित नहीं है कि जो दो चार घण्टे लगातार किसी भी एक विषय पर विचार विनिमय कर सके। वे केवल कपि कौतुक में ही प्रवीण हैं।

शाखा मृग की यही प्रभुताई।
शाखा ते शाखा पर जाई॥

जैसे (कपि) बन्दर एक डाली पर स्थित न रहकर क्षण-क्षण में भिन्न-भिन्न डालियों पर कूदता तथा भागता रहता है' इसी प्रकार पौराणिक पण्डितों का पांडित्य अब यही है कि—वे शास्त्रार्थ का विषय—

"स्वामी दयानन्द कृत ग्रन्थ वेद विरुद्ध हैं"

यही सदा सर्वत्र रखते हैं। और उन्हीं ग्रन्थों में से कुछ सामान्य बातें लेकर ६-७ प्रश्न भिन्न-भिन प्रकार के कर देते हैं। उन्हीं को उलट-पलट कर दो तीन घण्टे शास्त्रार्थ के नाम पर समाप्त कर देते हैं। आर्य समाज की ओर से भी इसके मुकाबिलें में "क्या पुराण वेदानुकूल हैं" ? यह विषय रख दिया जाता है। फर्रुखाबाद में इतना भेद किया गया कि पौराणिकों ने अपने लिए विषय निश्चय किया कि,—

"सत्यार्थ प्रकाश वेद विरुद्ध है"

और आर्य समाज को विषय दिया कि—

क्या पद्म पुराण वेद विरुद्ध है ?

शेष वह उन्हीं बातों से बाधाएं डालने लगे जो कि पुस्तक के आरम्भ में "लेखक की ओर से" शीर्षक वाले लेख में दिये गये हैं। जैसे शास्त्रार्थ में मध्यस्थ का होना, शास्त्रार्थ लेख बद्ध तथा संस्कृत में होना चाहिए आदि -२।

नोट—एक बात इस दिन विशेष यह हुई कि श्री पं० बिहारी लाल जी शास्त्री आदि ने यह निश्चय किया कि, आज का यह शास्त्रार्थ श्री ठाकुर अमर सिंह जी करेंगे। श्री ठाकुर अमर सिंह जी ने सारे फर्रुखाबाद शहर में यह घोषणा लाउडस्पीकर द्वारा करा दी कि,—"आज तीन से छः बजे तक दिन में शास्त्रार्थ "नियोग" विषय पर होगा"। समय पर पौराणिक पण्डित आये ही नहीं, तब उसके बाद आर्य समाज की ओर से घोषणा की गयी कि सनातन धर्मी पण्डित शास्त्रार्थ के लिए नहीं आये हैं। इस लिए उनकी हार मानी जाये, वह इस घोषणा को सुनकर ४ बजे शास्त्रार्थ मण्डप में आ गये। पर "नियोग" विषय पर शास्त्रार्थ करने को तैयार नहीं हुए।

सत्यार्थ प्रकाश पर ही अड़े रहे। श्री ठाकुर पं० अमर सिंह जी ने कहा कि—देखिये पं० माधवाचार्य जी आप नियोग विषय पर शास्त्रार्थ नहीं कर रहे है। पर आप चोर द्वार से नियोग पर अवश्य आयेंगे। यह आप निश्चय समझ लीजिये यदि आपने नियोग पर प्रश्न किया तो में ऐसे उत्तर दूंगा कि आप उनको सुनकर रो पड़ेंगे।

इस प्रकार इसी वाद विवाद में काफी समय बर्बाद करने के पश्चात् पौराणिक पं० शास्त्रार्थ करने को उद्यत हुए और हुए तब जब श्री ठाकुर अमर सिंह जी शास्त्रार्थ केशरी ने कह दिया कि—यदि आप नियोग विषय पर शास्त्रार्थ नहीं कर सकते हैं तो जिस पर भी आप बोल सकते हों बोलिये।

तब सत्यार्थ प्रकाश पर ही शास्त्रार्थ आरम्भ हुआ।

शास्त्रार्थ प्रारम्भ

पण्डित माधवाचार्य जी शास्त्री

भाइयों और बहनों ! स्वामी दयानन्द जी ने सत्यार्थ प्रकाश में चोटी कटा देने का आदेश और उपदेश किया है। यह ईसाई मत की शिक्षा का प्रचार है। जिस चोटी की रक्षा से लिए हिन्दू लोग शिर कटा देते हैं। उस प्यारी चोटी को कटाने का उपदेश स्वामी दयानन्द जी ने दिया है। कितना घोर अनर्थ है। यह वेद विरुद्ध उपदेश है। दिखाइये वेद के किस मन्त्र में चोटी कटाने की आज्ञा है।

ठाकुर अमर सिंह जी शास्त्रार्थ केशरी

महर्षि दयानन्द जी ने संस्कार विधि के मुण्डन संस्कार में चोटी रखाने की आज्ञा दी है। नित्य प्रातः और सायं सन्ध्या करते समय गायत्री मन्त्र बोलते हुए चोटी में गांठ लगाने का आदेश और उपदेश प्रत्येक ब्रह्मचारी, गृहस्थ और वानप्रस्थ को दिया है।

संन्यास ग्रहण करते समय चोटी और जनेऊ दोनों को जल में छोड़ने का विधान है। स्पष्ट है कि स्वामी जी महाराज मुण्डन संस्कार से लेकर संन्यास ग्रहण करने तक चोटी रखने और उसमें नित्य दो बार गांठ लगाने का आदेश देते हैं। सत्यार्थ प्रकाश में कहीं भी यह नहीं लिखा कि—चोटी सबको कटानी चाहिये। और अवश्य कटानी चाहिये।

यदि ऐसा आदेश आप सत्यार्थ प्रकाश में लिखा दिखला दें तो मैं इसी समय सनातन धर्मी बनने की घोषणा करता हूं। न दिखा सके तो आप आर्य समाजी बनने की घोषणा करिये। दिखाइये ! सत्यार्थ प्रकाश में ऐसा कहां लिखा है ?

नोट :—इस पर सभा में सन्नाटा छा गया। लोग स्तब्ध रह गये, माधवाचार्य जी का मुंह फक हो गया।

ठाकुर अमर सिंह जी शास्त्रार्थ केशरी

सुनिये ! मैं बताता हूं वहां क्या है—

आप लोग कुछ पढ़ते-लिखते तो हैं नहीं। देखिये मनुस्मृति में एक केशान्त संस्कार बताया गया है। जिसमें लिखा है—

केशान्तः षोडशे वर्षे ब्राह्मणस्य विधीयते।
राजन्य बन्धो द्वाविंशे वैशस्यद्वयधिके ततः ॥६५॥

मनुस्मृति अध्याय २, श्लोक ६५,

ब्राह्मण के पुत्र का केशान्त संस्कार सोलह वर्ष की आयु में क्षत्रिय का २२ वर्ष में तथा वैश्य के पुत्र का २४ वर्ष की आयु में होवे। इस संस्कार का नाम ही केशान्त है। जब केशान्त ही हो गया तो चोटी कहां रही, जब शरीरान्त ही हो जाय तो मुख आदि कहां रह गया। और आंख कहां रह गयी, मनुजी का दिया हुआ ही तो नाम "केशान्त" है।

स्वामी जी ने तो उसमें चोटी की रक्षा की है। और लिखा है कि—इस विधि के पश्चात् "केवल शिखा रखके" अन्य केश कटावे।

और आगे कहा है, "अति उष्ण देश हो तो सब शिखा सहित छेदन करा देना चाहिये।"

"अति उष्ण देश हो तो" यह शर्त है न कि यह नित्य कर्म और नित्य धर्म है। समय विशेष और और देश-विशेष के लिए कार्य विशेष है। स्वामी जी ने तो "उष्ण" भी नहीं "अति उष्ण" देश कहा है। इसके लिए प्रमाण की क्या आवश्यकता है।

अनेक रोगों में शिर के सारे बाल कटा दिये जाते हैं। और यदि प्रमाण ही चाहियें तो लीजिये—

"हम तो झूठे को घर तक पहुंचा कर ही छोड़ते हैं।" देखिये तथा ध्यान से सुनिये और नोट करिये!

एक प्रमाण तो केशान्त संस्कार के लिए मैंने पहले मनुस्मृति का दिया है। दूसरा चोटी कटाने का सुनिये—

मुण्डोवा जटिलो वा अथवा स्याच्छिखाजटः ॥२२६॥

मनुस्मृति अध्याय २. श्लोक २१६,

ब्रह्मचारी के लिए इस श्लोक में तीन विकल्प है। मुण्डित शिर, सर्वथा घोटमघोट रहे, या जटा रक्खे या शिखा जट अर्थात चोटी रक्खे।

यहां "मुण्ड" का अर्थ चोटी रहित घोटमघोट नहीं है तो क्या है?

और भी देखिये—आप जितने चाहें प्रमाण लेते जाइये!

३. स शिखं वपनं कार्य्यं त्रिसंध्यमवगाहनम् ॥३८॥

पाराशर स्मृति अध्याय ८, श्लोक ३८,

४. स शिखं वपनं कार्य्यं प्राजापत्यत्रयं चरेत् ॥६॥

पाराशर स्मृति १०, श्लोक ६,

५. स शिखं वपनं कृत्वा भुञ्जीयाद्यावकौदनम् ॥२०॥

पाराशर स्मृति अध्याय १०, श्लोक २०,

६. स शिखं वपनं कृत्वा प्राजापत्य त्रयाचरेत् ॥७॥

पाराशर स्मृति अध्याय १२, श्लोक ७,

७. सशिखं वपनं कार्यमास्नानाद्ब्रह्मचारिणा ॥१४॥

कात्यायन स्मृति खण्ड २५, श्लोक १४,

ये स्मृतियों के सात प्रमाण हुए इनमें "स शिखं वपनं कार्यम्" शिखा अर्थात् चोटी सहित बाल कटाने का स्पष्ट आदेश है। भिन्न-भिन्न अवस्थाओं के लिए ऐसे आदेश स्मृतियों में हैं। महापुरुषों ने कहा है—

धर्मार्थ काम मोक्षणामारोग्यं मूलमुत्तमम् ॥

धर्म, अर्थ, काम और मोक्ष इनका उत्तम मूल आरोग्यता ही है।

शरीरं धर्म सर्वस्वं रक्षणीयं प्रयत्नतः।
शरीरात् सूयते धर्मः पर्वतात् सलिलं यथा॥

शरीर धर्म का सर्वस्व है। इसकी प्रयत्न पूर्वक रक्षा करनी चाहिये।

गृह्यसूत्रों में केशान्त और गोदान

१. एवं गोदानमन्यस्मिन्नपि नक्षत्रे षोडशे वर्षे॥ १२॥

आपस्तम्ब गृह्यसूत्र छटे पटल का १६वां खण्ड,

रोहिणी आदि नक्षत्र में तथा सोलहवें वर्ष में केशान्त संस्कार भी कर्त्तव्य है॥१२॥

२. एतावन्नाना सर्वान्केशान्वापयते॥ १५॥

आपस्तम्व गृह्यसूत्र छटे पटल का सोलहवां खण्ड,

इस गोदान (केशान्त) कर्म में चूड़ाकर्म (मुण्डन संस्कार) से इतना भेद है कि चौल कर्म (मुण्डन संस्कार) में शिखा छेकी जाती है और गोदान (केशान्त) में शिखा सहित सब केश मुंड़ाये जाते हैं॥ १५॥

(भाषा-टीका श्री पं० भीमसेन जी "ब्राह्मण सर्वस्व" मासिक-पत्र के सम्पादक)

३. सलोमं वापयेत॥२॥ स्पष्टम्

खादिर गृह्यसूत्र पटल २ खण्ड ५ रुद्रस्कन्दीय वृत्तिसहितम्,

ब्रह्मचारी जब केशों को कटवावे उस समय कक्ष, वक्ष, उपस्थ और शिखा तक के रोमों को कटवावे॥२॥

(भाषा टीका—उदय नारायण सिंह जी)

४. षोडशे वर्षे गोदानम्॥ १॥
चूड़ा करणेन् केशान्तकरणं व्याख्यातम्॥ २॥
ब्रह्मचारी केशान्तान् कारयते सर्वाण्यङ्ग लोमानि संहारयते॥ ३-४॥

संस्कृत टीका—

ब्रह्मचारी ब्रह्मवेदः तद् ग्रहणाचारविशिष्ठः आद्याश्रमी यदैव केशान्तान् कारयते, तदैव सर्वाणि अङ्ग लोमानि संहारयते "कक्ष वक्षोपस्थ शिखा" केशानपि बापयेदित्यर्थं॥३-४॥

भाषा-टीका—ब्रह्मचारी अर्थात् वेदाध्ययनाचार युक्त आद्याश्रमी जिस समय केश कटावे उस समय कक्ष (वगल) वक्ष (छाती) उपस्थ (लिङ्ग) और शिखा पर्यन्त के लोम कटावे॥ ३-४॥

(श्री पं० सत्यव्रत सामश्रमी द्वारा संस्कृत व्याख्या तथा भाषा टीका श्री उदयनारायण सिंह जी की)

यह सात प्रमाण स्मृतियों के ३ ग्रह्यसूत्रों के और १ वेद का ये ग्यारह प्रमाण चोटी कटाने के अकाट्य हैं। आश्चर्य और दुःख यह है कि आप पढ़ते तो कुछ है नहीं और शास्त्रार्थ करने खड़े हो जाते हैं।

पण्डित जी महाराज ! धन्यवाद दीजिये इन वेचारे सनातन धर्मियों को जो आपके परास्त हो जाने पर भी आपको भरपूर दक्षिणा दे देते हैं । सुनिये—

"शरीर धर्म का सर्वस्व है, इसकी प्रयत्नपूर्वक रक्षा करनी चाहिये"— यह मैंने कहा है ।

और शरीर से धर्म ऐसे उत्पन्न होता है जैसे पर्वत से पानी ।

देश भङ्गे प्रवासे च व्याधिषु व्यसनेष्वपि ।
रक्षेद्देव स्वदेहादि पश्चाद्धर्मं समाचरेत् ॥

देश के उपद्रवों में, परदेश में, रोग में और व्यसनों में मनुष्य अपने शरीर आदि की रक्षा कर ले ।

पश्चात् देश-काल और स्थिति ठीक होने पर पुनः धर्माचरण करने लगे ।

केशान्त संस्कार की विधि है और अति उष्ण देश होना विशेष कारण है। सरसाम (पागलपन) आदि रोग भी विशेष कारण चोटी सहित बाल कटाने के कभी हो सकते हैं। बाल तो परमेश्वर की उगाई खेती है। फिर आ जायेंगे ।

वेद का प्रमाण तो पंडित जी महाराज आपको देना चाहिये, कि अमुक मन्त्र में कहा गया है कि कभी भी किसी दशा में भी चोटी नहीं कटानी चाहिये । जब तक ऐसा मन्त्र न दिखायें तब तक वेद विरुद्ध बताने का साहस—दुस्साहस मात्र है ।

आप तो वेद मन्त्र के प्रमाण नहीं दे सकते । मैं दे सकता हूं, लीजिये वेदमन्त्र भी लीजिये—

"यत्र बाणा सम्पतन्ति कुमारा विशिखा इव"

यजुर्वेद अध्याय ३७ मन्त्र ४८,

"विशिखा" का अर्थ आपके आचार्य उव्वट ने किया है, "विगत शिखा सर्वमुण्डा" चोटी सहित सारा शिर मुंडा हुआ ।

और आपके आचार्य महीधर जी इसी मन्त्र में आये "विशिखा" शब्द का अर्थ करते हैं—

"कुमारा विशिखा इव विगता शिखा येषां ते विशिखाः शिखारहिता मुण्डित मुण्डा"

जिसकी चोटी कटी है जो शिखा रहित है, मुण्डा हुआ शिर चोटी कटाने के ये ग्यारह प्रमाण हुए । बारहवां और लीजिये—

देवी भागवत पुराण में कहा है कि—श्री कृष्ण जी शिर घुटाकर मुण्डी दण्डी हो गये । पुत्र की कामना से उग्र तप किया तथा फलाहार पर ही रहे । देखिये—

जग्राह पुत्र कामस्तु मुण्डी दण्डी बभूव ह ।
उग्र तत्र तपस्तेपे मासमेकं फलाशनः ॥ ३१ ॥

देवी भागवत् पुराण स्कन्द ४ अध्याय २५ श्लोक ३१,

पण्डित माधवाचार्य जी शास्त्री

सज्जनों ! श्री ठाकुर जी ने यह जो मनुस्मृति का प्रमाण दिया है, "मुण्डोवा जटिलोवा···" आदि यह संन्यासी के लिए है । संन्यासी को चोटी कटाने का यहां विधान है । अन्य स्मृतियों में मुण्डन संस्कार के समय एक बार शिखा सहित बाल कटाकर फिर दूसरी बार चोटी रखावे । तथा चोटी कटाने के जितने भी स्मृतियों के प्रमाण दिये हैं यह सब मुण्डन संस्कार के हैं । और हां ! अरे ! स्त्रियों के बालों का क्या होगा ?

ठाकुर अमर सिंह जी शास्त्रार्थ केशरी

पण्डित जी महाराज ! ऐसा घोर अनर्थ मत कीजिये ! कुछ इन भोले-भोले सनातन धर्मियों के लिए पढ़ लिया करिये ! मनुस्मृति में बिलकुल साफ लिखा है—अगर आपको नहीं पता तो बराबर में बैठे अपने साथी श्री पं० अखिलानन्द कविरत्न जी से ही पूछ लो, तो पता लग जावेगा, वहाँ कहा है कि—

"मुण्डोवा जटिलो वा अथवा,स्यात् शिखाजटः" ॥२२६॥

मनुस्मृति अध्याय २ श्लोक २१६,

अर्थात् सारा शिर मुंड़ाना, जटायें रखना, या चोटी रखना ये तीन विकल्प हैं। दूसरे अध्याय में प्रकरण ब्रह्मचर्य का है संन्यास का नहीं। मनुस्मृति नहीं पढ़ी है तो "शिखा जट" शब्द तो अभी सुना है मुण्डित और जटाजूट संन्यासी तो चाहे मिल भी जाये, शिखाजट चोटी वाले संन्यासी कौन से और कहाँ होते हैं ?

धन्य हो महाराज आपकी बुद्धि को।

स्त्रियों के बालों की आपको बहुत चिन्ता है। पर आपको ध्यान होना चाहिए कि, अनेक रोगों में डाक्टर और वैद्य स्त्रियों के भी बालों को काट और कटवा देते हैं। यह तो देश, काल, पात्र और कारण या अवस्था विशेष की व्यवस्था है। स्वामी जी चोटी को आवश्यक मानते हैं। स्वामी जी के लेख को समझने की कोशिश करिये !

पण्डित माधवाचार्य जी शास्त्री

सत्यार्थ प्रकाश में स्वामी जी ने लिखा है कि बच्चे को छः दिन तक माता दूध पिलाये, पश्चात् धाया ही दूध पिलाया करे। स्वामी जी का यह लेख वेद विरुद्ध है। और ईसाई मत का प्रचार है। दिखाइये वेद में कहाँ है कि—धाया दूध पिलाया करे। और माता छः दिन ही दूध पिलावे।

ठाकुर अमर सिंह जी शास्त्रार्थ केशरी

सज्जनों ! पं० जी सत्यार्थ प्रकाश के वेद विरुद्ध सिद्ध करने के लिए बड़े-बड़े भारी प्रश्न ढूंढ़कर लाये हैं। बस ! आपने प्रश्न कर दिया कि, धाया दूध पिलाये, यह किस वेद में है, वाह ! वाह !! पण्डित जी आप समझते है कि इस प्रश्न के करने से ही सत्यार्थ प्रकाश वेद विरुद्ध सिद्ध हो गया। क्या खूब ! अजी !! देवता जी, कोई वेद का मन्त्र तो बोलिये जिसके यह विरुद्ध हो। यदि आप वेद में इसके विरुद्ध मन्त्र नहीं दिखला सकते हैं तो यह वेद विरुद्ध नहीं बल्कि वेदानुकूल ही है।

अच्छा ! भला यह तो बताइये कि—स्वामी जी ने सत्यार्थ प्रकाश में यह कहाँ लिखा है कि, जो माता छैः दिन के बाद भी दूध पिलायेगी वह घोर नरक में जायेगी। और जो पिता धायी का प्रबन्ध नहीं करेंगे तो—

"शूद्रवत् बहिष्कार्यः सर्वस्मात् द्विज कर्मणः"

उनको शूद्र की भांति सर्व ब्राह्मण, क्षत्रिय, वैश्यों के कार्यों से निकाल देना चाहिए। यह कहां लिखा है दिखाइये, ये तो साधारण स्वास्थ्य के नियम हैं स्त्री बच्चे को दूध पिलायेगी. तो दुर्बल रहेगी, नहीं पिलायेगी तो शीघ्र स्वस्थ हो जायेगी, यह तो प्रत्यक्ष है, तथा बुद्धि के अनुकूल है। अगर आप इसमें भी प्रमाण की आवश्यकता समझते हैं तो फिर लीजिये, मेरे पास तो प्रमाणों का भण्डार है। प्रमाण पर प्रमाण लेते जाईये। और पण्डित जी महाराज नोट करते जाइये—

चरक संहिता के शारीरिक स्थान में लिखा है कि—

अतो धात्री परीक्षा मुपदेक्ष्यामः ॥१०६॥

अथ ब्रूयाद्धात्रीमानयेति, समान वर्णां यौवनस्थां निभृताम् नातुरामव्यङ्गामव्यसनामविरूपा अजुगुप्सितां देश जातीयामक्षुद्रकर्मिणीं कुले जातां वत्सलामरोग जीवद्वत्सां पुंवत्सां द्रोग्ध्रीमप्रमत्ता मशायिनीमनुच्चारशायिनीमनन्ता शायिनी कुशलोपचारां शुचिमशुचिद्वेषिणीं स्तन्य सम्पद येतामिति ॥१०७॥

चरक संहिता शारीरिक स्थान अध्याय ८ वाक्य १०६, १०७,

अर्थ भी सुनिये—

जिससे यह भोली जनता जो बैठी हुई है यह भी अच्छी तरह समझ ले कि हाँ ! सच्चाई क्या है ? और आप भी ध्यान दीजिये पंडित जी महाराज ! अब धात्री की परीक्षा का वर्णन करते हैं ॥१०६॥

"इसके अन्नतर एक मनुष्य को कहे कि, धात्री (धायी) को लाओ, वह धात्री अपने समान वर्ण की हो, युवा हो, अयोग्य न हो, रोग रहित हो । सर्वाङ्ग सम्पन्न हो कुरूप और कुचरित्र न हो ।

निन्दनीय न हो, अपने देश की हो, नीच न हो उत्तम स्वभाव और उत्तम कर्म वाली हो, अच्छे कुल की और बालक को प्यार करने वाली हो, जिसके अपने बच्चे जीते हों अर्थात् (मृत वत्सा) न हो, और लड़के वाली हो जिसके स्तनों में बहुत सा दूध हो, असावधान न हो, बहुत सोने वाली न हो, तथा बिना कहे कहीं एकान्त में सोने वाली न हो, जाति से पतित न हो, चतुर उत्तम आचार वाली हो, पवित्र हो, अपवित्रता से द्वेष करने वाली हो । जिसका दूध उत्तम हो, ऐसे गुणों वाली धात्री (धायी) उत्तम होती है ॥१०७॥

टीकाः—श्री वैद्य पंचानन वैद्यराज पं० रामप्रसाद जी वैद्योपाध्याय आयुर्वेदोद्धारक पटियाला स्टेट ।

(छापा वेंक्टेश्वर प्रैस बम्बई)

आगे आप वाक्य १०८ तथा ११४ में देखिये कि—"धायी के स्तन कैसे हों तथा उसके खान-पान के बारे में पूर्ण विवरण सहित दिया गया है।

इसी प्रकार सुश्रुत शारीर स्थान अध्याय १० वाक्य ४० से ४६ तक ।

ततो यथा वर्णां धात्रीमुपेयान्मध्यप्रमाणां मध्यम् वयसमरोगां शीलवतीमचपलंलमलोलुपामकृशामस्थूलां प्रसन्न श्री रामलम्बौण्डी मलम्बोस्तनी मव्यंगा मव्यसनिनीं जीवद्वत्सां दोग्ध्रीं वत्सलामक्षुद्र कर्मिणी कुले जातामतो भूयिष्ठैष्च गुणैरन्वितां श्यामा मारोग्य बल वृद्धये बालस्य ॥३८॥

ततोर्ध्वस्तनी करालं कुयति लम्बस्तनी नासिका मुखं छादयित्वा मरणमापादयेत् ॥३९॥

टीकाः—आरोग्य सुधाकर सम्पादक फ़र्रुखनगर निवासी पं० मुरलीधर शर्मा राजवैद्य कृत, छापाखाना, वेंक्टेश्वर प्रैस, बम्बई संम्वत् १९६८,

यह तो दो प्रमाण हुए आयुर्वेद के, पण्डित जी महाराज ! अब आप अपना भी घर देखिये—

शालि तण्डुल चूर्णं तु सदुग्धं दुग्ध कृद्भवेत् ॥१२॥
विदारी कन्द स्वरसं मूलं कार्पासजं तथा ।
धात्री स्तन्य विशुध्यर्थं मुद्गयूष रसाशिनी ॥१३॥

स्तन्याभावेपयश्छागं गव्यं वा तद्गुण पिबेत् ॥१५॥

गरुड पुराण पूर्व खण्ड आचार काण्ड अध्याय १७२, श्लोक १२ १३, १५, "वेंकटेश्वर प्रेस बम्बई पृष्ठ ११२ संम्वत् १९६३"

अर्थ—शालि चावलों का चूर्ण (आटा) दूध के साथ पीने से दूध बढ़ाने वाला होता है ॥१२॥

विदारीकन्द का स्वरस और कपास की जड़ तथा मूंग का यूष यह धायी के दूध को शुद्ध करने के लिए ॥१६॥

धायी का दूध न मिलने पर बकरी या गाय का दूध उसी गुण वाला पिये ॥१५॥

इसके साथ सत्यार्थ प्रकाश का लेख पढ़िये—

"प्रसूता का दूध छः दिन तक बालक को पिलावे, पश्चात् धायी पिलाया करे, परन्तु धायी को उत्तम पदार्थों का खान-पान माता-पिता करावें, जो कोई दरिद्र हो, धायी को न रख सके तो वे गाय या बकरी के दूध में उत्तम औषधि जो कि बुद्धि, पराक्रम, आरोग्य करने हारी हो, उनको शुद्ध जल में भिजो, औटा, छान के दूध के समान जल मिला के बालक को पिलावें"

.........और जहां धायी गाय, बकरी आदि का दूध न मिल सके, वहां जैसा उचित समझे वैसा करे। क्योंकि, प्रसूता स्त्री के शरीर के अंश से बालक का शरीर होता है, इसी से स्त्री प्रसव समय निर्बल हो जाती है इसलिए प्रसूता स्त्री दूध न पिलावे।

"सत्यार्थ प्रकाश समुल्लास-२"

हर बात के लिए वेद का प्रमाण माँगना अपने वेद विषयक अज्ञान का परिचय देना है। वेद में मूल विधान होता है, न कि वेद में जीवन भर क्या-क्या कैसे-कैसे करना क्या-क्या, कब-कब खाना क्या-क्या पहनना सर्व दैनिक व्यवहार होते हैं।

बड़ा आश्चर्य है कि—आप शास्त्रार्थ तो इस विषय पर करते हैं कि क्या-क्या वेद विरुद्ध है। पर यह बिल्कुल नहीं जानते हैं कि, वेद विरुद्ध और वेदानुकूल का लक्षण क्या है। वेदानुकूल किसे कहते हैं? तथा वेद विरुद्ध किसे कहते हैं? महाराज जी! भगवान जैमिनि जी मीमांसा दर्शन में कहते हैं कि—

"विरोधे त्वनपेक्ष्यं स्यादसति ह्यनुमानम्"

जिसका वेद में विरोध (निषेध) हैं, वह तो अनपेक्ष्य वेद विरुद्ध है, वेद में विरोधी वचन न होने पर वेदानुकूल है।

में पूछता हूं कि क्या वेद में आप ऐसा वचन बता सकते हैं कि, जिसमें धायी दूध न पिलावे या माता ही सदा दूध पिलाया करे, ऐसा कहा गया हो।

मेरा दावा है आप कभी ऐसा वचन नहीं दिखा सकते। फिर धाया के दूध पिलाने को वेद विरुद्ध कहने का साहस आप किस प्रकार करते हैं?

हम यदि एक प्रमाण भी वेद का इस विषय पर न बता सकें तो भी यह इसलिए वेदानुकूल है कि इसके विरुद्ध वेद में एक भी वचन नहीं है। इसी अवस्था में यह वेद के अविरुद्ध है। न कि विरुद्ध। यह और भी महत्व की बात है कि वेद में भी इसके पोषक प्रमाण हैं। सुनिये—

नक्तोषासा स मनसा विरूपे धापयेते शिशुमेकं समीची ॥२॥

यजुर्वेद अध्याय १२ मन्त्र २,

इस मन्त्र में उपमालंकार द्वारा बतलाया गया है कि दो भिन्न-भिन्न रूपों वाली, मन से एक बालक को अच्छे प्रकार दूध पिलाती हैं, दो दूध पिलाने वाली कौन है ? माता और धाया ! इसी प्रकार यजुर्वेद अध्याय १७ मन्त्र ७० और ऋग्वेद मण्डल १ सूक्त ९६ मन्त्र ५, तथा अथर्व वेद में भी है। एवं वाल्मीकीय रामायण में भी है कि श्री रामचन्द्र जी की धाया थी। देखिये—

साहर्षोत्फुल्ल नयनां पांडुर—क्षौम वासिनीम् ।
अविदूरे स्थितां द्रष्ट्वा धात्री प्रप्रच्छ मन्थरा ॥७॥
विदीर्यमाना हर्षेण धात्री तु परया मुदा ।
आचचक्षेऽथ कुब्जायै भूयसी राघवे श्रियम् ॥१०॥

वाल्मिकीय रामायण अयोध्या कांड, श्लोक ७ व १०,

मन्थरा ने पास में खड़ी हर्ष से फूले नयनों वाली श्वेत रेशमी वस्त्र पहिने हुई धायी को देखकर पूछा ॥७॥

हर्ष से विदीर्यमान धायी ने बड़ी प्रसन्नता से कुबड़ी को राम के राज्याभिषेक का प्रस्ताव बताया। राजा सृंजय का पुत्र धायी के साथ गंगा के तीर पर खेलता था। देखो महाभारत—

ततो भागीरथी तीरे कदाचिन्निर्जने वने ।
धात्री द्वितीयो बाल स क्रीड़ार्थं पर्यधावत ॥३१॥

महाभारत शान्ति पर्व अध्याय ३१ श्लोक ३१,

पण्डित माधवाचार्य जी शास्त्री

अरे ! ठाकुर साहब, माता छः दिन ही दूध पिलाये, और छः दिन के पीछे धायी दूध पिलावे, इसका प्रमाण दीजिये ? बस !

ठाकुर अमर सिंह जी शास्त्रार्थ केशरी

हर्ष है कि आपने धायी का दूध पिलाना तो स्वीकार कर लिया। अब प्रश्न केवल आपका यह शेष है कि—छः दिन माता दूध पिलावे, इसके पीछे धायी। इसका प्रमाण दिया जावे। मैं कहता हूं आपकी क्या राय है। धायी कब से दूध पिलावे। एक दिन के पीछे या १०-१५-२० कितने दिन पीछे, जो सीमा आप बांधेंगे उस पर भी वही प्रश्न होगा, कि इतने दिन क्यों ?

पण्डित जी महाराज लोक व्यवहार में भी छः दिन ही माता का दूध पिलावे यह परम्परा बहुत पुराने काल से क्या सदा से चली आयी प्रतीत होती है।

तभी तो बातों बातों में सदा कहा जाता है। कि तुमको छटी का दूध याद आ जायेगा। छटी के दूध का विशेष महत्व यही है कि, माता का यह अन्तिम दूध है।

इसके पीछे माता का दूध नहीं मिलता। हां ! निर्धन के लिए यह व्यवस्था है कि, गाय का या बकरी का दूध पिलावे, अगर यह भी न हो सके तो जैसा हो सके वैसा करे अर्थात् माता ही पिलावे !

ये सामान्य व्यवहार की बातें हैं। जो लाभदायक और युक्ति-युक्त हैं, ये कोई सिद्धान्त नहीं है। जैसे सन्ध्या न करने से शूद्र हो जाता है। वेदों को न पढ़ने से द्विज बनने पर भी शूद्र हो जाता है। ऐसा नियम यहाँ तो नहीं है कि, जो धायी का दूध न पियेगा, शूद्र हो जायेगा या जो माता-पिता धायी का प्रवन्ध न करेंगे, तो वे शूद्र हो जावेंगे, या नरक में जावेंगे। आप सिद्धान्तों पर तो प्रश्न कर नहीं सकते, छोटी-छोटी बातें पूछते है, बाल उखाड़ने से शरीर हलका नहीं हो जाता! पण्डित जी महाराज !!

पण्डित माधवाचार्य जी शास्त्री

स्वामी दयानन्द जी ने सत्यार्थ प्रकाश में लिखा है कि कोई पुरुष मर जाय तो उसकी पत्नी पहिले नियोग कर ले, पीछे उसकी लाश को जलावे। वहां स्पष्ट है कि, लाश पड़ी हुई है। इस मरे हुए पति की लाश को छोड़कर हे स्त्री तू हम जीवितों में से किसी को छाँट कर उससे नियोग कर ले, उधर मरे हुए के पास उसके घर के सारे रो-पीट रहे हैं, और स्वामी जी इधर नियोग की आज्ञा दे रहे हैं। इस पर कोई वेद का प्रमाण दीजिये।

ठाकुर अमर सिंह जी शास्त्रार्थ केशरी

सज्जनों! हद हो गयी, असत्य की कोई सीमा नहीं रही, पण्डित जी महाराज! यह लीजिये सत्यार्थ प्रकाश, और दिखलाइये इसमें कहां लिखा है, कि लाश पड़ी हुई है, इसको छोड़कर नियोग कर लें।

लाश पीछे जलायी जावे, इतना सफेद झूठ! देखो महाराज जी! यदि आप यह सत्यार्थ प्रकाश में लिखा दिखला दें कि "लाश पड़ी हुई है" तो मैं यहीं सनातन धर्मी होने को तैयार हूं। अगर न दिखा सके तो आप आर्य समाजी बनने की घोषणा कर दें। वैसे हम आपको आर्य बनाने को तैयार नहीं है। हम चाहते हैं कि आप जो कुछ हैं वही रहे आवें, ताकि हमको आपके द्वारा आर्य सिद्धान्तों के प्रचार का शुभ अवसर मिलता रहे।

पण्डित जी आपको शास्त्रार्थ से पहले मैं बार-बार चैलेञ्ज कर रहा था, कि आप नियोग पर ही शास्त्रार्थ कर लीजिये, क्योंकि नियोग पर आप प्रश्न करेंगे अवश्य ही। इस लिए सीधे आज उसी पर निपट लें, नियोग पर शास्त्रार्थ करने का आपका साहस न हुआ, अब और प्रश्नों की आड़ में नियोग पर ईंटें फेंक रहे हैं। आप आये तो वहीं पर हां! आये चोर द्वार से।

आपके प्रश्न से पता चलता है, कि नियोग पर अपको कोई एतराज नहीं है। एतराज आपको यह है कि लाश पड़ी हुई के सामने नियोग नहीं करना चाहिये।

क्योंकि पौराणिक मत में मरा हुआ आ जा भी सकता है, खा भी सकता है।

आपके विचार में उसके देखते-देखते नियोग नहीं करना चाहिये।

पीछे तो होना चाहिए। इस पर आपको कोई आपत्ति नहीं है। जो आपत्ति आप उठा रहे हैं वह उठ नहीं सकती।

क्योंकि-सत्यार्थ प्रकाश में ऐसा लेख है ही नहीं, हां लाश पड़ी हुई होने पर नियोग या पुर्नविवाह की आज्ञा श्री सायणाचार्य जी ने इस मन्त्र के भाष्य में दी है। वह आपके माननीय आचार्य तथा गुरु हैं। उनका भाष्य यह है।

सुनिये और ध्यान दीजिये—

हे नारि! त्वं इतासुं गत प्राणं एतं पतिं उपशेषे उपेत्य शयनं करोषि उदीर्ष्व अस्मात् पति समीपादुत्तिष्ठ जीवलोकमभि जीवन्तं प्राणि समूहमभि लक्ष्य एहि आगच्छ त्वं हस्त ग्राभस्य पाणिग्राहवतः दिधिषो पुर्नविवाहेच्छोः पत्युः एतत् जनित्वं जायात्वं अभि सम्बभूव आभि मुख्येन प्राप्नुहि।।

उदीर्ष्व नारी······आदि मन्त्र का ही यह सायण भाष्य है। इसी मन्त्र पर स्वामी दयानन्द जी ने लिखा है। देखिये सायण लिखते है कि—हे नारि ! तू इस मरे हुए पति के समीप सो रही है। इसके पास से उठ और इन जीवित पुरुषों को देखकर आ।

जो इनमें, पुर्नविवाह की इच्छा करने वाला हो, उसकी पत्नी बन, कहिये लाश पड़ी हुई सायण जी ने लिखी है या स्वामी दयानन्द जी ने ? तथा बताइये स्वामी जी ने लाश पड़ी हुई, कहां लिखा है ?

पण्डित माधवाचार्य जी शास्त्री

"एतम्" शब्द है उसका यही अर्थ है, "इस" इससे यही पता लगता है कि, लाश वहीं पड़ी हुई है।

"एतम्" शब्द तो वेद का है स्वामी दयानन्द जी का नहीं, यह तो वैसा ही आपके लिए भी प्रामाणिक है जैसा हमारे लिए है। फिर ऋषि दयानन्द जी के लेख पर प्रश्न न होकर यह आपका प्रश्न वेद पर हुआ। यदि "एतम्" का अर्थ यही है। इस मरे हुए पति की लाश, तो यह आज्ञा वेद की हुई। स्वामी दयानन्द जी की नहीं।

कहिये वेद को भी तिलाञ्जली दे दी ? सत्यार्थ प्रकाश छोड़कर अब वेद पर ऐतराज करने लगे, तो लीजिये इसका उत्तर यह है कि—बहुत पुराना भी कोई प्रसंग उपस्थित हो तो, उसके लिए, भी "इस" शब्द का "एतम्" का प्रयोग होता है। वहां यह वाक्य होगा कि—जिस मरे हुए के लिए तू वर्षों से रो रही है, इसकी आशा छोड़। यह है वेद के "एतम्" शब्द पर जो आपने प्रश्न उठाया है उसका उत्तर। आप वेद पर भी चाहे जितने प्रश्न करिये, में उत्तर दूंगा। नियोग पर तो आप शास्त्रार्थ करने से डरते हैं। परदे में आ-आकर उस पर प्रश्न करते हैं। देखिये इस "उदीर्ष्वनारि" मन्त्र का विनियोग शौनक ऋषि के ऋग्विधान में नियोग के लिए ही है।

इस मन्त्र पर मैं और भी अनेक प्रमाण दे सकता हूं कि—यह मन्त्र नियोग का ही विधान करता है। पर आप तो नियोग के विरुद्ध कुछ कहते ही नहीं हैं। आपको तो एतराज सिर्फ इस पर है कि—नियोग लाश के पड़े रहते नहीं करना चाहिये। उसको भस्म करने के पश्चात् करना चाहिए। ऐसी जल्दी भी क्या ? इसमें मैं भी आपसे सहमत हूं। तथा महर्षि दयानन्द जी भी।

पण्डित माधवाचार्य जी शास्त्री

गर्भिणी स्त्री से न रहा जाय तो नियोग कर ले, स्वामी दयानन्द जी ने सत्यार्थ प्रकाश में लिखा है कि—जिस समय स्त्री गर्भवती हो उस समय उसके पति से न रहा जाये तो वह किसी और स्त्री से नियोग करके सन्तान उत्पन्न कर दे। यह कैसी गन्दी शिक्षा है। क्या यह वेद के अनुकूल हो सकती है। और कोई इसे मान सकता है ?

ठाकुर अमर सिंह जी शास्त्रार्थ केशरी

प्रत्येक प्रश्न पर यह पता लगता है कि—श्री पं० माधवाचार्य जी को नियोग पर कुछ भी ऐतराज नहीं है। नियोग को तो वह वेदादि सत्य शास्त्रों के सर्वथा अनुकूल मानते हैं। आपका अभिप्राय स्पष्ट है कि—नियोग तो हो, पर श्री व्यास जी जैसे पुरुष करें। जिनकी पत्नी न हो, व्यास जी ने चित्राङ्गद और विचित्र वीर्य की पत्नियों अम्बिका और अम्बालिका से सत्यवती और भीष्म जी की इच्छानुसार नियोग करके धृतराष्ट्र और पाण्डु को उत्पन्न किया ऐसे तो नियोग अवश्य हो, उन्होंने दासी से नियोग करके विदुर जी को भी उत्पन्न किया, पर गर्भिणी स्त्री का पति नियोग क्यों करे। यह पं० जी का प्रश्न है, मेरा निवेदन यह है कि, स्वामी जी महाराज का भी अभिप्राय वहां नियोग को सिद्ध

करना नहीं हैं महाराज का अभिप्राय यह है कि गर्भिणी स्त्री के साथ कभी किसी अवस्था में भी किसी पुरुष को मैथुन नहीं करना चाहिए। गर्भिणी स्त्री के साथ मैथुन करने से गर्भ के गिर जाने का भी भय होता है। तथा बालक के व्यभिचारी होने की भी पूरी सम्भावना है कि—वह उत्पन्न होकर और बड़ा होकर दुराचारी हो। गर्भिणी स्त्री के साथ किसी को कभी भी मैथुन नहीं करना चाहिए।

जब गर्भिणी स्त्री के साथ समागम का निषेध हो गया, तो स्वाभाविक रूप में प्रश्न उत्पन्न हुआ कि, गर्भवती स्त्री के साथ समागम न करे पर न रहा जाये तो क्या करे ?

श्री भर्तृहरि जी ने कहा है कि—

मत्तेभ कुम्भ दलने भुविसन्ति शूराः,
केचित् प्रचण्ड मृगराज वधेऽपि दक्षाः।
किन्तु ब्रवीमि वलिनां पुरतः प्रसह्य,
कन्दर्प-दर्प दलने विरलो मनुष्यः ॥५८॥

भर्तृहरि शृंगार शतक श्लोक ५८,

मस्त हाथियों के माथे फोड़ने वाले भी भूमि में शूर हैं। कोई भयंकर शेरों को भी मारने में होशियार हैं, परन्तु काम को वश में करने वाले मनुष्य दुर्लभ हैं। उन्हीं का वचन है कि—

विश्वामित्र पराशर प्रभृतयो वाताम्बु पर्णाशना,
स्तेऽपि स्त्री मुख पंङ्कजं सुललितं दृष्टैव मोहं गताः।
शाल्यन्नं सघृतं पयोदधियुतं भुञ्जन्ति ये मानवा,
स्तेषामिन्द्रियनिग्रहो यदि भवेद्विन्ध्यस्तरेत्सागरम् ॥६५॥

भर्तृहरि शृंगार शतक श्लोक ६५,

विश्वामित्र और पाराशर जैसे ऋषि जो वायु, पानी और पत्ते खाते थे। वे भी स्त्री के मुख कमल को देखकर मोहित हो गये।

विश्वामित्र ने मेनका से प्यार किया तो शकुन्तला उत्पन्न हुई। और पाराशर ने कुंआरी सत्यवती से व्यभिचार किया तो व्यास जी उत्पन्न हुए। जो लोग चावल, घी, दूध, दही, शहद खाते हैं, उनकी इन्द्रियों का निग्रह यदि हो जाये तो विन्ध्याचल पहाड़ समुद्र को तर जाय, भर्तृहरि जी कहते हैं, कि विन्ध्याचल या किसी भी पहाड़ का समुद्र को तरना जैसा असम्भव है, ऐसा ही सामान्य रूप से मनुष्य का "काम" को वश में करना असम्भव है।

योगियों की बात और है। स्वाभाविक रूप से प्रश्न उठता है कि—गर्भवती स्त्री के पति से न रहा जाय तो वह क्या करे ?

स्वामी जी का मत यह है कि—गर्भवती से समागम कदापि न करे। वेश्यागमन भी न करे। अड़ोस-पड़ोस की किसी बहू-बेटी को भी भ्रष्ट करने का पाप न करे।

किसी सन्तानहीन विधवा को ढूंढें, और पंचों की अनुमति से उसके साथ नियोग करके सन्तान उत्पन्न कर दे। गर्भ की रक्षा भी हो गई, और वह पुरुष भी व्यभिचार से बच गया। तथा एक सन्तानहीन और सन्तान चाहने वाली को सन्तान मिल गई। इसमें आपको क्या आपत्ति है ?

आप ही बताइए कि—जो पुरुष ब्रह्मचारी रह जाय वह तो धन्य है। पर जिससे न रहा जाय, जैसा तुम्हारे ऋषियों से न रहा गया तो, फिर वह क्या करे ? आपकी राय क्या है ? गर्भिणी से ही मैथुन करे। गर्भ की कुछ परवाह न करे। या वेश्यागमन करे, या अड़ोस-पड़ोस की बहू-बेटियों को भ्रष्ट करे ? कहिये क्या करे ? वेदों शास्त्रों और इतिहासों में जिस नियोग की स्पष्ट आज्ञा है, उसे न करेगा, तो उसको वही पाप करने पड़ेंगे। आपके पांचवे वेद महाभारत में तो बहुत ही भयंकर बात लिखी है। सो सुनिये—उतथ्य की पत्नी ममता और देवों के गुरु बृहस्पति की कथा—

अथोतथ्य इति ख्यात आसीद्धी मानृषिःपुरा।
ममता नाम तस्यासीद्भार्या परम सम्मता ॥९॥
उतथ्यस्य यवीयांस्तु पुरोधास्त्रि दिवौकसाम्।
बृहस्पतिर्बृहत्तेजा ममतामन्वपद्यत ॥१०॥
उवाच ममता तन्तु देवरं वदतां वरम्।
अन्तर्वत्नि त्वहं भ्राता ज्येष्ठो नारम्यतामिति ॥११॥
अयंच मे महाभाग कुक्षावेव बृहस्पतेः।
औतथ्यो वेद मात्रापि षडंगंम प्रत्यधीयत ॥१२॥
अमोघ रेतास्त्वं चापि द्वयो नस्त्यित्र सम्भवः।
तस्मादेवं गते त्वद्य उपारमितु मर्हसि ॥१३॥
एव मुक्तस्तदा सम्यगबृहस्पति रुधारधीः।
कात्मात्मानं तदात्मानं न शशाक नियच्छितुम् ॥१४॥

महाभारत आदिपर्व अध्याय श्लोक ९ से १४,

अर्थ :—पहिले उतथ्य नाम वाले एक महाबुद्धिमान और प्रसिद्ध ऋषि हुए थे। उनकी ममता नाम वाली स्त्री थी, उस स्त्री के साथ उनका बड़ा प्रेम था ॥९॥ एक दिन उतथ्य ऋषि का महातेजस्वी छोटा भाई बृहस्पति जो देवताओं का गुरु कहलाता है। उसको काम की अभिलाषा हुई, इस कारण वह अपनी भाभी ममता के पास गया ॥१०॥

उस बोलने वालों में श्रेष्ठ अपने देवर बृहस्पति से ममता कहने लगी, कि—हे बृहस्पति ! तुम्हारे बड़े भाई से मुझे गर्भ रह गया है। इस कारण तुम दूर रहो ॥११॥

नोट—इससे पता लगता है कि—वह पहले भी उसके पास जाता होगा। और वह उसको कभी इन्कार नहीं करती होगी।

और हे महाभाग बृहस्पति ! मेरे गर्भ में औतथ्य नाम का पुत्र है। वह गर्भ में ही वेदों को पढ़ा हुआ है ॥१२॥ और हे बृहस्पति ! तुम अमोघ वीर्य वाले हो इस कारण यह एक गर्भ और दूसरे गर्भ को मैं धारण नहीं कर सकूंगी। इस कारण आपको यह काम बन्द रखना चाहिये ॥१३॥ अपनी भाभी के ऐसे उत्तम वचन सुनकर उदार बुद्धि वाले बृहस्पति जी अपने कामातुर मन को वश में नहीं रख सके ॥१४॥

आगे क्या हुआ देखिये :—

स बभूव ततः कामी तया सार्द्धमकामया।
उत्सृजन्तन्तु तं रेतः सगर्भस्थोऽम्य भाषत ॥१५॥
भोस्तात मागमः कामं द्वयोर्न्नास्तीह संभवः।
अल्पावकाशो भगवन् पूर्वं महमिहागतः ॥१६॥

अमोघ रेताश्च भवान्न पीड़ां कर्तुमर्हसि ।
अश्रुत्वैव तुतद्वाक्यं गर्भस्थस्य बृहस्पतिः ॥१७॥
जगाम मैथुनायैव ममतां चारु लोचनाम ।
शुक्रोत्सर्गं ततो बुद्ध्वा तस्या गर्भगतो मुनिः ॥१८॥
पद्भ्यामरो धयन्मार्गं शुक्रस्य च बृहस्पतेः ।
स्थानमप्राप्तमथ तच्छुकं प्रतिहितं तदा ।
पपात सहसा भूमौ ततः क्रुद्धो बृहस्पतिः ॥१९॥

महाभारत आदि पर्व अध्याय १०४, श्लोक १५ से १९,

(टीकाकार श्री पं० रामस्वरूप ऋषिकुमार, सनातन धर्म पताका प्रेस, मुरादाबाद)

और उस स्त्री की इच्छा नहीं थी, तो भी वह उसके साथ समागम करने में तत्पर हुए। और वीर्यपात करने लगे, उस समय गर्भ में का बालक उनसे कहने लगा, कि ॥१५॥ हे तात बृहस्पति जी ! तुम काम व्यापार को त्याग दो, हे भगवन् ! इस गर्भ स्थान में मैं पहले से ही आया हुआ हूं, इस कारण अवकाश भी थोड़ा ही है ॥१६॥ और आपका वीर्य अमोघ है। तथा जिसमें मुझको पीड़ा हो ऐसा काम करना आपको उचित नहीं है। गर्भ में से बालक की इन बातों को कुछ भी न गिनकर बृहस्पति जी ॥१७॥ अपनी सुन्दर नेत्रों वाली भाभी ममता के साथ गमन करने लगे, और वीर्य-पात होना ही चाहता है। यह जानकर गर्भ में बैठे मुनि ने अपने दोनों पैरों से बृहस्पति का वीर्य गिरने के मार्ग को रोक रक्खा, इस प्रकार वीर्य का मार्ग रुक जाने से बृहस्पति का वीर्य गर्भस्थान में न जाकर पृथ्वी पर गिरा। बृहस्पति अपने वीर्य को भूमि पर गिरा हुआ देखकर क्रोध में भर गये ॥१९॥ उस गर्भस्थ बालक को बृहस्पति ने शाप दे दिया कि तू अन्धा उत्पन्न होगा। फलतः वह बालक अन्धा ही जन्मा और उसका नाम दीर्घतमा हुआ जो बाद में एक ऋषि के नाम से विख्यात हुआ।

नोट—उस प्रमाण को जब श्री पंडित अमर सिंह जी महाभारत को हाथ में लेके पढ़कर सुना रहे थे तब श्री माधवाचार्य जी ने शोर मचाया कि—देखिये यह क्या कर रहे हैं ?

श्री पंडित अमर सिंह जी ने गर्जकर कहा—क्यों ऐसा प्रश्न आपने उठाया था ? अब मैं उत्तर देता हूं तो क्यों चीखते हो ? मैं क्या कर रहा हूं ? आपकी पुस्तक पढ़कर सुना रहा हूं। अभी तो आगे देखना क्या सुनाऊंगा।

देखा पंडित जी ! इसलिए ऋषि दयानन्द जी महाराज ने गर्भिणी गमन का निषेध किया है। अब बताइये आपके देवों के गुरु बृहस्पति का ममता गर्भिणी के साथ सनातन धर्म (व्यभिचार) करना ठीक रहा या महर्षि व्यास की भांति किसी सन्तानहीन अर्थात् सन्तान चाहने वाली के साथ नियोग करना अच्छा होता ?

सुनिये महाराजा धृतराष्ट्र ने ऐसा किया भी यथा—

गांधार्यां क्लिश्य मानायामुदरेण च विवर्धता ।
धृतराष्ट्रं महाराजं वश्या पर्यचरत् किल ॥३९॥
तस्मिन् संवत्सरे राजन् धृतराष्ट्रान्महायशाः ।
जज्ञे धीमांस्ततस्तस्यां युयुत्सुः करणो नृपः ॥४०॥

महाभारत आदि पर्व अध्याय ११५ श्लोक ३९, ४०,

अर्थ—गान्धारी कलेश में थी, गर्भ से पेट बहुत वढ़ गया था। तब तक वैश्या (वैश्य की स्त्री) धृतराष्ट्र की सेवा करती थी ॥३६॥ उसी वर्ष में हे राजन् महा यशस्वी धृतराष्ट्र से उस वैश्या में युयुत्सु नामक धृतराष्ट्र का पुत्र हुआ।

धर्म से कहिए पंडित जी ! कि बृहस्पति का काम ठीक है या धृतराष्ट्र का ? यदि पक्षपात छोड़कर सोचेंगे तो अवश्य ही कहना पड़ेगा कि बृहस्पति से गर्भिणी भाभी से सनातन धर्म करना बहुत ही बुरा था। और धृतराष्ट्र अपनी स्त्री गान्धारी को गर्भिणी देखकर वैश्य की पत्नी से नियोग कर लिया। यह उससे लाख गुणा अच्छा है। इसलिए आप को सदा ऋषि दयानन्द जी की बात को मानना चाहिये।

पण्डित माधवाचार्य जी शास्त्री

पति परदेश गया हो तो पत्नी नियोग कर ले, सत्यार्थ प्रकाश में लिखा है कि पति परदेश गया हो तो पत्नी पीछे किसी पुरुष से नियोग कर ले।

देखो स्वामी जी ने कितने अनर्थ की बात लिख दी है। अब पति वेचारा घर से बाहर गया और पत्नी ने नियोग कर लिया, अब बताइये यदि पति लौट कर आ जाये तो वह पत्नी किसकी रहे, और नियोग से सन्तान उत्पन्न हो जाय वह फिर किसकी हो, श्री ठाकुर जी महाराज तो यहां शास्त्रार्थ करने आये हैं। पीछे का डर लग रहा होगा कि—कहीं ठकुरानी जी नियोग न कर लें।

नोट—(यह ठाकुर अमरसिंह जी शास्त्रार्थ महारथी के लिए कहा गया था) इस पर जनता में बड़ी खलबली मची तथा माधवाचार्य को लोग गाली देने लगे, मारो जूते, पीटो, मारो ! मारो !! मारो !!! (कई आदमी पण्डित जी पर जा चढ़े, जिनको बड़ी मुश्किल से रोका गया और बड़ी मुश्किल से शान्ति स्थापित की गई।

ठाकुर अमर सिंह जी शास्त्रार्थ केशरी

पं० जी नियोग पर सीधे प्रश्न या सीधा शास्त्रार्थ नहीं करते हैं। डर है कहीं पोल न खुल जाये। पौराणिक ग्रन्थों में नियोग के सैकड़ों प्रमाण भरे पड़े हैं। इसलिए नियोग पर सीधा शास्त्रार्थ न करके अगल-बगल से छुपी-छुपी चोटें करते हैं।

आपने पूछा है कि—परदेश गये हुए पति की पत्नी नियोग कर लेगी तो जब पति परदेश से आ जायेगा तो वह पत्नी किसकी होगी, और सन्तान किसकी रहेगी ? इस प्रश्न से पता चलता है कि, पंडित जी को यह पता ही नहीं है कि—नियोग है क्या ? इसलिए पहले मैं बताता हूं कि नियोग क्या है ?

देवराद्वा सपिण्डाद्वा स्त्री सम्यङ्नियुक्तया।
प्रजेप्सिताधि गन्तव्या सन्तानस्य परिक्षये ॥५९॥
विधवायां नियुक्तस्तु घृताक्तो वाग्यतो निशि।
एक मुत्पादयेत्पुत्रां न द्वितीयं कथंचन ॥६०॥
द्वितीयमेके प्रजननं मन्यन्ते स्त्रीषुतद्विदः।
अनिर्वृ तं नियोगार्थं पश्यन्तो धर्मतस्तयोः ॥६१॥
विधवायां नियोगार्थे निर्वृ तेतु यथा विधि।
गुरु वच्च स्नुषा वच्च वर्त्तेयातां परस्परम् ॥६२॥

मनुस्मृति अध्याय ९, श्लोक ५९ से ६२

इन्हीं श्लोकों पर कुलूक भट्ट की टीका देखने योग्य है—

देवरादिति ।। सन्तानाभावे स्त्रिया पत्यादि गुरु नियुक्तया देवरादन्यास्माद्वा सपिण्डाद्वक्ष्यमाण घृताक्तादि नियम वत्पुरुष गमनेनेष्ठाः प्रजा उत्पाद पितव्याः ।

ईप्सितेत्यभिधानमर्थात्कार्याक्षम पुत्रोत्यतो पुनर्गमनार्थम् ।।५०।।

विधवामिति ।। विधवामित्य पत्यादि गुरु नियुक्तो घृताक्त सर्वगात्रो मौनी रात्रावेक पुत्रं जनयेत्र कथचि द्वितीयम् ।।६०।।

द्वितीयमिति ।। अन्ये पुनराचार्या नियोगात्पुत्रोत्पादन विधिज्ञा अपुत्र एक पुत्र इति शिष्ट प्रवादाद निष्पन्नं नियोग प्रयोजनं मन्यमानाः स्त्रीषु पुत्रोत्पदानं द्वितीयं धर्मतो मन्यन्ते ।।६१।।

विधवामिति ।। विधवादिकायां नियोग प्रयोजने गर्भधारणे यथा शास्त्रं सम्पन्ने सति ज्येष्ठो भ्राता कनिष्ठ भ्रातृ भार्या च परस्परं गुरुवत्स्नुपावच्च व्यवहरेताम् ।।६२।।

अर्थ—सन्तान के अभाव में से जो पति और गुरु आदि द्वारा नियुक्त की गई है। देवर से या अन्य (सपिंड) पारिवारिक जन से कहे हुए घृत लिप्त शरीर के नियम सहित पुरुष गमन द्वारा इच्छित सन्तान उत्पन्न करनी चाहिये ।।५९।।

विधवा में बड़ों की आज्ञानुसार शरीर में घृत लगा कर मौन रह कर रात्रि में एक पुत्र उत्पन्न करे दूसरा नहीं ।।६०।।

कुछ आचार्य जो नियोग द्वारा पुत्र उत्पन्न करने की विधि को जानते है। वह एक पुत्र को अपुत्र जानते हुए, दूसरा पुत्र उत्पन्न करना भी धर्म मानते हैं ।।६२।।

विधवादि में (विधवा आदि से प्रयोजन यह है कि—विधवा हो चाहे सधवा हो नियोग दोनों में हो सकता है) नियोग प्रयोजन गर्भ धारण यथा शास्त्र पूरा हो जाने पर बड़ा भाई और छोटे भाई की स्त्री दोनों परस्पर "गुरुं वत् स्नुषावत् वर्ते"। अर्थात् छोटे भाई की स्त्री पति के बड़े भाई को गुरु समान समझें, और बड़ा भाई छोटे भाई की पत्नी को पुत्र वधू के समान समझे।

मनुप्रोक्त इस नियोग विधि से नियोग सन्तान के लिए किया जाता है। और गर्भाधान तक ही वह सम्बन्ध रहता है। गर्भाधान के पश्चात वह सम्बन्ध रहता ही नहीं, फिर यह पूछना कि, परदेश से पति के आ जाने पर वह पत्नी किस की रहेगी, यह प्रकट करता है कि—पंडित माधवाचार्य जी ग्रंथों को पढ़ते कभी नहीं हैं।

"येन केन प्रकारेण कुर्यात् सर्वस्य खण्डनम्" ही आपका प्रयोजन है।

"ठाकुर जी शास्त्रार्थ करने आये हैं। ठकुरानी जी पीछे नियोग न कर ले," यह यद्यपि व्यक्तिगत है। तथापि यह वचन भी उनका यही सिद्ध करता है कि, पढ़ते-लिखते यह कुछ भी नहीं है। यह भी कि—सत्यार्थ प्रकाश में यह लिखा है। किसी से सुना है, पढ़ा नहीं। यदि पढ़ा होता तो शास्त्रार्थ को जाने के पीछे नियोग करने की बात आप कदापि न कहते। वहां सत्यार्थ प्रकाश में मनुस्मृति अध्याय-९ श्लोक ७६ का यह प्रमाण दिया है।

प्रोषितो धर्म कार्यार्थं प्रतीक्ष्योऽष्टौनरः समाः।
विद्यार्थं षट यशोऽर्थं वा कामार्थं त्रीस्तु वत्सरान् ।।७६।।

मनुस्मृति अध्याय ९, श्लोक ७६,

इस पर यह लिखा है कि पतिधर्म कार्य के लिए गया हो तो पत्नी उसकी प्रतीक्षा ८ वर्ष तक करे विद्या वा यश के लिए परदेश गया हो तो छः वर्ष और अगर धन कमाने के लिए परदेश गया हो तो, तीन वर्ष प्रतीक्षा करे।

पश्चात नियोग करके सन्तानोत्पत्ति कर ले, कहिए कोई ठाकुर या ब्राह्मण शास्त्रार्थ करने गया हो तो, ठकुरानी या पंडितानी नियोग कर ले, यह किन शब्दों से निकलता है ? यहां तो धर्म कार्यार्थ गये हुए की पत्नी को आठ वर्ष तक प्रतीक्षा करने की आज्ञा हैं। हां आपको भय हो सकता है कि कहीं—पंडितानी नियोग न कर ले। क्योंकि भविष्य पुराण प्रतिसर्ग पर्व ३ अध्याय ३३ में देखें।

वहां एक त्रिपाठी ब्राह्मण की कथा लिखी है। जो केवल दुर्गा सप्तशती का पाठ करने गया था, और उसकी पत्नी ने उसके पीछे एक लकड़ी ढोने वाले निषाद को पांच रुपया देकर उससे सनातनधर्म करवा लिया वह गर्भवती हो गई। देखिये वहां पर लेख इस प्रकार है देखिए—

विक्रमादित्य राज्ये तु द्विजः कश्चिदभूदवि।
व्याध कर्मेति विख्यातो ब्राह्मयां शूद्राणेऽभवत् ॥३॥
त्रिपाठिनो द्विजस्यैव भार्या नाम्नाहि कामिनी।
मैथुनेच्छावती नित्यं मदाघूर्णित लोचना ॥४॥
द्विज स्सप्तशती पाठे वृत्यर्थी क्हिचिद्व्रतः।
ग्रामे देवलके रम्ये बहु वैश्य निषेविते ॥५॥
तत्र मासो गतः कालो नापसौ सस्वमन्दिरम्।
तदा तु कामिनी दुष्टा रूप यौवन संयुता ॥६॥
दृष्ट्वा निषादं सवलं काष्ट भारोपजिविनम्।
तस्मै दत्वा पंचमुद्रा बुभुजे काम पीडिता ॥७॥
तदा गर्भं दधौसाच व्याध वीर्येण संचितम्।
पुत्रोऽभूद्दश मासान्ते जात कर्म पिता करोत् ॥८॥

भविष्य पुराण प्रतिसर्ग पर्व ३, अध्याय ३३, वाक्य ३ से ८,

अर्थ :—विक्रमादित्य के राज्य में एक ब्राह्मण व्याध कर्मा नाम का हुआ जो ब्राह्मणी में शुद्र से उत्पन्न हुआ था ॥ ३ ॥

त्रिपाठी ब्राह्मण की पत्नी नित्य मैथुन की इच्छा रखने वाले मदभरे नेत्रों वाली थी ॥ ४ ॥

ब्राह्मण किसी ग्राम के सुन्दर मंदिर में दुर्गा सप्तशती का पाठ करके कुछ धन कमाने ऐसे ग्राम में गया था, जिस में बहुत धनवान वैश्य रहते थे ॥५॥

एक मास तक वह अपने घर नहीं आया। उस समय उसकी पत्नी जो रूप यौवन सम्पन्ना थी ॥६॥

उसने एक निषाद को देख कर जो बलवान था और लकड़ी ढोकर गुजारा करता था उसको पांच रुपये देकर काम पीड़िता ने भोग कराया ॥७॥

उस समय उसको गर्भ रह गया, जो व्याध के वीर्य से था। दश मास के अन्त में पुत्र हुआ, पिता ने उसका जात कर्म संस्कार किया ॥८॥

यही लड़का बड़ा होकर महाराजा विक्रमादित्य के एक यज्ञ में आचार्य बना था, यही डर पंडित जी को है।

नोट—(इस कथा पर पौराणिक दल बहुत बिलबिलाया) इस पर पं० माधवाचार्य जी ने भी शोर मचाया और कहा—देखिये यह क्या कर रहे हैं ? श्री पं० अमर सिंह जी ने कहा—में कुछ नहीं कर रहा केवल आपकी पुस्तक पढ़कर सुना रहा हूं। पौराणिक दल में से आवाज आई शास्त्रार्थ बन्द कराइये।

पण्डित माधवाचार्य जी शास्त्री

ठाकुर जी महाराज मेरा प्रश्न यह है कि यह कहां लिखा हैं कि, आठ वर्ष, छह वर्ष और तीन वर्ष प्रतीक्षा करके फिर नियोग कर ले, श्लोक में तो यही है कि—इतनी देर प्रतीक्षा करे। इसके पीछें पति के पास चली जाये।

ठाकुर अमर सिंह जी शास्त्रार्थ केशरी

पंडित जी महाराज ! श्लोक में न यह है कि—पति के पास चली जाय, न यह है कि— नियोग कर ले। फिर प्रतीक्षा के पीछे क्या करे। यह प्रश्न अवश्य उठता है। आठ वर्ष की लम्बी प्रतीक्षा नियोग के लिए तो जंचती है। पर पति के पास जाने के लिए किसी अवधि विशेष का नियम आपकी ही समझ में आ सकता है।

प्रतीक्षा किसी और की नहीं, पति के पास आठ वर्ष तक न जाय, आठ वर्ष के पीछे जाय, यह सर्वथा अयुक्ति युक्त है।

प्रतीक्षा के बाद नियोग करले इसके बहुत प्रमाण हैं। यथा नारदीय मनु संहिता—

पत्यौ प्रव्रजिते नष्टे क्लीवेऽथ पतितेमृते।
पांचस्वापत्सु नारीणां पतिरन्यो विधीयते ॥९९॥
अष्टौवर्षाण्युदीक्षेत ब्राह्मणं प्रोषितं पतिम्।
अप्रसूता तु चत्वारि परतोऽन्यं समाश्रयेत् ॥१००॥
क्षत्रिया षट् समस्तिवेदप्रसूता समात्रयम्।
वैश्या प्रसूता चत्वारि द्वे समे अप्रजा वसेत् ॥१०१॥
न च शूद्रायाः स्मृतः कालो न च धर्म व्यतिक्रमः।
विशेषतोऽप्रसूतायाः संवत्सर परा स्थितिः ॥१०२॥
स्त्री पुंस योगो द्वादशं विवाद पदम्।

अर्थ :—पति के संन्यासी होने, पता न लगने, नपुंसक होने पतित होने वा मर जाने इन पांच आपत्तियों मे स्त्री को दूसरे पति का विधान है ॥९॥

ब्राह्मणी परदेश गये पति की आठ वर्ष तक प्रतीक्षा करे। यदि सन्तान उत्पन्न न हुई हो तो चार वर्ष की प्रतीक्षा करे बाद में अन्यथा नियोग का सहारा ले ले।

क्षत्रिय की स्त्री छै: वर्ष प्रतीक्षा करे सन्तान न हुई हो तो तीन वर्ष प्रतीक्षा करे। वैश्य की पत्नी चार वर्ष प्रतीक्षा करे सन्तान न हुई हो तो दो वर्ष प्रतीक्षा करे ॥१०१॥ शूद्र की स्त्री के लिए कोई समय नियम नहीं हैं न धर्म की हानि है। विशेष करके जिसके सन्तान न हुई हो अधिक से अधिक समय उसके लिए एक वर्ष है। इससे अधिक प्रतीक्षा नहीं करनी चाहिए। और नियोग कर लेना चाहिए। इसी प्रकार वसिष्ठ स्मृति अध्याय १७ के श्लोकों में कहा गया है देखिए और ध्यान से सुनिए—

प्रोषित पत्नी पंचवर्षा प्रवसेत् यदि अकामा यथा प्रेतस्य एवं च वर्त्तितव्यं स्यात् ॥६८॥ एवं पंच ब्राह्मणी प्रजाता चत्वारि राजन्या प्रजाता त्रीणी वैश्या प्रजाताद्वे शूद्रा प्रजाता। अत ऊर्ध्वं समानोदक पिंड जन्मर्षिगोत्राणां पूर्वः पूर्वोगरीयान्। न खलु कुलीने विद्यमाने पर गामिनी स्यात् ॥

वसिष्ठ स्मृति अध्याय १७ पृष्ठ ४७९ श्री वेङ्कटेश्वर प्रेस (गुटका) सं. १९६५,

अर्थ--जिसका पति परदेश गया हो वह स्त्री यदि इच्छा को रोक सके तो पांच वर्ष तक प्रतीक्षा करके जैसा मरे पति की स्त्री वर्ताव करती है वैसा बर्ताव करे। इसी प्रकार पांच वर्ष ब्राह्मणी सन्तान वाली, चार वर्ष क्षत्राणी सन्तान वाली, तीन वर्ष वैश्य सन्तान वाली और दो वर्ष शूद्रा सन्तान वाली (प्रतीक्षा में रहे) इसके पीछे अपने निकट सम्बन्धी सपिण्ड, सगोत्र, सजातीय में से पहिला-पहिला अच्छा है। (उससे नियोग कर ले) निश्चय ही कुलीन के विद्यमान होते पराये जाति-गोत्र और कुल वाले के साथ नियोग (गमन) न करे॥ वशिष्ठ स्मृति गुरु ग्रन्थ माला कलकत्ता सँम्वत् २००९ की छपी में इस प्रकार है। सुनिये—

एवं ब्राह्मणी पंच प्रजाता अप्रजाता चत्वारि, राजन्या प्रजाता पंच अप्रजाता त्रीणि।
वैश्या प्रजाता चत्वारि अप्रजाता द्वे, शूद्रा प्रजातात्रीणि अप्रजातै कम्॥६९॥
अत ऊर्ध्वं समानोदकपिण्ड जन्मर्षि गोत्राणां पूर्वः पूर्वो गरीयान्॥७०॥
न तु खलु कुलीने विद्यमाने पर गामिनी स्यात्॥७१॥

वसिष्ठ स्मृति अध्याय १७ पृष्ठ १५१५ स्मृति संदर्भ भाग-३,

अर्थ—इस प्रकार सन्तान जिसके हो चुकी वह ब्राह्मणी पांच जिसके नहीं हुई वह चार क्षत्राणी सन्तान हुई पांच बिना सन्तान तीन, वैश्य की सन्तान हुई चार, बिना हुई दो, शूद्रा सन्तान हुई तीन बिना सन्तान एक वर्ष (पति के परदेश जाने पर प्रतीक्षा में रहे)।

उसके पीछे पति के कुल गोत्र या जाति वाले से नियोग कर ले। पराये कुल गोत्र और जाति वाले से गमन कदापि न करे। इसी प्रकार—कौटिल्य अर्थ शास्त्र में देखिये—

ब्राह्मणमधीयानं दश वर्षाणि अप्रजाता द्वादश प्रजाता राजपुरुष मायुः क्षयादा कांक्षेता॥३०॥

पढ़ने के लिए बाहर गये हुए ब्राह्मणों की स्त्रियां दश वर्ष और सन्तान वाली बारह वर्ष तक पति की प्रतीक्षा करे। यदि कोई व्यक्ति राजा के किसी कार्य के लिए बाहर गये हो तो उनकी स्त्रियां आयु पर्यन्त उनकी प्रतीक्षा करे॥३१॥

सर्वणतश्च प्रजाता नायवादं लभेत॥३१॥

यदि किसी समानवर्ण (ब्राह्मणादि) पुरुष से किसी स्त्री के बालक उत्पन्न हो जाय तो निन्दा को प्राप्त न हो। अर्थात् अपने पति की अनुपस्थिति में दूर देश में गये हुए को पत्नी पति के सवर्ण के साथ नियोग करके सन्तान उत्पन्न कर ले तो वह स्त्री और बालक भी निन्दा और अपमान को प्राप्त न हो॥३१॥

कुटुम्बर्धिलोपे वा सुखातस्थैर्विमुक्ता यथेष्टं विन्देत जीवितार्थम्॥३२॥

कुटुम्ब की सम्पत्ति का नाश होने पर (या कुटुम्ब की वृद्धि रुक जाने पर अर्थात् कोई बच्चा आदि न रहने पर) अथवा समृद्ध बन्धु बान्धवों से छोड़ जाने पर कोई स्त्री जीवन निर्वाह के लिये अपनी इच्छा के अनुसार अन्य विवाह कर सकती है॥३२॥

तीर्थोपरोधो हि धर्मवध इति कौटल्यः॥४२॥

दीर्घप्रवासिनः प्रव्रजितस्य प्रेतस्य वा भार्या सप्ततीर्थान्या कांक्षेत॥४३॥

संवत्सरं प्रजाता॥४४॥ ततः पतिसोदर्यं गच्छेत्॥४५॥

बहुषु प्रत्यासन्नं धार्मिकं भर्मसमर्थं कनिष्ठममार्गं वा॥४६॥

अर्थ—ऋतुकाल का उपरोध होना (ऋतुकाल में पुरुष संगम न होना) धर्म के नाश हो जाने के बराबर है यह कौटल्य आचार्य का मत है ॥४२॥

जो पुरुष सदा के लिये स्त्री से वियुक्त हो गया हो, अर्थात् संन्यासी हो गया हो, या मर गया हो तो उसकी पत्नी सात मासिक धर्मों तक रुके, (अर्थात् इतने समय तक नियोग या पुनर्विवाह न करे)

यदि सन्तान हो तो एक वर्ष तक रुके ॥४४॥ उसके पश्चात् पति के सगे भाई के साथ नियोग या पुनर्विवाह कर ले ॥४५॥

यदि पति के सगे भाई न हों तो उनमें से जो अधिक निकट छोटा भाई हो। अर्थात् पति के और उसके बीच में और कोई भाई न हो) तथा वह धार्मिक और भरण पोषणादि करने में समर्थ हो उसके साथ नियोग वा पुनर्विवाह सम्बन्ध कर लेवे। अथवा पति के जिस भाई के पत्नी न हो उसके साथ नियोग वा पुनर्विवाह सम्बन्ध कर लेवे ॥४६॥

तद्भावेऽप्यसोदर्यं सपिण्डं कुल्यं वासन्नम् ॥४७॥

यदि पति का सगा भाई कोई न हो, तो समान गोत्र वाले उसी के किसी पारिवारिक भाई के साथ नियोग या पुनर्विवाह कर ले ॥४७॥

प्रयोजन यह है कि—पति के जो समीप से समीप सम्बन्ध का भाई हो उसके साथ नियोग या पुनर्विवाह करना ठीक है।

पण्डित माधवाचार्य जी शास्त्री

स्वामी दयानन्द जी ने सत्यार्थ प्रकाश में लिखा है कि—स्त्री योनि संकोचन करे यह स्वामी जी का अपना अनुभव था क्या? यह वेदों में कहां लिखा हैं?

ठाकुर अमर सिंह जी शास्त्रार्थ केशरी

योनि संकोचन का अनुभव तो आपको होगा, स्वामी जी को क्यों होता? वह कोई स्त्री थे? (इस पर हंसी हुई) पण्डित जी महाराज वैद्य और डाक्टर सारी औषधियां स्वयं खा-खाकर देखते हैं क्या? तपेदिक (राजयक्ष्मा) उपदंश (आतशक) आदि रोग पहिले वैद्यों को होते होंगे तब वैद्य उनकी औषधियों का अनुभव करके लिखते होंगे? वाह वाह पण्डित जी आपका भी जवाब नहीं।

महाराज जी! जैसे परमेश्वर बिना अनुभव किये ज्ञान मात्र से सब गुप्त और प्रकट कार्यों का उपदेश देते है। परमेश्वर के भक्त ऋषि-महर्षि भी अपने विशाल ज्ञान से हुआ, हो रहा, और होने वाले (भूत-भविष्यत तथा वर्तमान) का विचार करके शास्त्रों में उल्लेख करते है।

आप अपने ग्रन्थों को भी कभी देखते नहीं, दुःख तो इस बात का है। देखो पुराण में क्या लिखा है:—

शंख पुष्पी वचा मांसी सोम राजी च फलगुकम् ॥६॥
माहिषं नवनीतं च त्वेकी कृत्य भिषग्वरः।
समूलानि स पत्राणि क्षीरेणाज्येन पेषयेत् ॥७॥
गुटिकां शोधितां कृत्वा नारी यौन्यां प्रवेशयेते।
दशवारं प्रसूतापि पुनः कन्या भविष्यति ॥८॥

गरुड पुराण पूर्व खण्ड, आचार काण्ड अध्याय १८० पृष्ठ ११७
श्री वैंकटेश्वर प्रैस बम्बई सं० १९६३ ॥

ये पुराणों में कही गयी औषधियों की गोलियों का प्रयोग किया जावे तो दस बार प्रसूता नारी भी फिर से यौवन को प्राप्त हो जाती है, तो ये दोनों वेचारी एक-एक बार ही प्रसूता हुई हैं, गोलियां रामबाण हैं, आप पण्डित जी अगर इन गोलियों को बनाकर बेचने लगें तो आपको भारी आय हो।

जनता में हंसी.......................

पण्डित जी महाराज ! योनि संकोचन सारे संसार में किया जाता है। बालक उत्पन्न होने के पीछे योरोप में स्त्रियां शराब में बिठाई जाती है अपने देश में सब प्रसूता स्त्रीयां कितने ही दिनों तक शराब में रूई भिगो-भिगो कर योनि में रखती है। आप पण्डितानी जी से पूछकर देख लीजिये। वह अवश्य ही मेरी साक्षी देंगीं।

जनता में हंसी.....................

आपको यदि योनि संकोचन से विरोध ही है तो आप योनि विकास का उपदेश दीजिये, और योनि विकास के उपाय भी अपने अनुभव से बताइये। और "योनि विकास के उपाय" नाम का ग्रन्थ भी लिखकर अपने धर्म प्रैस में छपवाइये, उस पुस्तक को कोई और न लेगा तो सनातन धर्मी तो अवश्य ही लेंगे। सनातन धर्मी भी चाहे आपके लिहाज से आपकी पुस्तक ले ही लें पर योनि संकोचन के विरुद्ध आपकी बात कोई भी नहीं मानेगा यह निश्चय ही जानिये।

नोट--शास्त्रार्थ कराने वाले पौराणिक वैश्य अधिक थे उस समय के सिटी मजिस्ट्रेट भी एक वैश्य थे। किसी धनी ने अपनी मोटर कार भेजकर सिटी मजिस्ट्रेट साहिब को शास्त्रार्थ के पण्डाल में बुला लिया मजिस्ट्रेट साहिब ने सीधा आकर आर्यसमाज के मंचपर श्री पं० अमर सिंह जी को कहा कि—मैं सिटी मजिस्ट्रेट हूं मैं हुक्म देता हूं कि-आप शास्त्रार्थ बन्द कर दीजिये।

श्री पं० ठाकुर अमर सिंह जी ने कहा, कि—सनातन धर्मियों ने प्रश्न किये हैं और मैं उनके उत्तर दे रहा हूं वह आगे प्रश्न न करेंगे तो में उत्तर नहीं दूंगा, अब तो उनके उत्तर दूंगा ही।

मजिस्ट्रेट साहिब ने कहा कि—में उन पण्डितों को अभी कहे देता हूं कि—आगे वह प्रश्न न करें।

ठाकुर अमर सिंह जी शास्त्रार्थ केशरी

मजिस्ट्रेट साहिब ने पं० माधवाचार्य जी को कहा कि—शास्त्रार्थ बन्द कर दीजिये आप आगे प्रश्न न करिये। बस फिर क्या था ? "जान बची और लाखों पाये" वह तो यह चाहते ही थे। अभी पं० ठाकुर अमर सिंह जी उत्तर दे ही रहे थे कि—उसी समय वह अपने पोथियां पत्रे उठाकर भाग गये।

दीना नगर वाले बारहवें शास्त्रार्थ के सम्बन्ध में विशेष वक्तव्य

यह मुबाहिसा श्री महाशय सत्यपाल जी भिक्षु के हाथ का लिखा हुआ गुरु जी की पुरानी फाइलों में पड़ा हुआ था, इसकी कापी करने में बड़ी कठिनाई हुई, पंक्ति-पंक्ति पर गुरु जी से पूछना पड़ा, यह मुबाहिसा है बड़े काम का।

इस मुबाहिसे की कापी इतनी खस्ता हालत में मिली कि कुछ कहा नहीं जा सकता। अक्षर-अक्षर जोड़ने पड़े, तब कहीं जाकर इस मुबाहिसे को लिख पाया।

यह मुबाहिसा इतना आवश्यक एवं दिलचस्प था कि इसका देना बहुत ही आवश्यक हो गया था।

वह मौलवी मोहम्मद अली जन्म का हिन्दु था। जिसके साथ ठाकुर साहिब जी का शास्त्रार्थ हुआ था।

"सम्पादक"
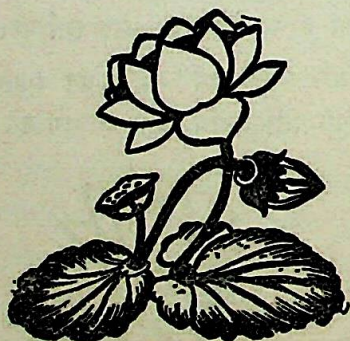
[बारहवां शास्त्रार्थ]
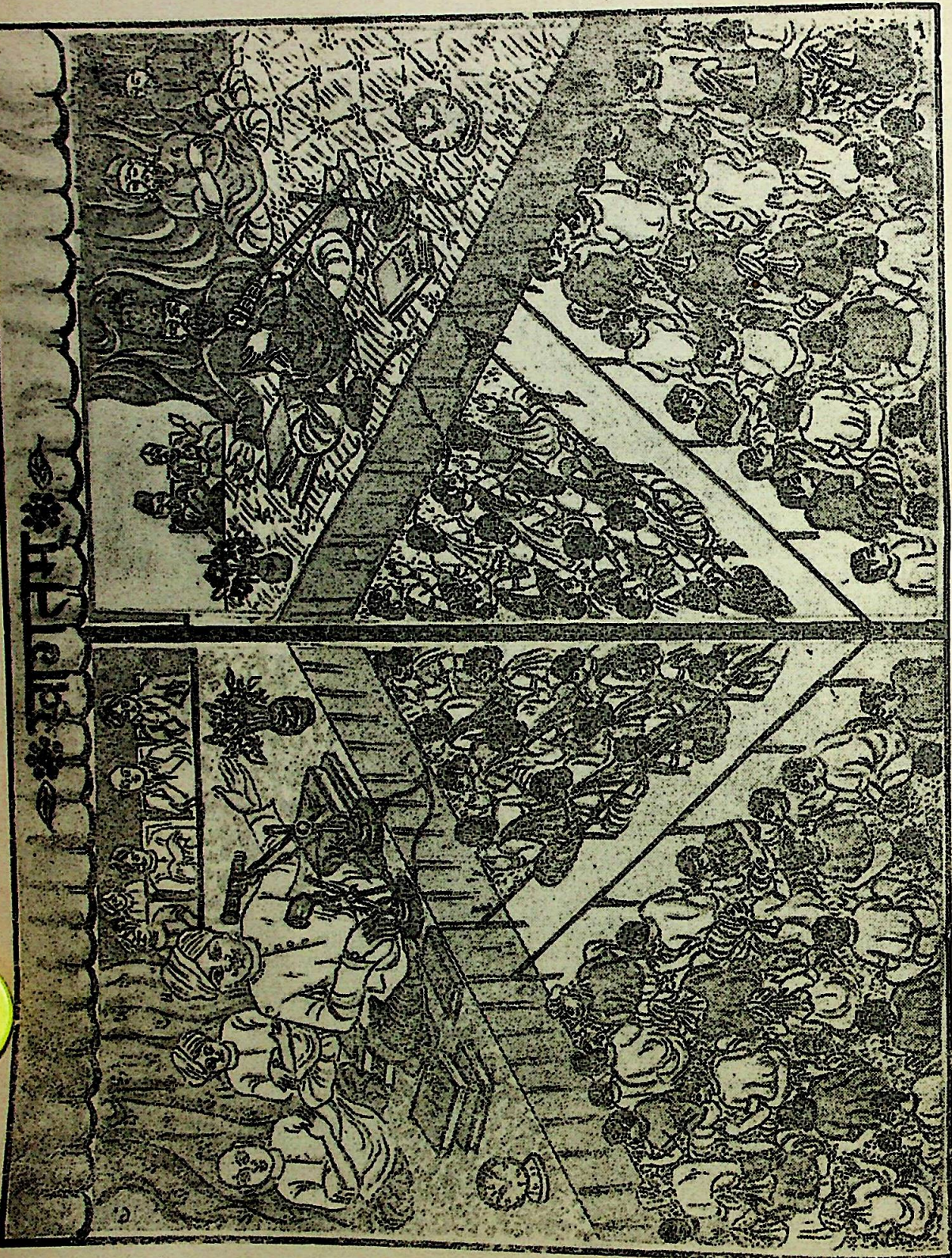
(शास्त्रार्थ करते हुए)

"श्री ठाकुर अमर सिंह जी शास्त्रार्थ केशरी तथा मौलवी श्री मौहम्मद अली साहिब"

स्थान : दीनानगर (जिला गुरदासपुर)

विषय : क्या कुरआन इलहामी किताब है ?

दिनांक : ६ अप्रैल सन् १९४४ ई०

आर्य समाज की ओर से शास्त्रार्थकर्ता : ठाकुर अमर सिंह जी शास्त्रार्थ केशरी

मुस्लिम पक्ष की ओर से शास्त्रार्थकर्ता : मौलवी मौहम्मद अली साहिब

उपस्थित : १. श्री लाला बक्षीस राम जी

२. ,, लाला देवस्व जी बजाज

३. ,, लाला देवराज जी

४. ,, सत्यपाल भिक्षु

दीना नगर वाले मुबाहिसे (शास्त्रार्थ) से पहले

दीना नगर जिला गुरदासपुर में एक मौलवी मुहम्मद अली का एक लेक्चर हुआ उसका विषय यह घोषित किया गया—

"मैंने हिन्दु धर्म क्यों छोड़ा ?"

दीना नगर में मुसलमानों ने लेक्चर के लिए बड़े जोर की मनादी करायी।

दीना नगर में श्री लाला बक्षीसराम जी बहुत स्वाध्याय शील और बहुत बुद्धिमान आर्य थे उर्दु और फारसी के विद्वान् थे और सिद्धान्तों के भी मर्मज्ञ थे।

उन्होंने यह मनादी सुनी उनको पता था कि श्री पं० ठाकुर अमरसिंह जी आर्य मुसाफिर अमृतसर में आये हुए हैं। वह मनादी सुनते ही अमृतसर चले आये और श्री पं० ठाकुर अमर सिंह जी को दीनानगर लिवा ले गये। श्री लाला जी माननीय श्री ठाकुर जी का बहुत ही सम्मान करते थे।

रात्रि को मौलवी मुहम्मद अली साहिब का लेक्चर हुआ। जिसमें उन्होंने हिन्दु धर्म की भर पेट निन्दा की, आर्य समाज का नाम भी नहीं लिया।

आर्य समाजी युवक टोली बनाकर उस लेक्चर को सुनने गये। रात्रि को लेक्चर बारह बजे समाप्त हुआ। और उसी समय ढोल लेकर आर्य समाजी युवकों ने बड़े जोर की मनादी स्वयं सारे नगर में कर दी। युवक कहते थे—

कल प्रातःकाल आठ बजे आर्य समाज मन्दिर में मौलवी साहिब के ऐतराजों का दन्दा शिकन (दांत तोड़) जवाब दिया जायेगा।

सवेरा होते ही आर्य समाज का सहन प्रांगण श्रोताओं से खचाखच भर गया।

श्री ठाकुर अमर सिंह जी आर्य मुसाफिर का व्याख्यान हुआ, मौलवी मुहम्मद अली के एतराजात की धज्जियां उड़ा दी गई बड़ा ही प्रभावशाली भाषण हुआ।

साथ ही मौलवी साहब को चैलेञ्ज कर दिया कि आज ही सायंकाल चार बजे से छह बजे तक मुबाहिसा करें। वह जो चाहें ऐतराज करें और हमारे ऐतराजों का जवाब दें। दिन में कई बार मनादी की गयी।

एक बड़े मैदान में—दोनों पक्षों के लिए दो स्टेज बना दिये गये, बड़ी भीड़ हुई, सारा मैदान हजारों की संख्या में स्त्री-पुरुष एवं बच्चों से खचाखच भर गया था। मौलवी साहिब को आर्य समाज की ओर से कहा गया कि—आपके जो भी मन में आवे वह ऐतराज करिये आर्य समाज की ओर से श्री ठाकुर अमर सिंह जी शास्त्रार्थ केशरी जवाब देंगे। मौलवी साहब ने साफ कह दिया कि मैं ऐतराज नहीं करूंगा।

श्री ठाकुर अमर सिंह जी शास्त्रार्थ केशरी ने कहा कि, ठीक है, अच्छा अब मैं सवाल करता हूं। आप उत्तर देने के लिए तैयार हो जाइये।

"सत्यपाल भिक्षु"

मुबाहिसा (शास्त्रार्थ) आरम्भ

ठाकुर अमर सिंह जी शास्त्रार्थ केशरी

मौलवी साहिब, और मेरे मुसलमान भाइयो !

हम और आप पहिले एक ही वैदिक धर्मी बुजुर्गों की औलाद थे, भाई-भाई थे। हमको कुरआन ने जुदा-जुदा कर दिया, इसलिए मैं कुरआन पर ही कुछ सवाल करता हूं। आप गौर से सुनें और मौलवी साहिब जवाब दें।

कुरआन में चार चीजें हराम की गयी हैं। यानी उनके खाने को मना किया गया है। देखिये—

इन्नम हर्रम अलयकुमुल मय्तत वद्दम वल्हमल् खिन्ज़ीर व मा उहिल्लबिहि लिग़ैरिल्लाहि

कुरआन सूरत बकर २ आयत १७३ रूकुअ २१ आयत ६,

(इन्नम) निश्चय (हर्रम) हराम किया (अलयकुम) ऊपर तुम्हारे (मय्तत) मुरदार को,

(वद्दम) खून को (व) और (लहमुल खिन्ज़ीर) गोश्त सूअर के को (व मा उहिल्लबिहिलिग़ैरिल्लाहि) और जिसके ऊपर अल्लाह के सिवा किसी और का नाम लिया गया हो।

१. खून २. मुरदार ३ सूअर का गोश्त ४. जिस पर अल्ला का नाम न लिया गया हो यानी जिस जानवर को काटते वक्त "बिस्मिल्लाहिर्रहमानिर्रहीम्" न बोला गया हो।

मैं यह पूछता हूं कि, खून से गोश्त बनता है। जैसे गन्ने के रस से गुड़।

कोई हकीम सेहत के लिए फायदा नुकसान के खयाल से किसी को कह सकता है कि—तुम रस मत पीना वह तुमको सर्दी करेगा, हां ! गुड़ खा सकते हो। किसी को कह सकता है कि तुम गुड़ मत खाना, हां ! रस पीना तुमको मुफीद रहेगा रस ही पीना।

मजहब में रस को हराम कहना और गुड़ को खाना जायज़ बताने में क्या अक्लमन्दी है ? खून से ही गोश्त बनता है। खून को हराम—ना जायज कहना और गोश्त को जायज़ रखना—खारिज अज अक्ल (बुद्धि विरुद्ध) है जवाब दीजिये इसमें क्या अक्लमन्दी है ?

दूसरा सवाल यह है कि, मुर्दार को हराम बताया गया है, जबकि हर एक गोश्त खाने वाला मुसलमान मुर्दार को ही खाता है। जिन्दा को कोई नहीं खाता, जिन्दा जानवर को खाते हैं शेर, चीते और भेड़िये। मुसलमान ऐसा कभी कोई देखा कि वह जिन्दा जानवर को खाता हो उसके खाते-खाते भेड़ मैं-भें और बकरी मैं-मैं करती हो। या कुकडू कू करता हुआ मुर्गा और "गुटरगूं" करता हुआ कबूतर कभी किसी ने खाया हो तो बताओ ?

श्रोताओं में तालियों की गड़गड़ाहट के साथ हंसी..........

सब मुर्दा को ही खाते हैं फिर मुर्दार हराम क्यों ? तीसरा सवाल यह है कि पहले कही गयी आयत में कहा गया है जिस पर अल्लाह का नाम न लिया गया हो वह हराम है यह बताइये कि—जिस पर अल्लाह का नाम नहीं

लिया वह नापाक कैसे ? और जिस पर अल्लाह का नाम लिया गया वह पाक कैसे ?

जो अल्लाह का नाम लेने से नापाक चीज भी पाक हो जाती है, तो कई नापाक चीजें बताईं जा सकती हैं, उन को अल्लाह के नाम से पाक करके क्यों नही खाते हो ?

नोट—श्री ठाकुर साहिब के मुद्दल्लित और जोरदार सवालों को सुनकर मौलवी साहिब के होश उड़ गये, उनको उठकर खड़ा होना मुश्किल हो गया। मुश्किल से खड़े हुए तथा फिर कुछ सोचते रहे। काफी सोच-विचार के बाद बोले।

मौलवी मुहम्मद अली साहिब

ओ तुम क्या जानो ? हमारा मुसलमानों का जानवरों को ज़िबह करने (काटने) का तरीका सारी दुनियां को पसन्द है। अंग्रेज लोग दुनियां में सबसे ज्यादा अक्ल रखते हैं, और सबसे ज्यादा इल्म उनके पास है, उनको भी हमारा ज़िबह करने का तरीका इतना पसन्द है कि वह जानवरों को मुसलमानों के हाथों से ही ज़िबह करवाते (मरवाते) हैं।

ठाकुर अमर सिंह जी शास्त्रार्थ केशरी

अंग्रेजों के पास उनके घरों में हिन्दु तो नौकर होते नहीं हैं, अगर कोई होते भी हैं तो वे भंगी होते हैं, अन्यथा मुसलमान ही उनके पास नौकरी करते हैं। वह ही कोठी में झाडू लगाते हैं। उनसे ही बूटों (जूतों) पर पालिश करवा ली जाती है, उनसे ही मुर्गा कटवा लिया जाता है, इसमें आपके ज़िबह करने के ढंग की क्या खूबी है।

श्रोताओं में जोर की हंसी...............

मौलवी साहब क्या आप बताएंगे कि अंग्रेज लोग तो सूअर का गोश्त खाते हैं, क्या वह भी आपके हाथ से ही ज़िबह कराया जाता है ?

श्रोताओं में जोर की हंसी............

ठाकुर अमर सिंह जी शास्त्रार्थ केशरी

साहिबान मेरे सवालों का जवाब मौलवी साहिब से नहीं दिया जा सका, और कभी नहीं दिया जा सकेगा। सुना है रात में कल मौलवी साहिब हिन्दु मजहब के खिलाफ बोलते हुए बहुत उछल-उछलकर बोलते थे। अब वह जोश कहां गया ? अब होश क्यों गुम हो रहे हैं ? अब बीमार की तरह क्यों बोलते हैं ?

नोट—श्री ठाकुर साहिब जी की बातों पर मुसलमान भी झूम उठे, और चारों तरफ वाह ! वाह !! करते दिखाई दिये।

मेरे मुसलमान भाइयो ! एवं अन्य उपस्थित साहिबान् !!

अब आप लोग मेरा चौथा सवाल सुनिये। गाय, भेड़, बकरी क्यों हलाल है और सुअर क्यों हराम है ? सुअर में चरबी सब जानवरों से ज्यादा होती है, यहां तक कि, सारी खाई नहीं जाती, वह अलहदा बेची जाती है, उसका गोश्त भी दूसरे जानवरों से ज्यादा अच्छा होता है। बताइए वह क्यों हराम है ?

मौलवी साहिब

वह गन्दगी खाता है।

ठाकुर साहिब

और भेड़ क्या जलेबी खाती हैं ?

श्रोताओं में हंसी...............

मौलवी साहिब

सूअर का गोश्त बीमारियां पैदा करता है। जिससे कौम कमजोर हो सकती है, इसलिए हराम है।

ठाकुर साहिब

सुनिये साहिबान् ! सुनिये !!

सूअर का गोश्त बीमारियां और कमजोरियां पैदा करता है, यह कैसा मजहका खेज (हास्यास्पद) कौल (कथन) है। सूअर का गोश्त राजपूत लोग खाते हैं, गोरखे खाते हैं।

नोट—वहां सिक्ख बहुत सुन रहे थे, उनकी ओर हाथ करके कहा था सिक्ख खाते है। मिलटरी और पुलिस इन्हीं लोगों से भरी हुई है। सारे वीर हैं, वहादुर हैं, बलवान हैं, तन्दरुस्त हैं। जरा इन सामने वाले वीर सिक्खों के चेहरे शेर के से देखिये और इन मौलवी साहिब के चेहरे की ओर भी देखिये !

श्रोताओं में बड़े जोर की हंसी..............

मौलवी साहिब

सूअर का गोश्त बेहयाई पैदा करता है, इससे वह हराम है।

क्यों बेहयाई क्यों पैदा करता है ? इसलिए कि वह नंगा रहता है, अगर कहो—हां ! तो मैं पूछता हूं कि—भेड़ क्या बुरका पहनती हैं।

श्रोताओं में हंसी...............

और सुनिये ! वेहयाई की वात—रंडिया (वेश्याएं) सारी कलमा पढ़ने वाली मुसलमानियां हैं, इनमें से एक भी सूअर का गोश्त नहीं खाती है पर इनसे ज्यादा वेहया बेशर्म दुनियां में कोई नहीं है।

चारों ओर हंसी ....

सुअर का गोश्त खाने वाली सभी बेगैरत बेशर्म और बेहया है।

इस प्रकार चारों ओर करतल ध्वनि के साथ यह शास्त्रार्थ समाप्त हुआ।

वैदिक धर्म की—जय

महर्षि दयानन्द की—जय

आर्य समाज—अमर रहे

वेद की ज्योति–जलती रहे।

के नारों से आकाश गूंज उठा।

नोट—मुसलमान लोग मुबाहिसा (शास्त्रार्थ) बन्द करके उठकर चले गये और अपने मौलवी को वहां से ही डांटते-फटकारते और शर्मिन्दा करते हुए ले गये, हर एक मुसलमान यह कहता था कि, जब तुममें मुबाहिसा करने की लियाकत और ताकत नहीं थी तो तुमने मुबाहिसा करना मंजूर क्यों किया ?

मौलवी साहिब

इन सवालों का जवाब कोई है ही नहीं। अगर इनका जवाब है तो तुमने क्यों नहीं दिया ?

जाओ अब किसी और मौलवी को पकड़ कर उन सवालों के जवाब तुम्हीं दिलवा दो।

नोट—मुसलमानों ने मौलवी को उसी रात विदा कर दिया। और सदा के लिए उसका दीनानगर आना बन्द कर दिया।

श्री लाला बक्षीशराम जी बुर्जुग थे उन्होंने श्री ठाकुर साहिब को छाती से लगा लिया और ऊपर को उठा लिया। बड़ी इज्जत की, सारे नगर के हिन्दुओं का भी तांता बधं गया, ठाकुर साहिव के दर्शन करने को सारा नगर आया, तथा दूसरे दिन भी भीड़ आती रही एवं भेंट चढ़ती रही।

दीना नगर के श्री लाला बक्षीशराम जी तथा श्री लाला देवस्व जी बजाज और लाला देवराज जी आदि ठाकुर साहिब के बड़े प्रशंसक रहे।

मैं तो उनको अपना पूज्य गुरु मानता हूं। और उनका चरण सेवक रहता हूं। और सदा ही "शेर दिल श्री ठाकुर अमर सिंह जी की जय बोलता हूं।

निवेदक
"सत्यपाल भिक्षु"
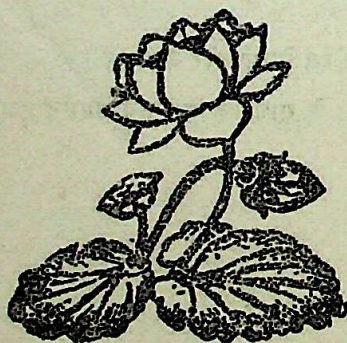
[तेरहवां शास्त्रार्थ]
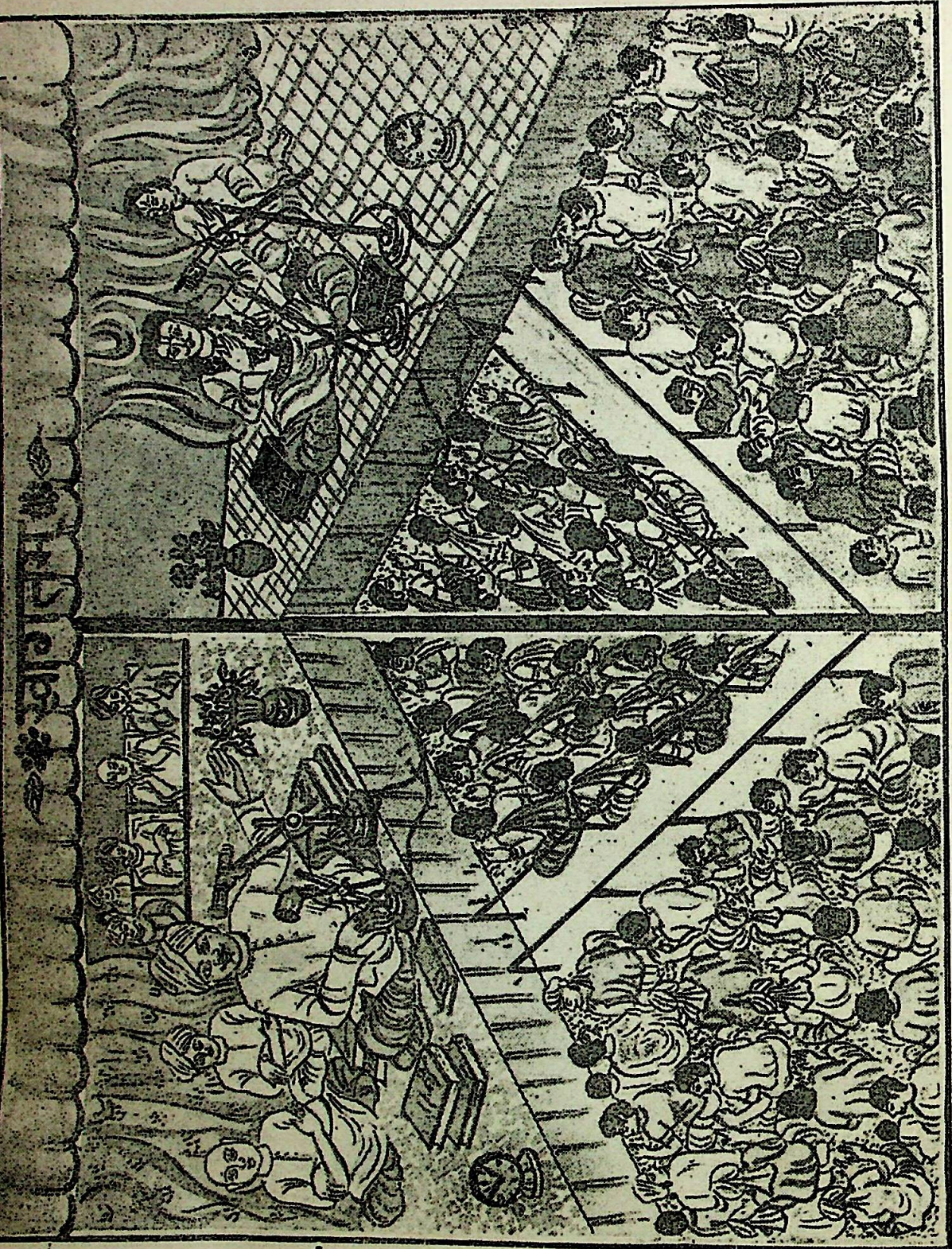
(शास्त्रार्थ करते हुए)

"श्री ठाकुर अमरसिंह जी शास्त्रार्थ केशरी तथा श्री पं० भीमसेन जी प्रतिवादी भयंकर"

स्थान : बांकनेर (जिला अलीगढ़ उत्तर प्रदेश)

विषय : क्या सत्यार्थ प्रकाश वेद विरुद्ध है ?

प्रधान : स्वामी मुनिश्वरानन्द जी (वर्तमान निवासी गाजियाबाद)

दिनाक : चार जून सन् १९६० ई०

शास्त्रार्थ कर्ता पौराणिकों की ओर से : पंडित भीमसेन जी प्रतिवादी भयंकर

शास्त्रार्थ कर्त्ता आर्य समाज की ओर से : ठाकुर अमरसिंह जी शास्त्रार्थ केशरी

उपस्थित : पौराणिक पं० श्री विमलदेव जी संन्यासी तथा श्री स्वामी मुनीश्वरानन्द जी सरस्वती (वैदिक धर्मी) भी इस शास्त्रार्थ में विद्यमान थे।

इस शास्त्रार्थ के विषय में

श्री पं० माधवाचार्य जी शास्त्री बांकनेर जि० अलीगढ़ में आये। अपने स्वभाव के अनुसार उन्होंने आर्य समाज को शास्त्रार्थ के लिए चैलेञ्ज किया और कहा जब मुझे बुलाया जायेगा तभी मैं आ जाऊंगा और कहा कि शास्त्रार्थ के समय उस्तरा मंगाकर रख लिया जायेगा। जो पराजित हो जायेगा, उसकी नाक काट ली जायेगी। शास्त्रार्थ के लिए तिथियां भी निश्चित कर दी गयी। उन दिनों ठाकुर अमर सिंह जी शास्त्रार्थ केशरी कलकत्ते में रहते थे। श्री स्वामी मुनीश्वरानन्द जी महाराज ने कलकत्ते से शास्त्रार्थ के लिए श्री ठाकुर अमर सिंह जी को बुलाया। ठाकुर साहब के आगमन का पता लगते ही बांकनेर के सनातन धर्मियों ने पण्डित माधावाचार्य जी के पास ठाकुर साहब के आगमन की सूचना देते हुए शास्त्रार्थ हेतु आमन्त्रण पत्र दिल्ली को भेज दिया।

श्री पण्डित माधवाचार्य जी को ठाकुर साहब के आने का पता लगते ही उन्होंने बांकनेर के सनातन धर्मियों को ऐसा पत्र लिख दिया जिसमें मोटा धन अग्रिम (पेशगी) मांगा था। जितना धन श्री पं० माधवाचार्य जी ने मांगा था। उतना धन बांकनेर की सनातन धर्म सभा भेज नहीं सकती थी और न भेज सकी।

श्री ठाकुर अमर सिंह जी कलकत्ते से आ गये थे। श्री पं० माधवाचार्य जी दिल्ली से नहीं आये, तब सनातन धर्मियों को अत्याधिक चिन्ता हुई। बांकनेर से एक व्यक्ति को दिल्ली भेजा गया वहां श्री पं० भीमसेन जी जो अपने को प्रति-वादी भयंकर कहते थे। उनको ही बांकनेर लाया गया। जिन्होंने आते ही श्री ठाकुर अमर सिंह जी से प्रार्थना की कि मैं अत्याधिक कमजोर हूं अभी बीमारी से उठा हूँ, अतः एक घण्टे से अधिक शास्त्रार्थ न करना। इस लिए एक घण्टे का ही शास्त्रार्थ किया गया।

"रविकान्त शास्त्री एम० ए०"
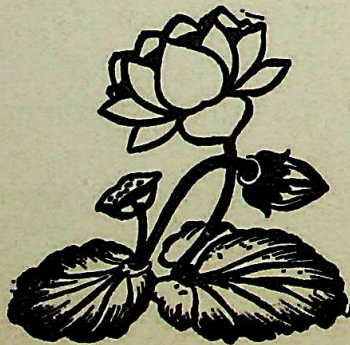
शास्त्रार्थ प्रारम्भ

पण्डित भीमसेन जी प्रतिवादी भयंकर

कोई भी आर्य समाजी स्वामी दयानन्द जी की माता का नाम नहीं जानता है, यदि जानते हों तो बतायें ?

ठाकुर अमर सिंह जी शास्त्रार्थ केशरी

यदि कोई आर्य समाजी स्वामी दयानन्द जी की माता का नाम नहीं जानता है, तो क्या इससे सत्यार्थ प्रकाश वेद विरुद्ध सिद्ध हो जावेगा ? 'मारे घोटू फूटे आँख" इस प्रश्न का सत्यार्थ प्रकाश या आज के शास्त्रार्थ के विषय से क्या सम्बन्ध है ? महाराज जी !

वैसे श्री स्वामी स्वतन्त्रानन्द जी महाराज ने बड़ी खोज से यह सिद्ध कर दिया था, कि—स्वामी दयानन्द जी की माता का नाम "यशोदा बाई" था ।

पण्डित जी महाराज ! क्या आप ब्रह्मा, विष्णु, शिव, वसिष्ठ, कणाद, पतञ्जंलि आदि की माताओं के नाम बता सकते हैं ।

यदि नहीं बतला सकते तो क्या पुराणों को वेद विरुद्ध मानने को तैयार हैं ?

पण्डित भीमसेन जी प्रतिवादी भयंकर

सत्यार्थ प्रकाश में सिक्खों की सुखमनी का नाम लेकर लिखा है कि, "वेद पढ़त ब्रह्मा मरे" यह ग्रन्थ साहब में कहीं नहीं है । स्वामी जी ने सत्यार्थ प्रकाश में झूठ लिखा है । क्या ठाकुर जी इसका कोई उत्तर है आपके पास ?

ठाकुर अमर सिंह जी शास्त्रार्थ केशरी

वाह ! वाह !! धन्य हो !!! आज लगता है आप भंग पीकर आये हैं । आपको शास्त्रार्थ के विषय की याद है अथवा नहीं, अगर नशे में भूल गये हों तो दोबारा बता दिया जावे ।

जनता में हँसी..........

महाराज जी जरा बताओ तो सही, इस प्रश्न का प्रस्तुत विषय के साथ क्या सम्बन्ध है । सम्बन्ध हो-चाहे न हो, आपको तो केवल प्रश्नों की संख्या बढ़ानी है । "मान न मान मैं तेरा महमान" सिक्खों ने तो आपको अपना वकील बनाया नहीं है । इसको पूछने वाले आप कौन हैं ? इस प्रश्न को जब सिक्ख करेंगे तब इसका उत्तर दिया जावेगा आप जिन पौराणिकों के वकील बनकर आये है । उनकी ओर से कुछ पूछिये ? परन्तु आप या कहीं श्रोतागण यह न समझ बैठे कि में इसके बारे में कुछ जानता ही नहीं, तथा में ऐसा बहाना करके आपके इस अमूल्य प्रश्न को समाप्त करना चाहता हूं । इस लिए आप इसका भी उत्तर अवश्य सुनिये ! पर आगे कृपया विषय का ध्यान रखकर ही प्रश्न करिये । सिक्खों के ग्रन्थ साहब में वाक्य है ।

"वेद पढ़े-पढ़ ब्रह्मो जन्म गँवाया" और "चारों वेद इत्फ़रा पाई। मन दा भरम न जाई" ॥

पहले वाक्य का भाव स्वामी जी ने लिखा है, "वेद पढ़त ब्रह्मा मरे" और दूसरे का भाव लिखा है "चारों वेद कहानी" क्योंकि इत्फ़रा का अर्थ कहानी ही होता है।

पण्डित भीमसेन जी प्रतिवादी भयंकर

स्वामी दयानन्द जी ने सत्यार्थ प्रकाश में चोटी कटाने की आज्ञा दी है। यह ईसाई मत का प्रचार है।

ठाकुर अमर सिंह जी शास्त्रार्थ केशरी

महर्षि दयानन्द जी ने सत्यार्थ प्रकाश में यह कहीं भी नहीं लिखा कि चोटी सबको कटानी चाहिये, अथवा अवश्य कटानी चाहिये, या सदा कटाये रखनी चाहिये, स्वामी जी ने तो संध्या के समय नित्य ही चोटी में गांठ लगाने की आज्ञा दी है। उन्होंने पुराने सारे ऋषियों की आज्ञाओं के अनुसार केशान्त संस्कार का वर्णन किया है।

जिसका वर्णन प्रायः सारी स्मृतियों और सारे गृह्य सूत्रों में है। वहां चोटी सहित सब बाल कटाने का विधान है। कहीं-कहीं मुण्डन संस्कार में चोटी छोड़कर अन्य बाल कटाने का विकल्प है। परन्तु केशान्त संस्कार में शिखा सहित केश श्मश्रु, कक्ष, वक्ष, उपस्थ के सब बाल काटने का विधान है। दुःख यह है कि आपने इन ग्रन्थों को पढ़ा ही नहीं, वेद का नाम तो ले दिया पर पढ़ा वेद को भी कभी नहीं है। लीजिये प्रमाण भी सुन लीजिये।

"यत्र बाणा सम्पतन्ति कुमारा विशिखा इव" यजुर्वेद अध्याय १७ मन्त्र ४८,

आपके आचार्य उव्वट और महिधर दोनों ने विशिखा का अर्थ "शिखा रहिता मुण्डित मस्तकाः" किया है। अर्थात् शिखा रहित और मुंड़े हुए शिर वाले—

नोट—बीच ही में पौराणिक पं० भीमसेन जी गर्ज कर बोल उठे, यह सन्यासियों के लिए है।

ठाकुर अमर सिंह जी शास्त्रार्थ केशरी

परन्तु देवता जी यहां पर तो 'कुमारा' अर्थात् कुमार शब्द है। वेद मन्त्र में जो मैंने ऊपर यजुर्वेद का प्रमाण दिया है। वहां पर तो सन्यासी का जिक्र भी नहीं। कुमार सन्यासी वाह! वाह!!

पण्डित भीमसेन जी प्रतिवादी भयंकर

सत्यार्थ प्रकाश में लिखा है बच्चे को माता छः दिन दूध पिलावे, पीछे धायी। यह वेद विरुद्ध है।

ठाकुर अमर सिंह जी शास्त्रार्थ केशरी

बोलिये किस वेद मन्त्र के विरुद्ध है? सत्यार्थ प्रकाश में यह कहीं भी नहीं लिखा कि जिस घर में धायी दूध न पिलावेगी, उस घर के सब लोग नरक में चले जावेंगे, सीधी-साधी बात यह लिखी है, कि यदि माता का दूध छुड़ा कर बच्चे को धायी का दूध पिलाया जावे तो माता शीघ्र स्वस्थ और बलवती हो जावेगी। जो धायी का प्रबन्ध न कर सकें वो गाय या बकरी का दूध पिलावें जो गाय या बकरी का भी प्रबन्ध न कर सकें वह जैसा सम्भव हो वैसा करें अभिप्राय यह है कि वह माता का ही दूध पिलावें, धायी दूध पिलावे, यह सुश्रुत के शारीरिक स्थान में और चरक शारीरिक स्थान भी है नोट करिये और प्रमाण लीजिये—मैं कोई भी बात बिना प्रमाण के नहीं कहता हूं।

अतो धात्री परीक्षा मुपदेक्ष्यामः अथ ब्रूयात् धात्रीं आनयत इति।
वत्सलाम् जीवद्वत्साम् पुवत्साम् दोग्ध्रीम अप्रमत्ताम-आदि ॥

चरक संहिता शारीरिक स्थान अध्याय ८ वाक्य ५३,

अभिप्राय यह है कि लड़के वाली धायी हो, जिसका लड़का जीता हो, और जिसको पर्याप्त मात्रा में दूध उतरता हो, श्री रामचन्द्र जी की भी धायी थी, धायी का जैसा वर्णन सत्यार्थ प्रकाश में है वैसा ही में आपके मान्य ग्रन्थ गरुड़ पुराण में भी है लीजिये प्रमाण—

विदारी कन्द स्वरसं मूलं कार्पासजं तथा ।
धात्री स्तन्य विशुध्यर्थम् मुदगयूषरसाशिनी ॥
स्तन्याभावे पयश्छाग गव्यंवा यद्गुणं पिबेत् ॥ (गरुड़ पुराण)

गरुण पुराण इसका अर्थ यह है कि, बिदारी कन्द का स्वरस कपास की जड़ और मूंग का यूष इन से धायी का दूध शुद्ध किया जाय । धायी न मिले तो बकरी या गाय का दूध पिलावे ।

आप हर बात को वेद विरुद्ध कह देते हैं, पर वेद मन्त्र एक भी नहीं बोलते, जिससे पता लगे कि यह बात अमुक वेद मन्त्र के विरुद्ध है । आपके पास तो वेद मन्त्र हैं नहीं । पर मैं इसके लिए भी वेद मन्त्र देता हूं । देखिये तथा ध्यान से सुनिये—

"नक्तोषासा समनसा विरूपे धापमेते शिशुमेकं समीची" यजुर्वेद अध्याय १२ मन्त्र २,

और देखना हो तो आप "यजुर्वेद अध्याय १७ मन्त्र ७०" को देखिए जिसमें कहा गया है कि दो स्त्रियां एक बालक को एक मन से दूध पिलाती हैं । दो स्त्रियां माता और धायी ही हैं । और कोई नहीं है ।

पण्डित भीमसेन जी प्रतिवादी भयंकर

सत्यार्थ प्रकाश में लिखा है कि—

"विविधानि च रत्नानि विविक्तेषूपपादयेत्"

यह श्लोक मनुस्मृति के नाम से लिखा है । और अर्थ बताया है कि सन्यासियों को धन दिया जाना चाहिए । यह श्लोक मनुस्मृति में कहीं भी नहीं हैं, सत्यार्थ प्रकाश में यह श्लोक मनुस्मृति के नाम से झूंठ लिख दिया गया है ।

ठाकुर अमर सिंह जी शास्त्रार्थ केशरी

आप महाराज जी ग्रन्थों को पढ़ा करिये, देखिये मनुस्मृति में पूरा श्लोक इस प्रकार है—

धनानितु यथाशक्तिः विप्रेषु प्रति पादयेत् ।
वेद वित्सु विविक्तेषु प्रेत्य स्वर्गं समश्नुते ॥६॥

मनुस्मृति अध्याय ११ श्लोक ६,

अर्थ यह है कि वेद के जानने वाले विरक्त ब्राह्मण अर्थात् संन्यासी को यथा शक्ति धन देना चाहिए । यहां थोड़ा पाठ का भेद है । अर्थ का कुछ भी भेद नहीं है । ऐसा ही अर्थ आपके आचार्य कुल्लूक भट्ट ने भी किया है देखिये और ध्यान दीजिये—

"विविक्तेषु-पुत्र कलत्रादिष्ववसक्तेषु"

अर्थात् पुत्र कलत्र आदि से विरक्त ब्राह्मणों को धन दें । वही संन्यासी है । वैसे भी "वि" उपसर्ग पूर्वक "विचिर" पृथग् भावे धातु से "विविक्त" शब्द बना है, इसका अर्थ संन्यासी ही है । यह मनुस्मृति में अब भी विद्यमान है ।

पण्डित भीमसेन जी प्रतिवादी भयंकर

सत्यार्थ प्रकाश में लिखा है कि "ब्रह्मा ने अग्नि, वायु, आदित्य, और अंगिरा से वेद पढ़े थे" यह वेद विरुद्ध है क्योंकि अथर्व वेद में कहा गया है कि 'ब्रह्मा देवानां प्रथमः सम्बभूव" अर्थात् ब्रह्मा देवों में सबसे पहले प्रकट हुआ। जब वह सबसे पहले प्रकट हुआ था, तो उसने अग्नि आदि से वेद कैसे पढ़े ? अग्नि आदि पर चारों वेद आये, इसका कोई प्रमाण नहीं।

ठाकुर अमर सिंह जी शास्त्रार्थ केशरी

श्री मान जी ! मैं फिर कहता हूं कि आप कुछ पढ़ा करिये, तब आपको पता लगेगा कि जिसने अग्नि, वायु. आदि से चारों वेद पढ़े वह ब्रह्मा ऋषि थे, क्योंकि "चतुर्वेद विद् ब्रह्मा भवति" चारों वेदों का जानने वाला ब्रह्मा ही होता है। यह जो अपने अथर्ववेद के नाम से प्रमाण दिया यह अथर्ववेद का क्या किसी भी वेद का नहीं है, आपने समझा कि, बांकनेर के सनातन धर्मियों पर यह प्रभाव पड जायेगा कि—प्रतिवादी भयंकर जो कोरे घटा टोपो भयंकर जैस है। वेद भी पढ़े हैं। पर यह पता नहीं था कि, सामने कौन है ? यह सारी पोल खोल देगा। श्री मान जी ! यह वेद मन्त्र नहीं, उपनिषद, का वचन है पता लिखिये "मुण्डक उपनिषद मुण्डक-१ वचन १" और पूरा पाठ इस प्रकार है। नोट कीजिये—

ब्रह्मा देवानां प्रथमः संबभूवः विश्वस्यकर्त्ता भुवनस्य गोप्ता।
स ब्रह्म विद्यां सर्वं विद्या प्रतिष्ठां, अथर्वाय ज्येष्ठ पुत्राय प्रार ॥

मुण्डक उपनिषद् १ वचन १,

इसका अर्थ यह है—ब्रह्मा देवों में मुख्य हुआ, प्रथम का अर्थ "सबसे पहले हुआ" यह नहीं है। जैसे नचिकेता ने कहा है।

बहूना प्रथमः बहूनायेमि मध्यमः"

में बहुतों में मुख्य हूं और बहुतों में मध्यम हूं।

सबसे पहले आदम हुआ यह आपने ईसाइयों से सीखा है। वेद में तो यह कहा है कि —

"साध्याः ऋषयश्च ये" यजुर्वेद

सृष्टि के आरम्भ में बहुत मनुष्य साध्य और ऋषि सिद्ध उत्पन्न हुए एक न हुआ। इनमें ब्रह्मा मुख्य हुए क्योंकि उन्होंने चारों वेद पढ़ लिये। अग्नि आदि एक-एक वेद का ग्रहण करने वाले थे। ब्रह्मा जी ने इन्हीं चारों ऋषियों से चारो वेद पढ लिये इसके खंडन में आपने क्या प्रमाण दिया। वास्तविकता यह है कि आपने न वेद पढ़े हैं न उपनिषद। ये सब स्वाध्याय से मिलते हैं ऐसे ही छापा तिलक लगाने से थोड़े ही। अग्नि आदि पर वेद आये इसका प्रमाण आपको नहीं मिला—पढ़ने वालों को मिलता है, मुझसे सुनिये और लिखिये नोट कीजिये—

अग्नि वायु रविभ्यस्तु त्रयं ब्रह्म सनातनम्।
दुदोह यज्ञ सिध्यर्थं ऋग्यजुस्साम लक्षणम् ॥२३॥ मनुस्मृति अध्याय १ श्लोक २३,

अर्थ—अग्नि, वायु, अंगिरा आदि ने परमेश्वर रूप धेनु से ऋग् आदि वेदों को यज्ञ की सिद्धि के लिए दुहा। औरप्रमाण लीजिये—

"अग्नेः ऋग्वेदः वायोर्यजुर्वेदः सूर्यात्सामवेदः"

शतपथ ब्राह्मण ११, ५, ८, ३

अग्नि से ऋग्वेद वायु से यजुर्वेद तथा सूर्य से सामवेद प्रकट हुआ। इस प्रमाण को आपके सायणाचार्य जी ने ऋग्वेद भाष्य की भूमिका में उद्धृत किया है। और पूछिये पंडित जी महाराज ?

पण्डित भीमसेन जी प्रतिवादी भयंकर

अंगिरा का चौथा नाम सत्यार्थ प्रकाश में लिखा है। उसका कोई प्रमाण नहीं है और अग्नि, वायु, आदित्य आदि ऋषि नहीं हैं। जड़ पदार्थ हैं। उन पर वेद किस प्रकार प्रकट हो सकते थे ?

ठाकुर अमरसिंह जी शास्त्रार्थ केशरी

चौथे अंगिरा का नाम चौथे वेद अथर्ववेद में अथर्व नाम के साथ ही है। देखिये—

यस्मादृचोअपातक्षन् यजुर्यस्मादपाकषन्।
सामानियस्य लोमानि अथर्वाङ्गिरसो मुखम् ॥

अथर्ववेद १०, ७, २०,

जिस परमेश्वर से ऋग्वेद प्रकट हुआ, जिससे यजुर्वेद प्रकट हुआ और सामवेद जिसके लोमों के समान है। अंगिरा पर उतरने वाला अथर्ववेद मुख के समान है। इस मन्त्र में जहां चारों वेदों के नाम हैं, वहां अथर्व के साथ चौथे ऋषि अंगिरा का भी नाम है। अग्नि, वायु और आदित्य को आप ऋषि न मानकर जड़ पदार्थ मानते है, परन्तु आपके गुरु आचार्य सायण ऋग्वेद भाष्य भूमिका में अग्नि आदि को शतपथ ब्राह्मण के प्रमाण में बतलाकर उनको "जीव विशेष" विशेष जीव अर्थात ऋषि कहते हैं। दु:ख यह है कि आप अपने ग्रन्थों को भी नहीं पढ़ते तथा शास्त्रार्थ करने सामने आ खड़े होते हो। स्वाध्याय कुछ भी नहीं।

नोट—पंडित जी ने खीझकर ठाकुर अमर सिंह जी से कहा कि —

पं० भीमसेन जी प्रतिवादी भयंकर

आप तो लाहौर में "दिलरुबा" और "सारंगी" बजाया करते थे। दूसरों को बार-बार कहते हो कि पढ़ते नहीं, स्वाध्याय नहीं करते हो, अपनी और भी तो देखो।

जनता में हंसी......

ठाकुर अमर सिंह जी शास्त्रार्थ केशरी

यदि मैं सारंगी और दिलरुबा बजाया करता था, तो इससे मेरे अन्दर क्या दोष आ गया है।

संगीत बजाने से सत्यार्थ प्रकाश वेद विरुद्ध सिद्ध हो गया ? धन्य हो महाराज आपकी ज्योति को !

"मारे घोंटू फूटे आंख"

पर इसमें आपका भी क्या कसूर है, इन बेचारे सनातन धर्मियों को खुश करने के लिए प्रश्नों की संख्या तो बढ़ानी ही है। चाहे उन प्रश्नों का सम्बन्ध शास्त्रार्थ विषय से हो या न हो। स्वाध्याय व विद्वता से तो आपका दूर का भी सम्बन्ध नहीं है। प्रश्न तो आपने किया है, इसलिए प्रश्न के विषयान्तर होते हुए भी मैं उत्तर दिये बगैर नहीं छोड़ूंगा। क्योंकि मैंने अपने जीवन में उधार रखना नहीं सीखा। इसलिए सुनिये—

आपके देवता लोग श्री कृष्ण जी बांसुरी, नारद जी वीणा शिव जी डमरू बजाते थे। तो मैं भी आपके देवताओं में मिल गया, इससे मुझ में क्या दोष आ गया। मैं भी आपके देवताओं में शामिल हो गया।

जनता में तालियों की गड़गड़ाहट के साथ हंसी...

नोट—अन्त में श्री पं० भीमसेन जी ने अपने सारे प्रश्नों को. दोहराया और श्री पं० अमर सिंह जो ने अपने उत्तरों को दोहराया। और यह घोषणा की, कि श्री पं० भीमसेन जी सत्यार्थ प्रकाश को वेद विरुद्ध सिद्ध न कर सके। और कोई भी व्यक्ति उसको वेद विरुद्ध सिद्ध कभी भी नहीं कर सकता है।

इस प्रकार शास्त्रार्थ समाप्त हुआ और आर्य समाज की ओर से घोषणा की गयी कि कल को किसी दूसरे विषय पर शास्त्रार्थ होगा। जिसकी सूचना उभय पक्ष के निर्णय से दे दी जावेगी, इस पर सनातन धर्म की ओर से एक युवक खड़ा हो गया। और कहने लगा कि चाहे शास्त्रार्थ एक दिन हो या दस दिन हो चाहे महीना भर हो, हम केवल सत्यार्थ प्रकाश पर ही शास्त्रार्थ करेंगे। और किसी विषय पर कभी शास्त्रार्थ नहीं होने देंगे।

न यहां भजन होने देंगे न व्याख्यान इस पिण्डाल को भी उखाड़कर फेंक देंगे, मैं इसमें आग लगा दूंगा।

अनुत्तर दायित्वपूर्ण बहुत सी बातें उसने ऐसी कही कि–आर्य समाजी युवक उसे सुनकर आवेश में आ सकते थे। और झगड़ा अति उग्र रूप धारण कर सकता था। परन्तु आर्य समाजियों ने बहुत ही गंभीरता से काम लिया और कहा कि रात्रि के ग्यारह बजे तक इसी विषय पर शास्त्रार्थ करने के लिए आर्य समाज तैयार है। अभी शास्त्रार्थ आरम्भ कर दीजिये, परन्तु कल किसी दूसरे विषय पर शास्त्रार्थ होगा। और अवश्य होगा, जिनका निश्चय पहले हो चुका है वह विषय यह थे।

१. ईश्वर जन्म लेता है या नहीं ?
२. मूर्ति पूजा होनी चाहिये या नहीं ?
३. श्राद्ध मृतकों का हो सकता है या जीवितों का ?
४. क्या भागवत् आदि पुराण वेदानुकूल हैं ?

पौराणिक पं० भीमसेन जी के आने से पहले पत्र व्यवहार द्वारा दोनों पक्षों से इन विषयों पर शास्त्रार्थ करना निश्चय हो गया था केवल यह बताना शेष था कि किस दिन किस विषय पर शास्त्रार्थ होगा। पं० भीमसेन जी ने आते ही इस बात पर बल देना आरम्भ किया कि किसी भी विषय पर शास्त्रार्थ नहीं होगा, अगर होगा तो इसी विषय पर होगा कि—

"क्या सत्यार्थ प्रकाश वेद विरुद्ध है ?"

सो वह वहां पर श्रोताओं ने सुन लिया कि सत्यार्थ प्रकाश कैसा वेद विरुद्ध सिद्ध हुआ तथा पाठक यहां पढ़ लें एवं देख लें कि की हार हुई और किसकी जीत। सभी श्रोताओं को स्पष्टत: पता लग गया कि भीमसेन जी अब शास्त्रार्थ नहीं करेंगे। क्योंकि वह बहुत बुरी तरह पराजित हो चुके थे फलत: "दूसरा शास्त्रार्थ हुआ ही नहीं"।

और शान्ति पाठ के पश्चात् सभा समाप्त हो गयी।

"अमर स्वामी परिव्राजक"

बांकनेर वाले शास्त्रार्थ के विषय में विशेष निवेदन

उस सनातन धर्मी युवक की उदण्डता से अनुत्तर दायित्व युक्त कथन पर श्री पं० ओमप्रकाश जी शास्त्री (खतौली निवासी) ने उस युवक को फटकारा और ललकारा कि वह शामियाना जलाने को आगे आये और देखे कि हम उसके साथ क्या करते हैं। पुलिस ने भी उस युवक को फटकारा, शास्त्रार्थ का प्रभाव आर्य समाज के पक्ष में बहुत ही अच्छा रहा।

इस शास्त्रार्थ की योजना महाविद्वान श्री स्वामी मुनीश्वरानन्द जी सरस्वती (वर्तमान गाजियाबाद निवासी) जी ने बनाई थी। और उन्होंने श्री पं० ठाकुर अमर सिंह जी शास्त्रार्थ केशरी को बांकनेर में शास्त्रार्थ के लिए कलकत्ते से बुलाया था

शास्त्रार्थ श्री पं० माधवाचार्य जी के चैलेञ्ज पर होना निश्चय हुआ था, और श्री पं० माधवाचार्य जी के साथ ही होना था पर शास्त्रार्थ के दिन से २ दिन पहले श्री पं० माधवाचार्य जी की इतने धन की मांग आ गयी जिसको देने की सामर्थ्य बांकनेर जिला अलीगढ़ के सनातन धर्मियों में नहीं थीं अत: श्री पं० माधवाचार्य जी को न बुलाकर श्री पं० भीमसेन जी प्रतिवादी भयंकर को दिल्ली से बुलाना पड़ा।

वास्तव में श्री पं० माधवाचार्य जी पंडित हैं, श्री भीमसेन जी पण्डित नहीं थे।

"पण्डित सोई जो गाल बजावा"

शास्त्रार्थ के समय पौराणिक सन्यासी श्री स्वामी विमल देव जी भी पौराणिकों के मञ्च पर विद्यमान थे।

[चौदहवां शास्त्रार्थ]
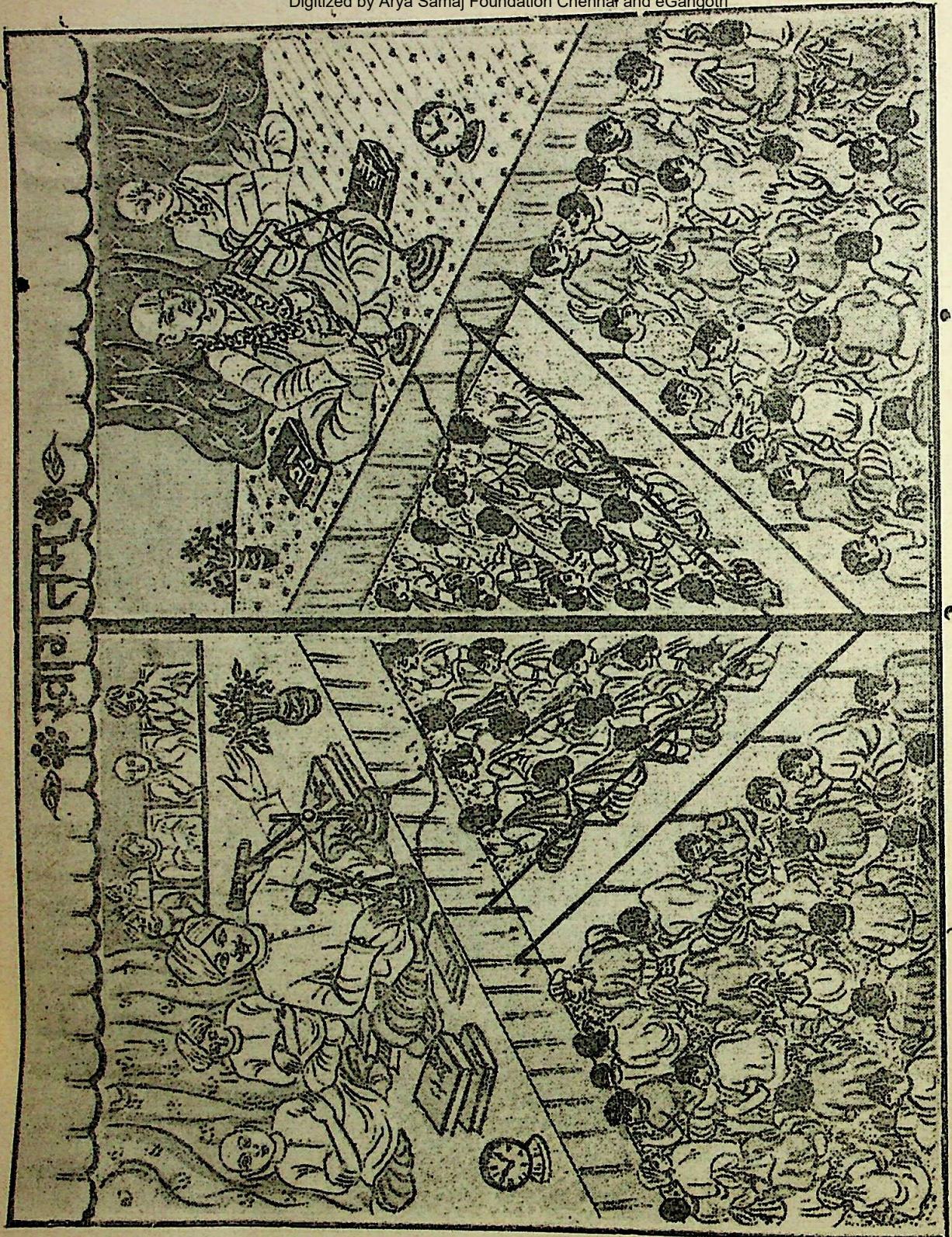
(शास्त्रार्थ करते हुए)
"श्री ठाकुर अमर सिंह जी शास्त्रार्थ केशरी तथा पं० श्री माधवाचार्य जी शास्त्री"

स्थान : बद्दोमल्ली (जिला स्यालकोट, पंजाब)
(वर्तमान पाकिस्तान)

विषय : क्या पुराण वेदानुकूल हैं ?

दिनांक : (दिन के दो बजे) मई १९४१ ई०

पौराणिक पक्ष की ओर से शास्त्रार्थ कर्त्ता : श्री पं० माधवाचार्य जी शास्त्री

सहायक : १. श्री पं० दिवाकर दत्त जी शास्त्री

२. श्री पं० श्री कृष्ण जी शास्त्री

३. श्री पं० कुञ्ज लाल जी शास्त्री

आर्य समाज की ओर से शास्त्रार्थ कर्त्ता : श्री पं० ठाकुर अमर सिंह जी शास्त्रार्थ केशरी

सहायक : श्री पं० वाचस्पति जी एम० ए०,

आर्य समाज की ओर से प्रधान : श्री जीवन दास जी सर्राफ़

" " मन्त्री : श्री मथुरा दास जी मदान

पौराणिक पक्ष की ओर से प्रधान : स्टेशन मास्टर श्री बाबू लेखराजजी

" " मन्त्री : श्री लाला कर्म चन्द जी

साक्षी १. : एक मुसलमान चौधरी फजल अहमद

२. : ईसाई पादरी यूहन्ना साहिब

शास्त्रार्थ से पहले

वद्दोमल्ली जि० स्यालकोट में एक बड़ा ही अद्‌भुत एवं छोटा सा कस्वा था वहां सनतान धर्म और आर्य समाज के मध्य शास्त्रार्थ आठ दिन निरन्तर चलना निश्चय हुआ। और निश्चय हुआ कि एक दिन आर्य समाज की ओर से प्रश्न और सनातन धर्म की ओर से उत्तर हुआ करेगें। दूसरे दिन सनातन धर्म की ओर से प्रश्न और आर्य समाज की ओर से उत्तर हुआ करेगे। १-३-५-७ वें दिन आर्य समाज प्रश्न करेगा और सनातन धर्म उत्तर देगा। २-४-६-८ वें दिन सनातन धर्म प्रश्न करेगा तथा आर्य समाज उत्तर देगा। प्रतिज्ञा पत्र की दो प्रतियां बनाई गयी। दोनों पर आर्य समाज के प्रधान श्री जीवन दास जी सर्राफ और मन्त्री श्री मथुरा दास जी मदान के हस्ताक्षर हुए तथा सनातन धर्म के प्रधानश्री लेखराज स्टेशन मास्टर तथा मन्त्री श्री लाला कर्म चन्द जी के हस्ताक्षर हुए थे। आर्य समाज की ओर से प्रश्न कर्त्ता मैं (ठाकुर अमर सिंह) एवं सनातन धर्म की ओर से उत्तर देने वाले श्री पं० माधवाचार्य जी शास्त्री दिल्ली वाले, नियत हुए।

जिस दिन शास्त्रार्थ आरम्भ होना था, उससे एक दिन पहिले श्री पं० श्री कृष्ण जी शास्त्री तथा श्री पं० दिवाकर दत्त जी शास्त्री और श्री पं० कुन्जलाल जी शास्त्री को साथ लेकर आर्य समाज मन्दिर में दिन के दो बजे आ पंहुचे और कहने लगे कि हम शास्त्रार्थ करने को आये हैं।

उनके पीछे-पीछे ही सनातन धर्म के अधिकारी लोग दौडे-२चले आये, और अपने ही विद्वानों से कहने लगे कि हमने शास्त्रार्थ आप लोगों से नही कराना है।

हमारी ओर से शास्त्रार्थ श्री पं० माधवाचार्य जी शास्त्री करेंगे। हम लोग श्री पं० ठाकुर अमर सिंह जी शास्त्रार्थ केशरी के सम्मुख खड़ा होने योग्य तुम तीनों पडिण्तों को नहीं मानते हैं।

श्री ठाकुर अमर सिंह जी शास्त्रार्थ केशरी का बहुत प्रभाव है। (उस नगर में माननीय ठाकुर जी की विद्वता की धाक थी) पहिले दिन का शास्त्रार्थ आरम्भ हुआ, दिन के दो बजे थे। आर्य अमाज की ओर से प्रश्नकर्त्ता—मैं (अमर सिंह) था। प्रमाण निकालने में मेरे सहायक श्री पं० वाचस्पति जी एम० ए० साथ बैठे।

सनातन धर्म की ओर से उत्तर दाता श्री पं० माधवाचार्य जी शास्त्री थे, उनके साथ प्रमाण निकालने वाले सहायक श्री पं० दिवाकर दत्त जी शास्त्री श्री पं० श्री कृष्ण जी शास्त्री तथा श्री पं० कुंन्ज लाल जी शास्त्री बैठे थे। शास्त्रार्थ का विषय नियत किया गया कि, "क्या पुराण वेदानुकल हैं" ?

"अमर स्वामी परिव्राजक"

शास्त्रार्थ आरम्भ

ठाकुर अमर सिंह जी शास्त्रार्थ केशरी

पण्डित जी आप पुराणों के वकील हैं, पुराण १८ कहे और माने जाते हैं। सुनिये—

'अष्टादश पुराणानां कर्त्ता सत्यवती सुतः'

मेरा दावा है कि आप जिन पुराणों के वकील हैं, उन अट्ठारह पुराणों के नाम आप नहीं बता सकते हैं। यदि बता सकते हों, तो बताइये। यह पहली परीक्षा है। मैं निश्चय पूर्वक कहता हूं कि शास्त्रार्थ के अन्त तक मेरे इस प्रश्न का उत्तर आप नहीं दे सकेंगे। अट्ठारह पुराणों के नाम क्या-क्या हैं?

पण्डित माधवाचार्य जी शास्त्री

वाह! वाह!! "प्रथमे ग्रासे मक्षिका पातः" बहुत बड़ा आपने प्रश्न किया। हमको सैकड़ों ग्रन्थों के नाम याद हैं। क्या हम अट्ठारह पुराणों के नाम याद नहीं रख सकते हैं? अठारह नाम तो बच्चा भी सुना देगा।

मैं समझता था, कोई बड़ा भारी प्रश्न मेरे सामने आयेगा, प्रश्न निकला तो यह निकला कि अठारह पुराणोंके नाम क्या हैं! मैं बताता हूं। सुनिये

मद्वयं भद्वयं चैव ब्रत्रयं व चतुष्टयम्।
अनाप लिंग कूस्कानि, पुराणानि प्रथक् प्रथक्॥

नोट—साथ ही कहा कि आप अठारह पुराणों के नाम बताइये इस श्लोक में पुराण के नाम इस प्रकार हैं—

"म" से दो (मत्स्य और मार्कण्डेय) "भ" से दो (भागवत और भविष्य) "ब्र" से तीन (ब्रह्म, ब्रह्माण्ड और वृह्मवैवर्त्त) 'व" से चार (वाराह, वायु, वामन और विष्णु) इस प्रकार यह ग्यारह पुराण हुए, शेष सात पुराणों के आद्यक्षर इस प्रकार हैं, "अ" से अग्नि "न" से नारद "प" से पद्म "लिं" से लिङ्ग "ग" से गरुड "कू" से कर्म "स्कं" से स्कन्द यह अठारह नाम पुराणों के इस श्लोक में लिए। उसमें शिव पुराण का नाम नहीं है, और भागवत तीन है जिनमें से केवल एक का ही नाम इसमें है।

ठाकुर अमर सिंह जी शास्त्रार्थ केशरी

पण्डित जी! अठारह नामों के याद करने का प्रश्न नहीं है। मेरे प्रश्न में रहस्य है वह यह है कि पुराण अठारह नहीं हैं, आश्चर्य यह है कि—आप पुराणों के ठेकेदार होते हुए यह नहीं बता सकते कि —अठारह पुराण कौन-कौन से हैं? उनके नाम क्या-क्या हैं?

उस रहस्य को मैं जानता हूं। आप नहीं जानते हैं। उसके कारण आप १८ पुराणों के नाम नहीं बता सकेंगे। सुनिये एक रहस्य यह है कि—जहां-जहां अठारह पुराणों के नाम पुराणों में गिनाये है, वहां-वहां नामों में भिन्नता है, कहीं शिव पुराण को अठारह में गिना गया है, वायु पुराण को नहीं। कहीं वायु पुराण को अठारह में गिना गया है, शिव पुराण को नहीं। शिव पुराण और वायु पुराण दोनों को पुराण माना जाये तो पुराण १८ नहीं उन्नीस हो जायेंगे। बताइये आप १८ के वकील हैं या १९ के? और सुनिये शिव पुराण में क्या कहा गया है—

"षड्विंशति पुराणानां, मध्येत्स्येकं शृणोति यः"

यहां छब्बीस पुराणों का उल्लेख है, कहिये! आप किस-किस पुराण के और कितने पुराणों के ठेकेदार हैं?

आप मुझे अठारह पुराणों के नाम पूछते हैं, मैं तो उनमें से एक को भी नहीं मानता हूं, और न यह मानता हूं कि पुराण अठारह हैं। मुझको तो आपके पुराणों का खण्डन करना है, वह एक हो चाहे एक सो एक या वह अठारह हों, चाहे अठारह सो।

पण्डित माधवाचार्य जी शास्त्री

ठाकुर साहिब पता लग गया कि आप पुराणों के नाम नहीं जानते हैं। आपको यह भी पता नहीं कि पुराण १९ नहीं १८ ही है। आपने कहीं पुराणों की सूची में "शिव.पुराण" का नाम पढ़ लिया और कहीं शिव पुराण का नहीं तो "वायु पुराण" का नाम पढ़ लिया, तो आपने १९ पुराण समझ लिए। ठाकुर साहिब पुराण तो आप हमसे पढ़िये, और हम से समझिये, सुनिये! शिव पुराण की-वायवीय संहिता का नाम ही वायु पुराण है। वायु पुराण कोई पृथक् ग्रन्थ नहीं है।

ठाकुर अमर सिह जी शास्त्रार्थ केशरी

पता लग गया कि आप पुराणों के विषय में कुछ नहीं जानते हैं। पुराण आपने पढ़े-देखे कभी नहीं। लीजिये, मैं आपके पुराण ज्ञान की पोल अभी खोले देता हूं। मेरे पास शिव पुराण भी है, और वायु पुराण भी लीजिये और देखिये शिव पुराण की "वायवीय संहिता" का नाम वायु पुराण नहीं। यह वायु पुराण सर्वथा स्वतन्त्र ग्रन्थ है। पुराणों को वास्तव में हमने ही पढ़ा है। आपने तो कहीं से सुन लिया है। लीजिये, एक और रहस्य की बात बताता हूं। अठारह पुराणों की गणना में भागवत एक पुराण गिना गया हैं, पर भागवत तीन हैं, श्री मद्भागवत दूसरी देवी भागवत् शिव पुराण में देवी भागवत् को ही "भागवत्" गिना गया है। इस प्रकार पुराण अठारह नहीं २१ हो गये। आपकी जान को और बवाल बढ़ गया। अभी क्या है? आज आपको पता लगेगा कि किससे पाला पड़ा है? पुराण तो मैंने ही पढ़े हैं। लोजिये, एक भागवत और सुनाता हूं। इसमें लिखा है कि श्री कृष्ण जी "पार्वती" के अवतार थे। आप तो उनको अब तक विष्णु का अवतार ही मानते रहे हैं। अब मुझ से सुनिये। शिव जी पार्वती जी से कहते है—

यदि त्वं मे प्रसन्नासि, तदा पुंस्त्वमवाप्नुहि।
कदाचित् पृथिवी पृष्ठे, यास्येऽहं स्त्री स्वरुपताम् ॥१६॥
यथाहं ते प्रियो भर्ता त्वं वै प्राण समाङ्गना।
एतदेव गनो अभीष्टं विद्यते प्रार्थ्य मुवमम् ॥१७॥
देव्युवाच भविष्येऽहं त्वत्प्रियार्थं निश्चित्तं पृथिवी तले ॥१८॥
पुं रुपेण महादेव वसुदेव गृहे प्रभो।
कृष्णोऽहं मत्प्रियार्थं स्त्री भव त्वं हि त्रिलोचन ॥१६॥
वृषभानोः सुता राधा स्वरुपाहं स्वयं शिवे ॥२०
तां राधामुपसंयेमे कोऽपि गोपो महामुने।
क्लीवत्वं सहसा प्राय शंभोरिच्छा नुसारतः ॥२१॥

हे पार्वती जी! यदि तुम मुझ से प्रसन्न हो तो तुम पुरुष बनों में पृथ्वी पर कहीं स्त्री बन जाऊँगा। जैसे मैं तुम्हारा प्यारा भर्ता हूं। ऐसे ही तुम मेरे पति बनो यह मेरी कामना है। देवी बोली—

मैं तुम्हारे प्रिय के लिये निश्चय वसुदेव के घर में जन्म लेकर कृष्ण बनूं।

शिव जी ने कहा—मैं वृषभान के घर में उसकी पुत्री राधा बनूंगा?

उस राधा को किसी गोपने विवाह लिया वह शिव की इच्छानुसार नपुंसक हो गया।

पण्डित माधवाचार्य जी शास्त्री

श्री मान ठाकुर साहिब आप यह कौन सी पुस्तक पढ़कर सुना रहे हैं?

ठाकुर अमर सिंह जी शास्त्रार्थ केशरी

श्री मान पण्डित जी महाराज! यह वही तीसरी भागवत है। इसका नाम है "महाभागवत महापुराण"।

पण्डित माधवाचार्य जी शास्त्री

ठाकुर साहिब कृपया यह पुस्तक आप मुझको दिखाइये यह पुस्तक मैंने भी नहीं देखी।

ठाकुर अमर सिह जी शास्त्रार्थ केशरी

क्यों नहीं, वाह! आपने यह भली बात कही। लीजिये आप अवश्य दर्शन करिये।

नोट—उस पुस्तक को श्री पं० माधवाचार्य जी ने कभी न देखा था न सुना ही था। पुस्तक देखकर सन्न रह गये। सारी सभा में सन्नाटा छा गया।

पण्डित माधवाचार्य जी शास्त्री

ठाकुर साहिब यह पुस्तक आज मेरे ही पास रहने दीजिये। मैं आज इसको देखूंगा और कल को इसका उत्तर दूंगा।

ठाकुर अमर सिंह जी शास्त्रार्थ केशरी

पण्डित जी महाराज ! कृपा करके मेरी पुस्तक तुरन्त अभी लौटा दीजिये उत्तर तो इसका आपसे तीन जन्म में भी नहीं हो सकेगा। और इसके पृष्ठ फाडकर कह दोगे कि इस पुस्तक में यह पाठ कहीं है ही नहीं। आप जल्दी पुस्तक वापिस कीजिये।

नोट—पुस्तक वापिस आ गयी। मगर सारी सभा आश्चर्य में पड़ गयी। चारों ओर सन्नाटा छा गया ! आर्य समाजी युवक उछल-उछल कर नारे लगाने लगे। चारों तरफ से आवाज आने लगी।

वैदिक धर्म की—जय

आर्य समाज—अमर रहे

वेद की ज्योति—जलती रहे !

नोट—अन्त में ठाकुर साहिब ने इशारे से उन युवकों को बिठा दिया तथा शान्त करके नारे लगाने को मना कर दिया।

ठाकुर अमर सिह जी शास्त्रार्थ केशरी

पुराणों की संख्या २१ हो गयी ! कहिये !! आप किस-किस पुराण के और कितने पुराणों के वकील हैं ? एक और रहस्य भी है, वो यह हैं कि इन पुराणों में से छः से अधिक तामस पुराण हैं। जो पढ़ने वालों को नरक में ले जाने वाले हैं।

कहिये, उनको भी आप वेदानुकूल सिद्ध करेंगे ? पण्डित जी यह तो पता लग गया कि आपको नामों आदि का भी पता नही, अब पुराणों की अन्दर की पोल भी सुनिये।

१. शिवजी ने महानन्दा वैश्या से सनातन धर्म (व्यभिचार) किया।

२. आपके विष्णु भगवान ने जालन्धर की पत्नी वृन्दा से जालन्धर का रूप बनाकर छल से सनातन धर्म (व्यभिचार किया।

३. चन्द्र ने अपनी गुरु पत्नी (देवों के गुरु बृहस्पति की पत्नी तारा) से सनातन धर्म (व्यभिचार) किया।

पण्डित माधवाचार्य जी शास्त्री

ठाकुर साहिब आप इसको सनातन धर्म क्यों कहते हैं ?

ठाकुर अमर सिंह जी शास्त्रार्थ केशरी

पण्डित जी महाराज आपको नहीं पता तो सुनिये महाभारत में कहा है कि—

उद्दालक का पुत्र श्वेत केतु था। उद्दालक की पत्नी को पकड़ कर एक ब्राह्मण एकांत जंगल में ले जाने लगा तो श्वेत केतु ने उस पर क्रोध किया। उद्दालक ने श्वेत केतु को कहा कि,

"मा तात कोपं कार्षीस्त्वं एष धर्मः सनातनः ॥"

अर्थात्—बेटा कोप मत करो, यह तो "सनातन धर्म" है पण्डित जी महाराज ! मैं तो आपके ग्रन्थों के आधार पर इसे सनातन धर्म कहता हूं। अपनी ओर से थोड़े ही।

जनात में तालियों की गड़गड़ाहट के साथ बेहद हंसी……

पण्डित माधवाचार्य जी शास्त्री

पंडित जी पुराण नाम तो वेद में भी है। देखिये—

और महाराज ! हे मेरे ठाकुर जी !! महानन्दा व्यभिचारिणीं नहीं थी, वह तो वेद मन्त्र गाती थी, भगवान शिव जी उसकी भक्ति की परीक्षा लेने को उसके घर गये थे। व्यभिचार करने को नहीं गये थे। व्यभिचार की शिक्षा तो आर्य समाज ही देता है। सनातन धर्म नहीं। मैं कल बताऊँगा कि व्यभिचार की शिक्षा आर्य समाज किस प्रकार देता है, फिर उस घर में शिव जी की महिमा से ही आग लग गयी थी, व्यभिचार की बात तो वहां आप ही को सूझती है।

वृन्दा पतिव्रता थी। उसका पति जालन्धर दुष्ट था। भगवान उसको मारना चाहते थे। वह वृन्दा के पतिव्रत धर्म के कारण मर नहीं सकता था। इसलिए उसके पतिव्रत धर्म को भङ्ग किया कि जालन्धर को मारा जा सके।

आपको सब जगह व्यभिचार ही व्यभिचार दीखता है। वह चन्द्रमा कोई पृथिवी का मनुष्य नहीं था। वह चन्द्रमा यही है जो रात्रि को आकाश में दिखाई देता हैं। बृहस्पति भी नक्षत्र है। तारा भी नक्षत्र का ही नाम है। ज्योतिष तो आप लोगों को आती नहीं है यह विषय बिना ज्योतिष पढ़े समझ में नहीं आ सकता है। आकर्षण-विकर्षण से तारा के चन्द्र कक्ष में आ जाने से चन्द्रमा के द्वारा उससे एक ग्रह और उत्पन्न हो गया। उसका नाम "बुद्ध" है, ज्योतिष पहले पढ़िये, ठाकुर साहब ! अगर इसे समझना है।

ठाकुर अमर सिंह जी शास्त्रार्थ कशरी

सज्जनों ! पण्डित जी कहते हैं कि—महानन्दा व्यभिचारिणी स्त्री नहीं थी, वह तो वेद मन्त्र गाती थी। उसका गाना सुनने को पण्डित जी गये होंगे। हमको इससे मतलब नहीं कि वह क्या गाती थी, पर वह व्यभिचारिणी स्त्री नहीं थी, यह पण्डित जी ने उसकी सफाई में वैसे ही कह दिया।

पण्डित जी ! जिसकी आप वकालत कर रहे हैं, उससे पूछ तो लेते कि वह व्यभिचारिणी है या ब्रह्मचारिणी ! महाराज जी ! वह स्वयं कह रही है—

वयं हि स्वैरिचारिण्यो, वेश्यास्तु न पतिवृता।
अस्मत् कुलोचितो धर्मो, व्यभिचारो न संशयः॥

वह कहती है कि, हम व्यभिचारिणी हैं, पतिव्रता नहीं हैं। हमारे कुल का धर्म ही व्यभिचार है, इसमें कुछ संशय नहीं।

और पण्डित जी कहते हैं कि—शिव जी उसकी भक्ति की परीक्षा लेने को गये थे। ठीक है आप भी कई वैश्याओं के यहां उनकी भक्ति परीक्षा के लिए जाते होंगे।

जनता में हंसी............

उस वेश्या के घर में आग लग गयी होगी, पर आपके शिव जी नर्म तकिये व गद्दे लगाकर पलंग पर सोये तो सही। आग सनातन धर्म करने के बाद लगी या पहिले ही लग गई ? यह तो आप ही बताइये। परीक्षा पूरी हो गई या अधूरी ही रह गयी ?

श्रोताओं में फिर हंसी......

वृन्दा-पतिव्रता थी, पर आपके विष्णु जी ने उसके साथ व्यभिचार किया। यह तो आप भी मान गये।

मारना था एक दुष्ट को एक पतिव्रता के धर्म को नष्ट क्यों किया ? इसके लिए उस पतिव्रता के धर्म को भ्रष्ट किया और अपना भी धर्म भ्रष्ट किया। यह अनोखा सनातन धर्म है। धन्य है आपके विष्णु जी पर पण्डित जी इस पाप का फल भी आपके विष्णु जी को भोगना पड़ा। आपके विष्णु जी की पत्नी को भी कोई मायावी, छली, कपटी हरण करके ले गया।

वह पतिव्रता—अपने पति को तो मरने से नहीं बचा सकी पर विष्णु जी की पत्नी को तो हरण करवा ही दिया।

इस सारी लीला को वेदों से सिद्ध करिये कि पतिव्रता का व्रत भङ्ग करना धोखा देकर पतिव्रता से व्यभिचार करना यह सब वेदानुकूल सिद्ध करिये तभी तो पुराण वेदानुकूल सिद्ध होंगे।

चन्द्र का गुरु पत्नी गमन आकाश के चन्द्रमा के मत्थे नहीं मढ़ा जा सकता। वह चन्द्रमा आकाश का नहीं भूमि का था, ऐसा पुराण से सिद्ध हो रहा है। इसके लिए ज्योतिष पढ़ने की आवश्यकता नहीं है। आप पुराण को पढ़िये। वह चन्द्रमा अत्रि का पुत्र बताया गया है और बृहस्पति नक्षत्र नहीं, वह आपके देवों के गुरु बताये गये हैं। उनकी पत्नी तारा से व्यभिचार करके जो पुत्र उत्पन्न किया, उसका नाम "बुध" बताया गया है। वह बुध आकाश का ग्रह नहीं था उसका विवाह मनु की पुत्री "इला" के साथ हुआ लिखा है। आगे उससे वंश चला। मनुस्मृति में गुरु पत्नी गमन को महापातक, महापाप बताया गया है, सुनिये और नोट कीजिये।

ब्रह्म हत्या सुरापानं, स्तेयं गुरु वंङ्गनाङ्गमः।
महान्ति पातकान्याहुः, संसर्गश्चापि तैः सहः॥ मनुस्मृति

पुराणों को आप जन्म जन्मान्तर में भी वेदानुकूल सिद्ध नहीं कर सकेंगे। सुनिये और सुनाता हूं—

शिव जी ने बहुतों को भोजन कराया—पीछे शिव दूती शिव जी के पास गयी कि हमको भोजन दीजिये।

आपके शिव जी ने उसको कहा मेरी नाभि के नीचे दो अण्डकोश हैं, इनको तुम खा लो।

कहियें पण्डित जी महाराज! यह कैलाशी सेव कभी आपने भी देखे और वर्ते कि नही?

राक्षस ब्रह्मा जी से मैथुन करने दौड़े, ऋषि लोग राम से मैथुन करना चाहते थे। कृष्ण ने अर्जुन को अर्जुनी बनाकर और नारद को नारदी बनाकर मैथुन कर दिया।

महाराज जी! आप क्या-क्या वेदानुकूल सिद्ध करेंगे।

पण्डित माधवाचार्य जी शास्त्री

ठाकुर जी! आपको सब जगह व्यभिचार और मैथुन ही दिखायी देता है। शिवजी के पास शिवदूती अर्थात् मृत्यु आई औरउसने भोजन मांगा। शिवजी ने कहा ब्रह्माण्ड को खा लो, सो मृत्यु ब्रह्माण्ड को खाती है।

दूसरी बातें जो आपने बताई है, उसमें मैथुन का अर्थ है मेल राक्षस भी ब्रह्मा जी से मेल करना चाहते थे, तो क्या बुराई। ऋषि लोग भक्ति करके भगवान राम की उपासना करना चाहते थे।

भगवान् कृष्ण ने अर्जुन और नारद की भक्ति को स्वीकार किया। आपको सर्वत्र बुराई ही बुराई दीखती है। पुराणों को कभी गुरू मुख से पढ़ते, तो उनके गौरव को समझते। उर्दू के एक शायर ने कहा है—

यार को खाना खिलाया, मैंने अपने दस्त से।
उसके पीने के लिए, पेशाब मैंने कर दिया॥

गन्दा आदमी यहां "दस्त" का अर्थ विष्टा, (पाखाना) और पेशाब का अर्थ मूत्र ही समझेगा, पर उस शायर ने दस्त हाथ को कहा है, मैंने अपने मित्र को अपने हाथ से भोजन कराया और उसके पीने के लिए आब (पानी) पेश (उपस्थित) कर दिया। उसके आगे पानी रख दिया।

ऐसे ही पुराणों में कविता है। उसका सत्य अर्थ और है, इनको तो गन्दा ही अर्थ लेना है, सो लेते हैं। जिन्होंने गुरू मुख से पुराणों को पढ़ा है वह उनके वास्तविक अर्थों को जानते हैं, और पुराणों में श्रद्धा रखते है।

ठाकुर अमर सिंह जी शास्त्रार्थ केशरी

सज्जनों! मेरे प्रश्नों के जो उत्तर श्री पं० जी ने दिये उनको आपने सुन लिया, अब इन उत्तरों की पोल भी सुनिये।

शिवदूती मृत्यु है, वह शिवजी के पास अपनी भूख मिटाने के लिए भोजन मांगने को आई। शिवजी ने उसको कहा कि, ब्रह्माण्ड को खाओ, सो मृत्यु ब्रह्माण्ड को खाती है, इसकी भी पोल सुनिये—

आस्वादितं न चान्येन् भक्ष्यार्थे च ददाम्यहम ॥२५॥
अधो भागे च मे नाभेर्वतुलो फल सन्निभो।

भक्ष्यध्वं हि सहिता लम्बौ में वृषणाविमौ ।।२६।।

पद्म पुराण सृष्टि खण्ड १ अध्याय ३१ श्लोक २५, २६,

जो किसी ने कभी नहीं खाया, वह खाने के लिए देता हूं। मेरी नाभि के नीचे गोल-गोल दो, फलों की तरह हैं। सब मिलकर खाओ, यह लटकते हुए लम्बे-लम्बे मेरे दो अण्डकोष (वृष्ण) है।

इन श्लोकों में मेरी नाभि के नीचे दो अण्डकोष गोल-गोल फल की भाँति है। इनको खा लो, यह कहा है। नाभि के नीचे कौन सा ब्रह्माण्ड है ? आपको ब्रह्माण्ड सूझ रहा है, जो एक है। पर शिवजी कहते हैं एक नहीं दो हैं दो। वहां द्विवचन है, (वर्त्तुलौ) दो गोल (फल सन्निभौ) दो फलो की भांति !

ब्रह्माण्ड के लिए या तो एक वचन होता या बहुवचन होता यहां तो द्विवचन है, और ब्रह्माण्ड नहीं श्री मान जी बिल्कुल स्पष्ट है (वृष्णाविमौ) यह दो वृष्ण अर्थात् दो अण्ड कोप हैं' यह कहा है,

आपने गन्दा शेर बोला और पुराणों के महाकाव्य को उसके सदृश बताया, "यार को खाना खिलाया आदि-आदि"

यह किसी अच्छे कवि=शायर का शेर नहीं गन्दे तुक्कड़ चिरकीन जैसे किसी जाहिल की कविता के तुल्य बताकर आपने स्वयं पुराणों की मिट्टी पलीद कर दी।

जादू वह जो शिर चढ़ कर बोले, क्या मजा जो गैर का परदा खोले ।।

पुराणों में व्यभिचार मैथुन, साफ-साफ लिखा हुआ है। देखिये—राम जी के साथ मैथुन के इच्छुक—

पुरामहर्षयः सर्वे दण्ड कारण्य वासिनः ।
दृष्ट्वा रामं हरिं तत्र भोक्तुमिच्छस्तु (मैच्छन्सु) विग्रहम् ।।१६६।।
ते सर्वे स्त्रीत्वमापन्नाः समुदभुतास्तु गोकुले ।
हरिं संप्राप्य कामेन ततो मुक्ताः भवार्णवात् ।।१६७।।

पद्म पुराण उत्तर खण्ड ६ अध्याय २७२ पृष्ठ १८७ श्लोक १६६, १६७,

श्री राम जी से मैथुन के इच्छुक हुए वह सब इसी कारण स्त्रीत्व को प्राप्त हुए अर्थात् द्वापर में सब स्त्री बन गये और श्री कृष्ण जी ने उनके साथ सनातन धर्म करके उनकी उस समय की इच्छा को पूर्ण किया।

अर्जुन अर्जुनी के बारे में सुनिये—

श्री कृष्ण जी ने अर्जुन को अर्जुनी बनाकर उसके साथ सनातन धर्म (व्यभिचार) किया। प्रमाण देखना है तो देख लजिए— "पद्म पुराण ५ पाताल खण्ड अध्याय ७४ श्लोक १९१, १९२,

नारद-नारदी के बारे में सुनिये—नारद जी नारदी बनकर श्री कृष्ण जी के पास पहुंच गये, और श्री कृष्ण जी नारदी के साथ एक वर्ष तक सनातन धर्म करते रहे।

प्रमाण देखना है तो देख लीजिये—पदम पुराण ५ पाताल खण्ड अध्याय ७५ श्लोक ३१, ३२, ३३, ४०, ४१,४२,

यह है महाराज जी ! आपके पुराणों की शिक्षा, इन पुराणों को आप जन्म जन्मान्तर में भी वेदानुकूल सिद्ध नहीं कर सकेंगे, यह मेरा दावा है।

नोट—श्री पं० माधवाचार्य जी ने अपने पहिले दिये हुए सभी उत्तर दोहराये, सारा समय उनके दोहराने में व्यतीत हो गया। कैलासी सेब जो शिवजी ने शिवदूती को खाने के लिए जो अपने "वृष्ण" अण्डकोष बताये तथा अर्जुन को अर्जुनी बनाकर तथा नारद के नारदी बनने पर जो कृष्ण के मैथुन की बात कही गई, उस पर श्री पण्डित माधवाचार्य जी ने कुछ भी न कहा। महानन्दा वेश्या और शिव समागम तथा वृन्दा के साथ व्यभिचार का भी कुछ उत्तर नहीं हुआ।

ठाकुर अमर सिंह जी शास्त्रार्थ केशरी

क्यों पण्डित जी ! करदी ना वही लीपा पोती, अरे ! मेरे तो सारे प्रश्नों को ऐसे पी गये जैसे श्राद्ध की खीर ! इसके सिवाय और आप कर भी क्या सकते थे। उत्तर उन प्रश्नों का आप क्या देते, कोई भी नहीं दे सकता ! इन बातों से कोई मना कर सकता है, जो स्पष्ट पुराणों में···

नोट—बीच में ही सनातन धर्म सभा के प्रधान श्री बाबू लेखराज जी (स्टेशन मास्टर) सभा के बीच में खड़े होकर दोनों हाथ ऊपर खड़े करके जोर-जोर से कहने लगे।

सज्जनों ! अगर सनातन धर्म यही है, और पुराणों की यही वास्तविकता है, तो मैं तो आज से सनातन धर्मी नहीं रहा । मैं तो आज से वैदिक धर्मी (आर्य समाजी) बनने की घोषणा करता हूं ।

नोट--मास्टर साहब का इतना कहना था कि चारों तरफ खलबली मच गयी सारा वातावरण "वैदिक धर्म की—जय, आर्य समाज—अमर रहे, महर्षि दयानन्द की—जय, ठाकुर अमर सिंह शास्त्रार्थ केशरी—जिन्दाबाद, पुराण—वेद विरुद्ध हैं । सभी श्रोतागण सनातन धर्म की निन्दा करते हुए चले गये, श्री ठाकुर साहब एवं मास्टर जी को लोगों ने पुष्प मालाओं से लाद दिया । और लोगों ने ठाकुर साहिब को कहा—ठाकुर साहब !

जब तक आप जैसे विद्वान, योग्य वकील उपस्थित है । तब तक झूठ पैरों नहीं चल सकेगा । आज आपने जो विषय की वास्तविकता उपस्थित की ऐसी न कभी सुनी न देखी थी आपसे एक ही प्रार्थना है, आप यह विद्या अपने साथ ही लेकर मत चले जाइयेगा ।

बद्दोमल्ली का दूसरा शास्त्रार्थ

विषय : क्या सत्यार्थ प्रकाश वेदानुकूल है ?

नोट—शेष सभी अधिकारी व्यक्ति पहिले दिन वाले ही अपने-अपने पदों पर रहे ।

श्री मथुरादास जी मदान

सज्जनों ! आज प्रश्न सनातन धर्म की ओर से श्री पण्डित माधवाचार्य जी को करने निश्चित थे, और आर्य समाज की ओर से उत्तरदाता श्री पं० भगवद्दत्त जी रिसर्चस्कोलर निश्चित थे, परन्तु पं० भगवद्दत्त जी का तार आ गया कि, मैं बीमार हो गया हूं, आ नहीं सकता हूं । इस कारण आज उत्तर देने का कार्य भी श्री अमरसिंह जी शास्त्रार्थ केशरी ही करेंगे ।

पण्डित माधवाचार्य जी शास्त्री

जो नियमानुसार निश्चित था, उसी के अनुसार कार्य चलना चाहिये यह तार वाली बात झूठ है । अपनी ओर से बनाई गयी है, श्री पं० भगद्दत्त जी को ही बुलाओ तभी शास्त्रार्थ होगा ।

नोट—मदान साहब ने तार दिखला दिया, तो पण्डित जी लज्जित होकर चुप हो गये ।

ठाकुर अमर सिंह जी शास्त्रार्थ केशरी

पण्डित जी आप घबराते क्यों हैं ? आप अपनी ओर से किसी अन्य बड़े-से-बड़े विद्वान को लाना चाहो तो ला सकते हो, शास्त्रार्थ आपका और पं० भगवद्दत जी का नहीं है, शास्त्रार्थ तो आर्य समाज और सनातन धर्म का है, आपकी ओर से कोई भी आये, तथा आर्य समाज की ओर से चाहे जो भी शास्त्रार्थ करें । इसमें आपको क्या आपत्ति है ।

शास्त्रार्थ प्रारम्भ

पण्डित माधवाचार्य जी शास्त्री

सज्जनों ! स्वामी दयानन्द जी ने सत्यार्थ प्रकाश में लिखा है कि, शिर के बालों के साथ चोटी भी कटा देवे । सज्जनों ! हमारे सनातन धर्मी वीरों ने अपनी चोटी की रक्षा के लिए अपने शिर भी कटवा दिये, पर महादुःख की बात है कि, स्वामी दयानन्द जी ने चोटी कटाने का भी आदेश दे डाला । यह ईसायत का प्रचार है ।

२. हमारे देश के वीर लोग अपनी माता का दूध पीकर ही वीर बनते थे, स्वामी दयानन्द जी ने बच्चों को

माता का दूध पिलाना वन्द करके धाया का दूध पिलाना सत्यार्थ प्रकाश में लिख दिया, यह भी ईसाई मत का ही प्रचार है और वेद विरुद्ध है।

३. सत्यार्थ प्रकाश में स्वामी दयानन्द जी ने दशवें समुल्लास में मनुष्य का माँस खाने में कोई दोष नहीं, यह लिख दिया।

४. गर्भाधान के समय स्त्री-पुरुष दोनों के नाक के सामने नाक और आँख के सामने आँख लिखा यह भी वेद विरुद्ध है सिद्ध करो कि यह वेदानुकूल है। आज मैं आर्य समाज की पोल खोल कर रख दूंगा।

यदि स्त्री लम्बाई में छोटी हो और पुरुष लम्बा हो तो आंख के सामने आँख और नाक के सामने नाक कैसे होगी ? बताओ ठाकुर जी ? आज सब कुछ वेदानुकूल सिद्ध करना पड़ेगा। आर्य समाज की पोल तो आज ही खुलेगी।

५. एक प्रश्न वज्र के समान और करता हूँ, वह यह है कि, सत्यार्थ प्रकाश में नियोग लिखकर व्यभिचार का द्वार खोल दिया है, बताइये नियोग का विधान वेद में कहाँ है ? और आर्य समाज में अब तक कितने नियोग हुए हैं, और किस-किस ने किये हैं ? यह मेरे पाँच प्रबल प्रश्न हैं, इनके उत्तर देकर आर्य समाज को बचाइये। आज शास्त्रार्थ में पता लगेगा कि आर्य समाज के सारे सिद्धान्त वेद विरुद्ध हैं इनको आज ठाकुर साहब वेद मन्त्रों से वेदानुकूल कैसे सिद्ध करते हैं यह मैं देखूँगा।

ठाकुर अमर सिंह जी शास्त्रार्थ केशरी

बड़ा शोर सुनते थे, पहलू में दिल का।
वह चीरा तो एक कतरा खूं न निकला।।

पण्डित जी बार-बार कहते थे कि, आज मैं आर्य समाज की पोल खोलकर रख दूंगा। आज आर्य समाज की पोल खुलकर ही रहेगी आदि-आदि।

एक वारी में ही पांच प्रश्न कर दिये ५-१० मिनट में ५० प्रश्न भी किये जा सकते हैं, मुझको प्रश्न करने के लिए समय दे दीजिये मैं ५ मिनट में २०-२५ प्रश्न अभी कर दूंगा।

परीक्षा में भी प्रश्न पत्र के उत्तर के लिए तीन घण्टे का समय दिया जाता है, पर यहां शास्त्रार्थ में एकदम पांच प्रश्न कर दिये उनके पास इतने ही थे, और गोले चला दिये। मैं एक-एक बारी में एक-एक प्रश्न का उत्तर दूंगा और प्रत्येक प्रश्न का उत्तर दूंगा और ऐसा उत्तर दूंगा कि पण्डित जी को छठी का दूध याद आ जायेगा।

नोट—इस पर पं० माधवाचार्य जी बहुत बिगड़े, कहने लगे मैंने अपने समय में प्रश्न किये हैं, जितना समय था उतना मैंने लेना ही था। आप उत्तर दीजिये। काफी संघर्ष के बाद निश्चय हुआ कि, एक समय में एक ही प्रश्न एवं एक समय में ही उसका एक ही उत्तर दिया जावेगा, तो अपने पहले प्रश्न को ही श्री पं० माधवाचार्य जी ने दोबारा दोहराया पश्चात ठाकुर साहब जी ने उत्तर दिया—

सज्जनों ! शिखा छेदन (चोटी कटाना) इस विषय का पाठ सत्यार्थ प्रकाश में इस प्रकार है।

ब्राह्मण के सोलहवें, क्षत्रिय के बाईसवें और वैश्य के चौबीसवें वर्ष मे केशान्त कर्म क्षौर मुण्डन हो जाना चाहिये। अर्थात् विधि के पश्चात् केवल शिखा को रख के अन्य दाढ़ी-मूंछ और सिर के बाल सदा मुँडवाते रहना चाहिये अर्थात् पुनः कभी न रखना और जो शीत प्रधान देश हो तो—कामचार है, चाहे जितने केश रक्खे और जो अति उष्णदेश हो तो सब शिखा सहित कटा देना चाहिए यहां स्वामी जी ने "अति उष्ण देश हो तो" यह विशेष बताया है।

विशेष कारण—संन्यास भी है तब क्या शिखा कटाने से संन्यासी ईसाई हो जाता है ? शिर का कोई रोग हो तो और चिकित्सा की सुविधा के लिए शिखा सहित बाल कटाने से रोगी मनुष्य ईसाई हो जायेगा ?

अपने भी ग्रन्थ आपने-पढ़े देखे नहीं प्रमाण मुझसे सुनिये—देखिये केशान्त संकरण के लिए मनुस्मृति में क्या लिखा है—

केशान्तः षोडशे वर्षे ब्राह्मणस्य विधीयते ।
राजन्य बन्धोर्द्वाविंशे, वैशस्यधधिके तथा ॥

मनुस्मृति अध्याय २ श्लोक ६५,

ब्राह्मण के बालक का केशान्त संस्कार सोलहवें, क्षत्रिय का बाईसवें और वैश्य का चौविसवें वर्ष में होता है ।

श्री मान जी ! इस संस्कार का नाम है, केशान्त और भगवान मनु ने इसका नाम :"केशान्त" बताया है, जब केशान्त ही हो गया तो "शिखा" कहां रहेगी ?

मुण्ड़ोवा जटिलो वा अथवा स्याच्छिखाजटः ॥२१९॥

मनुस्मृति अध्याय २ श्लोक २१९,

ब्रह्मचारी के लिए यहां तीन विकल्प हैं, १. शिर मुण्डवा दें, घोटम्घोट हो जाय २. जटा रख ले ३. शिखा जट रहे ।

यहां घोटमघोट "मुण्ड" बिना चोटी ही हुआ ।

सशिखं वपनं कार्य्यं मास्नादब्रह्मचारिणा ॥३८॥

पाराशर स्मृति अध्याय ८ श्लोक ३८,

यहाँ शिखा सहित केश कटाने का उपदेश ब्रह्मचारी के लिए है । मेरे पास ग्रह्यसूत्रों के भी अनेक प्रमाण हैं पर एक प्रमाण वेद का देता हूं सुनिये—लिखिये और वेद में देखिये—

यत्र बाणा सम्पतन्ति कुमारा विशीखा इव ॥४८॥

यजुर्वेद अध्याय १७ मन्त्र ४८,

अर्थ इसका यह है जहां बाण अच्छे प्रकार गिरते हैं, चोरी रहित कुमारों की तरह । इस मन्त्र के भाष्य में आपके आचार्य उव्वट ने लिखा है—"विगत शिखा सर्व मुण्डा" विगत शिखा का अर्थ है सारा शिर मुण्डा हुआ (शिखा भी नही)

आपके ही आचार्य महीधर जी ने इसके भाष्य में लिखा है—

"विगता शिखा येषां तं विशिखा, शिखारहिता, मुण्डित मुण्डा"

जिनकी चोटी नहीं रही वह विशिखा, शिखा रहित मुण्डे हुए शिर वाले ।

यहां भी चोटी कटी हुई है । ग्रह्य सूत्रों में तो कहा है कि—मुण्डन संस्कार में और केशान्त संस्कार में यह भेद है कि—मुण्डन में चोटी रखकर शेष बाल कटाये जाते हैं । और केशान्त संस्कार में "कक्ष" (बगल) वक्ष (छाती) उपस्थ (गुप्तेन्द्रिय) और शिखा सहित सब बाल कटाये जाते है ।

पण्डित माधवाचार्य जी शास्त्री

स्वामी दयानन्द जी ने सत्यार्थ प्रकाश में लिखा है कि-माता बच्चे को छै दिन दूध पिलाये पश्चात् धायी दूध पिलाया करे । यह भी इसाईयों के मत का प्रचार है, वेद के सर्वथा विरुद्ध है । ठाकुर साहब ! इसे सिद्ध करके दिखाओं वेदों के अनुकूल कहां से करोगे ? आपको पता होना चाहिए माता का दूध ही बच्चे को शूर वीर और विद्वान बना सकता है ।

ठाकुर अमर सिंह जी शास्त्रार्थ केशरी

वाह ! वाह ! ! आपको और कुछ न सूझे तो ईसाइयों का नाम तो लेना आता ही है, सो लेना कह दिया कि यह ईसाइयों का प्रचार है ।

श्री राम चन्द्र जी के लिए महाराजा दशरथ और कौशिल्या जी ने धायी रक्खी हुई थी, क्यों पण्डित जी क्या वह ईसाई थे ?

श्री कृष्ण जी ने माता का दूध कभी पिया ही नहीं । वह बिना माता का दूध पिये महान शूरवीर और महान विद्वान हुए कि—नहीं ? यदि हुए तो फिर आपका यह कहना कि—"माता का दूध ही बच्चे को शूरवीर और विद्वान बनाता है" झूठ हुआ कि नहीं ?

मान्धाता तो माता से उत्पन्न ही नहीं हुआ था । पिता के पेट से ही हुआ माता का दूध एक दिन भी नहीं पिया और चक्रवर्ती महाराजा हुआ भोज का भी वचन है कि—

"मान्धाता च महीपति क्षितितलेऽलंकार भूतो गतः"

मान्धाता सारी भूमि का चक्रवर्ती सम्राट भूमि का अलंकार होकर मरा । कहिये—माता के दूध के बिना चक्रवर्ती सम्राट हुआ कि नहीं ?

शिवजी के वीर्य से छै ऋषि पत्नियां गर्भवती हुई छैओं ने गर्भ गिरा दिये छै ओं लोथड़े गर्भ मिलकर एक हो गये उनका शरीर एक हो गया । और छै मुंह हो गये छै, कहिये उन छैओं ऋषि पत्नियों में से किस का दूध उस छै मुख वाले षडानन ने पिया था ? जब छैओं में से किसी का दूध उसने नहीं पिया फिर सब देवों का सेनापति स्कन्द नाम से हुआ कि—नहीं ?

चित्तौड के राणा संग्राम सिंह के पुत्र राजकुमार उदय सिंह के पन्ना धायी प्रसिद्ध है कि—नहीं ? जिसने राजकुमार उदय सिंह के प्राणों की रक्षा के लिए अपने पुत्र को बलिदान कर दिया जिस राणा उदय सिंह के नाम पर "उदयपुर' नामक प्रसिद्ध नगर राजस्थान में स्थित है ।

फिर धाया का दूध पिलाना किस वेद मन्त्र के विरुद्ध है ? वह वेद मन्त्र क्यों नहीं बोला ?

चरक और सुश्रुत के शारीरिक स्थानों में बच्चे को दूध पिलाने के लिए धायी रखने का उल्लेख स्पष्ट है । कभी आपने पण्डित जी महाराज पढ़ा भी है ? वहां उन आयुर्वेद के दोनों ग्रन्थों में सब लिखा है धायी कैसी हो उसके स्तन कैसे हों ? उसको कैसा भोजन दिया जाय ? आदि-आदि ।

आपके गरुड पुराण में औषधि लिखी है जिससे धायी के अशुद्ध हुए दूध को कैसे शुद्ध किया जावे देखिये—

यजुर्वेद अध्याय १७ मन्त्र ७० तथा ऋग्वेद मण्डल १ सूक्त ९६ मन्त्र ५ एवं अथर्ववेद में भी कहा गया है ।

कहिये पण्डित जी महाराज ! क्या यह सब ईसाई पन है । अब भी कुछ लज्जा आई कि नहीं ?

पण्डित माधवाचार्य जी शास्त्री

स्वामी दयानन्द जी ने सत्यार्थ प्रकाश में नियोग लिखकर खुले व्यभिचार का प्रचार किया है नियोग को कभी भी आप वेदानुकूल सिद्ध नहीं कर सकेंगे । कर सकते हों तो करके दिखाओ ?

ठाकुर अमर सिंह जी शास्त्रार्थ केशरी

"रूधिर पिये पय ना पिये लगी पयोधर जोक"

गऊ के स्तन में जोंक लग जाय तो वह गौ के स्तन का दूध नहीं पीती है । वहां से भी वह रुधिर ही पीती है ।

सत्यार्थ प्रकाश में एक से एक सुन्दर शिक्षा प्रद लेख हैं, पर आपको ईसायत और व्यभिचार के सिवाय कुछ नहीं मिला ।

कहिये ! व्यास जी ने अम्बिका से धृतराष्ट्र को अम्बालिका से पाण्डु और अम्बिका की दासी से नियोग करके विदुर जी को उत्पन्न नहीं किया ?

पण्डित माधवाचार्य जी शास्त्री

वह नियोग से नहीं, ठाकुर साहब ! वह वरदान से पैदा हुए थे ।

ठाकुर अमर सिंह जी शास्त्रार्थ केशरी

पण्डित जी महाराज ! देवी भागवत में बिल्कुल स्पष्ट लिखा है कि—

"व्यास वीर्यात्तु संजातो धृतराष्ट्रोऽन्ध एव सः"

देवी भागवत पुराण

व्यास के वीर्य से ही अन्धा धृतराष्ट्र उत्पन्न हुआ था, सत्यवती ने अपनी पुत्र वधु अम्बिका को कहा था । कि—

"कौसल्ये देवरस्तेऽस्ति निशीथे ह्यागमष्यिति"

हे वधू ! तेरा देवर (व्यास) आधी रात में तेरे पास आवेगा । क्यों वरदान भी आधी रात में ही दिया जाता है ? दिन में नहीं ।

श्रोताओं में हंसी...............

फिर लिखा है कि—दासी के साथ "कामोपभोग" से ऋषि व्यास तृप्त और प्रसन्न हो गये । वह श्लोक भी सुभाषित रत्न भाण्डागार का आपको याद है कि नहीं ?

पौराणिकानां व्यभिचार दोषो, न शंकनीयः कृतिभिः कदाचित् ।
पुराणकर्त्ता व्यभिचार जातस्त स्यापि पुत्रो व्यभिचार जातः ॥

सुभाषित रत्न भाण्डागार

पौराणिकों में व्यभिचार दोष है पुराण कर्त्ता व्यास व्यभिचार से उत्पन्न हुआ (पाराशर ने सत्यवती के साथ नाव में ही सनातन धर्म (व्यभिचार) कर लिया जिससे व्यास उत्पन्न हुए, और व्यास ने सनातन धर्म कर-कर के, धृतराष्ट्र-पाण्डु और विदुर ही नहीं अपने निज पुत्र "शुकदेव" को भी शुकी (तोती से) सनातन धर्म (व्यभिचार) करके उत्पन्न किया ।

एक पण्डित जी महाराज ! वह सुनाता हूँ जो आपने कभी न सुना हो ।

केशरी की पत्नी अंजनी से पवन ने सनातन धर्म करके हनुमान को उत्पन्न किया—देखो बालमीकीय रामायण, जाम्वन्त का हनुमान को यह कहना कि—

स त्वं केसरिणः पुत्रः क्षेत्रजो भीम विक्रमः ॥

बाल्मीकीय रामायण

हे हनुमान तुम केशरी के क्षेत्रज पुत्र महा बलवान तथा बड़े पराक्रमी हो । कहिये ! पण्डित जी महाराज ! क्षेत्रज वह ही होता है न ?

जो किसी की स्त्री में किसी दूसरे के वीर्य से उत्पन्न हो ? पुराणों में से मैं आज असंख्य प्रमाण दूंगा । जिससे पण्डित जी महाराज इस विषय पर आज के बाद शास्त्रार्थ करना तो दूर की बात इस विषय को छुएंगे भी नहीं......

पण्डित माधवाचार्य जी शास्त्री

आप केवल वेद के प्रमाण दीजिये, आप तो वेदों को ही मानते हैं, पुराणों को जब आप मानते ही नहीं तो पुराणों के प्रमाण आप क्यों देते है ? पुराणों पर शास्त्रार्थ तो कल था ।

नोट—ठाकुर साहब के उपरोक्त उत्तरों को सुनकर जो दशा पण्डित माधवाचार्य जी की हो रही थी, वह दर्शनीय थी, जैसे बिना जल के मछली तड़फती है, वैसे ही पण्डित जी बिलबिला रहे थे ।

ठाकुर अमर सिंह जी शास्त्रार्थ केशरी

पुराणों के प्रमाणों से घबराने लगे हिम्मत है तो कहिये कि, पुराणों में नियोग नहीं है। या कहिये कि मैं पुराणों को नहीं मानता हूं। सनातन धर्मियों से डरते क्यों हैं। आज खुली घोषणा करिये कि—पुराणों को मैं नहीं मानता हूँ। मैं फिर पुराणों का एक भी प्रमाण नहीं दूंगा।

आप पुराणों को जब तक मानते रहेंगे तब तक हम पुराणों के प्रमाण देते रहेंगे। कल पुराणों को वेद विरुद्ध सिद्ध करने के लिए पुराणों के प्रमाणों की झड़ी लगा दी थी। आज जो कुछ आप सत्यार्थ प्रकाश में से पूछते हैं वही में पुराणों में दिखाता हूं। हम पुराणों को प्रमाण मानते नहीं हैं तो भी आपके लिये आपके मान्य ग्रन्थों के प्रमाण देते हैं तथा देते रहेंगे। यह "उष्ट्रलष्टिकान्याय" है, नहीं जानते तो सुनिये—

एक ऊँट पर बहुत सी लाठियां लाद कर ले जाई जा रही थी, ऊँट चलता नहीं था, शरारत करता था, मालिक को भी धमकाता था। उसने ऊँट की कमर पर लदी हुई लाठियों में से एक लाटी निकाल कर जोर-जोर से ऊँट की टांगों में मारी, फिर कमर पर लदी लाठियों में उसको रख दिया।

बस ! जब गडबड करेंगे आप तब आपकी कमर पर लदी पुराणों की लाठियों में से एक-एक लेकर आपको जमाता जाऊंगा, और जमाने के बाद आपकी कमर पर ही रखता जाऊँगा।

श्रोताओं में भारी हंसी...............

आप वेद का नाम बहुत देर से चिल्ला रहे है, तो लो वेद का भी प्रमाण नियोग पर लो—

उदीर्ष्व नार्यभि जीव लोकम्...... ऋग्वेद

इस मन्त्र का शौनक के ऋग्विधान में भी नियोग में ही विनियोग है, उसमें कहा है कि विधवा का देवर इस मन्त्र को पढ़ कर शरीर में घृत मलकर अपनी भाभी से एक पुत्र उत्पन्न करे।

साथ ही लिखा है कि—कई विद्वानों के मत से दो सन्तान भी भाभी से उत्पन्न की जा सकती हैं।

इस मन्त्र में "हस्त ग्राभस्य" ऐसा पाठ है इसी को लक्ष्य करके भीष्म जी ने नियोग को वेदानुकूल बताया है। और कहा है कि—

"पाणिग्राहस्य तनय, इति वेदेषु निश्चित्तम्"

नियोग से उत्पन्न हुई सन्तान उस मरे हुए पति की मानी जायेगी जिसने इस स्त्री के साथ "पाणिग्रहण" किया था। ऐसा वेदों में निश्चय किया है ऐसा भीष्म जी ने कहा है।

आपने पूछा है कि—आर्य समाजियों ने कितने नियोग किये ? आर्य समाजियों ने कितने कराये !

इसका उत्तर यह है कि—यह अनिवार्य कर्तव्य तो है नहीं यह आपद्धर्म है परमात्मा आर्यों पर ऐसी आपत्ति कभी न लायें। जिनपर आपत्ति आई थी उन्होंने नियोग कराये थे। आपके पुराणों में और महाभारत में सब लिखे हुए हैं।

१. सुदेष्णा से, २. दमयन्ती से, ३. अम्बिका से, ४. अम्बालिका से, ५. अंजनी से ६. कुन्ती से ७. माद्री से।

जहां आवश्यकता हुई वहां नियोग हुए। आपके यहां आवश्यकता हो तो कराइये। आर्य समाजी लोग कर सकते हैं। आपके ग्रन्थों से बहुत से नियोग दिखाये जा सकते है। ऐसे बीसियों नियोग सधवाओं और विधवाओं से हुए। जो कुंवारी सत्यवती से पाराशर जी ने किया। जो कुंवारी कुन्ती से सूर्य ने किया वह नियोग तो नहीं पर सनातन धर्म (व्यभिचार) तो है ही।

पण्डित माधवाचार्य जी शास्त्री

सज्जनों ! सत्यार्थ प्रकाश में बहुत गन्दी बातें लिखी हुई हैं, उसमें लिखा है कि मनुष्य गर्भाधान के समय स्त्री-पुरुष मुंह के सामने मुंह, आँखों के सामने आंख और नाक के सामने नाक रखें।

नोट—इस प्रश्न को पण्डित माधवाचार्य जी ने बहुत ही गंदे ढंग से किया, जैसे हाथों के इशारे करके कहा कि स्त्री कितनी ऊँची उठे, कितनी नीचे सरके अगर ज्यादा लम्बी हो तो कैसे करे, अधिक छोटे कद की हो तो खुद ही बैक करे इस प्रकार कैसे नाक के सामने नाक और आंख के सामने आंख कैसे आयेगी, और फिर यह सब अनुभव बाल ब्रह्मचारी श्री माननीय महर्षि दयानन्द जी ने कैसे जाना ? भाइयों सुनो, यह सब विना अनुभव कैसे हो सकता है।

क्या ब्रह्मचारी जी को सबसे अधिक चिंता इसी विषय की थी, उनको और कोई काम नहीं था, रात-दिन यहीं अनुभव करते रहे कि कहीं .... मारो साले को, यह पण्डित बदमाश है, चारों तरफ हल्ला मच गया। सारी सभा में कोलाहल मच गया। सनातन धर्मियों ने भी पण्डित जी को लज्जित किया, कि आप शास्त्रार्थ ढंग से क्यों नहीं करते, ऐसे उपद्रव क्यों उठाते हो। यही प्रश्न अगर करना है तो यह बिना गन्दे इशारों के भी हो सकता है। बड़ी कठिनाई से शान्ति बनाई जा सकी।

ठाकुर अमर सिंह जी शास्त्रार्थ केशरी

सज्जनों ! आप शान्त हो जाओ यह पण्डित जी का दोष नहीं है। यह इनका स्वाभाविक गुण है, जब कुछ और न सूझे तो इसी प्रकार की गड़बड़ करके यह शास्त्रार्थ समाप्त करा देते हैं। पर आप शान्त रहिये, मैंने भी आज अगर नहले पर दहला न मारा तो पण्डित जी भी क्या याद रक्खेंगे।

पण्डित जी ! आंख के सामने आंख और नाक के सामने नाक व मुंह के सामने मुंह आदि-आदि। के लिए शतपथ ब्राह्मण वृहदारण्यक उपनिषद् के अनेकों बार अनेकों प्रमाण आपको दिये हैं। वेद के भी अनेकों प्रमाण हैं। परन्तु आप उन्हें जानते हुए भी जानबूझकर इस प्रकार की गन्दी हरकतें कर-कर के झगड़ा करना चाहते हैं। ये सभी अनुभव पहले आप कम से कम पण्डितानी जी से पूछकर तो आये होते ....

नोट—उस गन्दे प्रश्न का उत्तर ठाकुर साहब ने ऐसा दिया कि पण्डित जी तिलमिला उठे ! यहाँ नहीं दिया गया। ठाकुर साहब ने कहा—

"यस्मिन् यथा वर्त्तते यो मनुष्यतस्मिन् तथा तथावर्त्तितव्यं स धर्मः"

उर्दू के कवि ने भी कहा है—

बद न बोले ज़ेरेगर्दूं, गर कोई मेरी सुने।
यह है गुम्बद की सदा, जैसे कहे वैसी सुने॥

पण्डितजी देवता ! सभ्यता से प्रश्न करिये, तो उसका सभ्यता से उत्तर सुनिये। आपको यह सब शोभा नहीं देता। पर आप अपनी आदत से मजबूर हैं।

पण्डित माधवाचार्य जी शास्त्री

अब जो ठाकुर साहब ने बात कही है, यह क्या सभ्यता के अन्तर्गत है। तो फिर हमें कहने वाले आप कौन हैं ? चलो हम प्रश्न करते हैं। उत्तर तो इनसे बनता नहीं है। यह तो हम जानते हैं। स्वामी दयानन्द ने सत्यार्थ प्रकाश में लिखा है कि, स्त्री योनि संकोचन करे, क्यों ठाकुर साहब लिखा है कि नहीं ? अब फिर कह दो कि प्रश्न गन्दा है, बोलते क्यों नहीं, जब जैसी बात लिखी है वैसी ही पूछनी पड़ेगी ना, अगर सत्यार्थ प्रकाश में अच्छी सभ्यता की बात होती तो हम वही पूछते, जब उसमें हैं ही सारी गन्दी बातें तो और क्या हम अन्य ग्रन्थों में से प्रश्न करेंगे। अब कोई ठाकुर साहब से पूछे कि यह ब्रह्मचारी जी ने अपने अनुभव पर लिखा है या वेद के आधार पर !

पण्डित जी महाराज ! अनुभव तो आपको ही हो सकता है, पर आपके गरुड़ पुराण में योनि संकोचन के लिए महौषधि लिखी है—

शंख पुष्पी बचा मांसी, सोमराजी च फालगूकम् ॥६॥
माहिषं नवनीतं च, त्वेकी कृत्य भिषग्वरः ।
स मूलानि स पत्राणि क्षीरेणाज्येन पेषयेत् ॥७॥
गुटिकां शोषितां कृत्वा, नारी योन्यां प्रवेशयेत् ।
दशवारं प्रसूतापि पुनः कन्या भविष्यति ॥८॥

गरुड पुराण पूर्व खण्ड आचार काण्ड अध्याय १८ श्लोक ६, ७, ८,

कहिये पण्डित जी !

यह दवाई पुराण कर्त्ता ने किसके अनुभव से लिखी है ! क्या पाराशर जी ने कुंआरी सत्यवती से व्यास जी को जन्माकर सत्यवती को इसी नुस्खे से पुनरपि कन्या बताया था ।

क्या आपके किसी सूर्य ने कुंआरी कुन्ती से मैथुन करके "कर्ण" को उत्पन्न करके इसी औषधि से कन्या बनाया था ?

क्या द्रौपदी भी पांच बार इसी औषधि से कन्या बनी थी ? बोलो ना पण्डित जी ! बोलो अब क्या आपके मुंह में जुबान नहीं रही, अब क्यों बुखार सा चढ़ रहा है ।

इब्तदाए इश्क में रोता है क्या । आगे-आगे देखना होता है क्या ॥

मजे की बात यह है कि आपके पुराण कर्त्ता ने यह लिखा है कि वैद्य इस दवाई की गोलियां बनाकर स्वयं स्त्री की योनि में प्रविष्ट करे । कहिये पण्डितजी क्या आप भी कभी ऐसे वैद्य बने हैं या ऐसे ही कोरे रह गये ?

जनता में चारों ओर तालियों की गड़गड़ाहट के साथ हंसी और सभा विसर्जन हो गयी ।

पश्चात शान्तिपाठ हुआ—

ओ३म् द्यौ शान्ति······

सभा समाप्त हो गयी ।

इन दो शास्त्रार्थों का प्रभाव

नोट—सनातन धर्म सभा बड़ोमल्ली के प्रधान उस समय श्री बाबू लेखराज जी (स्टेशन मास्टर) थे । उन्होंने यह घोषणा की कि—

"मैं आज से सनातन धर्मी नहीं रहा ।"

पहले ही दिन के शास्त्रार्थ को सुन कर कर दी थी, पश्चात वह सारी आयु भर आर्य समाजी ही रहे ।

तीसरे दिन का शास्त्रार्थ एवं उसमें अनुपम दृश्य

नोट—तीसरे दिन निश्चित नियमों के अनुसार आर्य समाज की ओर से श्री पण्डित ठाकुर अमरसिंह जी को पुराणों पर प्रश्न करने थे, ठीक समय पर दोनों ओर के मंच तैयार कर दिये गये, और दोनों ओर शास्त्रार्थ कर्त्ता एवं अधिकारीगण जमकर बैठ गये । दोनों ओर पुस्तकों को ढंग से जमा कर दिया गया आर्य समाज के मंच पर श्री ठाकुर जी के परम मित्र श्री वाचस्पति जी एम० ए० बैठे थे तथा सनातन धर्म के मंच पर श्री पं० माधवाचार्य जी शास्त्री के साथ पं० श्रीकृष्ण शास्त्री तथा श्री प० दिवाकरदत्त जी शास्त्री तथा श्री पं० कुञ्जलाल जी शास्त्री विराजमान हो गये । शास्त्रार्थ का समय हो गया ।

टन-टन-टनन-टन············घंटी बजी,

प्रधान जी—शास्त्रार्थ का समय हो गया है मैं श्री माननीय ठाकुर जी से प्रार्थना करता हूं कि वह नियमानुसार प्रश्न आरम्भ करें । जिससे शास्त्रार्थ आरम्भ हो सके और प्रार्थना करूंगा कि दोनों ही पक्ष सभ्यता व शिष्टाचार से

प्रश्न और उत्तर दें, जिससे कोई किसी प्रकार की गड़बड़ पैदा न हो, और शास्त्रार्थ शांतिपूर्ण ढंग से समाप्त हो सके।

ठाकुर अमरसिंह जी शास्त्रार्थ केशरी

सज्जनों ! आज पुराणों पर मुझे...............

ठहरिये अभी शास्त्रार्थ आरम्भ मत करिये ! तनिक रुकिये।

शास्त्रार्थ मण्डप में पुलिस का आगमन

कोतवाल साहब !

माननीय पण्डित जी तथा ठाकुर साहब ! एवं अन्य साहिबान् सुनिये।

सुपरिटेंण्डेंट साहिब पुलिस विभाग स्यालकोट तथा डिप्टी कमिश्नर साहिब स्यालकोट के पास "सनातनधर्म सभा बद्दोमल्ली" के मन्त्री लाला मोहनलाल जी ने यह दरख्वास्त दी है कि, हम (सनातन धर्म सभा) के लोग शास्त्रार्थ करना नहीं चाहते हैं। हमारे साथ आर्य समाज के लोग जबर्दस्ती करते हैं, हमको उनसे अपनी जान का भी खतरा है इसलिए यह शास्त्रार्थ बन्द कराया जाये।

इसलिए इसे बन्द कराने वास्ते मैं ऐलान करता हूं कि साहिब ने जो चार कांस्टेबिल (सिपाही) एवं यह हथकड़ी भी साथ भिजवाई है। जो हमारी बात नहीं मानेगा हमें मजबूरन बतौर कानूनन् हथकड़ी लगाकर गिरफ्तार करके ले जाना पड़ेगा।

नोट—यह ऐलान सुनते ही पौराणिक पण्डित लज्जा के मारे ऊपर को आंख न उठा सके मुंह लटकाये चुपचाप उठकर चले गये, पीछे-पीछे पुलिस चली गयी ....उसके पीछे कुछ युवकों ने नारे लगाये—

पौराणिक पण्डित—गिरफ्तार हो गये।

सनातन धर्म—हार गया

तो पुलिस ने उन युवकों को डांटा तथा नारे लगाने से मना किया।

पश्चात् शास्त्रार्थ के पण्डाल में

शास्त्रार्थ तो बन्द हो ही गया था। और चारों तरफ नारों से आकाश गूंज उठा।

बोलो ऋषि दयानन्द की—जय

जो बोले सो अभय—वैदिक धर्म की जय

आर्य समाज—अमर रहे

वेद की ज्योति—जलती रहे

ठाकुर अमर सिंह—अमर रहे

नोट—और इसी प्रकार नारे लगाते हुए ओ३म् का ध्वज ऊँचा किये झूमते हुए सभी आर्य सज्जन अपनी-अपनी जगहों पर चले गये। पश्चात कभी उस कस्बे में सनातन धर्मियों की हिम्मत नहीं हुई कि शास्त्रार्थ की चर्चा भी कर सकें।

आवश्यक बात

शेष सामग्री अगले भाग में आयेगी, पूज्य गुरु जी श्री ठाकुर अमर सिंह जी शास्त्रार्थ केशरी (वर्तमान महात्मा अमर स्वामी जी महाराज) के इस समय ८५ शास्त्रार्थ प्राप्त हो चुके हैं।

उनके जीवन के सैंकड़ों शास्त्रार्थ है, जो समय-समय पर उपलब्ध होने पर प्रकाशित किये जावेंगे।

अतः शेष शास्त्रार्थों की सामग्री का अध्ययन करने के लिए दूसरे भाग की प्रतीक्षा करें।

धन्यवाद !

निवेदक—

"लाजपत राय आर्य"

आभार प्रकट

इस पुस्तक का प्रकाशन इतना सुगम नहीं था, परन्तु हमारे आर्य भाइयों ने तथा ऋषि के परम भक्तों ने हमें जो अग्रिम ग्राहक बन कर हमें जो राशि इस प्रकाशन से पहले दी, उससे हमें बड़ा सहयोग प्राप्त हुआ है।

जिनमें श्री बाबूलाल जी गुप्त द्वारा आर्य समाज लश्कर (ग्वालियर) म० प्र० एवं श्री चांदरत्न जी दमानी द्वारा आर्य समाज बड़ा बाजार कलकत्ता (बंगाल) मुख्य हैं।

जिन साहित्य प्रेमियों एवं ऋषि भक्तों ने ५-१० अथवा २० कापी भी बुक कराई थी, हम उनका भी आभार प्रकट करते हैं। क्योंकि छोटी-छोटी राशि भी मिलकर एक बड़ी राशि के रूप में हो जाती है।

इसी प्रकार इस राशि से भी बड़ी मदद प्राप्त हुई।

कुछ लोगों ने यह भी कहा कि, पहले भी दयानन्द.............वालों ने विज्ञापन निकालकर पैसा बटोरा था, हमें बाद में न पुस्तक मिली, न वापिस पैसा ही।

अत: चाहे जितने की भी प्राप्त हो छपने पर वी० पी० से भिजवा दें। मैं समझता हूं, "दूध का जला हुआ छाछ को भी फूंक-फूंककर पीता है" वाली बात अक्षरश: सत्य है।

उन भोले लोगों का कोई दोष नहीं है। उनके साथ वाकई धोखा हुआ।

परन्तु मैं विश्वास दिलाता हूं, इस प्रकाशन से अपना निजी छपाई का साधन न होने से देर तो हो सकती है। परन्तु अन्धेर नहीं।

आशा है इस प्रकाशन के अन्तर्गत जब भी भविष्य में इस प्रकार के सैद्धांतिक ग्रन्थों के प्रकाशन की विज्ञप्ति निकलेगी हमें अपने आर्य बन्धुओं का भरपूर सहयोग प्राप्त होगा।

किमधिकम् !!

विदुषामनुचर: !!
"लाजपत राय आर्य"

अमर स्वामी प्रकाशन विभाग का आगामी प्रकाशन

"अमर प्रमाण सागर"

साइज २०×३०—८वां पृष्ठ ६०० मूल्य १००.००

महात्मा अमर स्वामी जी महाराज कृत

इसी प्रकार के एकग्रन्थ का प्रथम भाग बहुत समय पहले आर्य प्रादेशिक सभा द्वारा लाहौर में प्रकाशित हुआ था, प्रकाशित होते ही हाथों हाथ बिक गया था। उसके पश्चात् इस ग्रंथ की इतनी मांग हुई, कि कहा नहीं जा सकता।

हमारे पास सैकड़ों पत्र पड़े हैं। जो सज्जन इस ग्रन्थ को प्राप्त करने के इच्छुक हैं।

इस ग्रंथ में मूर्ति पूजा, मृतक श्राद्ध, वर्ण व्यवस्था, अवतारवाद सभी विषयों के हजारों-हजारों प्रमाण संकलित हैं। एवं मजे की बात यह है कि इस ग्रंथ में पुराणों, महाभारत, रामायण, वेद, दर्शन, उपनिषद, स्मृतियां आदि अन्य सभी ग्रन्थों के मान्य ग्रन्थों के प्रमाण उपरोक्त विषयों के खण्डन में संग्रहीत हैं।

इस पुस्तक को कोई मामूली संस्कृत जानने वाला व्यक्ति भी बंगल में लेकर विरोधी पक्ष के सामने खड़ा हो जावे तो लेखक का दावा है कि, वह कभी वाद में हार नहीं सकता। इस पुस्तक का दूसरा भाग तैयार करने में लेखक के ११ वर्ष लगे हैं।

अब आगे इसी प्रामाणिक ग्रन्थ के प्रकाशन की योजना बनाई जा रही है। यह पुस्तक १९८० में प्रकाशित की जावेगी, जिसकी सूचना आपको समाचार पत्रों द्वारा प्राप्त हो जावेगी !

धन्यवाद !

विदुषामनुचर: !!
"लाजपत राय आर्य"
अमर स्वामी प्रकाशन विभाग,
३/३९६, दयानन्द नगर, गाजियाबाद, उत्तर प्रदेश
(भारत)

देश भरके विभिन्न सम्प्रदायों को शास्त्रार्थ के लिए

खुला चैलेञ्ज

१—पौराणिकों से—

१—क्या ईश्वर साकार है ?
२—क्या ईश्वर जन्म लेता है ?
३—क्या ईश्वर ने राम, कृष्ण और मच्छ, कच्छ, वराह आदि का शरीर धारण किया ?
४—क्या ईश्वर और जीव एक है ?
५—क्या राम आदि ईश्वर के मुख्य नाम हैं ?
६—क्या ब्रह्मा, विष्णु, महेश तीनों पृथक्-पृथक् थे ?
७—क्या मेरे हुए पितरों का श्राद्ध होना चाहिए ?
८—क्या ब्राह्मण आदि वर्ण जन्म से होते हैं ?
९—क्या स्त्री को दूसरे पति का विधान है ?
१०—क्या अभिवादन के लिए राम-राम, जैराम जी की, जै सीताराम, जैं राधेश्याम आदि प्रामाणिक हैं ?
११—क्या सीताराम, राधेश्याम का कीर्तन और जाप वेदानुकूल है ?
१२—क्या श्रीमद् भागवत आदि पुराण वेदानुकूल हैं, और महर्षि व्यास कृत हैं ?
१३—क्या वेदों की संख्या चार से भी अधिक हैं ? आदि-आदि !

२—ईसाइयों से—

१—क्या बाइबिल ईश्वरीय ज्ञान या इलहामी किताब है ?
२—क्या बाइबिल की शिक्षा मानने योग्य है ?
३—क्या ईसामसीह खुदा के बेटे या खुदा थे ?
४—क्या ईसामसीह कब्र में से जी उठे थे ?
५—क्या पूर्वजन्म असत्य सिद्धान्त है ?
६—क्या ईसामसीह पर ईमान लाने से पापों के फल से मुक्ति हो जायेगी ?
७—जीव और प्रकृति का अनादित्व ?
८—क्या ईसा निर्दोष थे ?

३—मुसलमानों से—

१—क्या कुरआन ईश्वरीय ज्ञान या इलहामी किताब है ?
२—क्या मुलहिम की मासूमियत (मुहम्मद साहिब का जीवन) निर्दोष और पाक था ?
३—बहिश्त और दोजख ?
४—क्या (तनासुख) पुनर्जन्म असत्य है ?
५—मुता और हलाला
६—क्या कुरआन की तालीम मानव मात्र के लिए हितकर है ?

४—जैनियों से—

१—क्या परमेश्वर सृष्टि कर्त्ता नहीं है ?
२—क्या तीर्थङ्कर सर्वज्ञ होते हैं ?

३—क्या सृष्टि अनादि है ?
४—क्या जैनमत की अन्य असम्भव बातें मानने योग्य हैं ?
५—क्या चार्वाक आदि दर्शन मान्य है ?

५—अहमदियों से—

१—क्या मिर्जा गुलाम अहमद को इलहाम होता था ?
२—मिर्जा साहिब का "निकाह आसमानी" ?
३—मिर्जा साहिब की पेशीन गोइयां (भविष्य वाणियां) आदि-आदि ?

नोट :—इन पांच सम्प्रदायों के बड़े-बड़े दिग्गज विद्वानों के साथ मैंने बहुत-बहुत बार शास्त्रार्थ और मुबाहिसे किये हैं। कभी-किसी भी सम्प्रदाय का विद्वान शास्त्रार्थ में विजय प्राप्त न कर सका।

अब थोड़ी आयु शेष रही है, अब भी मैं इन सबके साथ आर्य समाज की मान्यताओं के विरुद्ध शास्त्रार्थ और मुबाहिसे करने को तैयार हूं। इनके सिवाय भी कोई बौद्धमत या और कोई नवीन मत मुबाहिसा करना चाहे तो वह मेरे तथा आर्य समाज के साथ पत्र-व्यवहार करके अपनी किसी उत्तरदायी संस्था के द्वारा विषय और नियम निश्चय करे!

आर्य समाज (सत्य सनातन वैदिक धर्म) की क्या मान्यताएँ हैं, आप आगे पढ़ लीजिये ! जो सर्व प्रकार से सत्य एवं सिद्ध सिद्धान्त हैं।

महर्षि दयानन्द जी महाराज के ग्रन्थ एवं आर्य समाज की मान्यताएं सर्वथा सत्य, वेदानुकूल और मानव मात्र के लिए हितकर हैं।

आर्य समाज (सत्य सनातन वैदिक धर्म) की मान्यताएँ

१—ईश्वर निराकार, अमूर्त्त, अजन्मा, सर्वव्यापक और सर्वज्ञ है।
२—वेद ही ईश्वरीय ज्ञान है।
३—ईश्वर, जीव, प्रकृति तीनों अनादि हैं।
४—ईश्वर, जीव, प्रकृति तीनों भिन्न-भिन्न पदार्थ हैं।
५—श्राद्ध और तर्पण जीवित माता-पिता का ही होता है, मृतकों का नहीं।
६—अवतारवाद वेद विरुद्ध है।
७—मूर्ति पूजा वेद विरुद्ध है।
८—वर्ण व्यवस्था, गुण, कर्म, स्वभाव से होती है, जन्म से नहीं।
९—पुनर्जन्म होता है, यह सत्य सिद्धांत है।
१०—परमेश्वर को किसी पैगम्बर या असिस्टैन्ट की आवश्यकता नहीं है।
११—परमेश्वर का मुख्य नाम "ओ३म्" तथा शेष सभी ब्रह्मा, विष्णु, महेश आदि गौणिक नाम है।
१२—अभिवादन के लिए नमस्ते ही प्रमाणिक है।
१३—महर्षि दयानन्द कृत ग्रन्थ सभी वेदानुकूल हैं।
१४—मूल वेद चार हीं है, जो ईश्वर कृत ज्ञान है जिसको जानने और पढ़ने का अधिकार मनुष्य मात्र को है।
१५—"ओ३म्" का जाप ही वेदानुकूल है जिसके जपने का अधिकार स्त्री-पुरुष सभी को है।

नोट :—इन मान्यताओं के विरुद्ध मानने वाले अनेक सम्प्रदायों को हजारों की संख्या में ३० वर्षों से भी अधिक से विज्ञापन शास्त्रार्थ हेतु बांटे जा चुके हैं। अगर उपरोक्त मान्यताओं के अलावा भी किसी को आर्य समाज (सत्य सनातन वैदिक धर्म) की मान्यताओं पर कोई शंका हो तो वह उस पर भी शास्त्रार्थ कर सकता है !

वैदिक धर्म का—
"अमर स्वामी परिव्राजक"
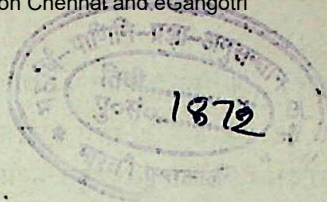
अमर स्वामी प्रकाशन विभाग द्वारा प्राप्त

साहित्य की सूची

अमर स्वामी जी महाराज कृत

१. कौन कहता है द्रौपदी के पांच पति थे ? (सजिल्द साईज १७ × २७ = १७ पृष्ठ २०० (सचित्र) ७.००

यह पुस्तक महाभारत के किसी न किसी अकाट्य प्रमाणों के आधार पर लिखी गयी है। पूज्य महात्मा अमर स्वामी जी महाराज ने इस पुस्तक में जो महाभारत के ऊपर अनुसंधान किया है, इसके ऊपर अनेकों विद्वानों के द्वारा प्रशंसा एवं सम्मतियां संकलित हैं।

"विशेष बात यह भी है कि, लोक में अधिक संख्या उन लोगों की है जो द्रौपदी के पांच पति ही मानते है। अन्यथा जो कुछ स्वाध्यायशील इतिहास के ऊपर अनुसंधान कर्त्ता अगर एक पति मानते हैं तो वे उसे अर्जुन की ही पत्नी कहते हैं।

परन्तु स्वामी जी महाराज ने सिद्ध किया है कि द्रौपदी का एक ही पति था, और वह युधिष्ठिर था। इस पुस्तक में अनेकों प्रमाण युक्तियां एवं दलीलें दी गयी तथा बड़ी वहस इसी बात पर की गयी है, पूर्ण विवरण जानने के लिए इस पुस्तक को मंगाकर अध्ययन करें।

२. क्या रावण वध विजयदशमी को हुआ था ? (पेपर बैक, साईज १७ × २७ = १६ पृष्ठ १४४ सचित्र) ३.००

रामायण के ऊपर लिखी गयी एक अद्वितीय खोजात्मक पुस्तक जिसमें अनेकों प्रमाणों के आधार पर रामायण के भ्रमित विषयों का मूलोच्छेदन किया गया है। अनेकों चित्रों सहित इस पुस्तक में बारी-बारी से सभी विषयों का वास्तविक चित्रण खींचा गया है। जैसे—क्या रावण विजयदशमी को मारा गया था ? क्या सीता की उत्पत्ति जमीन से हुई थी ? क्या हनुमान आदि वानर बन्दर थे ? क्या अहिल्या पत्थर की हो गयी थी, आदि अनेकों भ्रमित विषयों को बड़ी ही सरल भाषा में समझाया गया है। बाल्मीकिय रामायण तथा तुलसीकृत रामायण के सभी भ्रमों को दूर किया गया है। रामायण के असली रूप एवं उसके महत्व को जानने के लिए आवश्य पढ़ें।

३. संध्या के दो मन्त्रों की व्याख्या (ट्रैक्ट रूप साईज २० × ३० = १६, पृष्ठ ३०) .६०

संध्या के ऊपर जितनी भी शंकायें आज तक उठती रहीं हैं उन सभी का उत्तर इस पुस्तक में मौजूद है। जिन मन्त्रों को अवैदिक कहा जाता रहा, जैसे ओ३म् वाक्-वाक् आदि उनके पते वह वेद में कहां-कहां मिलते हैं। संध्या का महत्व एवं उसकी उपयोगिता सभी इस पुस्तक में मौजूद है। जिसको स्वामी जी महाराज ने बड़ी ही खोज के साथ लिखा है।

४. धर्म बलिदान (सजिल्द) (आचार्य शुक्रराज जी शास्त्री को नेपाल में फांसी) २.५०

(साईज २०×३०=१६ पृष्ठ ९८, सचित्र एवं सजिल्द)

श्री आचार्य पं० शुक्रराज जी शास्त्री गुरुकुल महाविद्यालय, सिकन्द्राबाद उ० प्र० के स्नातक थे, जिनको नेपाल की तत्कालीन सरकार ने उनके गले में रस्सी बांधकर पेड़ में लटका कर भारी भीड़ के सम्मुख फांसी दे दी गयी थी, दोष उनका केवल यही था। कि उन्होंने वैदिक धर्म के प्रचार द्वारा नेपाल राज्य का सुधार और उद्धार के लिए प्रयत्न किया था।

यह पुस्तक क्या है ? एक धर्मवीर के हाथ से लिखी एक सच्ची कहानी है। जिसमें सैद्धांतिक प्रश्नोत्तर भी हैं। भाषा अत्यन्त रोचक हृदयस्पर्शी तथा बड़ी ही मार्मिक है। जिसको बार-बार पढ़ने की इच्छा उत्पन्न होती है।

५. अमर गीताञ्जली [४ भाग] (पेपर बैक) साईज १७×२७=१६वां पृष्ठ ४२८ ११.००

इस पुस्तक में पुराने भजनों का संकलन है, जो वर्तमान समय में प्राप्त ही नहीं है, या वो भजन, कविता और आदि संकलित है जो कहीं प्रकाशित ही नहीं हुए इस पुस्तक में गज़ल, कव्वाली एवं नज़्में भी संग्रहीत हैं। पुस्तक अत्यन्त उपयोगी तथा मनोरंजक है।

६. संगीत महोदधि (सजिल्द) साइज २०×३०=१६ पृष्ठ, २१४ (सचित्र) १०.००

लेखक तथा संग्रहकर्त्ता स्वामी स्वरूपानन्द सरस्वती

संग्रह कर्त्ता स्वामी स्वरूपानन्द जी (पूर्व श्री पं० त्रिलोक चन्द जी राघव) प्रचारक टंकारा वालों ने इस पुस्तक में नये से नये भजनों का संग्रह किया है। फिल्मी तर्जों पर आधारित नये व पुराने एवं ऋषि महिमा पर अद्भुत गीतों का संग्रह है।

७. भारतीय शिक्षा, लेखक—डा० ओम शिवराज (साइज २०×३०—१६, पृष्ठ २६२ २०.००

अपनी वर्तमान शिक्षा पद्धति के दोषों का वर्णन किया गया है। चारों वेदों के आधार पर अपनी शिक्षा प्रणाली का रूप क्या होना चाहिए, पूर्ण विवरण जानने हेतु प्रस्तुत पुस्तक को पढ़िये ! जिसको लेखक ने बड़ी मेहनत एवं कठोर तपस्या से तैयार किया है।

८. अनमोल हीरा "ब्रह्मचर्य" लेखक ब्रह्मचारी विश्वपाल जयंत, कण्वाश्रम (कोटद्वार) ८.००

साइज २०×३०—१६वां सचित्र पृष्ठ २६०,

"ब्रह्मचर्य" पर लिखा गया यह अनूठा ग्रन्थ ब्रह्मचारी जी ने अपने प्रैक्टीकल रूप से किये गये अनुभवों के आधारों पर तैयार किया है। जिसमें प्राणायाम के द्वारा लोहे की जंजीरें तोड़ना, २-२ कारों को रोकना, जीप रोकना, छाती के ऊपर से ट्रैक्टर व हाथी आदि उतारना, सभी के चित्र भी संग्रहीत हैं : व्यायाम व आसनों की विधि सभी पूरी जानकारी के आधार पर लिखी गयी है। स्वास्थ्य सम्बंधी यह अनूठा ग्रंथ अवश्य ही पठनीय है।

९. दयानन्द दर्शन लेखक डा० वेदप्रकाश (सजिल्द २०×३०—१६वां पृष्ठ २८४ १०.००

महर्षि दयानंद जी के जीवन पर लिखे गये इस खोजात्मक ग्रंथ में सभी वैदिक सिद्धांतों का विवेचन किया गया है।

१०. अथर्ववेद भाष्य १—४ (सजिल्द) प्रथम खण्ड भाष्यकार पं० क्षेमकरण दास त्रिवेदी २६.००

साईज १८×२२ का ८वां पृष्ठ ६१५

इस पुस्तक को डा० प्रज्ञादेवी जी ने सम्पादित किया है, जिसमें अनेकों टिप्पणियां संग्रहीत है। इसका भाष्य पं० क्षेमकरण दास जी त्रिवेदी ने महर्षि दयानन्द जी की पद्यति एवं भाषा के अनुसार मन्त्र, भावार्थ, अन्वयं, पदार्थ व शब्दार्थ सभी कुछ देकर अत्यन्त भाषा में सरल कर दिया है।

११. कुरआन परिचय ३ भाग सम्पूर्ण (सजिल्द) लेखक पं० देवप्रकाश जी आचार्य ४०.००

साइज २०×३०—१६वां पृष्ठ १५६०, मूल आयतों सहित

कुरआन के ऊपर अनुसंधानात्मक रूप से लिखा गया प्रथम ग्रंथ जिसमें कुरान की सभी आयतें हिन्दी में देकर उनके भावार्थ एवं उन पर आक्षेपों का विवरण व समाधान बहुत ही रोचक भाषा में किया गया है।

कुरान सम्बन्धी कोई भी शंका ऐसी नहीं जो न उठायी गयी हो बड़ी ही खोजात्मक पुस्तक है। अनुसंधान कर्त्ताओं के लिए तो अत्यन्त उपयोगी ग्रंथ है।

१२. अमर स्वामी अभिनन्दन ग्रन्थ (सजिल्द सम्पादक ठाकुर विक्रमसिंह जी एम० ए०) १५.००

साइज १८×२२=८वां (सचित्र) पृष्ठ २४०,

यह ग्रंथ पूज्य महात्मा अमर स्वामी जी महाराज के अभिनंदन पर उनको भेंट किया गया था, जिसमें पूज्य स्वामी जी महाराज के जीवन एवं उनके द्वारा किये गये कार्यों का वर्णन है। अन्य सैद्धांतिक विभिन्न विद्वानों के लेख जो अत्यंत उपयोगी संग्रहीत है, स्व० श्री पं० रामचन्द्र जी देहलवी आदि जैसे विद्वानों के पुराने लेख भी संग्रहीत हैं।

१३. गीता और महर्षि दयानंद (ट्रैक्ट रूप) लेखक महात्मा अमर स्वामी जी महाराज .५०

साइज १७×२७—१६वां पृष्ठ ४४,

पूज्य महात्मा अमर स्वामी जी महाराज ने इस पुस्तक में दर्शाया है कि महर्षि दयानन्द जी महाराज गीता को प्रमाण स्वरूप मानते थे उस पर व्याख्यान देते थे।

कुछ लोगों ने यह प्रचार किया कि महर्षि दयानंद जी गीता को "कल की रांड" कहते थे और न जाने क्या क्या कहते थे। स्वामी जी महाराज ने सभी भ्रमों का मूलोच्छेदन कर दिया है।

१४. नौकरी कैसे प्राप्त करे (लेखक—आर० पी० भारद्वाज) एम० ए० बी० एड० १.००

साइज २०×३०—१६वां पृष्ठ ३२,

जो व्यक्ति बेरोजगार घूम रहे हैं। उनके लिए इस पुस्तक में लेखक ने अच्छा दिग्दर्शन कराया हैं। हजारों रास्ते ऐसे बतायें हैं कि आदमी बेरोजगार रह ही नहीं सकता, अवश्य मंगाकर पढ़ें।

प्रकाशन विभाग को सहायता देने वाले--

सहयोगी वर्ग की सूची

१.	श्री महाराजा रणञ्जंय सिह जी, अमेठी	५००·००
२.	श्री बालक राम जी कमल, बम्बई	५००·००
३.	श्री चान्द रत्न जी दामानी (माता सुलखनी देवी धमार्थ ट्रस्ट)	१०००·००
४.	श्री ओम प्रकाश जी कपूर चण्डीगढ़	२५०·००
५.	आर्य समाज ईश्वर नगर भान्डूप बम्बई	२५१·००
६.	श्री भगवती प्रसाद जी गुप्ता, सागर बिहार बम्बई	२५१·००
७.	श्रीमती प्रकाश वती अरोड़ा, सान्ताक्रुज बम्बई	५००·००
८.	श्री देव राज जी गुप्ता, दयानन्द कालेज शोलापुर महाराष्ट्र	२००·००
९.	श्री पण्डित प्रेम चन्द जी (रिटायर्ड जज) चण्डीगढ़	१०१·००
१०.	श्री आर० डी० शर्मा, सान्ता क्रुज बम्बई	२००·००
११.	श्री मति विद्यावती सभरवाल, नासिक,	१२६·००

हम अपने इन सभी सहयोगीयों के हृदय से आभारी हैं जिनके सहयोग से यह प्रकाशन सम्भव हुआ ।

मिट जायेगें एक दिन, सब धन धारनी धाम ।
"अमर" रहेगा कल्प तक दानवीर का नाम ।।

"व्यवस्थापक"
अमर स्वामी प्रकाशन विभाग
गाजियाबाद (उ० प्र०)